MASO-02

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

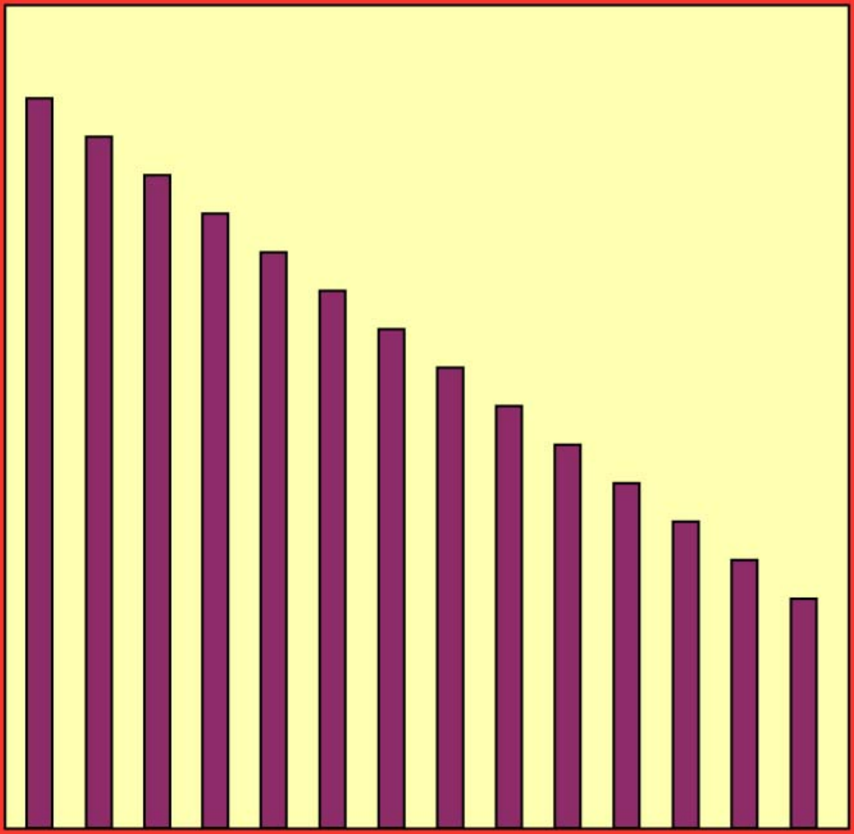

समाजशास्त्रीय अनुसंधान का तर्क

MASO-02

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

समाजशास्त्रीय अनुसंधान का तर्क

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

अध्यक्ष

प्रो.(डा.) नरेश दधीव

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविधालय,कोटा (राजस्थान)

संयोजक समन्वयक एव सदस्य

सयोजक

डा. जे. के शर्मा

सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र

वर्धमान महावीर खुला विश्वविधालय, कोटा

1. **प्रो. के एल शर्मा**
   आचार्य (सेवानिवृत), सी एस॰/एस॰एस॰एस
   जवाहरलाल नेहरु विश्वविधालय, नई दिल्ली
2. **डा.आई. पी मोदी**
   सह-आचार्य (सेवानिवृत), समाजशास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविधालय,जयपुर
3. **डा. (श्रीमती) रीता दाधीच**
   सहायक आचार्य, समाजशास्त्र
   वैदिक कन्या पी.जी. महाविधालय,जयपुर
4. **डा. अलका शर्मा**
   सहायक आचार्य समाजशास्त्र
   राजकीय पीजी महाविधालय, दौसा
5. **प्रो. यू. आर. नाहर**
   आचार्य,समाजशास्त्र विभाग
   जे॰ एन वि॰ विश्वविधालय, जोधपुर
6. **डा. एस. एल. दोषी**
   सह-आचार्य(सेवानिवृत), समाजशास्त्र विभाग
7. **प्रो.बी. के. नागला**
   आचार्य (सेवानिवृत), समाजशास्त्र विभाग
   म॰ द॰ विश्वविधालय, रोहतक

संपादन तथा पाठ लेखन

लेखन

श्री नवीन कुमार बज(1)
सह आचार्य, समाजशास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविधालय,जयपुर

डा. मृदला भटनागर (2, 4)
सहायक आचार्य समाजशस्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविधालय, जयपुर

डा. मंजु कुमारी(3)
सहायक आचार्य समाजशास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविधालय,जयपुर

डॉ ज्योति सिड़ाना(5)
सहायक आचार्य समाजशास्त्र विभाग
एस. एस. जैन सुबोध कॉलेज, जयपुर

डा. अल्का शर्मा (6,1,3)
सहायक अचार्य,समाजशास्त्र
राजकीय पी॰जी॰ महाविधालय,दौसा

डा. सुरेश राजौरा(7)
सहायक आचार्य,समाजशास्त्र
महाराणा प्रताप पी॰जी महाविधालय,चित्तौड़गढ़

डा. रीता पचहेरा(8)
सहायक-आचार्य, समाजशास्त्र
अग्रवाल पी॰जी महाविधालय,जयपुर

डा. रीता दाधीच (9, 10, 11)
सहायक आचार्य, समाजशास्त्र
वैदिक कन्या पी॰जी॰ महाविधालय,जयपुर

डा. मीनू तवर (12)
सहायक आचार्य, समाजशास्त्र
राजकीय कन्या महाविधालय,श्रीगंगानगर

डा. केवल रमानी (14, 18)
सह-आचार्य,समाजशास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविधालय,जयपुर

श्री गोविन्द गुप्ता (15, 16)
सहायक आचार्य अर्थशास्त्र
सहायक पी॰जी महाविधालय, दौसा

डा. रश्मि जैन (17)
सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग
राजकीय पी॰जी महाविधालय, जयपुर

अकादमिक प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच	**प्रो (डॉ.) बी. के. शर्मा**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक	प्रभारी अधिकारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविधालय, कोटा	अकादमिक	पाठ्य समाग्री उत्पादन एव वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी

वर्धमान महावीर खुला विश्वविधालय, कोटा

पुनः उत्पादनः अक्टूबर,2012 ISBN:13/978-81-8496-356-4

इस सामाग्री के किसी भी आ अंश को वी॰ कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोंग्राफी (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नही है। व॰ म॰ खु॰ वि॰ कोटा के लिये कुलसचिव व॰ म॰ खु॰ वि, कोटा (राज॰) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविधालय, कोटा (राज॰)

अनुक्रमणिका

समाजशास्त्रीय अन्वेषण के तर्क

इकाई व इकाई का नाम		पृष्ठ संख्या
	खण्ड I-समाजशास्त्रीय अनुसंधान का वैज्ञानिक दर्शन	
इकाई 1	सामजिक अनुसंधान : अर्थ प्रकृति एवं प्रकार	7–21
इकाई 2	अनुसंधान प्रारूप; विवरणत्मक, अनवेषणात्मक एवं प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप	22–36
इकाई 3	प्रक्कल्पनाएँ : स्त्रोत एवं प्रकार	37–48
इकाई 4	तथ्य एवं सिद्धान्त के बीच संबंध	49–62
इकाई 5	पैराडाईम एव मॉडल	63–73
	खण्ड II- अनुसंधान सामग्री संकलन की विधि	
इकाई 6	आँकड़े एकत्रित करने के स्त्रोत: पद्धति, प्रविधि एवं यन्त्र	74–93
इकाई 7	सर्वेक्षण और प्रकरण अध्ययन	94–109
इकाई 8	अवलोकन	110–132
इकाई 9	प्रश्नावली	133–144
इकाई 10	साक्षात्कार	145–151
इकाई 11	अनुसूची	152–166
इकाई 12	वैयकित्क अध्ययन पद्धति	167–179
	खण्ड III- परिणामक अनुसंधान के तत्व	
इकाई 13	निदर्शन	180–200
इकाई 14	केन्द्रीय प्रवृति की माप: माध्य माध्यिक बहुलक	201–219
इकाई 15	माध्य विचलन-मानक विचलन	220–248
इकाई 16	सह-सम्बन्ध: श्रेणी सह-सम्बन्ध	249–271
इकाई 17	अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि	272–283
इकाई 18	विक्षेपण के माप	284–307

इकाई-1

सामाजिक अनुसंधान : अर्थ, प्रकृति एवं प्रकार

(Social Research: Meaning, Nature and Types)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य (Objectives)

1.1 प्रस्तावना (Preface)

1.2 भूमिका (Introduction)

1.3 सामाजिक अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Social Research)

1.4 सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति एवं विशेषताएं (Nature and Characteristics of Social Research)

1.5 वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method)

(i) विज्ञान का अर्थ (Meaning of Science)

(ii) वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ (Meaning of Scientific Method)

(iii) वैज्ञानिक पद्धति के चरण (Steps of Scientific Method)

1.6 वस्तुनिष्ठता (Objectivity)

वस्तुनिष्ठता का अर्थ (Meaning of Objectivity)

1.7 सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता (Objectivity in Social Sciences)

1.8 सामाजिक अनुसंधानों के प्रकार (Types of Social Research)

(i) विशुद्ध अनुसंधान (Pure Research)

(ii) व्यावहारिक अनुसंधान (Applied Research)

1.9 सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता (Utility of Social Research)

1.10 सारांश (Summary)

1.11 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books)

1.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय का उद्देश्य सामाजिक अनुसंधान का अर्थ, प्रकृति एवं प्रकारों को स्पष्ट करना है ।

पृष्ठभूमि के रूप में यह जानने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार प्राकृतिक घटनाओं और सामाजिक यथार्थ को समझने के लिये मानव द्वारा प्रारम्भ में काल्पनिक एवं आलौकिक आधारों का सहारा लेकर, दार्शनिक दृष्टिकोण का विकास किया गया तथा कालान्तर में इन विश्लेषणों को अधिक विश्वसनीय तथा प्रामाणिक बनाने की दृष्टि से वैज्ञानिक पद्धति का विकास किया गया । इस सन्दर्भ में यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है कि सामाजिक

अनुसंधान का अर्थ क्या है? यह सामान्य अनुसंधान से किस रूप में भिन्न है? इसकी प्रकृति एवं विशेषतायें क्या हैं? किस सीमा तक सामाजिक अनुसंधान व्यवस्थितता, तार्किकता, वस्तुनिष्ठता एवं सत्यापनशीलता पर आधारित होने के कारण वैज्ञानिक पद्धति का अनुसरण करता है? क्या इसकी प्रकृति वैज्ञानिक है? सामाजिक प्रक्रियाओं और सामाजिक संरचना के विश्लेषण तक सीमित होने के कारण सामाजिक विज्ञानों की विषयवस्तु प्राकृतिक विज्ञानों की विषय वस्तु से किस रूप में भिन्न है?

उपरोक्त सन्दर्भ में यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि विज्ञान क्या है? वैज्ञानिक पद्धति से हमारा क्या अभिप्राय है तथा यह किसी भी समस्या के अध्ययन के लिये किन आवश्यक चरणों का अनुसरण करती है । लक्ष्य, परिप्रेक्ष्य एवं सन्दर्भ परिधि के आधार पर सामाजिक अनुसंधान को किस प्रकार दो प्रमुख प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है- विशुद्ध एवं व्यावहारिक । यह दोनों किस प्रकार एक दूसरे के पूरक हैं एवं सामाजिक अनुसंधान किस प्रकार उपयोगी है ।

1.1 प्रस्तावना (Preface)

सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य सामाजिक प्रघटनाओं का व्यवस्थित विश्लेषण करना एवं सामाजिक यथार्थ को जानना है । सामाजिक प्रघटनायें मानव के परस्पर व्यवहार पर आधारित होने के कारण अत्यधिक जटिल होती है । यथार्थ में मानव व्यवहार को अनेक कारक निरन्तर प्रभावित करते हैं और उनका निर्धारण करते हैं । इन कारकों में प्रमुख रूप से भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि कारकों के अतिरिक्त अनेक अज्ञात कारक सम्मिलित हैं । परिणाम रूप में सामाजिक प्रघटनाओं की प्रकृति अत्यधिक जटिल एवं विविध हो जाती है । इन प्रघटनाओं को समझने व विश्वसनीय आधार पर विश्लेषण करने हेतु अनेक अध्ययन पद्धतियों का विकास किया गया ।

ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो मानव प्रारम्भ से ही जिज्ञासु एवं चिन्तनशील प्रकृति का रहा है । वह अन्य प्राणियों की तरह अपनी प्राणीशास्त्रीय अथवा भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति तो करता ही है किन्तु इसके साथ-साथ वह अपनी स्वाभाविक जिज्ञासाओं को शांत करने का प्रयत्न करता है । वह अपने चारों ओर घटित हो रही प्राकृतिक एवं अन्य घटनाओं के पीछे छिपे कारणों को जानना चाहता है । इस प्रक्रिया में मानव ने प्राकृतिक रहस्यों एवं सामाजिक घटनाओं के लिए उत्तरदायी अज्ञात कारणों को समझने का प्रयास किया तथा परिणाम रूप में अनेक आविष्कार व अनु_संधान किये गये ।

1.2 भूमिका (Introduction)

मानव सभ्यता व संस्कृति के विकास के प्रारम्भिक चरण में केवल काल्पनिक व दार्शनिक आधार पर घटनाओं का विश्लेषण किया गया जिसके अन्तर्गत ईश्वर या अलौकिक शक्ति को सभी घटनाओं का कारण माना । किन्तु कालान्तर में उन विश्लेषणों में अधिक विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता उत्पन्न करने के लिए आनुभाविक प्रमाण व तार्किकता का प्रयोग किया गया ।

सम्भवत: इसी बिन्दु से अवलोकन व अनुभवों ने अनुसंधान या शोध का रूप ले लिया तथा मानव ने प्राकृतिक घटनाओं तथा सामाजिक यथार्थ सम्बन्धित अपने ज्ञान को व्यवस्थित रूप में संचित करना प्रारम्भ कर दिया । वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति का विकास इसी प्रक्रिया का प्रतिफल है ।

1.3 सामाजिक अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Social Research)

सामाजिक अनुसंधान का अर्थ जानने से पहले अनुसंधान शब्द का अर्थ समझना आवश्यक है । चेम्बर डिक्शनरी के अनुसार अनुसंधान का शाब्दिक अर्थ ज्ञान के योग में अभिवृद्धि करने हेतु व्यवस्थित अन्वेषण के प्रयास से है । इस प्रकार यह एक सावधानी पूर्ण किया गया अन्वेषण है । वेबस्टर शब्दकोष के अनुसार तथ्यों एवं सिद्धान्तों या किसी भी घटना को ज्ञात करने हेतु सावधानी पूर्वक एवं विवेचनात्मक खोज या निष्ठापूर्वक किये गये

अन्वेषण को अनुसंधान (शोध) कहते हैं । इस दृष्टि से नूतन ज्ञान की प्राप्ति तथा उपलब्ध ज्ञान में संशोधन, अभिवर्धन अथवा परिमार्जन का व्यवस्थित प्रयत्न ही अनुसंधान है । संक्षेप में ज्ञान को संचित करने की संपूर्ण प्रक्रिया को ही हम अनुसंधान कह सकते हैं । जब अनुसंधान के क्षेत्र एवं विषयवस्तु को सामाजिक प्रघटनाओं के क्रमबद्ध व व्यवस्थित अध्ययन तक सीमित कर दिया जाता है तो यह सामाजिक अनुसंधान कहलाता है । अनुसंधान के क्षेत्र व विषयवस्तु की प्रकृति के आधार पर विज्ञानों को दो प्रमुख भागों में बांटा गया है (1) भौतिक विज्ञान (2) सामाजिक विज्ञान । भौतिक विज्ञानों (Physical Science) में भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र, प्राणीशास्त्र आदि सम्मिलित हैं तथा सामाजिक विज्ञानों (Social Science) में समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि सम्मिलित किये जाते हैं ।

श्रीमती पी.वी यंग (P.V Young) के अनुसार सामाजिक यथार्थता की अन्तर्सम्बन्धित प्रक्रियाओं की व्यवस्थित जांच तथा व्याख्या ही सामाजिक अनुसंधान है । उनके अनुसार सामाजिक शोध एक वैज्ञानिक योजना है जिसका उद्देश्य तार्किक एवं क्रमबद्ध पद्धतियों के द्वारा नवीन तथ्यों का अन्वेषण तथा पुराने तथ्यों की परीक्षा और सत्यापन एवं उनके क्रमों, पारस्परिक सम्बन्धों, कार्य-कारण की व्याख्याओं तथा उन्हें संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करना है । उपयुक्त विवेचना स्पष्ट करती है कि सामाजिक अनुसंधान सामाजिक यथार्थता को जानने का प्रयास है जिसका उद्देश्य नये ज्ञान को संकलित करने के साथ-साथ उपलब्ध ज्ञान की पुन: जांच करना तथा तथ्यों के बीच पाये जाने वाले अन्तःसम्बन्धों का विश्लेषण कर सामान्य नियमों एवं सिद्धान्तों को प्रस्तावित करना है । इसी क्रम में सी.ए.मोजर (C.A Moster) के अनुसार सामाजिक प्रघटनाओं तथा समस्याओं के सम्बन्ध में नूतन ज्ञान प्राप्त करने के लिए की गई व्यवस्थित छानबीन को सामाजिक अनुसंधान कहते है । इस रूप में सामाजिक अनुसंधान सामाजिक जीवन का वैज्ञानिक शोध है जिसका उद्देश्य सामाजिक परिस्थितियों, सामाजिक प्रघटनाओं, सामाजिक समस्याओं आदि से सम्बन्धित तार्किक व व्येवस्थित प्रणालियों के द्वारा नये तथ्यों को खोजना तथा पुराने तथ्यों का परीक्षण कर सत्यापन करना और सामान्यीकरण करना है । इस प्रक्रिया का उद्देश्यें मानव समाज, सामाजिक

व्यवस्था, सामाजिक प्रघटनाओं तथा सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में अप्रमाणित अथवा असत्यापित प्राकल्पनाओं, निष्कर्षो या सिद्धान्तों का निराकरण या रद्द करना तथा नये सिद्धान्तों का निर्माण करना है । इस प्रकार सामाजिक अनुसंधान में सामाजिक यथार्थताओं की वैज्ञानिक विधि द्वारा खोज पर विशेष बल दिया गया है ।

1.4 सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति एवं विशेषताएं (Nature and Characteristics of Social Research)

वैज्ञानिक विधियों पर आधारित होने के कारण सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति वैज्ञानिक है । यह सामाजिक प्रघटनाओं से सम्बन्धित प्रक्रियाओं की व्यवस्थित खोज व विश्लेषण की वैज्ञानिक पद्धति है । अपने अध्ययन में सामाजिक अनुसंधानकर्ता अवलोकन, परीक्षण, तथ्यों का संकलन, वर्गीकरण एवं साधारणीकरण करने की व्यवस्थित विधि को अपनाता है ।

एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका' के अनुसार व्यापक अर्थो में वैज्ञानिक पद्धति का तात्पर्य अनुसंधान की किसी ऐसी पद्धति से है जिसके द्वारा निष्पक्ष तथा व्यवस्थित ज्ञान को प्राप्त किया जाता है ।

वस्तुनिष्ठता वैज्ञानिक पद्धति की प्रमुख विशेषता है । वस्तुनिष्ठता के अन्तर्गत सामाजिक अनुसंधान में सामाजिक प्रघटनाओं तथा तथ्यों का अध्ययन उसी रूप में किया जाता है जैसे कि वे यथार्थ में हैं अर्थात् अनुसंधान के निष्कर्ष पक्षपातपूर्ण धारणाओं, पूर्वाग्रहों, व्यक्तिगत अभिवृत्तियों तथा विचारों से प्रभावित नहीं होते । इसमें वस्तुनिष्ठता के साथ-साथ सत्यापनशीलता तटस्थता, व्यवस्थितता तथा भविष्योक्ति क्षमता पर बल दिया जाता है।

यह पद्धति ऐसे सिद्धान्तों का निर्माण करती है जो प्रघटनाओं को समझने व स्पष्ट करने में सहायक हो । नये तथ्यों अथवा नवीन अनुसंधानों के आधार पर ये सिद्धान्त निरन्तर परिवर्तित किये जा सकते हैं । इनकी परीक्षा व पुर्नपरीक्षा सम्भव है ।

सामाजिक अनुसंधान का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है क्योंकि इसके अन्तर्गत संपूर्ण सामाजिक जीवन और उससे सम्बद्ध सामाजिक प्रक्रियायें तथा सामाजिक संरचना का अध्ययन सम्मिलित है । सामाजिक अनुसंधान का लक्ष्य सामाजिक यथार्थ को समझने के लिए ज्ञान प्राप्त करना तथा उन सामान्य सिद्धान्तों की खोज करना है जिसके आधार पर सामाजिक प्रक्रियाओं एवं संरचना को समझा जा सके । इस रूप में यह केवल समस्याओं का व्यावहारिक समाधान ही प्रस्तुत नहीं करता अपितु इसका उपयोग सामाजिक समस्याओं के समाधानों, समाज सुधार, सामाजिक नियोजन, सामाजिक विकास तथा मानव जीवन को अधिक प्रगतिषील बनाने के लिये किया जा सकता है । इस प्रकार यह 'क्या है का विश्लेषण करता है किन्तु 'क्या होना चाहिए' का वर्णन नहीं करता ।

सामाजिक अनुसंधान सामाजिक जीवन में पाई जाने वाली अन्तनिर्भरता तथा अन्त: सम्बद्धता को स्पष्ट करने के लिए सामाजिक तथ्यों अथवा घटनाओं के बीच पाये जाने वाले अन्तःसम्बन्धों. और उसके प्रभावों का अध्ययन करता है । इस प्रकार कार्य-कारण के सिद्धान्तों के आधार पर साधारणीकरण करने का प्रयास करता है ।

सारांश रूप में सामाजिक अनुसंधान की पद्धति वैज्ञानिक है क्योंकि यह सामाजिक प्रघटनाओं का सूक्ष्म अध्ययन वैज्ञानिक विधियों से करती है । अध्ययन में विभिन्न वैज्ञानिक उपकरणों, प्रविधियों एवं पद्धतियों का प्रयोग होता है । सामाजिक अनुसंधान में नवीन तथ्यों की खोज के साथ-साथ पुराने तथ्यों की तथा पूर्व स्थापित सिद्धान्तों की जांच या पुनर्परीक्षा तथा सत्यापन किया जाता है । सामाजिक अनुसंधान विशुद्ध ज्ञान की खोज पर बल देता है किन्तु उसका उपयोग व्यावहारिक समस्याओं को समझने व हल करने के लिए किया जाता है । सामाजिक अनुसंधान में अध्ययन हेतु तथ्यों का संकलन, वर्गीकरण व साधारणीकरण व्यवस्थित आधार पर किया जाता है । वस्तुनिष्ठता, सत्यापनशीलता तटस्थता आदि इसकी प्रमुख विशेषतायें हैं ।

1.5 वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method)

वैज्ञानिक पद्धति को समझने के लिए 'विज्ञान' का अर्थ व विशेषताओं को जानना आवश्यक है । वर्तमान युग विज्ञान का युग है किन्तु फिर भी बहुत कम लोग यह जानते हैं कि विज्ञान क्या हैं? इसकी परिभाषा भिन्न भिन्न प्रकार से की गई है -

(i) विज्ञान का अर्थ (Meaning of Science)

गुडे तथा हट्ट के अनुसार (Goods & Hatt) के अनुसार वास्तव में विज्ञान का तात्पर्य केवल व्यवस्थित ज्ञान के संचय से है । इसी प्रकार स्टुअर्ट चेज (Stuart Chase) ने लिखा है कि विज्ञान का सम्बन्ध अध्ययन पद्धति से है न कि विषय वस्तु से । इस दृष्टि से विज्ञान का तात्पर्य केवल रसायनशास्त्र, भौतिकशास्त्र और प्राणी शास्त्र से न होकर किसी भी ऐसे ज्ञान से है जो व्यवस्थित और क्रमबद्ध हो । इससे यह धारणा भी काल्पनिक प्रमाणित होती है कि केवल वह ज्ञान विज्ञान है जिसका सृजन भौतिक उपकरणों की सहायता से प्रयोगशालाओं में होता है । **चर्चमैन तथा एकॉफ (Churchman & Ackoff)** के अनुसार 'विज्ञान एक कुशल खोज है । उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि विज्ञान कोई विषय वस्तु नहीं अपितु एक अध्ययन की पद्धति है जिसके माध्यम से किसी भी प्रंघटना का अध्ययन किया जा सके । इस रूप में प्राकृतिक विज्ञानों के अतिरिक्त जीवन के विभिन्न पक्षों का व्यवस्थित अध्ययन करने वाले अनेक विषयों को सामाजिक विज्ञानों की श्रेणी में सम्मिलित किया गया है।

जॉनसन (Johnson) ने विज्ञान की चर्चा करते हुए किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन में चार विशेषताओं का होना आवश्यक बताया है । उसके अनुसार विज्ञान आनुभाविक (Empirical) सैद्धान्तिक (Theoretical), संचयी (Cumulative) व नैतिकता तटस्थ (Ethically Neutral) होता है ।

इस क्रम में राय फ्रांसिस (Roy Francis) ने विज्ञान की निम्न मुख्य विशेषताओं का निरूपण किया है-

1. विज्ञान आनुभाविक है ।
2. विज्ञान तार्किक है ।
3. विज्ञान प्रत्ययवादी है ।
4. विज्ञान सार्वभौमिक व देशकाल की सीमाओं से परे है ।

फ्रांसिस राय' के अनुसार संक्षेप में विज्ञान का लक्ष्य 'सिद्धान्त' है । सिद्धान्त से तात्पर्य सत्यापित किये जा सकने वाले उच्चस्तरीय साधरणीकरण से है जो किसी न किसी अर्थ में अवलोकित प्रघटनाओं को स्पष्ट करता है । इस प्रकार विज्ञान के अन्तर्गत वे साधन सम्मिलित हैं जिनसे उन सिद्धान्तों को प्राप्त किया जा सकता है । विस्तृत रूप में विज्ञान एक विशिष्ट अध्ययन पद्धति है ।

(ii) वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ (Meaning of Scientific Method)

'समाजशास्त्र' शब्द का निर्माण करने वाले व उसके जनक आगस्त काम्त (August Comte) का विश्वास है कि समग्र ब्रहमाड (Whole Universe) स्थिर प्राकृतिक नियमों (Natural Laws) द्वारा व्यवस्थित तथा निर्देशित है और यदि इन नियमों को हमें समझना है तो विज्ञान की विधि अर्थात् वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा ही समझा जा सकता है । **काम्त** के अनुसार वैज्ञानिक पद्धति में दार्शनिक कल्पनाओं का कोई स्थान नहीं है । इसके विपरीत अवलोकन, परीक्षण, प्रयोग और वर्गीकरण की एक व्यवस्थित कार्यप्रणाली ही वैज्ञानिक पद्धति है । इस प्रकार यह प्रणाली उन तथ्यों पर आधारित है जो निश्चित व वस्तुनिष्ठ प्रकृति के है तथा जिन्हें सत्यापित तथा पुनर्सत्यापित किया जा सकता है ।

लुण्डबर्ग (Lundberg) के अनुसार तथ्यों के निष्पक्ष एवं व्यवस्थित निरीक्षण, वर्गीकरण, सत्यापन व विश्लेषण को ही मोटे रूप में वैज्ञानिक पद्धति कहा जा सकता है । इस रूप में वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत किसी भी प्रघटना के सम्बन्ध में तथ्यों को व्यवसिथत आधार पर अवलोकन अथवा निरीक्षण कर एकत्रित किया जाता है, उसके पश्चात् उन्हें समानता के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है तथा अन्त में उनके बीच पाये जाने वाले अन्तर्सम्बन्धों के विश्लेषण के आधार पर प्राप्त निष्कर्षो का साधरणीकरण किया जाता है । आर.एन. थाउलस (R.N. Thoules के मत में वौज्ञनिक पद्धति सामान्य नियमों की खोज के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रविधियों की एक व्यवस्था है जो कि विभिन्न विज्ञानों में कई बातों में भिन्नता होते हुए भी एक सामान्य प्रकृति को बनाये रखती है । इस प्रकार थाउलस के अनुसार प्रविधियों की एक व्यवस्था को वैज्ञानिक पद्धति माना जा सकता है जिसका लक्ष्य सामान्य नियमों को खोज निकालना है ।

(iii) वैज्ञानिक पद्धति के चरण (Steps of Scientific Method)

वैज्ञानिक पद्धति एक व्यवस्थित अध्ययन प्रणाली है । इसमें अध्ययन क्रमबद्ध, तार्किक व निश्चित चरणों में होता है । इस प्रक्रिया में अनुसंधानकर्ता एक निश्चित क्रम में विभिन्न सोपानों से गुजरता है जिन्हें वैज्ञानिक अध्ययन के विभिन्न चरण कह सकते है ।

राय फ्रांसिस (Roy Francis) के अनुसार वैज्ञानिक अनुसंधान पद्धति में निम्न चरणों को मुख्य रूप में देखा जा सकता है:

1. **समस्या क्षेत्र का चुनाव:** समस्या के सम्बन्ध में प्रचलित ज्ञान व सिद्धान्तों की जानकारी एकत्रित की जाती है एवं समस्या को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाता है।

2. **प्राक्कल्पनाओं का विकास:** प्राक्कल्पनायें वैज्ञानिक अध्ययन का मार्गदर्शन करती है । प्राक्कल्पनायें एक सामाजिक तथा काम चलाऊ सामान्यीकरण अथवा निष्कर्ष है जिसकी सत्यता की परीक्षा करना शेष रहता
3. **सामग्री संकलन के स्त्रोतों का निर्धारण:** उन क्षेत्रों व इकाईयों का निर्धारण जिनसे प्राथमिक व द्वितीयक सामग्री का संकलन किया जाता है ।
4. **उपकरणों का निर्माण :** इसके अन्तर्गत उपकरणों का निर्माण उनका पूर्व परीक्षण एवं संशोधन सम्मिलित
5. **सामग्री संकलन एवं विश्लेषण :** अध्ययन के लिये उपयोगी तथ्यों को एकत्रित करके उनका वर्गीकरण करना तथा उनके बीच क्रमबद्धता व अन्र्तसम्बन्ध स्थापित करना ।
6. **निष्कर्ष :** तथ्यात्मक व तार्किक आधार पर सामान्यीकरणों के रूप में निष्कर्ष निकालना जिनकी परीक्षा एवं पुर्नपरीक्षा की जा सके ।

लुण्डबर्ग (Lundberg) ने प्रमुख रूप से वैज्ञानिक पद्धति में निम्न चार चरणों को महत्व दिया है -

1. कार्यशील उपकल्पना का निर्माण
2. तथ्यों का अवलोकन व संकलन
3. संकलित तथ्यों का वर्गीकरण और संगठन
4. सामान्यीकरण ।

वैज्ञानिक पद्धति के विभिन्न चरणों का उल्लेख विद्वानों ने अपने अपने तरीके से किया है किन्तु सामान्य रूप में वैज्ञानिक पद्धति में वे सभी प्रमुख चरण सम्मिलित होते हैं जो वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालने के लिए आवश्यक है ।

पी.वी यंग (P.V Young) के अनुसार वैज्ञानिक अनुसंधान पद्धति के निम्न प्रमुख चरण है -

1. समस्या का निर्धारण
2. कार्यशील उपकल्पना का निर्माण
3. वैज्ञानिक प्रविधियों का चुनाव एवं अवलोकन
4. प्राप्त तथ्यों का लेखन
5. तथ्यों का वर्गीकरण
6. वैज्ञानिक सामान्यीकरण ।

उपर्युक्त विवेचनाओं के आधार पर मुख्य रूप से वैज्ञानिक पद्धति के निम्न चरणों का निरूपण किया जा सकता है -

1. **समस्या का चुनाव-** अध्ययन के लिए अनुसंधानकर्ता एक विशिष्ट समस्या का चुनाव करता है । समस्या का चुनाव उसके सम्बन्ध में उपलब्ध जानकारी, सम्बद्ध साहित्य व अनुसंधानों के आधार पर होता है।

2. **उपकल्पनाओं का निर्माण-** लुण्डबर्ग ((Lundberg) के अनुसार उपकल्पना एक काम चलाऊ निष्कर्ष अथवा सामन्यीकरण है जिसकी सत्यता की परीक्षा करना शेष है । उपकल्पनायें अध्ययन को एक निश्चित दिशा प्रदान करती है ।
3. **अध्ययन क्षेत्र एवं इकाइयों का निर्धारण-** अध्ययन को निश्चितता प्रदान करने के लिए अध्ययन क्षेत्र के 'समग्र' का निर्धारण एवं विशिष्ट इकाइयों जिनका अध्ययन किया जाना है, का चुनाव किया जाता है । अध्ययन का क्षेत्र यदि विस्तृत होता है तो निदर्शन पद्धति द्वारा अध्ययन हेतु इकाइयों का चयन किया जाता है ।
4. **अध्ययन पद्धतियों व उपकरणों का चुनाव-** समस्या की प्रकृति एवं अध्ययन क्षेत्र के आधार पर अध्ययन प्रविधियों, पद्धतियों व उपकरणों का चुनाव व निर्माण किया जाता है । इनकी उपयोगिता को सुनिश्चित करने के लिए इनका पूर्व परीक्षण कर संशोधन व परिमार्जन कर लिया जाता है ।
5. **सामग्री संकलन-** सामग्री संकलन वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति में अत्यन्त महत्वपूर्ण चरण है । विश्वसनीय एवं वस्तुनिष्ठ तथ्यों के संकलन के लिए अध्ययनकर्ता को पक्षपात व पूर्वाग्रह रहित होना अनिवार्य है । इसलिए तथ्य इस प्रकार संकलित किये जाने चाहिए जिससे उन पर संकलित करने वाले का प्रभाव न पड़े । सामग्री संकलन की पद्धति पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए ।
6. **वर्गीकरण-** तथ्यों के संकलन के पश्चात् विभिन्न आधारों पर तथ्यों का वर्गीकरण किया जाता है । इसमें समान प्रकृति के तथ्यों को एक वर्ग में विभाजित किया जाता है जिससे उनके बीच तुलना करना व उनके बीच सह-सम्बन्ध स्थापित करना संभव हो सके ।
7. **सामान्यीकरण-** तथ्यों के वर्गीकरण तथा उनके बीच पाये जाने वाले परस्पर सम्बन्धों के आधार पर अनेक निष्कर्ष स्पष्ट होने लगते है । इन निष्कर्षो की सहायता से अध्ययन के लिए निर्धारित उपकल्पनाओं को प्रमाणित या अप्रमाणित किया जा सकता है । सामान्य निष्कर्षो से नये सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सकता है अथवा स्थापित सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा की जा सकती है ।

1.6 वस्तुनिष्ठता (Objectivity)

वस्तुनिष्ठता का अर्थ (Meaning of Objectivity)

वैज्ञानिक पद्धति में निश्चयात्मकता, सत्यापनशीलता सामान्यता, पूर्वकथनीयता के साथ-साथ वस्तुनिष्ठता एक महत्वपूर्ण विशेषता है । इसका तात्पर्य उस पद्धति से है जो अपने विषय को 'जैसा वह है' ठीक उसी रूप में प्रस्तुत करती है । इस रूप में वैज्ञानिक पद्धति पक्षपातपूर्ण धारणाओं, पूर्वाग्रहों, व्यक्तिगत अभिवृतियों तथा विचारों से प्रभावित नहीं होती । ग्रीन (Green) के अनुसार 'वस्तुनिष्ठता का तात्पर्य किसी तथ्य अथवा प्रमाण की निष्पक्षता पूर्वक जांच करने की इच्छा तथा योग्यता से है । इस प्रकार वैज्ञानिक तटस्थता वैज्ञानिक पद्धति की एक उल्लेखनीय विशेषता है । सामाजिक यथार्थ को वास्तविक रूप में प्रकट करना अथवा तथ्यों को उनके मूल रूप में एकत्र करना, वैज्ञानिक पद्धति का उद्देश्य है । इसलिए वैज्ञानिक अपने विवेचन

के लिए ऐसी तकनीकी प्रविधियों का विकास करता है, जिससे अध्ययनों में अधिकतम वस्तुनिष्ठता लाई जा सके । वस्तुनिष्ठ अध्ययन वस्तु केन्द्रित अथवा वस्तुपरक होते हैं । ये अध्ययन अत्यधिक व्यवस्थित होते हैं तथा इनके निष्कर्ष बार-बार सत्यापित किये जा सकते है । अनुसंधानकर्ता की भावनाओं, विचारों तथा मान्यताओं से प्रभावित नहीं होते । ऐसे अनुसंधान व्यक्तिपरक न होकर तथ्यों तथा तार्किकता के आधार पर आधारित होते हैं ।

1.7 सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता (Objectivity in Social Sciences)

वस्तुनिष्ठता पर आधारित वैज्ञानिकों की संख्या अत्यधिक है । इस संदर्भ में वे प्राकृतिक विज्ञानों व सामाजिक विज्ञानों में कोई अन्तर नहीं मानते । किन्तु प्राकृतिक प्रघटनाओं और सामाजिक प्रघटनाओं की प्रकृति में अन्तर होने के कारण दोनों को एक ही धरातल पर नहीं रखा जा सकता । सामाजिक प्रघटनायें अधिक जटिल, अमूर्त, गुणात्मक, गत्यात्मक तथा विशिष्ट होती हैं, इसलिए उन्हें समझना अत्यधिक दुरूह होता है । मनुष्य की प्रकृति व स्वभाव भी इस अर्थ में विचित्र है क्योंकि उनके मन, वचन व कार्य में समन्वय नहीं होता और इसलिए उसका व्यवहार सदा एकसा नहीं होता तथा उसे समझना मुश्किल हो जाता है ।

तुलनात्मक रूप में प्राकृतिक विज्ञानों में प्रयोगशाला में प्रयोग करना संभव है किन्तु सामाजिक विज्ञानों में मनुष्य को प्रयोगशाला की नियंत्रित स्थितियों में रखना तथा उनका अध्ययन करना सरल नहीं है । इसी प्रकार प्रभावित करने वाले चरों का निरूपण करना तथा उन्हें नियंत्रित करना भी सरल नहीं है । सामान्य रूप में यह स्वीकार किया जाता है कि सामाजिक विज्ञानों में पूर्णरूप से वैज्ञानिक तटस्थता संभव नहीं है क्योंकि मनुष्य मनुष्य का अध्ययन करता है तथा वह उसी समाज का भाग होता है । अत: अध्ययनकर्ता के पूर्वाग्रह, उसकी मान्यतायें विश्वास, मूल्य, आकांक्षायें आदि अध्ययन को प्रभावित किये बिना नहीं रहती । प्राकृतिक विज्ञान इसकी तुलना में जड़ पदार्थो का अध्ययन करता है जिसका वह उस रूप में भाग नहीं होता तथा जिस पर वह आसानी से नियंत्रण स्थापित कर सकता है ।

इसी प्रकार सामाजिक प्रघटनाओं की प्रकृति संख्यात्मक न होकर गुणात्मक होती है । उनके मापने में अथवा उनकी प्रकृति को अभिव्यक्त करने की अपनी सीमायें हैं जबकि प्राकृतिक प्रघटनाओं का मापन संख्यात्मक आधार पर किये जा सकने के कारण इन्हें अधिक स्पष्ट एवं निश्चित रूप में समझा जा सकता है । संक्षेप में सामाजिक विज्ञानों के अध्ययनों में अनुसंधानकर्ता का पूर्णरूपेण पूर्वाग्रहों से मुक्त होने में कठिनाइयों, प्रघटनाओं के सम्बन्ध में प्रचलित भ्रांतिपूर्ण धारणाओं, सामाजिक प्रघटनाओं की जटिलताओं, समाज वैज्ञानिक की अपनी रूचियां व मान्यतायें, नैतिक मानदण्ड, अभिवृतियां आदि अनेक ऐसी बाधायें है जिससे सामाजिक विज्ञानों के अध्ययन में वस्तुनिष्ठता आना संभव प्रतीत नहीं होता, किन्तु इसका तात्पर्य यह भी नहीं है कि समाज वैज्ञानिक अध्ययनों में वैज्ञानिक तटस्थता अथवा वस्तुनिष्ठता का प्रयोग नहीं होता या नहीं किया जा सकता । अपितु समाज वैज्ञानिक, अध्ययन पद्धतियों के विकास, यान्त्रिक उपकरणों के उपयोग, अन्तर्विषयक अध्ययन पद्धतियों के प्रयोग, प्रायोगिक विधियों के

समावेश, अवधारणाओं एवं तकनीकी शब्दावलियों के विकास आदि ऐसे साधन है जिनके द्वारा अध्ययन अधिक से अधिक वस्तुनिष्ठता के आधार पर किये जा सकते है । जैसे-जैसे अध्ययन पद्धतियों, प्रविधियों, उपकरणों आदि का विकास होगा वैसे-वैसे सामाजिक विज्ञानों के अध्ययन अधिक वैज्ञानिक आधार पर किये जा सकेंगे । इस दृष्टि से यह प्रश्न महत्वपूर्ण नहीं है कि सामाजिक विज्ञान वस्तुनिष्ठता की दृष्टि से भौतिक विज्ञानों का प्रारूप अपना सकते है अथवा नहीं, अपितु महत्वपूर्ण यह है कि विज्ञान में निहित वस्तुनिष्ठता अथवा सत्यापनशीलता जैसी अध्ययन विशेषताओं तथा प्रक्रियाओं को समाज विज्ञान अपना रहे हैं अथवा वे किस सीमा तक इसमें योगदान दे सकते है ।

1.8 सामाजिक अनुसंधानों के प्रकार (Types of Social Research)

सामाजिक अनुसंधानों के लक्ष्य, आधार, परिप्रेक्ष्य, सन्दर्भ परिधि आदि के आधार पर विभिन्न वैज्ञानिकों ने इनके अनेक प्रकारों का उल्लेख किया है । जिसमें प्रमुख रूप से वर्णनात्मक, निरूपणात्मक परीक्षणात्मक, मूल्यांकनात्मक, क्रियात्मक, विशुद्ध अथवा सैद्धान्तिक, व्यावहारिक आदि प्रकारों को मुख्य रूप से सम्मिलित किया जा सकता है ।

विशुद्ध एवं व्यावहारिक अनुसंधान (Pure & Applied Research)

गुडे व हट्ट (Goode & Hatt) ने सामाजिक अनुसंधानों को प्रमुख रूप से दो भागों में वर्गीकृत किया है-

1. **विशुद्ध अनुसंधान-** जिसका उद्देश्य ज्ञान का विस्तार अथवा सिद्धान्तों का निर्माण करना है ।
2. **व्यावहारिक अनुसंधान-** जिसका उद्देश्य समस्याओं के व्यावहारिक समाधानों की खोज करना है ।

विशुद्ध अनुसंधान (Pure Research)

थियोडोरसन द्य' के अनुसार वे वैज्ञानिक अन्वेषण जो केवल ज्ञान की प्राप्ति हेतु ही किये जाते हैं तथा जिनका व्यावहारिक समस्याओं या उनके समाधान से कोई तात्कालिक सम्बन्ध नहीं होता, विशुद्ध विज्ञान की श्रेणी में माने जा सकते है । इस प्रकार यदि, 'ज्ञान के लिए ज्ञान' प्राप्त करना ही उद्देश्य होता है तो यह विशुद्ध अनुसधान है । यह अधिक वस्तुनिष्ठ और व्यवस्थित होते है । किसी भी विज्ञान के विकास में मौलिक सिद्धान्तों के विकास के लिए किये गये ये वैज्ञानिक प्रयास महत्वपूर्ण होते हैं । एडवर्ड शूमन (Edward Suchman) ने विशुद्ध अनुसंधान को अमूल्यांकनात्मक (non-evaluative) अनुसंधान के रूप में स्वीकार किया है जो समस्या के व्यावहारिक समाधान' (application) के स्थान पर 'समझने' (understanding) पर अधिक बल देता है । इस प्रकार विशुद्ध शोध का उद्देश्य किसी विशिष्ट समस्या का समाधान करना नहीं होता अपितु उन सिद्धान्तों की खोज करना है जो सामान्य आधार पर उन समस्याओं को समझने या विश्लेषण करने में सहायक होते है ।

विशुद्ध शोध इस रूप में वस्तुनिष्ठ एवं आनुभाविक तथ्यों एवं निष्कर्षो के आधार पर वैज्ञानिक सिद्धान्तों का निर्माण करके विज्ञान के ज्ञान में वृद्धि करता है । इस प्रक्रिया में विशुद्ध अनुसंधान नवीन सिद्धान्तों के सृजन के साथ-साथ पुराने सिद्धान्तों का सत्यापन अथवा पुनर्परीक्षण कर उनमें परिवर्धन, संशोधन अथवा परिमार्जन का सुझाव देता है । इनका उपयोग कालान्तर में एक सामान्य स्तर पर समस्याओं के समाधान हेतु किया जा सकता है किन्तु एक विशुद्ध अनुसंधानकर्ता स्वयं उस प्रेरणा से प्रेरित होकर अध्ययन नहीं करता ।

उपर्युक्त आधार पर विशुद्ध अनुसंधान की निम्न विषेशतायें मानी जा सकती है-

1. **ज्ञान में वृद्धि-** विशुद्ध अनुसंधान मूल रूप में ज्ञान में वृद्धि का साधन है । विशुद्ध ज्ञान की प्राप्ति ही इसका उद्देश्य है । इस दृष्टि से सामाजिक शोध का लक्ष्य सामाजिक जीवन, घटनाओं, तथ्यों या समस्याओं के विषय में सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त करना है ।
2. **ज्ञान का सत्यापन या पुनर्परीक्षण-** विशुद्ध अनुसंधान का उद्देश्य ज्ञान में वृद्धि के साथ-साथ पुराने तथ्यों, सिद्धान्तों व नियमों का सत्यापन तथा पुनर्परीक्षण कर उनमें आवश्यक संशोधन व परिवर्तन करना है ।
3. **प्रकार्यात्मक सम्बन्धों को खोजना-** सैद्धान्तिक अनुसंधान का उद्देश्य विभिन्न घटनाओं और तथ्यों के बीच पाये जाने वाले प्रकार्यात्मक सम्बन्धों के निर्धारक सामान्य नियमों को खोजना है । साथ ही मौलिक सामान्य नियमों में आ रहे परिवर्तनों के अध्ययन के आधार पर ज्ञान को अद्‌यतन करना विशुद्ध अनुसंधान का उद्देश्य है । इस प्रकार विशुद्ध अनुसंधान विज्ञान के उद्‌विकास व प्रगति का मूल आधार है ।
4. **मानवीय जिज्ञासा की तुष्टि-** शुद्ध अनुसंधान मानव की स्वभाविक ज्ञानार्जन की जिज्ञासा को शांत करता है । शुद्ध अनुसंधान मौलिक तथा आधारभूत नियमों को खोजकर ज्ञान के विकास में सहायता करते हैं तथा इसे नई विशेषताय प्रदान करते हैं । वह उन क्षेत्रों को भी इंगित करते हैं जिनमें आगे अनुसंधान करने की आवश्यकता है ।

व्यावहारिक अनुसंधान (Applied Research)

गुड व हट्ट (Goode & Hatt) के अनुसार व्यावहारिक अनुसंधान समस्याओं का व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करता है । इस रूप में व्यावहारिक शोध ऐसे निष्कर्षो पर पहुंचने के लिए किया जाता है जो कि विशिष्ट समस्याओं के समाधान निकालने में उपयोगी हो । इस प्रकार इसकी प्रकृति व्यावहारिक एवं उपयोगितावादी है । गुडे एवं हट्ट के अनुसार विशुद्ध अनुसंधान और व्यावहारिक अनुसंधान एक-दूसरे के पूरक हैं तथा परस्पर घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित हैं क्योंकि व्यावहारिक अनुसंधान का उद्देश्य भी सामाजिक घटनाओं, सामाजिक व्यवस्थाओं, सामाजिक जीवन, सामाजिक परिवर्तन आदि के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करना है । यह विशुद्ध अनुसंधान द्वारा प्रतिपादित नियमों तथा सिद्धान्तों का आनुभाविक तथ्यों द्वारा परीक्षण करता है तथा उसकी सत्यता, प्रामाणिकता व विश्वसनीयता की जांच करता है । संचित ज्ञान के आधार पर आगे परीक्षण करता है तथा इस प्रक्रिया में नूतन तथ्यों की खोज करता है।

व्यवहारिक अनुसंधान में ज्ञात सिद्धान्तों को व्यावहारिक समस्याओं पर लागू किया जाता है किन्तु इसके साथ-साथ व्यावहारिक समस्याओं के समाधान एवं अध्ययन के अन्तर्गत नये सिद्धान्तों को विकसित करने का प्रयत्न किया जाता है ।

व्यवहारिक अनुसंधान की प्रमुख विशेषताओं का निम्न प्रकार से विवेचन किया जा सकता है -

1. **समस्याओं को सुझलाने में सहायक -** जटिल. सामाजिक जीवन व उससे सम्बन्धित समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि से व्यवहारिक अनुसंधान अत्यधिक उपयोगी है । इस ज्ञान की सहायता से राष्ट्रीय नेता, समाज सुधारक, प्रशासक आदि के लिए आधुनिक समस्याओं को सरलता से सुलझाना सम्भव है ।
2. **सामाजिक योजनायें बनाने में सहायक -** योजनाओं के निर्माण के लिए आवश्यक वैज्ञानिक ज्ञान विभिन्न व्यावहारिक अनुसंधानों द्वारा उपलब्ध कराया जाता है । व्यवहारिक शोध का सम्बन्ध सामाजिक जीवन के विभिन्न व्यावहारिक पक्षों से होता है । इसलिए यह सामाजिक नियोजन, सामाजिक अधिनियम, स्वास्थ्य, रक्षा, धर्म, शिक्षा, मनोरंजन आदि विषयों के बारे में अनुसंधान करता है और इनके सम्बन्ध में कारण सहित व्याख्या व तर्कयुक्त ज्ञान का सृजन करता है जिसका लाभ नियोजक, प्रशासक, राजनैतिक नेतृत्व आदि उठाते हैं । व्यावहारिक अनुसंधान उन निष्कर्षो को प्रस्तुत करता है जो अनेक सामाजिक समस्याओं के उपचार में सहायक सिद्ध होते हैं ।

पी.वी यंग के अनुसार सामाजिक शोध का मूलभूत उद्देश्य चाहे वह तात्कालिक हो या दूर का, सामाजिक जीवन को समझ कर मनुष्य के सामाजिक व्यवहार पर अधिक नियंत्रण प्राप्त करना है । अन्त में यही कहा जा सकता है कि विशुद्ध और व्यावहारिक दोनों ही प्रकार के अनुसंधान एक-दूसरे के पूरक हैं । ये एक-दूसरे के विकास में सहायक हैं, दोनों में निरन्तर अन्तर्क्रिया तथा आदान प्रदान होता रहता है ।

1.9 सामाजिक अनुसंधान की उपयोगिता (Utility of Social Research)

सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों प्रकार के सामाजिक अनुसन्धान सामाजिक व्यवहार को समझने व सामाजिक प्रघटनाओं के विश्लेषण में अत्यन्त उपयोगी माने जाते हैं । किसी भी समूह में पायी जाने वाली सामाजिक समस्याओं को व्यवस्थित रूप में समझने में सामाजिक अनुसंधान अत्यधिक सहायक है । सामाजिक अनुसन्धान वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित होने के कारण प्रामाणिक व विश्वसनीय माने जाते हैं ।

सामाजिक अनुसंधानों के माध्यम से नवीन तथ्य संकलित किये जाते हैं तथा नये विचारों का विकास होता है । वैज्ञानिक प्रकृति के अनुसंधान निष्कर्ष समाज में अज्ञानता का समापन तथा नये विचारों व सिद्धान्तों का प्रार्दूभाव करने में सहायक हैं । ये विचार न केवल सामाजिक समस्याओं के समाधान के आधार होते हैं अपितु ये समाज में आ रहे परिवर्तनों का विश्लेषण करने में सुविधा प्रदान करते हैं जिसके आधार पर कल्याणकारी कार्यो व सामाजिक प्रगति की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जा सकता है । समाज में पाये जाने वाले विघटनकारी तत्वों

व प्रवृत्तियों की पहचान स्थापित कर सामाजिक समस्याओं के निराकरण करने तथा सामाजिक नियन्त्रण स्थापित करने में सामाजिक अनुसंधानों के निष्कर्ष सहायक होते हैं । सामाजिक नियोजन में ये अनुसंधान अत्यधिक लाभकारी सिद्ध होते हैं ।

1.10 सारांश (Summary)

सारांश रूप में सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य सामाजिक प्रघटनाओं एवं प्रक्रियाओं का वैज्ञानिक विश्लेषण कर सामाजिक यथार्थ को जानने का प्रयास करना है । इस दृष्टि से सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य नये ज्ञान को संकलित करने के साथ-साथ उपलब्ध ज्ञान की पुन: जांच करना तथा प्राप्त तथ्यों के मध्य पाये जाने वाले अर्न्तसम्बन्धों का विश्लेषण कर सामान्य नियमों एवं सिद्धान्तों की खोज करना है । वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित होने के कारण सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति वैज्ञानिक है । व्यवस्थितता, वस्तुनिष्ठता, सत्यापनशीलता एवं भविष्योक्ति क्षमता इसकी प्रमुख विशेषतायें हैं ।

वैज्ञानिक पद्धति के प्रमुख चरणों में समस्या का चुनाव, प्राक्कल्पनाओं का विकास, प्राविधियों एवं उपकरणों का निर्माण, तथ्यों का संकलन व वर्गीकरण तथा उनके बीच पाये जाने वाले अर्न्तसम्बन्धों के आधार पर सामान्यीकरण एवं निष्कर्षो के साथ-साथ सिद्धान्तों का निर्माण करना सम्मिलित है ।

सामाजिक अनुसंधान के लक्ष्य व परिप्रेक्ष्य के आधार पर उन्हें मुख्य रूप से दो भागों में बांटा गया है - (1) विशुद्ध अनुसंधान व (2) व्यावहारिक अनुसंधान । दोनों प्रकार के अनुसंधान परस्पर अर्न्तसम्बन्धित होने के कारण एक दूसरे के पूरक हैं तथा सामाजिक यथार्थ एवं प्रघटनाओं के विश्लेषण में अत्यधिक उपयोगी है ।

1.11 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

(1) सामाजिक अनुसंधान से आपका क्या अभिप्राय है? सामाजिक अनुसंधान् की प्रकृति एवं क्षेत्र की विवेचना कीजिए ।

(2) सामाजिक अनुसंधान का अर्थ, उद्धेष्य एवं क्षेत्र की व्याख्या कीजिए ।

(3) 'वैज्ञानिक पद्धति क्या है? इसके विभिन्न चरणों का उल्लेख कीजिए ।

(4) वस्तुनिष्ठता एवं सत्यापनशीलता पर एक निबन्ध लिखिये ।

(5) सामाजिक अनुसंधान को परिभाषित कीजिए एवं इसके प्रमुख प्रकारों की विवेचना कीजिए ।

(6) सामाजिक यथार्थ के विश्लेषण के लिये नवीन सिद्धान्तों के निर्माण एवं समस्याओं के तात्कालिक समाधान खोजने में सामाजिक अनुसंधान के महत्व पर प्रकाश डालिये ।

(7) निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये:

(i) सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य
(ii) सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति
(iii) वैज्ञानिक पद्धति
(iv) वैज्ञानिक पद्धति के आवश्यक चरण

(v) विशुद्ध अनुसंधान

(vi) व्यावहारिक अनुसंधान

(vii) अनुसंधान की उपयोगिता

1.12 सन्दर्भ ग्रंथ (Reference Books)

(1) Francis, Roy; The Nature of Scientific Research in John Doby (ed.) An Introducation to Social Research, Appleton, New York 1967

(2) Goode & Hatt; Methods of Social Research, Mc Graw Hill Book Company Inc. New York, 1952.

(3) Jahoda & Cook; Research Methods in Social Relation, 1966

(4) Johoda, H.M; Sociology: A Systematic Introduction, Routledge and Kegan Paul, London, 1960

(5) Lundberg, G.A; Social Research, Longmans Green & Co., New York, 1951

(6) Moser, C.A; Survey Methods in Social Investigation, Heinemann, London, 1961

(7) Sjoberg, Giddeon & Nett, Roser; Methods in Social Research, Mc Graw Hill, New York, !952

(8) Suchman, E.A.; Principles and Practices of Evaluative Research in Doby (ed., Book; An Introduction to Social Research.

(9) Theodorson, G.A. and Theodorson, A.C.; A Modern Dictionary of Sociology, Barners and Noble Books, New York, 1979

(10) Young, P.V.; Scientific Social Survey and Research, Asia Publishing House, Bombay, 1960.

(Footnotes)

1. Young, P.V., Scientific Social Surveys and Research, Asia Publishing House, Bombay, 1960.P. 146
2. Moser, C.A., Survey Methods in Social Investigation, Heinemann, London, 1961, P.3

1. Encyclopedia Britannica Vol. XX1941, P.27

1. Good & Hatt, Methods of Social Research MC Graw-Hill Book Company Inc. New York, P. 7(1952)
2. Chase, Stuart, The Proper Study of Mankind, P.6

1. Churchman C.W and Acoff, R.L., Methods of Enquiry: An Inroduction to Philosophy and Scientific Method, P.10
2. Johnson, H.M., Sociology, A Systematic Inroduction, Routledge & Kegan Paul, London, 1960 P.
3. Francis Roy, The Nature of Scientific Research; in John Doby (ed) An Introduction to Social Research, Applet on, New York, 1967, PP. 12

1. As ablove, P. 12
2. Lundberg, G.A., Social Research, Longmans, Green & Co. New York, 1951, p.1

1. Roy Francis, op Cit pp., P. 16-19
2. Lundberg, G.A Op Cit P.5
3. Young, P.V.: Scientific Social Survey and Research, P.102

1. Lundberg : Op Cit, P.9

1. Green, A.W., Sociology, P.2

1. Theodorson G.A and Theodorson A.C.: A Modern Dictionary of Sociology, Barnes & Noble Books, New York, 1979, p.370
2. Suchman, E.A., Principles and Practice of Evaluative Research in Doby (ed.) Book An Introduction to Social Research Op. Cit P.329

1. Goode & Hatt, Op, Cit.

1. Young P.V., Op cit; P.44

इकाई-2

अनुसंधान प्रारूप: विवरणात्मक, एवं प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप

इकाई संरचना

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.1.1 अनुसंधान प्रारूप का अर्थ
2.2.2 प्रमाणता की अवधारणा
2.2.2.1 आन्तरिक प्रमाणता
2.2.2.2 बाह्य प्रमाणता
2.2 अनुसंधान प्रारूप के तार्किक आधार
2.2.1 मैथड ऑफ एग्रीमेंट
2.2.2 मैथड ऑफ डिफ्रेंस
2.2.3 ज्वाइंट मैथड ऑफ एग्रीमेंट एवं डिफेंस
2.2.4 मैथड ऑफ कॉनकोमिटेंट वेरियेंस
2.3 अनुसंधान प्रारूप के मूल आधार
2.3.1 अनुसंधान प्रक्रिया
2.3.2 अनुसंधान प्रारूप की महत्ता
2.4 अनुसंधान प्रारूप के प्रकार
2.4.1 विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप
2.4.1.1 विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप का अर्थ
2.4.1.2 विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप की विशेषतायें
2.4.1.3 विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप के प्रकार्य
2.4.2 अन्वेषणात्मक अनुसंधान के प्रारूप
2.4.2.1 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप का अर्थ
2.4.2.2 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप की विशेषताएँ
2.4.2.3 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप के प्रकार्य
2.4.3 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप
2.4.3.1 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप का अर्थ
2.4.3.2 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप की विशेषताएँ
2.4.3.3 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप के प्रकार्य
2.5 सारांश

2.6 अभ्यास प्रश्न
2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य सामाजिक अनुसंधान के पद्धतिशास्त्र के संदर्भ में अनुसंधान प्रारूप को परिभाषित करते हु ए इसके तत्वों, प्रमाणता की अवधारणा तथा उसके विभिन्न स्वरूपों सहित अनुसंधान प्रारूप के तार्किक आधारों की व्याख्या करना है । इसके साथ ही हम इस इकाई में सामाजिक अनुसंधान के तीन प्रमुख प्रकारों: विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप, अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप तथा प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप के अर्थ, विशेषताओं तथा वैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतिशास्त्र के संदर्भ में उनके प्रकार्या की विशद विवेचना -कर उन्हें समझाने का प्रयास करेंगे ।

2.1 प्रस्तावना

अनुसंधान प्रारूप समाज विज्ञानों में वृहद रूप से प्रयुक्त होने वाला संबोध है । अनुसंधान प्रारूप को सामान्यतया किसी अनुसंधान विशेष की योजना के रूप में परिभाषित किया जा सकता है । अनुसंधान परियोजना के रूप में अनुसंधान प्रारूप विभिन्न तत्वों जिनके द्वारा अनुसंधान का निर्धारण होता है, जैसे चर, सहभागी इत्यादि; इनके मध्य अन्त: संबंध तथा विभिन्न पद्धतियों जैसे निदर्शन, परिमापन इत्यादि को परिभाषित करता है । इस प्रकार अनुसंधान प्रारूप पूर्वानुमानित परियोजना है, जिसका उद्देश्य अध्ययन प्रकिया में नियंत्रण बनाये रखना, संभावित समस्याओं एवं बाधाओं को परिसीमित करना होता है ।

ऐकॉफ के अनुसार, 'अनुसंधान प्रारूप परिसंचार की व्यवस्था है । यह एक समस्या उन्मूलक प्रारूप अथवा परियोजना है ।

ऐकॉफ का मानना है कि किसी भी वैज्ञानिक अनुसंधान में चार प्रकार की भूमिकाओं का समावेश होता है ।

1. **कस्टमर:** यह वह व्यक्ति, संस्था अथवा ऐजन्सी होती है जो किसी विशिष्ट विषय पर अनुसंधान करवाना चाहती है ।
2. **वैज्ञानिक (अनुसंधानकर्ता)** : वैज्ञानिक अथवा अनुसंधानकर्ता वह केन्द्रीय व्यक्ति होता है जो संपूर्ण अनुसंधान का संचालन करता है ।
3. **अवलोकनकर्ता (परिवेक्षक):** परिवेक्षक अध्ययन क्षेत्र में जाकर प्राथमिक आकड़ों का संकलन करता है तथा साथ ही द्वितीयक आँकड़ो का भी संकलन करता है । अनुसंधान की प्रकृति एवं व्यापकता के आधार पर परिवेक्षक कोई अन्य व्यक्ति भी हो सकता है अर्थात स्वयं अनुसंधानकर्ता या वैज्ञानिक भी हो सकता
4. **उत्तरदाता :** उत्तरदाता वह इकाई होती है जिसके द्वारा निदर्शन का निर्धारण होता है तथा जिनसे परिवेक्षक अथवा अनुसंधानकर्ता विभिन्न प्रविधियों के द्वारा प्रश्न पूछकर प्राथमिक आँकड़े एकत्रित करता है।

इस प्रकार कस्टमर सर्वप्रथम किसी विषय पर अध्ययन करने हेतु अनुसंधानकर्ता को आमंत्रित करता है साथ ही कई बार अनुसंधानकर्ता स्वयं भी अनुसंधान हेतु विषय का चयन कर आर्थिक संसाधन प्राप्त करने हेतु कस्टमर से सम्पर्क करता है । अनुसंधानकर्ता अथवा वैज्ञानिक अनुसंधान का प्रारुप तैयार करता है । जैसे उदाहरणार्थ: कस्टमर एक समस्या प्रस्तुत करता है, किसी क्षेत्र विशेष में अपराध की दर क्यों बढ रही है? अनुसंधानकर्ता अपनी परियोजना में निश्चित करता है कि वह पैरोल पर छोडे हुए अपराधियों के समूह का अध्ययन करेगा और उसी के अनुसार अपने अनुसंधान प्रारूप का निर्धारण करता है । अनुसंधान प्रारूप के निर्धारण के पश्चात वह इस समस्या के अध्ययन हेतु परिवेक्षक को क्षेत्र में भेजता है अथवा स्वयं परिवेक्षक के रूप में आँकड़े एकत्रित करता है तथा समस्या का पूर्व निर्धारित विभिन्न पक्षों का अवलोकन करता है । उत्तरदाताओं से प्राप्त ऑकड़ों का विश्लेषण कर सामान्यीकरण निकाले जाते है । इस प्रकार एकॉफ का मानना है कि सामाजिक अनुसंधान की प्रकिया में पाँच स्तर है जिसमें अनुसंधान प्रारूप का निर्धारण द्‌वितीयक स्तर पर आता है ।

अनुसंधान प्रारूप की परियोजना में किये जाने वाले अनुसंधान की परिशुद्धता एवं उपादेयता समाहित होती है क्योंकि किसी भी ऐसे अनुसंधान की ऐसी परियोजना निर्धारित करने का कोई अर्थ नहीं होता जो स्वयं में ही विरोधाभासो से ग्रसित हों अथवा जो अनुसंधान हेतु आवश्यक एवं अर्थपूर्ण तथ्य प्रदान करने में सक्षम न हो । अत: अनुसंधान प्रारूप के निर्माण में सबसे प्रमुख कार्य केन्द्रीयभूत तत्वों, पद्धतियों के मध्य इस प्रकार सह-संबद्धता निर्धारित करना है ताकि अधिक से अधिक प्रमाणता प्राप्त की जा सके । मॉटन (Mouton) एवं मराइस (Mararis) के अनुसार किसी अनुसंधान के लिए अनुसंधान प्रारूप वह परियोजना है जिसका निर्धारण निष्कर्षो की अधिकतम प्रमाणता को प्राप्त करने के लिए किया जाता है ।

इस परिभाषा से स्पष्ट होता है कि प्रमाणता का तत्व अनुसंधान प्रारूप के निर्धारण में केन्द्रीय स्थान रखता है । समाज वैज्ञानिक अनुसंधान प्रारूप के संदर्भ में दो प्रकार की आधारभूत प्रमाणता की व्याख्या करतें हैं ।

1. **आन्तरिक प्रमाणता (Internal validity)**
2. **बाह्य प्रमाणता (External Validity)**

आन्तरिक प्रमाणता (Internal validity)

यदि किसी अध्ययन में आन्तरिक प्रमाणता विद्‌यमान है तो कहा जा सकता है कि उसमें प्रयुक्त पद्धतियों द्‌वारा सही दिशा में बिना किसी समस्या के निष्कर्ष प्राप्त होंगे । आन्तरिक प्रमाणता को अवधारित करने का सबसे सरलीकृत तरीका है तार्किक आधार पर तर्क-वितर्क पर आधारित न्याय वाक्य (Sylogism) के रूप में अवधारित करना । उदाहरण के लिए निम्न तर्को को देखिये:

	तर्क 1		तर्क 2
कथन एक	आपका प्राध्यापक भारतीय है ।	कथन एक	आपका प्राध्यापक पुरूष है।
कथन दो	सभी भारतीय देश भक्त है ।	कथन दो	कुछ पुरूष चरित्रहीन होते है ।
निष्कर्ष	**आपका प्राध्यापक देश भक्त है ।**	**निष्कर्ष**	**आपका प्राध्यापक चरित्रहीन है ।**

इसमें कोई शक नहीं है कि यदि हम तर्क एक के दोनों कथनों को स्वीकार करें तो यह निष्कर्ष कि "आपका प्राध्यापक देश भक्त है" स्वीकार करना होगा । यह तर्क आन्तिरिक रूप से प्रमाणता पर आधारित है । चाहे इसके निष्कर्ष वास्तविक अर्थ में गलत ही क्यों न हो । यदि हम तर्क दो के दोनों कथनों को स्वीकार करें तो निष्कर्ष ही नहीं निकलता क्योंकि दोनों कथनों में तार्किक तारतम्यता का अभाव है ।

आन्तरिक प्रमाणता पर अनुसंधान प्रारूप तर्क एक के समरूप होता है । इस प्रकार के प्रारूप के प्रयोग से प्राप्त निष्कर्षो को प्रारूप के तार्किकता के आधार पर बनाये रखा जा सकता है ।

अनुसंधान प्रारूप का निर्माण करते समय आन्तरिक प्रमाणता का निर्धारण करना केन्द्रीय विचार रहता है । तथा अनुसंधानकर्ता यह सुनिश्चित करता है कि प्राप्त किये गए परिणाम अनुसंधान प्रारूप पर आधारित हो तथा जो अन्य किसी भी वैकल्पिक आधार पर विश्लेषित नहीं किये जा सकते हो ।

अनुसंधान प्रारूप में आन्तरिक प्रमाणता परीक्षणात्मक (Experimental) अध्ययनों में अधिक पायी जाती है । विशेष रूप से उन अध्ययनों में जिनका सम्पादन प्रयोगशाला में होता है तथा यह निर्धारित करने के लिए कि अवलोकित परिणाम बाह्य कारक के समाविष्ट होने से उत्पन्न एकमात्र परिणाम है, स्थितियों पर निरन्तर नियंत्रण बनाए रखा जाता है । यद्यपि हर प्रश्न का जवाब इस अनुसंधान प्रारूप द्वारा प्राप्त करना संभव नहीं है । उदाहरणार्थ बढती आयु के प्रभावों से संबंधित प्रश्न कि बढती आयु याद रखने की क्षमता को किस प्रकार प्रभावित करती है । ' का उत्तर प्रयोगात्मक अध्ययन द्वारा खोजना संभव नहीं है।

बाह्य प्रमाणता (External validity)

किसी भी अध्ययन की बाह्य प्रामाणता इस तथ्य पर निर्भर करती है कि अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर किस सीमा तक सामान्यीकृत कथनों या सामान्यीकरणों का निर्धारण किया जा सकता है तथा उस अध्ययन के अध्ययन प्रारूप के बाहर भीं उने समान्यीकरणों की कितनी उपादेयता है । यदि सामान्यीकरण निष्कर्ष सभी मनुष्यों पर लागू किये जा सकते है तथा अध्ययन में प्रयुक्त परिमापों का प्रयुक्तिकरण सभी समरूप अध्ययनों के लिए किया जा सकता है तो इसका अर्थ होगा कि इस अध्ययन में संपूर्ण बाह्य प्रमाणता निहित है । किसी भी अनुसंधान कार्य के लिए बाह्य प्रमाणता कई तरीकों से अवलंबित की जा सकती है किन्तु सामान्यत: समाज वैज्ञानिक इसके अवलंबन हेतु सचेत नहीं रहते है । इस सचेतनता के अभाव के दो प्रमुख कारण माने जा सकते है: सर्वप्रथम, बाह्य प्रमाणता को विकसित करने में अधिक धन राशि का व्यय होता है क्योंकि इसके लिए आवश्यक है कि सहभागी जनसंख्या को स्पष्ट रूप से पूर्णतया व्याख्यित किया जाए तथा निदर्शन प्रविधियों का प्रयोग उचित वैज्ञानिक तरीके से बहुत सावधानीपूर्वक किया जाए । इस हेतु विशिष्ट योग्यताधारी एवं पूर्ण प्रशिक्षित अनुसंधानकर्ताओं की आवश्यकता रहती है ।

द्वैतीयक स्तर पर अध्ययन में बाह्य प्रामाणता का विकास के अनुरूप अध्ययन की आन्तरिक प्रमाणता क्षीण होती जाने की संभावना निरन्तर बनी रहती है । आन्तरिक प्रमाणता उन परिस्थितियों में निरन्तर बनी रहती है जिनमें अध्ययन की जाने वाली स्थितियों में

अधिकतम या पूर्ण नियंत्रण बना रहता है । किन्तु यह परिस्थितियाँ वास्तिविक न होकर निर्मित होती है और यह कहना संभव नहीं है कि प्रयोगशाला के बाहर अथवा प्रयोग की स्थिति के बाहर की वास्तिविक सामाजिक स्थितियों का इसके द्‌वारा प्रतिनिधित्व होता है ।

किसी भी अनुसंधान प्रारूप में दोनों ही प्रकार की आन्तरिक एवं बाह्य प्रमाणता आवश्यक एवं वांछित गुण है । ऐसे किसी भी निष्कर्षो की उपादेयता संदिग्ध रहती है जो अव्यवस्थित हो तथा जो स्वयं निर्दिष्ट हो । इस प्रकार ऐसी किसी भी अनुसंधान की उपादेयता संदिग्ध हो जाती है जिसमें केवल बाह्य प्रमाणता पर ही ध्यान दिया जाता है तथा जिसका प्रारूप त्रुटिपूर्ण होते हुए भो केवल सतही परिणामों को बताने वाला हो ।

2.2 अनुसंधान प्रारूप के तार्किक आधार

अनुसंधान प्रारूप का आधारभूत पक्ष यह है कि अनुसंधान का निर्धारण इस प्रकार हो कि उसके आधार पर तार्किक निष्कर्ष प्रतिपादित किये जा सकते है तार्किक प्रमाणता के आधार पर प्रारूप जॉन स्टुवर्ड मिल द्‌वारा प्रतिपादित किये गए तथा वर्तमान में भी प्रयोगात्मक पद्धति के आधार के रूप में स्वीकष्त किये जाते है यद्‌यपि उनमें अनेक सुधार किये जा चुके है ।

1. दी मैथड ऑफ एग्रीमेन्ट (The Method of Agreement)
2. दी मैथड ऑफ डिफ्रेन्स (The Method of Difference)
3. दी ज्वाईन्ट मैथड ऑफ एग्रीमेन्ट एण्ड डिफेन्स (The Joint Method of Agreement and Differencde)
4. दी मैथड ऑफ कॉन कोमिटेन्ट वेरियंस (The Method of Con Commitent Varience)

2.2.1 मैथड ऑफ एग्रीमेंट

जब किसी भी प्रघटना की दो या दो से अधिक स्थितियों में केवल एक ही तत्व अथवा स्थिति समान होती है तो उस स्थिति को उस प्रघटना की उत्पत्ति का कारण माना जा सकता है ।

स्थिति ' X ' के तत्व

A + B + C = Z की उत्पत्ति

स्थिति ' Y ' के तत्व

C + D + E = Z की उत्पत्ति

अत: C = Z की उत्पत्ति । इस प्रकार C तथा Z कारण और प्रभाव के रूप में अन्त: संबंधित है । C कारक है और Z प्रभाव है ।

यद्‌यपि इस प्रकार का तार्किक प्रमाण एक कमजोर प्रमाण है किन्तु फिर भी एक सामान्य ज्ञान पर आधारित तर्क के आधार पर इसकी कुछ उपादेयता है तथा यह एक सामान्य ज्ञान पर आधारित तार्किकता के स्वरूप को स्पष्ट करने में सक्षम है । इसके द्‌वारा अध्ययन में से अनावश्यक तत्वों को दूर करने में सहायता मिलती है तथा अनुसंधान के विषय को सरलीकृत करने में सहायता मिलती है । कई बार स्थितियों में आकस्मिक समरूपता मिल जाती है जो

वास्तव में किसी तार्किक आधार पर कार्यकारण के सह-संबद्धता को परिलक्षित नहीं करती है । उदाहरणार्थ; दो विद्यार्थियों की परीक्षा में अनुतीर्ण होने की स्थिति में:

A = ग्रामीण + अमीर + खादी का पहनावा

B = शहरी + गरीब + खादी का पहनावा

A + B = खादी का पहनावा फेल होने का कारण नहीं हो सकता यह तो केवल प्रभाव है ।

इन दोनों उपर्युक्त उदाहरणों में सभी स्थितियाँ समान है केवल एक ही स्थिति के अलावा और वह स्थिति है कार्य और कारण दोनों की अनुपलब्धता ।

2.2.2 मैथड ऑफ डिफ्रेंस

जब C स्थिति के परिणामस्वरूप Z स्थिति उत्पन्न होती है अथवा अवलोकित होती है तो हम C एवं Z के मध्य कार्य-कारण संबंधों की परिकल्पना कर लेते है तथा इस संभावना को नजरन्दाज कर देते है कि इस एक कारक के अतिरिक्त अन्य कारक भी उस स्थिति के लिए उत्तरदायी हो सकते है । उदाहरणार्थ:

स्थिति X में A + B + C = Z स्थिति का निर्माण

A + B + शून्य = C - शून्य = - Z स्थिति का निर्माण

अत: C द्वारा Z निर्माण

यह प्रारूप इस संभावना का कोई उत्तर प्रदान नहीं करता है कि सम्मिलित एक कारक के अतिरिक्त अन्य भी अनेक कारक ऐसे हो सकते है जो इसके लिए उत्तरदायी हैं । उदाहरणार्थ गैसोलिन गैस की कमी के अनेक संभावित कारक हो सकते है । जैसे शॉर्ट सर्किट हो जाना, गैसोलिन लाईन का बाधित होना इत्यादि । यद्यपि यह एक सामान्य सोच या तार्किकता पर आधारित है यह किसी निर्दिष्ट प्रमाण को प्रस्तुत नहीं करता है ।

2.2.3 ज्वाइंट मैथड ऑफ एग्रीमेंट एवं डिफ्रेंस

इस विधि में हम अवलोकन हेतु स्थितियों की दो श्रेणियाँ लेते हैं जैसे दो समूह । एक समूह नियंत्रित है तथा एक समूह प्रयोगात्मक है । दोनों ही समूह मलेरिया बुखार से पीडित है । ऐटाबाईन दवा एक समूह को दी जाती है जिसे योगात्मक समूह कहा जायेगा । दूसरे समूह को यह दवा नहीं दी जाती जिसे नियंत्रित समूह कहा जाएगा । इसके उपरान्त दोनों ही समूहों में मलेरिया के लक्षणों को अवलोकित किया जाएगा । यदि दोनों ही समूहों में सभी सदस्य स्वस्थ्य हो जाते है अथवा कोई भी स्वस्थ्य नहीं होता है तो यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ऐटाबाईन दवा का मलेरिया पर कोई प्रभाव नहीं पडता है । इस प्रकार हम दोनों ही पद्धतियों का प्रयोग करते है।

इस पद्धति की कमी यह है कि उपरोक्त उदाहरण में पाया गया है कि यदि हम यह जानने का प्रयास करें कि क्या समूहों में अलग-अलग प्रकार का मलेरिया था या बिमारी की स्थितियों में विभेद था अथवा अन्य शारिरिक एवं स्वास्थ्य संबंधी कारकों में अन्तर था तो क्या उनका प्रभाव निष्कर्षो पर पडा है अथवा नहीं । इसका निर्धारण इस पद्धति द्वारा संभव नहीं है

क्योंकि यदि यह कारक महत्वपूर्ण माने जाए तो इन्हें नियंत्रित करना आवश्यक है । नियंत्रण का अर्थ है इन कारकों में फेर-बदल की जाए जैसे चरों के मूल्यों में परिवर्तन करना । यह हेर-फेर विभिन्न सांख्यिकीय पद्धतियों द्वारा प्राप्त की जाती है । इस हेतु प्रयुक्ता की जाने वाली सांख्यिकीय पद्धतियाँ है-

(i) युग्म समरूपता
(ii) आवृति समरूपता
(iii) यादृच्छ समरूपता (रेण्डमाइस मैचिंग)

युग्म समरूपता:

इस पद्धति में नियंत्रित श्रंखला में स्थित प्रत्येक व्यक्ति के समरूप एक व्यक्ति प्रयोगात्मक श्रृंखला में होगा जिसके गुण आपस में समरूप होंगें । जैसे आयु, लिंग, स्वास्थ्य इत्यादि । यद्यपि इतनी समरूपता व्यवहारिकता में प्राप्त करना संभव होने में कठिनाई आती है।

आवृति समरूपता :

आवृति समरूपता के आधार पर दोनों समूहों को लिया जाता है जैसे यदि प्रयोगात्मक समूह की औसत आयु 71 वर्ष है, तो हम अपने नियंत्रित समूह का निर्माण इस प्रकार करेंगे कि उसकी औसत आयु भी 71 वर्ष हो । आवृति समरूपता तुलनात्मक रूप से अधिक सरल है । इस पद्धति में हम सभी आवश्यक कारकों का बराबर का प्रतिनिधित्व प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, जो छोटे समूहों में तो फिर भी संभव है, किन्तु क्योंकि समाजशास्त्र में समग्र अत्यन्त व्यापक होता है, इस पद्धति की प्रकार्यात्मकता संदिग्ध हो जाती है ।

यादृच्छ समरूपता :

तुलनात्मक रूप से सबसे अधिक विश्वसनीय तकनीक यादृच्छीकरण (रेण्डमाइजेसन) है । उपरोक्त दोनों समरूपताओं की पद्धतियाँ ऐसी स्थिति में अधिक प्रभावकारी है, जब दोनों समूहों का आकार छोटा व सीमित हो । समाजशास्त्रीय अनुसंधानों में हमारे समग्र की जनसंख्या बडी एवं व्यापक होती है । यादृच्छीकरण में यह निर्धारित करते है कि कौन उत्तरदाता प्रयोगात्मक समूह में होंगे एवं कौनसे नियंत्रित समूह में ।

2.2.4 मैथड ऑफ कॉनकोमिटेंट वेरियेंस

यह एक सह-संबद्धता पर आधारित पद्धति है । इस पद्धति में हम किसी प्रधटना अथवा स्थिति की उपस्थिति या अनुपस्थिति से ही अवगत नहीं होते बल्कि स्थितियों के स्तर से भी अवगत होते है । अत: इस पद्धति में एक चर के स्तर परिवर्तन से उत्पन्न होने वाले अन्य चर के स्तर परिवर्तन पर बल दिया जाता है उदाहरण;

एक व्यक्ति का अध्ययन समय : एक घण्टा अध्ययन कर 36 % अंक की प्राप्ति
दो घण्टा अध्ययन कर 49 % अंक की प्राप्ति

तीन घण्टा अध्ययन कर 56 % अंक की प्राप्ति

चार घण्टा अध्ययन कर 70 % अंक की प्राप्ति

पाँच घण्टा अध्ययन कर 76 % अंकों की प्राप्ति

अत: हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि जितना अधिक समय अध्ययन में दिया जाएगा उतने ही अधिक अंक प्राप्त होंगे । कभी-कभी X के मूल्य में गिरावट के परिणाम स्वरूप Y के मूल्य में गिरावट दृष्टिगत होती है, अत: इसका अर्थ है कि दोनों चरों के मध्य संबंध सकारात्मक या नकारात्मक दोनों ही प्रकार के हो सकते है ।

2.3 अनुसंधान प्रारूप के मूल आधार

अनुसंधान प्रारूप आनुभाविक अध्ययन की एक संपूर्ण परियोजना है, जिसमें मुख्य प्रविधि, उपागम निदर्शन परिसंरचना तथा प्रमुख चरों का परिमापन समाहित होता है । प्रत्येक अनुसंधान प्रारूप आवश्यक रूप से निम्न प्रश्नों का उत्तर प्रदान करने में सक्षम होना चाहिए.

- किन इकाइयों का अध्ययन किया जाना है ।
- इन इकाइयों की कौन-सी विशेषताएँ अथवा पक्ष अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है ।
- विभिन्न गुणों के मध्य किस प्रकार की सह-संबद्धता अपेक्षित अथवा संभाव्य है ।वैज्ञानिक आनुभाविक अनुसंधान केवल एक गतिविधि ही नहीं है, अपितु इसका निर्धारण एक निश्चित प्रकिया में होता है । यह अनुसंधान प्रकिया विभिन्न स्तरों से होकर गुजरती है, जिनके निर्धारण के लिए अनुसंधान प्रारूप का निर्माण किया जाता है।

2.3.1 अनुसंधान प्रक्रिया

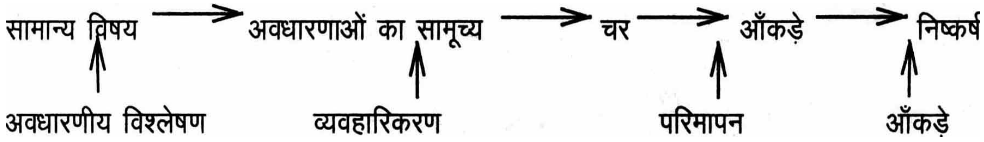

अध्ययन हेतु चयनित सामान्य विषय अत्यधिक व्यापक एवं अनेक पक्षीय होता है, इस चयनित विषय से संबंधित सामाजिक यर्थाथ को समझने के लिए अवधारणाओं का निर्माण तथा इन अवधारणाओं को वैज्ञानिक रूप से परिभाषित किया जाना आवश्यक होता है। संबोधों की वैज्ञानिक परिभाषा वास्तविक सामाजिक यथार्थ जिसको अवलोकन किया जाना है, को संपूर्ण रूप से परिभाषित कर भी सकती है और नहीं भी कर सकती है । अत: अनुसंधानकर्ता अध्ययन में प्रयुक्त संबोधों की प्रकार्यात्म परिभाषाओं का निर्माण करता है । सामाजिक विज्ञानों में प्रयुक्त होने वाले संबोधों के साथ यह सबसे प्रमुख समस्या है । ब्लूमर ने समाजशास्त्र में प्रयुक्त होने वाले संबोधों के लिये 'अनेकार्थी संबोध' (सेंस्टाइजिंग कॉन्सेप्टस) शब्द का प्रयोग किया है क्योंकि इनका मानना है कि समाजशास्त्र में प्रयुक्त होने वाले संबोध अनेकार्थी है तथा अनेक सामाजिक यर्थोथ के लिए एक ही संबोध के प्रयोग की संभावना रहती है । अत: इस स्तर पर अनुसंधानकर्ता से अपेक्षित हो जाता है कि वह अध्ययन में प्रयुक्त किये जाने वाले समस्त संबोधों को प्रकार्यात्मक रूप से परिभाषित करेगा । प्रकार्यात्मक परिभाषा प्रदान करने के बाद चरों का चयन किया जाता है । चरों का चयन आँकडों के परिमापन तथा आनुभाविक अध्ययन

हेतु तथ्य संकलन के संसाधन निर्माण में सहायक होता है । तथ्य संकलन के उपरान्त संपादन, वर्गीकरण, कोडिंग तथा तथ्य विश्लेषण की प्रक्रिया का प्रारंभ होता है । अध्ययन के उद्देश्य एवं प्रकृति पर आधारित अनुसंधान प्रारूप के प्रकार के अनुरूप सामान्यीकरण एवं निष्कर्षो का निर्धारण किया जाता है जो या तो कार्यकारण सह-संबद्धता पर आधारित होते है अथवा विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप के अनुरूप होते है ।

अत: अनुसंधान प्रारूप के तत्व निम्न है-

(i) समस्या का निर्धारण एवं प्राकत्यना निर्माण ।

(ii) संबोधों एवं प्राकल्पना को स्पष्ट रूप से व्याख्यित करना ।

(iii) अनुसंधान के विषय से संबंधित प्रलेखों, साहित्य तथा अन्य लिखित सामग्री का परीक्षण करना ।

(iv) चरों का चयन करना एवं उन्हें परिभाषित करना ।

(v) अनुसंधान के प्रकार का निर्धारण करना तथा उसके आधार पर तथ्य संकलन पद्धति तथा संसाधनों का चयन व निर्माण करना ।

2.3.2 अनुसंधान प्रारूप की महत्ता

किसी भी वैज्ञानिक अनुसंधान को संचालित करने हेतु अनुसंधान प्रारूप अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे अनुसंधानकर्ता को अनेक प्रकार से सहायता मिलती है तथा अध्ययन हेतु सही दिशा का ज्ञान होता है । अनुसंधान प्रारूप वैविध्यकरण के नियंत्रण में सहायता प्रदान करता है । कैरलिंगर का मानना है कि अनुसंधान प्रारुप विविधता एवं वैविध्यकरण को नियंत्रित करने में सहायता प्रदान करता है । वैविध्य को नियंत्रित कर अनुसंधान प्रारूप परिमापन तथा परिमापन की प्रविधियों को विश्वसनियता प्रदान करता है ।

2.4 अनुसंधान प्रारूप के प्रकार

2.4.1 विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप

2.4.2 अंवेक्षणात्मक अनुसंधान प्रारूप

2.4.3 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप

2.4.1.1 विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप का अर्थ - विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप का मुख्य उद्देश्य विवरण प्रस्तुत करना होता है । इस प्रकार के अनुसंधान के अन्तर्गत चाहे समग्र की जनसंख्या में विभिन्न गुणों के वितरण का विवरण देना हो अथवा किसी विशिष्ट समूह में पाये जाने वाले सामाजिक तौर-तरीकों का विवरण हो अथवा बहुत लघु स्तर पर होने वाले किसी राजनैतिक प्रदर्शन का विवरण हो । विवरणात्मक अनुसंधान में समग्र की जनसंख्या के विभिन्न गुणों के वितरण एवं उनके व्यवहारों का विवरण प्रस्तुत करने हेतु व्यक्तियों के प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चयन किया जाता है तथा प्रश्नों की एक निश्चित पूर्व रचित श्रंखला द्वारा इस चयनित निदर्शन से उत्तर के रूप में आँकडें संकलित किये जाते है । इस प्रकार- यह अनुसंधान प्रारूप प्रघटना का विवरण प्रदान कर उसे समझाने का प्रयास करता है ।

2.4.1.2 विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप की विशेषतायें -

(i) विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप अध्ययन की जाने वाली प्रघटना का विवरण प्रस्तुत करता है ।

(ii) कार्य-कारण सह-संबद्धता निर्धारित नहीं किये जाने के कारण इस अनुसंधान प्रारूप में प्राकल्पना निर्माण आवश्यक नहीं है ।

(iii) उच्च स्तरीय विवरण प्रदान किया जाना महत्वपूर्ण होता है क्योंकि यह एक अच्छे पूर्ण सिद्धान्त के लिए आधार प्रस्तुत करता है ।

(iv) एक विवरणात्मक कथन के रूप में हम कह सकते है कि औधोगिक क्रान्ति के उपरान्त परिवार छोटे होते जा रहे हैं और फिर इस कथन को समझाने हेतु इसका विवरण प्रस्तुत करते है । किन्तु यदि वास्तव में परिवार छोटे नहीं हो रहे हैं तो हमारा विवरण न केवल गलत है, अपितु अर्थहीन भी है । अत: विवरणात्मक अनुसंधान विश्लेषणात्मक अध्ययनों का आधार बनते हैं ।

(v) किसी प्रघटना का एक अच्छा विवरण एक अच्छी व्याख्या के लिए उत्पेरक का कार्य करता है । साथ ही अन्वेषणात्मक और व्याख्यात्मक अनुसंधान के लिए आधार प्रस्तुत करता है ।

2.4.1.3. विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप के प्रकार्य

- विवरणात्मक अनुसंधान "क्या है?" से संबंधित प्रश्नों से जुडा होता है न कि वे वैसे 'क्यों है?' से । विवरणात्मक अनुसंधान में अध्ययन के वृहद क्षेत्र समाहित होते हैं, जैसे बाजार से संबंधित अनुसंधान, संचार अनुसंधान के विभिन्न रूप जैसे रेटिंग सर्वेक्षण, मतदान अभिमुखन, किसी विशेष विषय पर जनमत विभाजन का अध्ययन इत्यादि । सामान्यत: सरकारों तथा प्रशासनिक संस्थाओं द्वारा विवरणात्मक अनुसंधान अधिक कराये जाते हैं, जैसे जनगणना सर्वेक्षण तथा बेरोजगारी आदि विभिन्न समस्याओं की दर निर्धारण हेतु सर्वेक्षण इत्यादि ।

समाजशास्त्रीय अध्ययन जैसे समुदाय की सामाजिक संरचना का विवरणात्मक अध्ययन, पिछले पचास वर्षो में सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन अथवा किसी संगठन की कार्यशीलता का अध्ययन आदि विवरणात्मक अनुसंधान के उदाहरण हैं ।

- विवरणात्मक अनुसंधान बहुत अधिक मूर्त भी हो सकता है और बहुत अधिक अमूर्त भी । इसकी यह प्रकृति इस पर निर्भर करती है कि वास्तव में हम किसका विवरण प्रस्तुत करना चाहते है । मूर्त आधार पर हम विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों की आय के विभिन्न स्तरों का विवरण प्रस्तुत कर सकते हैं अथवा उनकी प्रादेशिक पृष्ठभूमि का विवरण प्रस्तुत कर सकते हैं । दूसरी ओर हम बहुत अधिक अमूर्तता के स्तर पर ऐसे प्रश्नों के उत्तरों का विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास कर सकते हैं जैसे क्या आधुनिक परिवार सबसे पृथक होता जा रहा है?
- विवरणात्मक अनुसंधान सामाजिक समस्याओं की उपस्थिति एवं उनके प्रसार को प्रस्तुत करने में मुख्य भूमिका अदा करता है । यह किसी भी समस्या के प्रति सामाजिक प्रतिक्रिया को उत्पेरित भी कर सकता है तथा साथ ही सामाजिक नीति-निर्धारण का आधार भी प्रस्तुत कर

सकता है, क्योंकि किसी भी विधमान समस्या का संपूर्ण विवरण प्रस्तुत होने के परिणामस्वरूप उस समस्या की उपस्थिति को नकारा नहीं जा सकता ।

2.4.2.1 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप का अर्थ

अन्वेषणात्मक अनुसंधान यह समझाने का प्रयास करता है कि एक संपूर्ण सामाजिक इकाई जैसे समूह-संगठन अथवा समुदाय आदि अपने स्वयं के अनुसार ही किस प्रकार संचालित होते हैं अथवा बने रहते हैं । अनुसंधानकर्ता जो इस अनुसंधान प्रारूप का प्रयोग करते हैं सामान्यत: अध्ययन की जाने वाली सामाजिक इकाई की दैनिक दिनचर्या में स्वयं को इस प्रकार समाहित कर लेते है कि उनकी उपस्थिति से उस सामाजिक इकाई में विधमान सामाजिक प्रर्यावरण एवं लोगों के व्यवहार परिवर्तित न हो । फिर क्या घटित हो रहा है? एवं किस प्रकार हो रहा है? का अवलोकन करते हुए अवलोकित तथ्यों को लिपिबद्ध कर उस सामाजिक पर्यावरण के अर्थ को समझने का तार्किक प्रयास किया जाता है ।

अन्वेषणात्मक अनुसंधान मानवीय परिदृश्य के किसी भी एक भाग को गहनता से समझने के लिए संचालित किए जाते है । यह अनुसंधान खुले प्रश्नों के साथ प्रारंभ होते है और सब कुछ अवलोकित कर लेने की या जान लेने की जिज्ञासा से परिपूर्ण होते है ।

अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप में प्राकल्पना निर्माण समाहित है । इसमें व्यक्तियों का एक विशिष्ट चयनित समूह होता है, जिसे निदर्शन कहा जाता है, पूर्व निर्धारित प्रश्नों की सूची, प्रश्नावली अथवा अनुसूची के रूप में होती है तथा साथ ही एक पूर्व निर्धारित परियोजना होती है कि किस प्रकार यह प्रश्न अध्ययन किये जाऐगें तथा अनुसंधानकर्ता किस प्रकार अपने उद्देश्यों को प्राप्त करेगा!

यह अनुसंधान प्रारूप प्राथमिक एवं द्वैतीयक दोनों ही प्रकार के तथ्य स्रोतों पर निर्भर होता है । द्वैतीयक स्रोत जैसे उपलब्ध साहित्य की समीक्षा इत्यादि तथा प्राथमिक तथ्य के स्रोत जैसे उत्तरदाताओं के साथ अनौपचारिक विचार-विमर्श तथा तथ्य संकलन की अधिक औपचारिक पद्धतियाँ जैसे गहन साक्षरता, केन्द्रीत समूह विचार विनिमय, व्यक्तियक अध्ययन इत्यादि, इन दोनों ही के माध्यम से तथ्य संकलन का कार्य संचालित किया जाता है ।

रसल के. शुट्ट ने अपनी पुस्तक "इन्वेस्टीगेटिंग दी सोशियल वर्ड" में कहा है कि "अन्वेषणात्मक अनुसंधान यह जानने का प्रयास करता है कि लोग किस प्रकार एक-दूसरे के साथ अध्यनित पर्यावरण में रहते हैं, एक-दूसरे की किया को क्या अर्थ देते हैं तथा कौन-से विषय अथवा तत्व उन्हें महत्वपूर्ण लगते हैं । इन सबका उद्देश्य यह जानना है कि "वही क्या हो रहा है? " तथा बिना किसी स्पष्ट छूट के उस सामाजिक प्रघटना को गहनता से अन्वेशित करना । “इस अनुसंधान प्रारूप को कुछ विचारक गुणात्मक अनुसंधान के उपागम के रूप में भी परिभाषित करते हैं तथा मानते हैं कि यह तथ्यों से सिद्वान्त निर्माण का एक प्रयास है न कि किसी पूर्व निर्धारित प्राकल्पना की सत्यता की परख ।

2.4.2.2 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप की विशेषताएँ

अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप संबंधित साहित्य के समीक्षात्मक अध्ययन पर बल देता है ।

- यह अध्ययन से संबंधित समस्या अथवा विषय संबंधी तथ्य संकलन हेतु संभावित उत्तरदाताओं अथवा मुख्य उत्तरदाताओं (की इन्फोर्मेन्ट)की खोज करता है ।
- यह उत्पेरक तत्वों का गहनता से विषलेशण करता है ।

2.4.2.3 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप की भूमिका

आनुभाविक अनुसंधान की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए सेलिटाज ने कहा है कि "अन्वेषणात्मक अनुसंधान उन अनुभवों को प्राप्त करने के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं जो अधिक निश्चित अनुसंधानों के लिए उपयुक्त प्राकल्पना निर्माण में सहायक है । "

अत: यह कहा जा सकता है कि:

- अन्वेषणात्मक अनुसंधान खोज के नये क्षेत्रों को ढूढने में सहायता करता है ।
- यह विभिन्न प्रकार के अनुसंधान प्रारूपों को विकसित करने के लिए आवश्यक प्रारम्भिक जानकारियाँ तथा तथ्य प्रस्तुत करता है ।
- यह अन्य अनुसंधान प्रारूपों में प्रयुक्त होने वाली विभिन्न प्रविधियों की प्रकार्यात्मकता तथा उपादेयता का निर्धारण करने में सहायक होता है ।

2.4.3.1 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप का अर्थ

प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप में वास्तविक प्रयोग तथा अर्ध प्रयोग दोनों सम्मिलित होते हैं । इस अनुसंधान प्रारूप में दो या दो से अधिक उत्तरदाताओं के समूह के मध्य एक या अधिक चरों के आधार पर जिनका समावेश इन समूहों में जानबूझ कर किया गया हो, तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है ।

प्रयोगात्मक अनुसंधान किसी सामाजिक संकलन के किसी विशिष्ट भाग को समझने का प्रयास करता है जिसे किसी बाह्य कारक द्वारा अध्ययन हेतु विशेष रूप से उत्पेरित किया गया हो । इसकी पद्धति में उन स्थितियों पर नियंत्रण स्थापित किया जाता है, जिसमें व्यक्तियों के उस समूह का अध्ययन किया जाता है जिसे प्रयोगात्मक समूह कहा जाता है तथा जिसे प्रयोग हेतु बाह्य उत्प्रेरक दिया गया हो । दूसरे समूह जिसे नियंत्रक समूह कहा जाता है तथा जिसमें बाह्य उत्प्रेरक नहीं दिया गया होता है दोनों के मध्य प्रतिकियात्मक तुलनात्मक अध्ययन कर प्रयोग के निष्कर्षो को नियंत्रित किया जाता है ।

इस प्रयोगात्मक अध्ययन का उद्देश्य कार्यकारण सह-संबद्धता की श्रंखला को खोजना होता है ।

यह अध्ययन प्रारूप यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि किस प्रकार स्वतंत्र चर में परिवर्तन आश्रित चर में परिवर्तन को प्रभावित करता है और यह सिद्ध करने का प्रयास करता है कि अवलोकित परिवर्तन स्वतंत्र चर में होने वाले परिवर्तन का प्रतिफल है, न कि किसी अन्य प्रकार के परिवर्तन का ।

प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप में एक प्रयोगात्मक समूह होता है तथा एक नियंत्रक समूह

प्रयोगात्मक समूह	**नियंत्रक समूह**
1. उत्तरदाता का चयन	1. उत्तरदाता का चयन
2. प्रयोगात्मक पर्यावरण का चयन	2. प्रयोगात्मक पर्यावरण का चयन
3. पूर्व परीक्षण	3. पूर्व परीक्षण
4. बाह्य उत्प्रेरक को समाहित करना	4. पश्च परीक्षण
5. पश्च परीक्षण	
सूत्र: प्रयोगात्मक समूह	सूत्र: नियंत्रक समूह
पश्च परीक्षण-पूर्व परीक्षण = अन्तर	पश्च परीक्षण-पूर्व परीक्षण = अन्तर

"अत: कार्यकारण = अन्तर (प्रयोगात्मक समूह) - अन्तर (नियंत्रक समूह)"

इस प्रयोग की तार्किकता अत्यन्त साधारण है । प्रयोगकर्ता इस प्राकल्पना के साथ प्रयोग प्रारंभ करता है कि पक स्वतंत्र चर में परिवर्तन दूसरे आश्रित चर में परिवर्तन का कारण है । प्रयोग की प्रकिया का प्रथम चरण है आश्रित चर को मापना जिसे पूर्व परीक्षण कहा जाता है । दूसरे चरण में स्वतंत्र चर को स्थिति में सम्मिलित किया जाता है और यदि वह पहले से विधमान है तो उसके स्तर को बढाया जाता है । तीसरे चरण में आश्रित चर का पुन: मापन किया जाता है, जिसे पश्च परीक्षण कहा जाता है, यह देखने के लिए कि क्या उसमें किसी प्रकार का कोई प्रभावात्मक परिवर्तन आया है ।

2.4.3.2 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप की विशेषताएँ

- प्रयोगात्मक अनुसंधान के लिये प्राकल्पना निर्माण अत्यन्त आवश्यक है ।
- स्वतंत्र एवं आश्रित चरों के मध्य कार्य-कारण संबंधों का निर्धारण किया जाता है ।
- अवलोकित की जाने वाली जनसंख्या को दो समूहों जैसे कि प्रयोगात्मक समूह तथा नियंत्रक समूह में विभाजित किया जाता है ।
- कार्य-कारण संबंध निर्धारित करने के लिए किसी बाह्य तत्व अथवा उत्पेरक को समाविष्ट किया जाता है ।
- इस प्रकार के अनुसंधान प्रारूप में आन्तरिक प्रमाणता की दर अधिक होती है ।

2.4.3.3 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप की भूमिका

- यह अनुसंधान प्रारूप कार्य-कारण सह-संबद्धता निर्धारित करता है । समाज विज्ञानों में कार्य-कारण संबंध निर्धारित करने हेतु प्रयोग को उपयुक्त पद्धति माना जाता है । इसके द्वारा अनुसंधानकर्ता आश्रित चर का मूल्य मापने में सक्षम होता है, उस स्वतंत्र चर को पहचानने में सक्षम होता है जिसे वह कारक मानता है तथा आश्रित चर में होने वाले परिवर्तन को अवलोकित करना संभव हो पाता है ।
- प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप कारकों अथवा स्थितियों के नियंत्रण पर बल देता है । एक शुद्ध प्रयोग वह माना जा सकता है, जो सर्वोच्च नियंत्रण प्रदान करता है । नियंत्रण

एवं नियंत्रण के स्तर का तथ्य विश्लेषण तथा प्राकल्पना परीक्षण पर बहुत अधिक प्रभाव पडता है

- प्रयोगात्मक अध्ययन प्रारूप समय एवं काल-आधारित अध्ययन को संभव बनाता है । इस प्रकार के प्रयोगात्मक अध्ययनों में सामान्यत: अनुसंधानकर्ता एक समय विशेष में एक क्षेत्र विशेष अथवा विषय-विशेष से संबंधित आँकडों का संकलन करता है तथा उनका मापन एक से अधिक समयान्तर के द्वारा करता है ।

2.5 सारांश

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि अनुसंधान प्रारूप वैज्ञानिक अनुसंधान करने की एक योजना है, जिसका प्रमुख तत्व है प्रमाणता । प्रमाणता दो प्रकार की होती है: आन्तरिक प्रमाणता तथा बाह्य प्रमाणता । अनुसंधान प्रारूप का तार्किक आधार है, जिसके द्वारा तार्किक निष्कर्ष निकालना संभव होता है । तार्किक प्रमाणता के आधार प्रारूप चार है: मैथड ऑफ एग्रीमेंट, मैथड ऑफ डिफेंस, ज्वाइंट मैथड ऑफ एग्रीमेंट एण्ड डिफेंस तथा दी मैथड ऑफ कॉनकॉमिटेन्ट वेरियन्स ।

विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप का मुख्य उद्देश्य विवरण प्रस्तुत करना है । विवरणात्मक अनुसंधान 'कैसा है?" के प्रश्नों से संबंधित है न कि "ऐसा क्यों है?" के प्रश्न से । अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप यह समझने का प्रयास करता है कि संपूर्ण सामाजिक इकाई अपने स्वयं के अनुसार किस प्रकार क्रियाशील रहती है । यह अनुसंधान के नवीन क्षेत्रों की खोज करने में सहायता प्रदान करता है । प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप कार्यकारण, सहसंबद्धता निर्धारित करता है । यह नियंत्रण पर बल देते हुए समयकालिक अध्ययनों में सहायता प्रदान करता है ।

2.6 अभ्यास प्रश्न

निम्न प्रश्नों का संक्षिप्त में उत्तर दीजिए :

1. अनुसंधान प्रारूप को परिभाषित कीजिए?
2. विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप की विशेषताओं का परीक्षण कीजिए?
3. प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप से आप क्या समझते है? स्पष्ट कीजिए ।
4. अनुसंधान करते समय अनुसंधान प्रारूप की आवश्यकता क्यों है?
5. अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप की विशेषताओं एवं भूमिका की व्याख्या कीजिए?

2.7 संदर्भ ग्रंथ

- कैरलिंगर एफ. एन. :फाऊडेशन्स ऑफ बिहेवियरल रिसर्च; राईनहार्ट एण्ड विंस्टन, न्यू यार्क ।
- गुडे एण्ड हार्ट: मैथड्स इन सोशियल रिसर्च; मैकग्रौ हिल बुक कं., आईएनसी, टोक्यो ।
- एकॉफ आर. एल.: दी डिजाईन ऑफ सोशियल रिसर्च, यूनिर्वसिटी ऑफ शिकागो प्रेस, यू.एस.ए. ।

- यंग, पी. वी.: साइंटिफिक सोशियल सर्वेज एण्ड रिसर्च, प्रेन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली ।

इकाई-3

प्राक्कल्पनाएँ : स्त्रोत एवं प्रकार

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 प्राक्कल्पना का अर्थ
3.3 प्राक्कल्पना के निर्माण के मापदंड
3.4 उपयोगी प्राक्कल्पना की विशेषताएँ
3.5 प्राक्कल्पना के प्रकार
3.6 प्राक्कल्पना के स्त्रोत
3.7 प्राक्कल्पना के निर्माण में कठिनाइयाँ
3.8 प्राक्कल्पना के कार्य तथा महत्व
3.9 प्राक्कल्पना की आलोचना
3.10 अभ्यास प्रश्न
3.11 सारांश
3.12 शब्दावली
3.13 सदंर्भ ग्रंथ सूची

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में प्राक्कल्पना पर प्रकाश डाला गया है । सामाजिक अनुसंधान में बिना प्राक्कल्पना के एक आगे बढ़ना संभव नहीं है प्राक्कल्पना सामाजिक अनुसंधान में अध्ययन को निर्देशित नियंत्रित ओर करती है । प्राक्कल्पना के अध्ययन के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं -

1. प्राक्कल्पना के अर्थ को समझना ।
2. प्राक्कल्पना का निर्माण किन मापदंडों को ध्यान में रखकर करना चाहिये इसकी विवेचना करना ।
3. सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में प्राक्कल्पना की क्या उपयोगिता है?
4. प्राक्कल्पनायें कितने प्रकार की होती है? अध्ययन विषय की प्रकृति के आधार पर किस प्रकार की प्राक्कल्पनाओं का निर्माण करना चाहिये ।
5. प्राक्कल्पना का निर्माण किन स्त्रोतों के माध्यम से होता है, इस पर प्रकाश डालना ।
6. प्राक्कल्पना के निर्माण में आने वाली कठिनाइयों पर प्रकाश डालना ।
7. सामाजिक अनुसंधान में प्राक्कल्पनाओं के कार्य तथा महत्व पर प्रकाश डालना ।
8. प्राक्कल्पना की सीमाओं से अवगत होना ।

3.1 प्रस्तावना

सामाजिक अनुसंधान में प्राक्कल्पना का महत्वपूर्ण स्थान होता है । चरों (Variables) को क्रियात्मक बनाने (Operationalizing) के बाद अनुसंधानकर्त्ता आधार सामग्री (Data) के संग्रह और उसकी व्याख्या करने के लिए स्पष्ट रूपरेखा (Framework) तथा निर्देशन चाहता है । प्राक्कल्पनाएँ ऐसा निर्देशन प्रदान करती हैं।

3.2 प्राक्कल्पना का अर्थ

प्राक्कल्पना चरों के बीच के सम्बन्धों के विषय में एक पूर्वानुमान है । यह अनुसंधान की समस्या की प्रायोगिक (tentative) व्याख्या है, या अनुसंधान के निष्कर्षों के विषय में अनुमान । अनुसंधान प्रारंभ करने से पूर्व समस्या के प्रति अनुसंधानकर्त्ता के मन में अपेक्षाकृत, असंगठित, अस्पष्ट और साधारण से विचार होते है । अनुसंधान समस्या के विषय में उपयुक्त कथन करना आवश्यक है । दो चरों (Variables) के बीच सम्बन्धों से सम्बद्ध कथन प्रस्तावित करना एक प्राक्कल्पना कहलाता है ।

कैरलिंगर (1973) का कहना है कि "प्राक्कल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच सम्बन्ध प्रदर्शित करने वाला एक अनुमानात्मक कथन है । ' स्पष्ट है कि प्राक्कल्पना दो या दो से अधिक चरों या कारकों का परस्पर कारणीय सम्बन्ध स्पष्ट करती है जिसकी जाँच या परीक्षण करना बाकी है कि उनमें परस्पर सम्बन्ध कितना सत्य या असत्य है । इसी बात को इक तथा डोब्रिनर ने भी कहा है ।

लुण्डबर्ग के अनुसार "प्राक्कल्पना एक काम चलाऊ सामान्यीकरण है जिसकी सत्यता की परीक्षा अभी बाकी है । अपने प्रारम्भिक स्तरों पर प्राक्कल्पना एक अनुमान, कल्पनात्मक विचार अथवा पूर्वानुमान आदि कुछ भी हो सकती है जो बाद में किसी भी क्रिया अथवा अनुसंधान का आधार बन जाती है ।

पी.वी. यंग के अनुसार "एक अस्थाई लेकिन केन्द्रीय महत्व का विचार जो उपयोगी अनुसंधान का आधार बन जाता है, उसे हम एक कार्यकारी प्राक्कल्पना कहते हैं । "

बैब्सटर (1968) ने प्राक्कल्पना को निष्कर्ष निकालने और इसके तर्कसंगत या स्वानुभूत नतीजों का परीक्षण करने के लिए प्रयोगार्थ अनुमान कहकर परिभाषित किया है । यहाँ परीक्षण का अर्थ है या तो गलत सिद्ध करना या इसकी पुष्टि करना ।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि प्राक्कल्पना कारण प्रभाव के रूप में तथ्यों से सम्बन्धित एक प्रास्थापना, विचार अथवा कच्चा सिद्धान्त है जिसकी परीक्षण द्‌वारा जाँच करनी बाकी है । यह प्रारंभ से लेकर अन्त तक अनुसंधान का आधार है । प्राक्कल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच सम्बन्ध बताता है जिसकी सत्यता की जाँच वैज्ञानिक पद्धति द्‌वारा की जाती है । सत्य सिद्ध होने पर यह सिद्धान्त बन जाता है ।

3.3 प्राक्कल्पना के निर्माण के मापदंड (Criteria for Hypotheses Construction)

प्राक्कल्पना प्रश्न के रूप में नहीं बनाई जाती । कैनेथ बेली (1982) बेकर (1989) सेलिटिज आदि (1998) ने प्राक्कल्पना निरूपण में कई मापदंडों का ध्यान रखने के लिए कहा है ।

1. प्राक्कल्पना अनुभव द्वारा परीक्षणीय होनी चाहिए ।
2. वह सुस्पष्ट एवं सूक्ष्म होनी चाहिए ।
3. प्राक्कल्पना के कथन विरोधाभासी नहीं होने चाहिए ।
4. जिन चरों के बीच संबंध स्थापित किया जाना है उनका विशेष उल्लेख किया जाना चाहिए । प्राक्कल्पना या तो विवरणात्मक या सम्बन्धात्मक स्वरूप में होनी चाहिए । विवरणात्मक स्वरूप घटनाओं का वर्णन - करता है और संबंधात्मक स्वरूप चरों के बीच संबंध को स्थापित करती है । प्राक्कल्पना निर्देशित (Directional), गैर निर्देशित या निराकरणीय (Null) स्वरूप से हो सकती है ।

3.4 उपयोगी प्राक्कल्पना की विशेषताएँ (Characteristic of usable Hypotheses)

गुडे एवं हॉट्ट ने उपयोगी प्राक्कल्पना की निम्नलिखित विशेषताएँ बताई हैं - इनमें से किसी एक के अभाव में प्राक्कल्पना अनुसंधान में काम में नहीं लाई जा सकती है ।

क **स्पष्टता (Clearity)** -प्राक्कल्पनाओं की स्पष्टता में दो बातें सम्मिलित की जाती हैं; एक तो यह कि प्राक्कल्पना में निहित अवधारणाओं को स्पष्ट रूप में परिभाषित किया जाए । दूसरी यह है कि परिभाषाएँ ऐसी भाषा में लिखी जाएँ कि अन्य लोग भी सामान्यत: उसका सही अर्थ समझ सकें ।

ख **अनुभवाश्रित संदर्भ (Empirical represents)-** इस विशेषता का तात्पर्य यह है कि वही प्राक्कल्पना वैज्ञानिक अनुसंधान में प्रयुक्त की जा सकती है जिसमें कि आदर्शात्मक निर्णय (Value judgement)का पुट नहीं है, इसका अर्थ यह है कि वैज्ञानिक को अपनी प्राक्कल्पना में किसी आदर्श को प्रस्तुत करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए, अपितु उसका सम्बन्ध ऐसे विचार या ऐसी अवधारणा से होना चाहिए जिसकी सत्यता की परीक्षा वास्तविक तथ्यों के आधार पर की जा सके ।

ग **विशिष्टता (Specificity)-**उपयोगी प्राक्कल्पना विशिष्ट होनी चाहिए । यदि प्राक्कल्पना सामान्य है तो उससे यथार्थ निष्कर्ष तक पहुँचना संभव नहीं होता है क्योंकि किसी विषय के सभी पक्षों का वैज्ञानिक अध्ययन हम एक ही समय पर नहीं कर सकते । अत: यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि प्राक्कल्पना अध्ययन विषय के किसी विशेष पहलू से सम्बद्ध हो । अगर उसमें विशिष्टता का गुण नहीं हुआ तो उसकी सत्यता की जाँच करना भी कठिन हो जाता है और जो प्राक्कल्पना जाँच से परे है वह वैज्ञानिक के लिए निरर्थक भी है ।

घ उपलब्ध प्रविधियों से सम्बद्ध (Related to available techniques)-प्राक्कल्पना का निर्माण इस बात को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए कि उसकी सत्यता की जाँच उपलब्ध प्रविधियों के द्वारा संभव हो, इसका तात्पर्य यह है कि प्राक्कल्पना इस प्रकार की हो कि वह अनुसंधान का एक सामयिक आधार भी बन सकती है या नहीं; इसकी परीक्षा उपलब्ध प्रविधियों द्वारा की जा सके ।

ङ **सिद्धान्त से सम्बन्धित (Related to Theory)** - प्राक्कल्पना सिद्धान्त के समूह से सम्बन्धित होनी चाहिए, प्राय: विद्यार्थी इस प्रकार का अध्ययन विषय चुन लेते हैं जो रूचिकर और आकर्षक हो, ऐसा करते समय वे इस बात का ध्यान नहीं रखते हैं कि उनका वह शोधकार्य वास्तव में सामाजिक संबंधों से सम्बद्ध किन्हीं विद्यमान सिद्धान्तों को गलत प्रमाणित करने या उन्हें सही प्रमाणित करने अथवा उनकी पुष्टि करने में सहायक भी है या नहीं, प्राक्कल्पना ऐसी होनी चाहिए जो सम्बद्ध क्षेत्र में किसी पूर्व स्थापित सिद्धान्त के क्रम में हो क्योंकि असम्बद्ध प्राक्कल्पनाओं की परीक्षा विस्तृत सिद्धान्तों के संदर्भ में नहीं की जा सकती ।

3.5 प्राक्कल्पनाओं के प्रकार (Types of Hypotheses)

- **कार्यकारी प्राक्कल्पनाऐं (Working Hypotheses)** - कार्यकारी प्राक्कल्पना अनुसंधान के विषय पर अनुसंधानकर्ता के प्रारम्भिक अनुमान होते हैं, विशेष रूप से तब जबकि प्राक्कल्पना को सिद्ध करने के लिये पर्याप्त जानकारी उपलब्ध न हो और अन्तिम अनुसंधान प्राक्कल्पना के निरूपण की ओर एक कदम मात्र हो, कार्यकारी प्राक्कल्पनाएँ अन्तिम अनुसंधान योजना का प्रारूप तैयार करने में, अनुसंधान की समस्याओं को सही परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने में तथा अनुसंधान के विषय को स्वीकार्य आकार में छोटा बनाने में प्रयुक्त की जाती है ।
- **वैज्ञानिक प्राक्कल्पनाऐं (Scientific Hypotheses)**-वैज्ञानिक प्राक्कल्पना में सैद्धान्तिक एवं अनुभवपरक आधार सामग्री पर आधारित या उससे लिया हुआ कथन होता है ।
- **वैकल्पिक प्राक्कल्पनाऐं (Alternative Hypotheses) -** वैकल्पिक प्राक्कल्पना दो प्राक्कल्पनाओं का समूह होता है (अनुसंधान और निराकरणीय) । जो निराकरणीय प्राक्कल्पना को विपरीत बतलाती है । निराकरणीय प्राक्कल्पना के सांख्यिकीय परीक्षण में Ho की स्वीकृति (निराकरणीय प्राक्कल्पना) का अर्थ है वैकल्पिक प्राक्कल्पना की अस्वीकृति और इसी प्रकार Ho की अस्वीकृति का अर्थ है वैकल्पिक प्राक्कल्पना की स्वीकृति ।
- **अनुसंधान प्राक्कल्पनाऐं (Research Hypotheses) -** अनुसंधान प्राक्कल्पना किसी सामाजिक तथ्य के विषय में बिना उसके विशेष गुणों को संदर्भ में लिए हुए अनुसंधानकर्ता की प्रस्थापना होती है । अनुसंधानकर्ता का विश्वास होता है कि यह सत्य है और वह चाहता है कि इसको असत्य सिद्ध कर दिया जाये । जैसे हॉस्टल, किराए के कमरे में रहने वाले उच्च वर्गीय छात्रों में मादक पदार्थो का सेवन अधिक पाया जाता है ।
- **निराकरणीय प्राक्कल्पनाऐं (Null Hypotheses) -** निराकरणीय प्राक्कल्पना अनुसंधान प्राक्कल्पना का पर्याय है, यह बिना सम्बन्धों की प्राक्कल्पना है, निराकरणीय प्राक्कल्पनाएँ वास्तव में होती ही नहीं है लेकिन प्राक्कल्पनाओं के परीक्षण के लिए प्रयोग की जाती है ।

पुष्टिकरण के लिए अनुसंधान प्राक्कल्पना निराकरणीय प्राक्कल्पना में क्यों बदल दी जाती है ' इसके प्रमुख कारण हैं - (i) किसी चीज को सत्य सिद्ध करने की अपेक्षा असत्य सिद्ध करना सरल होता है । (ii) जब कोई व्यक्ति किसी चीज को सिद्ध करने का प्रयास करता है तो यह उसकी प्रतिबद्धता की ओर संकेत करता है । लेकिन जब वह इसे असत्य सिद्ध करना चाहता है तो यह उसकी वस्तुपरकता को इंगित करता है । (iii) यह संभावना सिद्धान्त पर आधारित है अर्थात् यह या तो सत्य हो सकता है या असत्य (iv) सामाजिक अनुसंधान में निराकरणीय प्राक्कल्पना का प्रयोग करने की परिपाटी है ।

- **सांख्यिकीय प्राक्कल्पनाऐं (Statistical Hypotheses) -** सांख्यिकीय प्राक्कल्पना सांख्यिकीय गणनाओं के विषय में वह कथन अवलोकन है जिसका वह समर्थन करना चाहता है या अस्वीकार करना चाहता है । तथ्यों को संख्यात्मक मात्राओं में रख दिया जाता है और उन्हीं मात्राओं के विषय में निर्णय लिया जाता है । जैसे दो समूहों के बीच आय में अन्तर समूह "द्र" समूह "प्त" से अधिक धनी है, निराकरणीय प्राक्कल्पना. होगी । समूह A समूह B से अधिक धनी नहीं है, यहाँ चरों को मापनीय मात्राओं में बदल दिया गया है ।

स्पष्ट है कि अनुसंधान प्राक्कल्पना प्राप्त की गई प्राक्कल्पना है । निराकरणीय प्राक्कल्पना अनुसंधान प्राक्कल्पना है जिसका परीक्षण होना है तथा सांख्यिकीय प्राक्कल्पना निराकरणीय प्राक्कल्पना की संख्यात्मक अभिव्यक्ति है ।

प्राक्कल्पना के निरूपण की प्रक्रिया कार्यकारी प्राक्कल्पना विकसित करके प्रारंभ की जा सकती है जिन्हें धीरे-धीरे अनुसंधान प्राक्कल्पनाओं के रूप में विकसित किया जा सकता है और अन्त में सांख्यिकीय प्राक्कल्पना के रूप में रूपान्तरित किया जा सकता है । (निराकरणीय ओर वैकल्पिक प्राक्कल्पनाएँ) । फिर संग्रहीत आधार सामग्री को सांख्यिकीय परीक्षण की अनुमति होगी और तब यह दर्शाएगी कि क्या अनुसंधान प्राक्कल्पना को स्वीकृत या अस्वीकृत किया गया है ।

गुडे और हाट्ट (1962) ने अमूर्तता के स्तर के आधार पर निम्नलिखित तीन प्रकार की प्राक्कल्पनाएँ बताई हैं -

1. जो सामान्य अर्थो में प्रस्थापना को प्रस्तुत करती है या जिसके विषय में पहले से ही सामान्य अर्थ के अवलोकन मौजूद हैं ।
2. जो थोड़े जटिल होते हैं अर्थात जो थोड़े जटिल सम्बन्धों को कथन देते हैं।
3. जो बहुत जटिल होते हैं अर्थात् जो दो भरों के बीच के सम्बन्धों को अधिक जटिल तरीके से व्यक्त करते है ।

3.6 प्राक्कल्पनाओं के स्त्रोत (Sources of Hypotheses)

1. **सामान्य संस्कृति -** सामान्य संस्कृति, जिनमे की एक विज्ञान पनपता है विज्ञान की अनेक प्राक्कल्पनाओं का एक आधार बन जाती है, गुडे एवं हॉट्ट ने सामान्य संस्कृति से

सम्बन्धित प्राक्कल्पनाओं के निम्नलिखित तीन उप-स्त्रोतों का वर्णन किया है - (i) सांस्कृतिक मूल्य (ii) लोक विश्वास (iii) सामाजिक परिवर्तन

(a) **सांस्कृतिक मूल्य (Cultural Values) -** प्रत्येक समाज के सांस्कृतिक मूल्य एक दूसरे से भिन्न होते हैं । उदाहरणस्वरूप अमेरिकी संस्कृति व्यक्तिवाद, गतिशीलता, प्रतिस्पर्धा और समानता पर जोर देती है । इसलिये अमेरिका के समाजशास्त्रियों ने अपनी संस्कृति के मूल्यों के आधार पर जिन अनेक प्राक्कल्पनाओं का निर्माण किया वे व्यक्ति के सुख से संबंधित थी जबकि भारतीय संस्कृति, आध्यात्मवाद, जाति व्यवस्था, संयुक्त परिवार परार्थवाद पर जोर देती है । इस कारण भारतीय समाजशास्त्रियों के लिये इससे संबंधित उपकल्पना बनाना आसान होता है ।

(b) **लोक विश्वास (Folk Beliefs)-**समाज में असंख्य लोक-विश्वास, धारणाएँ, जन साधारण के विचार आदि प्राक्कल्पना के स्त्रोत हो सकते हैं । अनुसंधानकर्ता अपने समाज में प्रचलित लोक-विश्वास, धारणाएँ, कहावतें, लोकोक्तियाँ, पूर्वाग्रह आदि को प्राक्कल्पना के रूप में अध्ययन करके उनकी सत्यता प्रमाणिकता एवं विश्वसनीयता की जाँच कर सकते हैं ओर उसके द्वारा ज्ञान के विकास में सहयोग दे सकते हैं ।

(c) **सामाजिक परिवर्तन (Social Change)-**समाज परिवर्तनशील है । कई पुराने सिद्धान्त एवं पूर्वानुमान नई परिस्थितियों में प्रासंगिक नहीं रहते हैं, पुराने सिद्धान्त, निष्कर्ष, अवधारणाएँ, कथन, साहित्य आदि पुराने एवं अप्रचलित हो जाते हैं, ऐसी स्थिति में पुराने सिद्धान्तों का नवीन परिस्थितियों में पुन: परीक्षण करने के लिए नई प्राक्कल्पनाओं का निर्माण करके नए सिद्धान्तों, अवधारणाओं आदि का निर्माण किया जा सकता है ।

2. **वैज्ञानिक सिद्धान्त (Scientific theories) -** प्राक्कल्पनाओं का जन्म स्वयं विज्ञान में होता है, प्रत्येक विज्ञान में विभिन्न विषयों से सम्बद्ध अनेक सिद्धान्त होते हैं । इन सिद्धान्तों से एक विषय के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में हमें जानकारी प्राप्त होती है । यह जानकारी हमारे वर्तमान शोध कार्य का आधार बन सकती है ।

3. **सादृश्यताएँ (Analogies) -** सादृश्यताएँ प्राय: उपयोगी प्राक्कल्पनाओं के महत्वपूर्ण स्त्रोत बन सकते हैं । उदाहरणार्थ पेड़-पौधों पर परिस्थिति विशेष का गहरा प्रभाव पड़ता है, यह ज्ञान मानव के सम्बन्ध में भी इस प्राक्कल्पना को जन्म दे सकता है कि पेड़ पौधों की भाँति मानव जीवन भी परिस्थिति विशेष से प्रभावित होता है ।

4. **व्यक्तिगत अनुभव (Personal experience)-** अनुसंधानकर्ता का व्यक्तिगत अनुभव भी प्राक्कल्पनाओं का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है । लोम्ब्रोसो की "जन्मजात अपराधी प्रारूप" की प्राक्कल्पना सैनिक शिविर के सर्जन के रूप में लोम्ब्रोसो के अपने अनुभवों की ही उपज थी ।

5. **अन्तर्बोध (Intuition)** -कभी-कभी अनुसंधानकर्ता अपने भीतर से अनुभव करते हैं कि कुछ घटनाएँ सह सम्बद्ध हैं संदिग्ध सह सम्बन्ध अनुसंधानकर्ता को इन सम्बन्धों को परिकल्पना के रूप में रखने और यह देखने के लिए अध्ययन करने के लिए प्रेरित करते हैं कि क्या उनके सदेहों की पुष्टि होती है अथवा नहीं ।

3.7 प्राक्कल्पना के निर्माण में कठिनाइयाँ (Difficulties in the Formulation of the Hypotheses)

प्राक्कल्पना के निर्माण में अनेक कठिनाइयाँ आती हैं । उनका अनुसंधानकर्ता को ध्यान में रखना चाहिए । मुख्य रूप से प्राक्कल्पना के निर्माण में निम्न चार कठिनाइयाँ है -

1. **सैद्धान्तिक ढाँचे सम्बन्धी (Related to Theoretical Frame work) -** प्राक्कल्पना व्यवहारिक अथवा उपयोगी होती है जो सम्बन्धित विज्ञान तथा उसके सिद्धान्तों से सम्बन्धित हो । प्राक्कल्पना में दिये गये कारकों का गुण सम्बन्ध भी क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित होना चाहिए, अध्ययनकर्ता को प्राक्कल्पना का निर्माण करने से पूर्व विषय से सम्बन्धित सम्पूर्ण उपलब्ध साहित्य का पूर्ण ज्ञान कर लेना चाहिए । प्राक्कल्पना के निर्माण में सबसे महत्वपूर्ण कठिनाई अनुसंधानकर्ता के सामने तब आती है जब वह बिना सम्बन्धित ज्ञान के ही प्राक्कल्पना का निर्माण करता है । उसे सम्पूर्ण संबंधित साहित्य पढ़ना चाहिए ।

2. **प्रविधियों सम्बन्धी (Related to Techniques)-**समाज विज्ञानों में अनेक नवीन अध्ययन की प्रविधियाँ आ गई हैं, फिर भी आज ऐसी अनेक प्राक्कल्पनाएँ हैं जिनकी जाँच तथा संकलन की उपयुक्त प्रविधियों के अभाव में करना संभव नहीं है । अनुसंधानकर्ता कई बार ऐसी प्राक्कल्पनाओं का निर्माण कर लेता है जिनका परीक्षण करने के लिए तथ्य संकलन की प्रविधियाँ उपलब्ध नहीं होती हैं । प्राक्कल्पनाएँ तब तक उपयोग में नहीं लाई जा सकती जब तक कि तथ्य संकलन की प्रविधि का विकास नहीं कर लिया जाता है ।

3. **समाज की जटिलता व परिवर्तनशीलता सम्बन्धी (Related to Complexity and Changeability of Society)-**मानव समाज जटिल एवं परिवर्तनशील है इसलिए इनके सम्बन्ध में प्राक्कल्पना का निर्माण करना बहुत कठिन कार्य है ।

4. **वैज्ञानिक का पक्षपात (Partiality of the Scientist)-**वैज्ञानिक मानव है और अध्ययन की वस्तु भी मानव है । इस कारण वैज्ञानिक जब मानव समाज का अध्ययन करता है तब वह उनका वस्तुनिष्ठ अध्ययन नहीं कर पाता है । अध्ययन में व्यक्तिगत प्रभाव आ ही जाते हैं । वैज्ञानिक पक्षपात को कम कर सकता है परन्तु पूर्ण रूप से समाप्त नहीं कर सकता । इन सब पृष्ठभूमियों के कारण प्राक्कल्पना के निर्माण में अनेक कठिनाइयाँ आ जाती हैं ।

स्पष्ट है कि प्राक्कल्पना कितनी उपयोगी है उससे कहीं अधिक कार्य व्यवहारिक अथवा उपयोगी प्राक्कल्पना का निर्माण करना है ।

प्राक्कल्पना का परीक्षण

प्राक्कल्पना के परीक्षण के लिए निम्नलिखित चरणों का पालन किया जाता है - प्राक्कल्पना के परीक्षण के लिए सर्वप्रथम परिणामों को निश्चित करते हैं । तत्पश्चात उसकी जाँच के लिये उपयुक्त विधि का चुनाव करते हैं । प्राक्कल्पना की जाँच के लिये उपयुक्त निदर्शन का चयन किया जाना चाहिए, निदर्शन का आकार न तो बहुत बड़ा होना चाहिए न छोटा होना चाहिए । साथ ही अनुसंधानकर्ता को तथ्यों का संकलन अवलोकन के द्वारा करना चाहिए । पूर्व में निर्धारित प्राक्कल्पनाओं को तथ्यों के आधार पर शून्य प्राक्कल्पना की जाँच के लिए उपयुक्त सांख्यिकीय विधि का चयन करके प्रमाणित परिणाम निकालने चाहिए । परिणाम

की सार्थकता का स्तर ज्ञात करना चाहिए कि वह किस स्तर का है जैसे - 0l, 05 आदि । सार्थकता के स्तर की सहायता से निरीक्षणों के वितरण को ज्ञात करना चाहिए । एक पुच्छीय परीक्षण या दो पुच्छीय परीक्षण के आधार पर वितरण क्षेत्र को ज्ञात करना चाहिए । उपरोक्त आधार पर शून्य प्राक्कल्पना को स्वीकार अथवा अस्वीकार करना चाहिए, निष्कर्ष में प्राक्कल्पना में संशोधन भी कर सकते हैं ।

3.8 प्राक्कल्पनाओं के कार्य तथा महत्व (Functions or Importance of Hypotheses)

सरान्ताकोस (1998) ने प्राक्कल्पनाओं के तीन कार्य इंगित किये हैं -

1. संरचना और क्रियात्मकता को निर्देशित करके अनुसंधानकर्ता को दिशा निर्देश देना ।
2. अनुसंधान के प्रश्नों के अस्थाई उत्तर प्रदान करना ।
3. प्राक्कल्पना परीक्षण के संदर्भ में चरों के सांख्यिकीय विश्लेषण में सुविधा प्रदान करना।

प्राक्कल्पनाओं का महत्व निम्नलिखित प्रकार से भी बताया जा सकता है -

समस्या की व्याख्या में सहायक (Helpful in explaining the Problem)- अनुसंधान में समस्या की व्याख्या कार्य प्रभाव के रूप मे की जाती है । इस कार्य को करने में प्राक्कल्पना विशेष सहायता करती है प्राक्कल्पना के द्वारा अध्ययन की समस्या को स्पष्ट किया जाता है कि किन-किन कारणों का परस्पर गुण सम्बन्ध या कार्य कारण प्रभाव के रूप में अध्ययन किया जाएगा ।

अध्ययन की दिशा में सहायक (Helpful Providing the Direction to study)- वैज्ञानिक अध्ययन की दिशा का निश्चित होना अत्यन्त आवश्यक है । अध्ययन की दिशा से तात्पर्य है कि वैज्ञानिक किन तथ्यों तथा आकड़ों को एकत्र करें तथा जिन्हें एकत्र नहीं करें, उसके निर्धारण में प्राक्कल्पना वैज्ञानिक की प्रतिपल सहायता करती है, जिससे वह अध्ययन के क्षेत्र में इधर-उधर भटकने से बच जाता है ।

अध्ययन क्षेत्र की सीमितता में सहायक (Helpful in limiting the Area of study)-वैज्ञानिक अनुसंधान में प्राक्कल्पना के निर्माण के बाद अध्ययन-क्षेत्र का चुनाव किया जाता है । जहाँ प्राक्कल्पना की जाँच की जा सके । अध्ययन के क्षेत्र तथा विषय को प्राक्कल्पना सीमित तथा स्पष्ट कर देती है । इससे अनुसंधानकर्ता सरलतापूर्वक अपना ध्यान उस क्षेत्र के चुनाव में लगाता है । जहाँ उसे आवश्यक तथ्य उपलब्ध होते हैं।

उपयोगी तथ्य संकलन में सहायक (Helpful in collecting useful facts) - प्राक्कल्पना अनुसंधान के क्षेत्र को सीमित करती है और दिशा निर्धारित करती है । इसका तात्पर्य यह हुआ कि हम केवल उन्हीं तथ्यों को एकत्रित करते हैं जो हमारे विषय से सम्बद्ध होते हैं और जिनकी सहायता से प्राक्कल्पना की सत्यता को प्रमाणित किया जा सकता है ।

तर्कसंगत निष्कर्षों में सहायता (Helpful in logical Results)-प्राक्कल्पना में जिन तथ्यों का परस्पर गुण सम्बन्ध दिया होता है उन्हीं की सत्यता की जाँच करके अध्ययनकर्ता

निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत करता है। अध्ययनकर्ता को निष्कर्ष निकालते समय प्राक्कल्पना विशेष सहायता प्रदान करती है ।

सिद्धान्त निर्माण में सहायक (Helpful in Propounding Theories) -वैज्ञानिकों का कहना है कि वही प्राक्कल्पना उपयोगी होती है जो मुख्य विज्ञान तथा सिद्धान्त से सम्बन्धित हो । प्राक्कल्पना की तथ्यों के आधार पर जाँच की जाती है । सत्य सिद्ध होने पर उसे सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत किया जाता है ।

संक्षेप में प्राक्कल्पनाओं का मुख्य कार्य (i) सिद्धान्तों का परीक्षण करना (ii) सिद्धान्त सुझाना (iii) सामाजिक घटना का वर्णन करना । इसके गौण कार्य हैं - (अ) सामाजिक नीति निरूपण में मदद करना (आ) कुछ सामान्य अवधारणाओं को दूर करने में सहायता करना (इ) व्यवस्था तथा संरचनाओं में परिवर्तन की आवश्यकताओं की ओर संकेत करने हेतु नवीन ज्ञान प्रदान करना ।

3.9 प्राक्कल्पनाओं की सीमाएँ (Limitations of Hypotheses)

अनुसंधानकर्ता की असावधानियाँ (Carelessness of Researcher)-अनुसंधानकर्ता प्राक्कल्पना के निर्माण के समय स्वयं की भावनाओं, पूर्वाग्रहों तथा इच्छाओं पर नियंत्रण नहीं कर पाता है । इस असावधानी के कारण प्राक्कल्पना में पक्षपात आ जाता है । अनुसंधानकर्ता प्राक्कल्पना में तथ्यों का कारण-प्रभाव सम्बन्ध पक्षपातपूर्ण रूप में प्रस्तुत करता है तथा पूरी अध्ययन की प्रक्रिया में उसे सिद्ध करने का प्रयास करता रहता है । जिससे दोषपूर्ण परिणाम निकलते हैं ।

प्राक्कल्पना को अन्तिम मार्गदर्शक मानना (Assuming Hypotheses final Guide) - अध्ययनकर्ता, प्राक्कल्पना को अन्तिम मार्गदर्शक मान बैठता है । जैसी प्राक्कल्पना होती है उसी को ध्यान में रखकर तथ्यों को एकत्र करता है । अध्ययन क्षेत्र में स्वयं के विवेक को बिल्कुल काम में नहीं लेता है । इससे अध्ययन वैज्ञानिक नहीं रह पाता है । वह जो जानकारी एकत्र करता है उसका उपयोग पक्षपातपूर्ण रूप से करता है।

प्राक्कल्पना की आलोचना (Criticism of Hypotheses)-कुछ विद्वानों ने तर्क दिया है कि किसी भी अध्यन्न में प्राक्कल्पना की आवश्यकता होती है । न केवल अन्वेषी और व्याख्यात्मक अनुसंधान बल्कि वर्णनात्मक अध्ययनों में भी परिकल्पना निरूपण से लाभ हो सकता है लेकिन कुछ अन्य विद्वानों ने इसकी आलोचना;की हैं, उनका तर्क है कि अनुसंधान प्रक्रिया में प्राक्कल्पनाऐ कोई सकारात्मक योगदान नहीं करती, इसके विपरीत वे अनुसंधानकर्ता को आधार सामग्री के संग्रहण और विश्लेषण में पूर्वाग्रहित कर सकती है । वे उनके क्षेत्र को प्रतिबन्धित कर सकती है और उनके उपागम को सीमित कर सकती है, वे अनुसंधान अध्यन के नतीजों को भी पूर्व निश्चित कर सकती है ।

गुणवत्तात्मक अनुसंधानकर्ता तर्क देते हैं कि यद्यपि प्राक्कल्पनाएँ सामाजिक अनुसंधान में महत्वपूर्ण उपकरण है । उन्हें अनुसंधान से पूर्व में नहीं बल्कि जाँच के बाद नतीजे के रूप में निरूपित करना चाहिए ।

इन दो विरोधी तर्कों के बावजूद अनेक जाँचकर्ता प्राक्कल्पना का प्रयोग अन्तर्निहित रूप में या सुव्यक्त रूप में करते हैं । इनका सबसे बड़ा लाभ यह है कि ये न केवल अनुसंधान के लक्ष्यों की प्राप्ति में निर्देशन करती है बल्कि कम महत्वपूर्ण मामलों की अनदेखी करके अनुसंधान के विषय के जरूरी पक्षो पर ध्यान केन्द्रित करने में मदद करती है ।

3.10 अभ्यास प्रश्न

1. प्राक्कल्पना की परिभाषा दीजिए, प्राक्कल्पना के स्त्रोतो की व्याख्या कीजिए ।
2. सामाजिक अनुसंधान में प्राक्कल्पना के महत्व पर प्रकाश डालिए तथा इसके विभिन्न प्रकारों की विवेचना कीजिए ।
3. उपयोगी प्राक्कल्पनाओं की विशेषताओं का विवेचना कीजिए ।
4. प्राक्कल्पना के निर्माण में कौन-कौन सी कठिनाइयाँ आती हैं ? विवेचना कीजिये ।

3.11 सारांश

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र मे प्राक्कल्पना का विशेष महत्व है क्योंकि प्राक्कल्पना ही अनुसंधान को नियंत्रित, निर्देशित ओर संचालित करती है । वैज्ञानिकों ने प्राक्कल्पना को एक अस्थाई अनुमान, परीक्षण के लिए प्रस्तुत की गई एक प्रस्थापना, कामचलाऊ सामान्यीकरण, कल्पनात्मक विचार, पूर्वानुमान, दो या अधिक चरों के बीच सम्बन्धों को स्पष्ट करने वाला अनुमानात्मक कथन बताया है । एक उपयोगी प्राक्कल्पना में स्पष्टता, विशिष्टता, सरलता तथा अध्ययन विषय के अनुरूप होना चाहिए । ऐसा होने पर ही प्राक्कल्पना अनुसंधानकर्ता का शोधकार्य में पूर्ण रूप से मार्गदर्शन कर पाएगी, प्राक्कल्पना के स्त्रोत क़े भी एक महत्वपूर्ण पक्ष है । प्राक्कल्पना के स्त्रोत मुख्यत: दो हैं - (1) व्यक्तिगत स्त्रोत तथा (2) बाहय स्त्रोत । अनुसंधानकर्ता स्वयं प्राक्कल्पना का सबसे बड़ा व्यक्तिगत स्त्रोत रहा है, उसका ज्ञान विचार, अनुभव, जिज्ञासा प्राक्कल्पना के निर्माण में सहायक रहे हैं । जब अनुसंधानकर्ता प्राक्कल्पना के निर्माण में पुस्तकालय, विद्वानों के विचार, वैज्ञानिक अध्ययन एवं सिद्धान्त आदि की सहायता लेता है तो ये प्राक्कल्पना के निर्माण के बाहय स्त्रोत कहलाते हैं । सामाजिक अनुसंधान में प्राक्कल्पनायें भी कई प्रकार की होती हैं जैसे कार्यकारी प्राक्कल्पना, अनुसंधान प्राक्कल्पना, निराकरणीय प्राक्कल्पना, सांख्यिकीय प्राक्कल्पना, वैकल्पिक प्राक्कल्पना तथा वैज्ञानिक प्राक्कल्पना । इनमें से किसी भी प्राक्कल्पना का चयन अनुसंधानकर्ता अपनी अध्ययन की समस्या के उद्देश्य, प्रकृति तथा चरों के गुण-सम्बन्ध के आधार पर करते हैं । प्राक्कल्पनाओं के निरूपण में जो सबसे ज्यादा कठिनाई आती है वह है प्राक्कल्पना को उपयुक्त शब्दों में प्रकट करने में असमर्थता । स्पष्ट सैद्धान्तिक संरचना या ज्ञान का अभाव, सैद्धान्तिक संरचना को तर्कसंगत रूप में प्रयोग करने की योग्यता में कमी । जहाँ तक प्राक्कल्पनाओं के कार्य और महत्व का प्रश्न है प्राक्कल्पनाओं का मुख्य कार्य सिद्धान्तों का परीक्षण करना, सिद्धान्त, सुझावों तथा सामाजिक घटना का वर्णन करना है । प्राक्कल्पना का महत्व यह है कि प्राक्कल्पना में तथ्यों की सत्यता को सिद्ध करने या असत्य सिद्ध करने का अवसर मिलता है । प्राक्कल्पना की सबसे बड़ी सीमा यह है कि कभी-कभी अनुसंधानकर्ता प्राक्कल्पना को ही अपने अध्ययन का

वास्तविक निष्कर्ष मान लेने की गलती करता है और उस अवस्था में वह तथ्यों को तोड़ मरोड़कर इस प्रकार एकत्रित करता है जिससे कि प्राक्कल्पना की सत्यता ही प्रमाणित हो । यह प्रवृति वैज्ञानिक निष्कर्ष तक पहुँचने में उसे रोकती है ।

3.12 शब्दावली

- **चर या परिवर्त्य -** चर एक गुण है जिसे विभिन्न मूल्यों पर परखा जा सकता है । चर वह है जो घटता बढ़ता है।
- **परिचालन परिभाषा -** परिचालन, परिभाषा वह होती है जिसमें शब्दों की एक श्रंखला का प्रयोग किया जाता है, जो स्पष्ट रूप से कार्य करने एवं अवलोकन करने योग्य क्रियाओं को स्पष्ट करते हैं; जिसके द्वारा दूसरे वैज्ञानिक परीक्षण और जाँच कर सकते हैं ।
- **प्राक्कल्पना -** प्राक्कल्पना एक ऐसी प्रस्थापना है जिसकी सत्यता को सिद्ध करने के लिये उसकी परीक्षा की जा सकती है ।
- **शून्य प्राक्कल्पना -** शून्य प्राक्कल्पना वह है जो तटस्थ है अर्थात् प्राक्कल्पना का भावार्थ सकारात्मक या नकारात्मक न होकर तटस्थ होता है ।

बोध प्रश्नों के उत्तर

उत्तर-1 प्राक्कल्पना एक सामयिक अथवा कामचलाऊ समान्यीकरण या निष्कर्ष है जिसकी सत्यता की परीक्षा अभी बाकी है, बिल्कुल आरम्भिक स्तरों पर प्राक्कल्पना कोई भी अटकलपच्छू अनुमान, कल्पनात्मक विचार, सहज ज्ञान या और कुछ हो सकता है जो कि क्रिया या अनुसंधान का आधार बन सकता है । प्राक्कल्पना के स्त्रोत : सामान्य संस्कृति, वैज्ञानिक सिद्धान्त, साद श्यताएँ, व्यक्तिगत अनुभव, अर्न्तबोध आदि है ।

उत्तर-2 प्रक्कल्पनाओं का महत्व निम्नलिखित प्रकार से भी बताया जा सकता है - (1) समस्या की व्याख्या में सहायक (2) अध्ययन की दिशा में सहायक (3) अध्ययन क्षेत्र की सीमितता में सहायक (4) उपयोगी तथ्य संकलन में सहायक (5) सिद्धान्त निर्माण में सहायक ।

प्राक्कल्पना के प्रकार - कार्यकारी प्राक्कल्पना, वैज्ञानिक प्राक्कल्पना, अनुसंधान प्राक्कल्पना, शून्य या निराकरणीय प्राक्कल्पना, सांख्यिकीय प्राक्कल्पना ।

उत्तर-3 प्राक्कल्पना की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं - स्पष्टता, अनुभवाधित संदर्भ, विशिष्टता, उपलब्ध प्रविधियों से सम्बद्ध, सिद्धान्त से संबंधित

उत्तर-4 प्राक्कल्पना के निर्माण में निम्नलिखित कठिनाइयाँ हैं, सैद्धान्तिक ढाँचे संबंधी, प्रविधियों संबंधी, समाज की जटिलता व परिवर्तनशीलता संबंधी, वैज्ञानिक का पक्षपात

3.13 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- Bailey Kenneth D., Methods of Social Research (2nd ed) The Free Prees, New York, 1982 (First Published in 1978)

- Black, James A. and Dean J. Champion, Methods and Issues in Social Research, John Wiley & Sons, New York, 1976.
- Burus, Robert B., Inroduction to Research Methods (4th ed) Sage Publication, London 2000.
- Dooley, David, Social Research methods (3rd ed), Prentice Hall of India, New Delhi, 2000.
- Goode, W.S and P.K. Hatt, Methods in Social Research, Mc Graw Hill, New York, 1952.
- Sarantakos, S., Social Research (2nd ed), Macmillan Press, London, 1998.
- Singleton, Royee A. and Bruce C. Straits, Approaches to Social Research, Oxford University Press, New York 1999.
- Zikmund, William G, Business Research Method (2nd ed) The Drydw Press, Chicago, 1988

इकाई-4

तथ्य एवं सिद्धान्त के बीच संबंध

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.1.1 तथ्य एवं सिद्धान्त की परिभाषा

4.1.2 तथ्य एवं सिद्धान्त के मध्य सह-संबद्धता

4.2 अनुसंधानकर्त्ता के वैज्ञानिक उद्देश्य

4.2.1 आनुभाविक अध्ययन एवं सिद्धान्त में संबंध

4.3 समाजशास्त्रीय सिद्धान्त

4.3.1 समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के प्रकार

4.4 सिद्धान्त रचना

4.4.1 सिद्धान्त के तत्व

4.4.2 संबोध

4.4.2.1 संबोधो के प्रकार्य

4.4.3 प्राक्कथन

4.4.3.1 प्राक्कथन निर्माण के आधार नियम

4.4.4 प्राकल्पना

4.5 सारांश

4.6 अभ्यास प्रश्न

4.7 संदर्भ ग्रंथ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको तथ्य एवं सिद्धान्त के संबोधो से अवगत कराना है । तथ्य एवं सिद्धान्त दोनों परस्पर एक-दूसरे पर आधारित होते हुए सह-संबंधित होते है । यह सह-संबंध किस आधार पर तथा किस तरह निर्मित होता है यह समझने हेतु अनुसंधान के वैज्ञानिक उद्देश्यों को व्याख्यित करते हुए सामाजिक अनुसंधान तथा सिद्धान्त के मध्य संबंध को अंकलित किया गया है । तथ्य कारक के रूप में किस प्रकार समाजशास्त्रीय सिद्धान्त की रचना में सहायक होते हैं तथा सिद्धान्त किस प्रकार तथ्यों को परिष्कृत करते हैं, को समझाने हेतु सिद्धान्त रचना की वैज्ञानिक प्रक्रिया तथा इसमें प्रयुक्त होने वाले संबोध, प्राक्कथन एवं प्राकल्पना की विशद व्याख्या अन्त:सबंधात्मक रूप में की गयी है ।

4.1 प्रस्तावना

किसी भी आनुभाविक अनुसंधान (Empirical Research) का महत्त्व उसके सैद्धांतिक तथा अनुभाविक तथ्यों और इन दोनों के मध्य अन्त: संबद्धता (Inter-relation) में निहित है । किसी भी सामाजिक यर्थाथ को जानने के लिए वास्तविक तथ्यों का संकलन अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु किसी भी समाज विश्लेषक के लिये यह तथ्य तब तक केवल आनुभाविक विवरण अथवा समाजवृत्त (Sociography) है जब तक इन तथ्यों को किसी कसौटी (Criteria) के आधार पर चयनित एवं व्यवस्थित न किया जाये । आनुभाविक अध्ययनों में सिद्धांत (Theory) ऐसी ही कसौटी के रूप में संदर्भ प्रारूप (Frame of Reference) का कार्य करते है । सिद्धांत एवं तथ्य अन्त: संबंधित है । 'तथ्य' संबोध (Concept) को सामान्यतया आनुभाविक परीक्षण योग्य अवलोकन (Empirically verifiable observation) के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता रहा है, जबकि सिद्धांत संबोध को सामान्यतया इन तथ्यों के मध्य सह-संबद्धता अथवा इन तथ्यों के किसी अर्थपूर्ण व्यवस्थितिकरण (Ordering of facts in meaningful way) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है ।

4.1.1 तथ्य एवं सिद्धान्त की परिभाषा

गुडे एवं हाट के अनुसार "तथ्य आनुभाविक आधार पर परिक्षण योग्य अवलोकन माना जा सकता है तथा सिद्धान्त विभिन्न तथ्यों के मध्य सह-संबद्धता से सह-संबंधित है "

मर्टन के अनुसार "सिद्धान्त तार्किक रूप से अन्त: संबंधित प्राक्कथनों का वह संकुल है जिसमें से आनुभाविक सामान्यीकरण निकाले जा सकते है ।"

4.1.2 तथ्य एवं सिद्धान्त के मध्य सह-संबद्धता

तथ्य अथवा आनुभाविक आधार पर परीक्षण योग्य अवलोकन तब तक अर्थहीन रहेंगे यदि उनका संकलन अव्यवस्थित रूप से किया गया हो । सिद्धान्त के बिना यह तथ्य केवल अवलोकन ही रहेंगे जब तक इन्हें अर्थपूर्ण ढ़ग से इस प्रकार व्यवस्थित न किया जाए कि किसी ऐसे सिद्धान्त का निर्माण हो जिसके द्वारा भविष्यवाणी की जानी संभव हो ।

सिद्धान्त तथ्यों से निम्न रूप में संबंधित है :

- सिद्धान्त उन तथ्यों को परिभाषित करता है जिन्हें अमूर्तता प्रदान की जानी है और इस प्रकार सिद्धान्त विज्ञान के प्रमुख अभिमुखन को परिभाषित करता है ।
- सिद्धान्त वह संबोध परियोजना प्रस्तुत करता है जिसके द्वारा किसी प्रघटना से संबंधित तथ्य व्यवस्थित वर्गीकृत एवं अन्त:संबंधित होते है ।
- सिद्धान्त तथ्यों को आनुभाविक सामान्यीकरणों में तथा सामान्यीकरणों की व्यवस्था में परिसीमित करता है।
- सिद्धान्त तथ्यों की भविष्यवाणी करता है ।
- सिद्धान्त विभिन्न तथ्यों के मध्य कमी अथवा अन्तराल को इंगित करता है ।

जिस प्रकार सिद्धान्त तथ्यों से संबंधित है उसी प्रकार तथ्य भी सिद्धान्त का निर्माण करते है :-

- तथ्य सिद्धान्तों को बनाने में सहायक होते है ।
- तथ्य पहले से निर्मित सिद्धान्तों की पुनर्रचना करते है ।
- तथ्य उन सिद्धान्तों को अस्वीकृत करते हैं जो तथ्यों के साथ समायोजित नहीं होते हैं।
- तथ्य सिद्धान्त का अभिमुखन परिवर्तित करने में सक्षम होते है ।
- तथ्य सिद्धान्त को पुन: परिभाषित एवं पुन: स्पष्ट करने में सक्षम होते है ।

जब सिद्धान्त तथ्यों को परिसीमित करते है तथा उनमें एक निश्चित समरूपता की व्याख्या करते है तब वह तथ्यों से संबंधित भविष्यवाणी बन जाती है । इस प्रकार सिद्धान्त तथ्यों की खोज में एक सक्रिय भूमिका का निर्वाहन करते हैं ।

तथ्य एवं सिद्धान्त निरन्तर अन्तःकिया की स्थिति में रहते है । नये सैद्धान्तिक प्रारूपों के निर्माण के माध्यम से तथ्य वैज्ञानिक खोज की दिशा को निर्देशित एवं परिवर्तित कर सकते हैं । नकारात्मक तथ्य भी उपयोगी होते हैं । नये तथ्य जो पहले से विद्‌यमान सिद्धान्त के साथ समायोजित कर लेते है, सदैव सिद्धान्त को पुन: परिभाषित करते है क्योंकि वे वह सब विस्तृत रूप से स्पष्ट करते है, जिसे सिद्धान्त अत्यन्त सामान्य रूप में स्पष्ट करता है ।

अत: यह कहा जा सकता है कि तथ्य एवं सिद्धान्त एक-दूसरे के उत्प्रेरक है । तथ्य अपना अन्तिम अर्थ सिद्धान्त से प्राप्त करते हैं, जो उन्हें परिसीमिति करते है, वर्गीकृत करते है एवं परिभाषित करते है । सिद्धान्त जहाँ वैज्ञानिक प्रक्रिया को दिशा प्रदान करते हैं वहीं तथ्य भी सिद्धान्त निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है ।

4.2 अनुसंधानकर्त्ता के वैज्ञानिक उद्देश्य (Scientific Objectives of Researcher)

4.2.1 आनुभाविक अध्ययन एवं सिद्धान्त में संबंध

समाज वैज्ञानिक सामाजिक यथार्थ को आनुभाविक अनुसंधान के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं तो कुछ इतिहास विश्लेषक के माध्यम से कुछ सहभागी अवलोकन के द्‌वारा तथा कुछ अन्य अपनी ज्ञानात्मक गतिविधि को प्रायोगिक मनोविज्ञान के समरूप निर्धारित करते है । इन विभिन्न परिपेक्ष्यों को समान सेतु से जोड़ने वाला विश्वास है कि निम्नांकित उद्देश्यों को प्राप्त किया जाना चाहिए । सामाजिक यथार्थ को समझने का परिपेक्ष्य (Perspective) चाहें कोई भी हो सभी वैज्ञानिक अध्ययन वेत्ताओं का प्रथम उद्देश्य है विवरण (Description) । समाज वैज्ञानिक के लिए आवश्यक है कि वह उस प्रघटना, जिसका कि वह अध्ययन कर रहा है, इस प्रकार विवरण प्रस्तुत करने में सक्षम हो कि अन्य समाज वैज्ञानिक उसके विवरण को स्वीकार करके पुन: दोहरा सके ।

दूसरे विवरण उद्देश्य के लिए आवश्यक है व्याख्या (Explanation) । व्याख्या में ऐसे अन्त: संबंधित प्राक्कथनों का निर्माण आवश्यक रूप से निहित है जो वैज्ञानिक को अवलोकित की गई वास्तविकताओं में से अर्थ निकालने में सक्षम बनाते हैं ताकि जिन घटनाओ-प्रघटनाओ

की व्याख्या की गई है, भविष्य में भी उनकी सम्भवित पुनरावृत्ति की भविष्यवाणी की जा सके।

तीसरा उद्देश्य है भविष्यवाणी (Prediction) । भविष्यवाणी व्याख्या विवरण के बाद आती है और व्याख्या परीक्षण के लिए आधार प्रस्तुत करती है । यदि समाज वैज्ञानिक ने यह व्याख्या प्रस्तुत की है कि चरों का एक संकुल एक साथ क्यों उपस्थित होता है तो आवश्यक है कि वह भविष्य में भी उन चरों के मध्य संबंधों की भविष्यवाणी करने में सक्षम है।

चौथा तथा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक उद्देश्य समाजशास्त्री के सम्मुख है सिद्धान्त निर्माण (Theory Construction) । जब तक सिद्धान्त का निर्माण नहीं होता तब तक पूर्णतया उपयुक्त विवरण, व्याख्या व भविष्यवाणी संभव नहीं है, क्योंकि वह सिद्धान्त ही है जो इनके लिए प्रारूप प्रदान करता है । यदि समाज वैज्ञानिक का कार्य ज्ञान की खोज एवं उसका व्यवस्थीकरण है तो सिद्धान्त "क्या" जाना गया है? "क्या" संभावित है? और "क्या' माना गया है? इसका परिलक्षण (Expression) है । इस प्रकार सैद्धांतिक प्रारूपों के निर्माण में समाज विज्ञानों की वैज्ञानिक प्रकृति परिलक्षित होती है, क्योंकि सिद्धान्त में पद्धतियों को अर्थ मिलता है, अवलोकन व्यवस्थित होते है और भविष्यवाणी एवं विवरणात्मक विश्लेषण के उद्देश्य प्राप्त होते हैं ।

4.3 समाजशास्त्रीय सिद्धान्त

सामाजिक सिद्धान्तों की प्रकृति वैज्ञानिक है, क्योंकि वे ऐसे सामाजिक यथार्थ (Social Reality) -पर आधारित होते है, जो आनुभाविक स्तर (Empirical level) पर परीक्षित किया जा सकता है । समाज वैज्ञानिकों ने सिद्धान्त को अनेक प्रकार से परिभाषित किया है ।

मर्टन के अनुसार "सिद्धान्त तार्किक रूप से अन्त: संबंधित प्राक्कथनों का संकुल है, जिससे आनुभाविक समरूपताऐ निकाली जा सकती हैं'

मर्टन की परिभाषा से स्पष्ट होता है कि सिद्धान्त ऐसे सामान्यीकृत प्राक्कथनों से निर्मित होता है, जिनको सामाजिक यथार्थ के आधार पर प्रमाणित किया जा सके तथा जिनको पुन: परीक्षित किया जा सके । यह प्राक्कथन तब तक सिद्धान्त नहीं बनते जब तक इनमें तार्किक सह-संबद्धत्ता के आधार पर एक सामान्यीकृत कथन निर्धारित न किया जा सके ।

उदाहरणार्थ

प्राक्कथन	**तार्किक सह-संबद्धता**	**सिद्धान्त (सार्वभौमिक यथार्थ)**
1. राम मनुष्य है ।	राम मनुष्य है और मरता है ।	
2. राम मरता है ।		
3. श्याम मनुष्य है ।	श्याम मनुष्य है और मरता है ।	मनुष्य मरणशील है ।
4. श्याम मरता है ।		

होमन्स के अनुसार "सिद्धान्त प्राक्कथनों की ऐसी निगमनात्मक व्यवस्था को दर्शाता है जिसमें प्राक्कथन इस प्रकार अन्त: संबंधित होते है, कि एक प्राक्कथन में से दूसरे को निकाला जा सके तथा प्रघटना की व्याख्या को विकसित किया जा सके ।" इस प्रकार होमन्स के

विचारानुसार सिद्धान्त प्राक्कथनों का ऐसा संकुल है जो निगमन पद्धति (Deductive Method) के द्वारा व्याख्या प्रस्तुत करता है । दुर्खीम का 'आत्महत्या' का सिद्धान्त मर्टन व होमन्स की व्याख्या को प्रमाणित करता है । आत्महत्या के अध्ययन में दुर्खीम ने निगमन पद्धति द्वारा सिद्धान्त प्रतिपादित किया है । उदाहरणार्थ, दुर्खीम के सिद्धान्त के अनुसार 1 किसी भी सामाजिक समूह में आत्महत्या की दर प्रत्यक्षत: व्यक्तिवादिता अथवा अहमवादिता के स्तर के अनुसार परविर्तित होती है । 2. व्यक्तिवादिता का स्तर प्रोटेस्टेन्ट (Protestant) धर्म की मान्यता के अनुरूप परिवर्तित होता है । 3. अत: आत्महत्या की दर प्रोटेस्टेंटवादिता की दर के अनुरूप परिवर्तित होती है । 4. स्पेन में प्रोटेस्टेंट वादिता की दर बहुत कम है । 5. अत: स्पेन में आत्महत्या की दर भी कम है ।

केपलॉन (Kaplan) ने सिद्धान्त को परिभाषित करते हुए कहा है कि 'सिद्धान्त एक प्रतीकात्मक निर्माण है ।"यह परिभाषा अत्यन्त सीमित एवं अस्पष्ट है, क्योंकि केपलॉन असंबद्ध (Unconnected) आनुभाविक निष्कर्षो के मध्य कोई क्रम विकसित किया जा सके, जिसका प्रतिफल यह प्रतीकात्मक निर्माण हैं, किन्तु यह व्यवस्थीकृत क्रम किस नियम पर आधारित हो, इसका निर्धारण नहीं करते और न ही तार्किकता के गुण की कहीं कोई व्याख्या प्रस्तुत करते है।

कोहेन (Cohen) ने सिद्धान्त को व्याख्यित करते हुए कहा है कि "सिद्धान्त सदैव सार्वभौमिक आनुभाविक कथन होते है जो एक से अधिक घटनाओं अथवा प्रघटनाओं के मध्य कारणात्मक संबद्धता को अभिकथनित करते है।" कोहेन ने भी अपनी परिभाषा में विभिन्न घटनाओं अथवा अनुभाविक यथार्थ (Empirical Reality) के मध्य कारणात्मक संबंधों की व्याख्या की है । उन्होंने इस तथ्य पर बल दिया है कि सिद्धान्त सार्वभौमिक प्रकृति के होते है । ये सार्वभौमिक कथन समय एवं स्थान से परे है तथा जिनका निमार्ण इन कारणात्मक संबंधों पर आधारित है ।

प्रबुद्ध सिद्धान्तकारों द्वारा की गई परिभाषाओं के आधार पर होमन्स (Homans) ने अपने लेख 'कन्टेम्परारी थ्योरी इन सोशियोलॉजी" (Descriptive and Relational) में सिद्धान्त की विशेषताओं की व्याख्या करते हुए निम्न छ: विशेषताओं का मुख्य रूप से उल्लेख किया है ।

1. सामाजिक सिद्धान्त में संबोध संकुल (Set of concepts) अथवा संबोधात्मक प्रायोजना (Conceptual) अवश्य पायी जाती है । यह संबोध संकुल दो प्रकार के संबोधों से निर्मित होते है: व्याख्यात्मक एवं संबंधमूलक (Descriptive and Relational) व्याख्यात्मक संबोध वह होते है जो यथार्थ की व्याख्या प्रस्तुत करते है तथा संबंधमूलक संबोध वह होते है जो कार्य-कारण संबंधों के आधार पर व्याख्यात्मक संबोध से सह-संबंधित होते है ।
2. सिद्धान्त में ऐसे प्राक्कथनों का संकुल पाया जाता है जिसमें व्याख्यात्मक एवं सबंधमूलक दोनों ही प्रकार के संबोध समाहित होते है । सिद्धान्त में प्राक्कथन इन संबोधों के मध्य संबंधों की व्याख्या करते है ।

3. सिद्धान्त में यह प्राक्कथन निगमनात्मक प्रायोजना (deductive scheme) में व्यवस्थित होते है, अर्थात न्यायवाक्य (Syllogism) के रूप में प्रदर्शित होते हैं । अत: इन प्राक्कथनों के मध्य कारणात्मक संबद्धता () स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है ।
4. सिद्धान्त आनुभाविक रूप से खुला होता है अर्थात यह आनुभाविक घटना-प्रघटनाओं का परिसंज्ञान (Cognizance) लेता है और उन्हीं पर आधारित होता है ।
5. सिद्धान्त आनुभाविक रूप से परीक्षण योग्य (Empirically verifiable) होता है ।
6. सिद्धान्त व्याख्या एवं भविष्य कथन (prediction) प्रस्तुत करता है ।

प्रोफेसर एन. के. सिंघी (Prof. Narendra K. Singhi) ने अपनी पुस्तक 'समाज शास्त्रीय सिद्धान्त: अर्थ व आयाम' में सिद्धान्त की निम्न आठ विशेषताओं की व्याख्या की है ।

(i) समाजशास्त्रीय सिद्धान्त में संबोध पुंज (Set of Concepts) का उपयोग किया जाता है । संबोध साधारण, अमूर्त, स्पष्ट एवं लघु होते है ।

(ii) सिद्धान्त निर्माण के लिए प्राक्कथनों की आवश्यकता होती है । प्राक्कथनों के विन्यास (Ser of propositions) में परस्पर एक प्राक्कथन दूसरे प्राक्कथन से तार्किक रूप से संबद्ध रहता है ।

(iii) सिद्धान्त में इन प्राक्कथनों को निगमन (deductive) योजना के आधार पर प्रस्तुत किया जाता है । इन प्राक्कथनों के आधार पर कार्य-कारण के संबंध स्पष्ट किये जाते है ।

(iv) सिद्धान्त आनुभाविक दृष्टिकोण से खुले होते है अर्थात् आनुभाविक घटनाओं को आकड़ों के माध्यम से एकत्रित कर व्याख्या में महत्त्व दिया जाता है ।

(v) सिद्धान्तों का परीक्षण एवं सत्यापन संभव होना चाहिए ।

(vi) सिद्धान्त के माध्यम से कार्य-कारण के संबंध को स्थापित किया जाता है ।

(vii) सिद्धान्त के माध्यम से किसी प्रघटना को समझा जाता है ।

(viii) सिद्धान्त भविष्यवाणी करने की क्षमता रखते है ।

इन विचारकों के द्वारा विवेचित विशेषताओं वाले पूर्ण सिद्धान्त समाज विज्ञानों में संभवतया बहु त कम होंगे, क्योंकि सामाजिक यथार्थ मनुष्य द्वारा निर्मित है, स्थान व काल के अनुरूप बदलता रहता है और उसके अर्थ भी विभिन्न परिपेक्ष्यों (perspectives) के माध्यम से विविध रूपों में प्रस्तुत किये जाते रहे है । आवश्यक है कि समाज विज्ञानों में सिद्धान्त निर्माण की प्रक्रिया में इस बात का ध्यान रखा जाये कि समाजिक यथार्थ की प्रकृति तथा भौतिक यथार्थ (Physical Reality) की प्रकृति में भिन्नता है इसलिये दोनों के विश्लेषण हेतु उसी के अनुरूप अध्ययन पद्धतियों का निर्माण तथा सिद्धान्त रचना हो । अत: इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि सामाजिक सिद्धान्त का काम सामाजिक प्रघटना को समझना व उसकी व्याख्या करना है । सिद्धान्तों का परीक्षण संभव होना चाहिए तथा सिद्धान्तीकरण एक प्रक्रिया है, जिसका कोई अन्तिम चरम बिन्दु नहीं है ।

4.3.1 समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के प्रकार (Types of Sociological Theory)

डॉन मार्टिनडेल (Don Martindale), टिम्मा शेफ (Timmsheff) (Wanger) ने अभिमुखन (Orientation) के आधार पर सिद्धान्तों के प्रकारों की चर्चा की है । कोहेन (Cohen) ने सिद्धान्त की प्रकृति के आधार पर सिद्धान्तों को वर्गीकृत किया है, जबकि मर्टन (Merton), सोरोकिन (Sorokin) ने सिद्धान्त के क्षेत्र, सामन्यीकृत्त एवं अमूर्तता (Scope, generality and abstraction) के आधार पर सिद्धान्तों को वर्गीकृत किया है ।

सोरोकिन (Sorokin) ने चार प्रकार के सामाजिक सिद्धान्तों की व्याख्या अपनी पुस्तक "वर्तमान के समाजशास्त्रीय सिद्धान्त" (Sociological Theories of Today) में की है । इनके अनुसार सिद्धान्त चार प्रकार के है ।

(i) **एकात्मक अणुबादी सिद्धान्त (Singularistic Atomistic)**: सोरोकिन के अनुसार इसके अंतर्गत वे सभी सिद्धान्त आते है जो एक कारकीय है तथा अति लघु आधार पर सामाजिक यथार्थ को समझने पर बल देते है।

(ii) **व्यवस्थित सिद्धान्त (Systematic Theory) :** इसके अन्तर्गत निगमनात्मक पद्धति पर आधारित वे समस्त सिद्धान्त आते है जिनके अन्तर्गत एक व्यवस्थित कमबद्धता में सामान्यीकृत कथन सिद्धान्त के रूप में निष्पादित किए गए है ।

(iii) **समाजिक व्यवस्था के व्यवस्थित सिद्धान्त (Systematic Theory of Social System) :** सोरोकिन के अनुसार इस वर्गीकरण के अन्तर्गत वे सभी सामाजिक सिद्धान्त सम्मिलित किए गए है जो सामाजिक व्यवस्था की व्याख्या करते है ।

(iv) **संरचनात्मक एवं गत्यात्मक समाजशास्त्र की अन्तनिहित व्यवस्था (Integral System of Structural of and Dynamic Sociology):** इस प्रकार के अन्तर्गत वे समस्त सिद्धान्त सम्मिलित है जो सामाजिक संरचना एवं सामाजिक व्यवस्था दोनों के मध्य सहसंबद्धता (Inter Relation Between Social System & Social Structure) एवं संरचनात्मक प्रकार्यात्मकता (Stuctural Functionality)ए को परिलक्षित करते है ।

सोरोकिन के द्वारा दिया गया यह वर्गीकरण बहुत स्पष्ट वर्गीकरण नहीं माना जाता, क्योंकि इनके द्वारा प्रस्तुत किए गए ये चार प्रकार एक दूसरे से स्वतंत्र नहीं होते हुए परस्पर-व्यापी (overlapping) हैं । अत: सामाजिक सिद्धान्तों का स्पष्ट वर्गीकरण इस आधार पर किया जाना संभव नहीं हैं ।

कोहेन (Cohen) ने अपनी पुस्तक (Modern Social Theory) 'मॉडर्न सोशियल थ्योरी" में सामाजिक सिद्धान्तों की चार श्रेणियाँ बताई है-

(अ) विश्लेषणात्मक सिद्धान्त (Analytical Theory)

(ब) मानदण्डात्मक सिद्धान्त (Normative Theory)

(स) वैज्ञानिक सिद्धान्त (Scientific Theory)

(द) तात्विक सिद्धान्त (Metaphysical Theory)

कोहेन के द्वारा प्रस्तुत किये गए इस वर्गीकरण में विश्लेषणात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत वह सिद्धान्त समाहित है, जो वास्तविक यथार्थ के बारे में कोई कथन प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि तर्क शास्त्र के अनुरूप ऐसे प्राक्कथनों के योग से बने होते है जो स्वयं में सत्य है और उनके माध्यम से अन्य प्राक्कथनों का निर्माण संभव है। मानदण्डात्मक सिद्धान्त एक ऐसी आदर्ष स्थिति की परिकल्पना करते है जिसको प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों को प्रयास करना चाहिए । वैज्ञानिक सिद्धान्त आनुभाविक प्राक्कथनों द्वारा निर्मित होते हैं जो कार्य-कारण संबंधों की स्थापना करते है । तात्विक सिद्धान्त उस यथार्थ पर आधारित होते है, जिनका परीक्षण संभव नहीं है यद्यपि उसका तार्किक मूल्यांकन संभव है ।

सामान्यीकृत्ता और अमूर्तता (Generality and abstraction) के आधार पर मर्टन ने समाजशास्त्रीय सिद्धांतों को दो वर्गो में विभाजित किया है ।

1. वृहद् सिद्धान्त (Grand Theories)
2. मध्य स्तरीय सिद्धान्त (Middle Range Theories)

वृहद सिद्धान्त (Grand Theories) : मर्टन ने वृहद सिद्धान्त को परिभाषित करते हुए कहा है कि 'वृहद् सिद्धान्तों से अर्थ है एक ऐसा एकात्मिक (Unifield) सिद्धान्त विकसित करने के लिए किये गए' वे सभी व्यवस्थित सम्मिलित प्रयास जो किसी सामाजिक व्यवहार, सामाजिक संगठन तथा सामाजिक परिवर्तन में अवलोकित की गई समरूपताओं का वर्णन करते हों'

समाजशास्त्र में वृहद सिद्धान्त के प्रमुख प्रतिपादक टॉलकॉट पारसन्स (Talcott Parsons) है । इन्होंने सामाजिक किया (social action) एवं सामाजिक व्यवस्था (social system) के वृहद सिद्धान्त प्रतिपादित किये है ।

सी. राईट मिल्स (C. Wright Mills) ने वृहद् सिद्धान्तों की आलोचना की है, क्योंकि उनका मानना है कि वृहद सिद्धान्त अत्यधिक सामान्यीकृत कथनों का निर्माण करते है तथा यथार्थ से बहुत दूर अमूर्तता के उच्चतम स्तर (highest level of abstration) पर निर्मित किये जाते है ।

मध्य स्तरीय सिद्धान्त (Middle Rang Theories) : ये सिद्धान्त अवलोकित सामाजिक यथार्थ पर आधारित होते हैं तथा वृहद् सिद्धान्तों एवं सूक्ष्म काम चलाऊ उप-कल्पनाओं (Minor working hypothesis) के बीच में स्थित होते है ।

मध्य स्तरीय सिद्धान्त सामाजिक प्रघटना के निश्चित क्षेत्र तक सीमित होते हैं अत: आनुभाविक अवलोकन की निकटता एवं सीमित उद्देश्यों के परिणामस्वरूप यह सिद्धान्त व्यापक रूप से स्वीकृत किये जाते है । यद्यपि बीरस्टीड (Bierstedt), टी. एच. मार्शल (T.H Marshal), तथा गॉफमैन (Goffman) ने इन सिद्धान्तों की सीमित क्षेत्रीयता एवं सीमित उद्देश्य के लिए आलोचना भी की है । इन विचारकों का मानना है कि मध्य स्तरीय सिद्धान्तकारों ने अपने सिद्धान्तों की उपादेयता अन्य क्षेत्रों में स्थापित करने का न तो कोई प्रयास किया है और न ही यह संभव हो सकता है । ग्लेरस एवं स्ट्रॉस (Glarres and

Strauss) ने मध्य स्तरीय सिद्धान्तों के संदर्भ में टिप्पणी की है कि इन सिद्धान्तों में निर्माण की प्रविधियों की तुलना में सत्यापन की प्रविधियों पर आवश्यकता से अधिक बल दिया गया है।

4.4 सिद्धान्त रचना

सामाजिक सिद्धान्त के केन्द्रिय तत्वों में सबसे पहले संबोधों के ऐसे संकुल आते हैं जो संबोधात्मक प्रारूप (Conceptual frame) का निर्माण करते हैं । जैसा कि होमन्स (Homans) का कथन है कि इनमें से कुछ संबोध विवरणात्मक (descreptive) होते हैं और यह बताते है कि सिद्धान्त किसके बारे में है, जबकि अन्य काम चलाऊ (Operative) संबोध होते हैं और सिद्धान्त के अन्य तत्वों के मध्य आनुभाविक अंत: संबद्धता को बताते हैं।

केवल संबोधात्मक स्वरूप ही अकेले सिद्धान्त का निर्माण करते । अत: सिद्धान्त में प्राक्कथनों का संकुल होना आवश्यक है जो विवरणात्मक और संबंधात्मक संबोधो को आपस में जोड़ते है । प्राक्कथन ऐसे संबंध बताते है जैसे "आत्महत्या की दर सीधे तौर पर समाज में अहमवादिता के स्तर (Degree) के अनुरूप अलग-अलग होती है ।" प्राक्कथनों को आवश्यक रूप से संबोधात्मक प्रारूप के दो या दो से अधिक तत्वों के मध्य संबंधों का विवेचन करने योग्य होना चाहिए ।

प्राक्कथनों का संकुल भी अकेले सिद्धान्त नहीं बनाता । प्राक्कथनों का यह संकुल निगमनात्मक व्यवस्था में समाहित होना आवश्यक है । ठीक उसी प्रकार जैसे दुर्खीम ने इस गुण को अपने आत्महत्या के सिद्धान्त में विभिन्न प्राक्कथनों के मध्य निगमनात्मक पद्धति का प्रयोग करते हुए प्राप्त किया है ।

होमन्स (Homans) का मानना है कि - "जब प्राक्कथन इस प्रकार निगमनित किए जाते हैं तो कहा जा सकता है कि वो व्याख्यित किए गए हैं और सिद्धान्त तब तक कुछ भी नहीं है जब तक की वह व्याख्या नहीं है ।" जब निगमनात्मक व्यवस्था व्याख्या प्रस्तुत करती है तो वह भविष्यवाणी भी संभव बनाती है ।

सिद्धान्त विवरण का व्यवस्थीकरण करता है, व्याख्या प्रस्तुत करता है और इस सामाजिक यथार्थो की भविष्यवाणी का आधार प्रस्तुत करता है जो अभी तक अवलोकित नहीं किया गया है । जब यह समस्त गुण अथवा तत्व विद्‌यमान हो तब कहा जा सकता है कि वह सामाजिक सिद्धान्त है । सिद्धान्त निर्माण के लिए आवश्यक है कि इन समस्त तत्वों को एक सैद्धान्तिक व्यवस्था में व्यवस्थित किया जाए ।

4.4.1 सिद्धान्त के तत्व - सिद्धान्त निर्माण के तीन मुख्य तत्व है- संबोध, प्राक्कथन एवं परिभाषा

4.4.2 संबोध

संबोध अथवा अवधारणा वे अमूर्तताएँ है जिनका प्रयोग समाज वैज्ञानिक उन प्राकथनों एवं सिद्धान्तों को विकसित करने के लिए करते हैं जो प्रघटना की व्याख्या एवं पूर्वानुमान करते हैं । ये संबोध एक षाब्दिक (Unitary) होते है और प्रघटनाओं के मध्य संबंधों के समरूप नहीं होते । उदाहरण के लिए एक व्यवहारवादी' वैज्ञानिक "व्यवसायगत चयन की प्रक्रिया" को संबोध

के रूप में प्रयुक्त नहीं करेगा बल्कि इसके लिए वह "'विकल्प" एवं "मूल्य" को संबोध के रूप में प्रयुक्त करेगा ।

संबोध या अवधारणा वर्गीकृत या समूहीकृत निश्चित प्रघटनाओ का प्रतिनिधित्व करता है । यह प्रतिनिधित्व सही अथवा गलत नहीं होता बल्कि इसकी उपादेयता इस बात पर निर्भर करती है कि वैज्ञानिक ज्ञान के विस्तार एवं विकास में इसकी कितनी महत्ता है । संबोध निर्माण एवं सिद्धान्त निर्माण साथ-साथ चलते है । हेमपैल (Hampel) ने विशेष तौर पर संबोधों एवं सिद्धान्तों की अन्त: निर्भरता पर बल दिया है ।

संबोध के मूल्यांकन के लिए तीन आधार है:-

क्षेत्र (Scope), स्पष्टता (Clarity) एवं व्यवस्थित आगाम (Systematic Import) । क्षेत्र का अर्थ है उन सभी स्थितियों के वर्ग का समाहितीकरण जिसके लिए संबोध प्रयुता किया गया है । वे संबोध जो अमूर्तता के उच्च धरातल पर होते हैं उनका क्षेत्र उन संबोधों की तुलना में अधिक व्यापक होता है जो तुलनात्मक रूप से अमूर्तता के निम्न धरातल पर होते हैं । स्पष्टता का अर्थ उन संबोधों से है जिनमें वस्तुपरक निर्धारीकरण अथवा मापन के आधार पर अमूर्तता के निचले धरातल पर आने की क्षमता है । इस अर्थ में स्पष्टता का अर्थ उस क्षमता से है जिसके द्वारा कोई संबोध निम्न स्तरीय अमूर्तताओं को प्राप्त करता है । उदाहरण के लिए संबोध 'भगवान', 'अंतिम अच्छाई', तथा सौंदर्य' अलग-अलग व्यक्तियों के लिए अलग-अलग अर्थ रखते है । इनमें से प्रत्येक के लिए अपनी अमूर्तता के उच्चतम धरातल से किसी घटना-प्रघटना से संबाधेत निम्न व्यक्तियों के लिए हमेशा बिल्कुल एक ही अर्थ प्रस्तुत नहीं करता है और कुछ सीमा तक यह लाभदायक भी है, क्योंकि इसके कारण संबोध का अनेक रूपों में प्रयोग संभव हो पाता हैं । उदाहरण के लिए संबोध सामाजिक अन्त: क्रिया (Social Interaction) को ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें एक व्यक्ति का व्यवहार दूसरे व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करता है । जबकि एक अर्थ में हर व्यक्ति का व्यवहार हमेशा प्रत्यक्ष रुप में या अप्रत्यक्ष रूप में अन्य व्यक्ति के व्यवहार से प्रभावित होता है । इस रूप में तब क्या सामाजिक अंतकिया संबोध को केवल आमने-सामने की स्थितियों तक ही सीमित कर दिया जाना चाहिए? किन्तु यदि ऐसा किया जाएगा तो इस संबोध में वह अंतःक्रिया समाहित नहीं हो पाएगी जो एक लेखक और उसके पाठक के मध्य होती है अथवा एक विचारधारा के प्रवर्तकों और उसके अनुयायी समूहों के मध्य पायी जाती है । अत: कभी-कभी यह उपयोगी होता है कि ऐसी अंतःक्रिया को भी विश्लेषित किया जाए जो आमने-सामने नहीं होती और यह भी उपयोगी हो सकता है कि अप्रत्यक्ष अन्त: क्रिया को अन्त: निर्धारकों के माध्यम से अध्ययनित किया जाए । अत: इस रूप में 'अन्तःक्रिया संबोध की व्यापकता जैसे कि ऊपर वर्णित किया गया है एक तम्बू' (Tent) प्रदान करती है जिसके अन्तर्गत ये अन्वेषण किये जा सकते है । व्यवस्थित आगम (Systematic import) से अर्थ उस स्तर से है जिस स्तर तक संबोध प्राकथनों एवं सिद्धान्तों में समाहित है । प्राकथनों का क्षेत्र एवं उनकी स्पष्टता का स्तर दोनों व्यवस्थित आगम को प्रभावित करते है । संबोध जिन प्राकथनों एवं सिद्धान्तों के भाग है उनसे अलग करके नहीं देखे जाने चाहिए । यदि संबोधों का मूल्यांकन, व्याख्या एवं पूर्वानुमान में उनके योगदान के

संदर्भ में किया जाना है तब उनकी भूमिका को प्रस्तुत प्राक्कथनों एवं सिद्धान्तों के तत्वों के रूप में मूल्यांकित किया जाना चाहिए ।

4.4.2.1 संबोधों के प्रकार्य

जब संबोध किसी सैधान्तिक व्यवस्था में स्थापित किये जाते है तो वे उस सैधान्तिक व्यवस्थीक्रम की प्रमुख इकाईयाँ बन जाते है क्योंकि संबोध सिद्धान्त के प्रारूप एवं सार को परिभाषित करते हैं । ब्लूमर का मानना है कि संबोध सिद्धान्त को परिभाषित करने के साथ ही तीन अन्य प्रकार्य भी करते है-

1. सिद्धान्त वैज्ञानिक प्रक्रिया में नये अभिमुखन अथवा दृष्टिकोण को समाहित करते है ।
2. संबोध प्रत्यक्ष ज्ञान (Perception) के वातावरण को अर्थपूर्ण ढंग से वैज्ञानिक कियान्विति एवं कथनों में परिवर्तित करने वाले साधन की भूमिका निभाते है ।
3. संबोधों द्वारा निगमनात्मक (Deductive Reasoning) तर्क-विर्तकता संभव हो पाती है अत: नवीन अनुभवों एवं प्रत्यक्ष ज्ञान (Perception) का पूर्वानुमान संभव हो पाता है ।

नये दृष्टिकोण के स्त्रोतों के रूप में वैज्ञानिक संबोध द्विअर्थी होते हैं - 1. यर्थाथ को देखने के तरीके के रूप में, 2. अमूर्तता को यथार्थ में लाने के तरीके के रूप में । वैज्ञानिक संबोधिकरण के द्वारा प्रत्यक्ष परख संसार को एक व्यवस्था एवं कमबद्धता (Coherence) प्राप्त होती है जिसे सबोधिकरण से पूर्व नहीं समझा जा सकता । संबोध समाज वैज्ञानिक को किसी भी यथार्थ को समझने और उसके सामान्य गुण को परिलक्षित करने में सक्षम बनाता है । चूंकि वैज्ञानिक क्रिया संबोधिकरण से पहले नहीं आती है, संबोध किसी भी समाज वैज्ञानिक को अपने किसी भी अनुभवजनित सनक को अर्थपूर्ण सहमति के स्तर पर लाने में सक्षम बनाता है । समाज वैज्ञानिक निरन्तर संबोधों में निहित अर्थो को मूल्यांकित करते रहते है । साथ ही संबोधों और सिद्धान्तों के मध्य संबोधों को, संबोधों में निहित स्पष्टता एवं समझे जाने की क्षमता तथा विश्लेषण एवं सामाजिक यथार्थ को परिभाषित करने की क्षमता का मूल्यांकन समाज वैज्ञानिकों द्वारा निरंतर किया जाता रहा है ।

संबोधों का दूसरा प्राकार्य एक साधन के रूप में है । एक साधन के रूप में संबोध का अर्थ उस कार्यात्मक गतिविधि से है जो कोई समाज वैज्ञानिक अवलोकनों के संकलन के लिए करता है । इस प्रकार किसी भी सैद्धान्तिक व्यवस्थिकरण में संबोध अत्यन्त आवश्यक है । यह सिद्धान्त की कार्यात्मकता के लिए आधार प्रदान करते हैं, सामाजिक यथार्थ के अनछुए पक्षों को विश्लेषण के लिए उजागर करते है तथा नवीन निगमनात्मक प्रायोजनों के लिए मार्गदर्शन करते है ।

4.4.3 प्राक्कथन

प्राक्कथन यथार्थ की प्रकृति से संबंधित वे कथन है जिनकी सत्यता अथवा असत्यता का मूल्यांकन उस अवलोकन योग्य प्रघटना के आधार पर किया जा सकता है जिससे वे संबंधित है । प्राक्कथनों का निर्माण आनुभाविक परीक्षण के लिए किया जाता है । समाज विज्ञानों में

प्राक्कथनों का निर्माण दो या दो से अधिक संबोधों के मध्य अन्त:संबधों को प्रदर्शित करने के लिए किया जाता है । उदाहरण के लिए प्राक्कथन इस प्रकार का होगा जैसे "शहरी व्यक्तित्व के विकास में संचार माध्यमों की उपलब्धता एक प्रमुख कारक है ।" ना की यह कथन कि 'भारतवर्ष में आधी से अधिक जनसंख्या वर्षभर में एक पुस्तक से भी कम पुस्तकें पढ़ती है ।" किन्तु पहला कथन दो तत्वों को एक दूसरे से जोड़ता है, जबकि दूसरा कथन एक ही तत्व के विस्तार को बताता है । प्रथम कथन कार्यकरण संबंधों को बताता है जो कि किसी समाज वैज्ञानिक के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

4.4.3.1 प्राक्कथन निर्माण के आधार नियम

प्राक्कथन निर्माण के लिए मूख्य रूप से चार नियम निर्धारित हैं जिनकी कसौटी पर खरा उतरने पर ही कोई कथन प्राक्कथन बनता है ।

पहला : प्राक्कथन में प्रयुक्त संबोधों के मध्य संबंध इतना अधिक स्पष्ट रूप से परिभाषित होना चाहिए कि यह स्पष्ट हो कि कौनसा संबोध कार्य है, और कौनसा कारण । जब तक वैज्ञानिक यह निर्धारित नहीं कर लेता कि कौनसा संबोध कारक है और कौनसा कारण, उसके लिए उस प्राक्कथन का प्रयोग करना संभव नहीं है । जेटरबर्ग (Zetterberg) ने मैक्स वेबर की कृति "प्रोटेस्टेन्ट ईथिक्स एण्ड दी स्पिरिट ऑफ कैपिटलिज्म" की व्याख्या करते हुए इस नियम को उद्दत किया है । उनका मानना है कि वैबर का यह कार्य अलग-अलग रूप में इस लिए विश्लेषित किया गया है क्योंकि वैबर अपनी इस कृति में आधारभूत केन्द्रीय प्राक्कथन को स्पष्ट रूप से संबोधात्मक स्तर पर स्पष्ट करने में सक्षम नहीं हो पाए हैं ।

दूसरा : दूसरा नियम यह है कि प्राक्कथन इस प्रकार निर्मित किये जाए कि उनका परीक्षण संभव हो सके। सामान्यत: जितने अधिक किसी प्राक्कथन के परीक्षण संभव हो उतना ही अधिक वह प्राक्कथन सक्षम एवं वैज्ञानिक माना जाता है । इस नियम का अर्थ है कि प्राक्कथन ऐसा हो जिसे एक से अधिक तरीकों से जाँचा एवं परखा जा सकता हो । कई बार समाज वैज्ञानिक यह मान लेते है कि आनुभाविक परीक्षण ही प्राक्कथन की परख के लिए उपयुक्त और एक मात्र सही परीक्षा है जबकि ऐसा मानना त्रुटिपूर्ण हो सकता है, क्योंकि कई प्राक्कथनों में ऐसे संबोध भी समाहित होते हैं जिनका कोई प्रत्यक्ष आनुभाविक संदर्भ नहीं होता है । अत: जब प्राक्कथन ऐसे हो जिनमें समाहित संबोधो के आधार पर निष्कर्षित संदर्भ हो तब तार्किक सह-संबद्धता' (Logical Consistancy) का परीक्षण प्रयुक्त करना आवश्यक हो जाता है ।

तीसरा : तीसरा नियम यह है कि प्राक्कथन अन्य प्राक्कथनों के साथ इस प्रकार से संबंधित होने योग्य हो कि एक सैद्धान्तिक निगमनात्मक व्यवस्था निर्मित करना संभव हो । जब तक यह सह-संबद्धता प्राप्त नहीं कर ली जाती तब तक किसी भी प्राक्कथन की विवेचनात्मक क्षमता क्षीण रहती है ।

चौथा : प्राक्कथन निर्माण इस प्रकार का हो कि वह संबोधों के प्रभाव क्षेत्र को स्पष्ट रूप से परिभाषित एवं पूर्वानुमानित कर सके ।

पाँचवा : पाँचवा नियम है कि कुछ सैद्धान्तिक प्राक्कथनों में उच्च स्तरीय संबोधों का होना आवश्यक है ।

छठा : प्राक्कथन निर्माण संबोधों एवं परिभाषाओं के सामान्य नियमों के आधार पर निर्मित किये जाने चाहिए । प्राक्कथन सकारात्मक होने चाहिए ना कि नकारात्मक । वे सारगर्भित एवं वैज्ञानिक षब्दावली से निर्मित होने चाहिए।

सातवां : प्राक्कथन गत्यात्मकता एवं स्थिरता दोनों को ही परीलक्षित करने में सक्षम होने चाहिए।

आँठवां : सिद्धान्त निर्माण में कुछ प्राक्कथन इस प्रकार से निर्मित होने चाहिए कि विवेचन में निहित स्थानिक संदर्भ, समयकालिक तथा क्षेत्रिय विशिष्टता स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो ।

प्राक्कथन जहाँ तक संभव हो अमूर्त होने चाहिए, किन्तु अन्त: संबद्धता को समझने के लिए उस संदर्भ को समझना आवश्यक है जो प्राकल्पना में निहित है ।

4.4.4 प्राकल्पना

प्राक्कल्पना सिद्धान्तों की व्याख्या करने की क्षमता प्रदान करते है । किसी भी सिद्धान्त में प्राक्कथन निगमनात्मक प्रायोजना का निर्माण एवं विकास संभव बनाते है । प्राक्कथनों को निम्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है.

1. प्राक्कथनों में प्रयुक्त किये गए सह-संबंधात्मक संबोधों की संख्या के आधार पर ।
2. प्राक्कथन में प्रयुक्त संबोधों में कार्य-कारण संबंधों के विस्तार के आधार पर । इसका अर्थ है कि किसी प्राक्कथन में व्याख्यित प्रकरणों की संख्या कितनी है ।
3. प्राक्कथन में प्रयुक्ता किये गए संबोधों के मध्य सह-संबंधों के आधार पर । उदाहरण के लिए प्रत्यक्ष संबंध है अथवा अप्रत्यक्ष अन्तर्निहित संबंध ।
4. प्राक्कथन में प्रयुक्त संबोधने में से स्वतंत्र चर को कारणात्मक प्रस्थिति प्रदान करने के आधार पर । इसका अर्थ है कि प्राक्कथन में प्रयुक्त विभिन्न संबोधों में जिन चरों को सम्मिलित किया गया है उनमें से किसी स्वतंत्र चर को कारण माना गया है ।

सामान्यत: प्राक्कथन में प्रयुक्त संबोधों की संख्या के आधार पर ही इसका विभाजन किया जाता है । वे प्राक्कथन जो दो संबोधों को सह-संबंधित करते हैं द्वि-चरीय (Bivariate) प्राक्कथन कहलाते है जबकि वे प्राक्कथन जिनमें तीन या तीन से अधिक संबोध एक कमबद्ध प्रारूप में प्रयुक्त किये जाते है, बहु चरीय (Multivariate) प्राक्कथन कहलाते है ।

सिद्धान्तों में क्रमीकरण (Ordering of theories or theory construction):

संबोध निर्माण, परिभाषा निर्माण तथा तथ्य संकलन इन तीनों के तार्किक आधार पर किसी सिद्धन्त में प्राक्कथनों के क्रम का निर्धारण होता है । इस अर्थ में सिद्धान्त निर्माण में स्वयं सिद्ध पद्धति (axiomatic mehtod) से प्राक्कथनों का क्रम निर्धारित होता है । इस पद्धति में प्राक्कथन (axioms) स्वयं सिद्ध मान लिए जाते है, जिनमें से प्रमेय (Theorem) अथवा निम्न क्रमीय पूर्वानुमान (Lower order predictions) निगमित किए जाते है ।

संबोधों को दो रूपों में देखा जाता है: आधार संबोध एवं निगमित संबोध (Basic concept and derived concept) । आधार संबोध बिना परिभाषा के सम्मिलित किए जाते है और इस आधार संबोध में से निगमित संबोध निर्मित किए जाते है । इस प्रकार सिद्धान्त निर्माण में कमीकरण एक साधारण न्यायिक तर्क (Syllogistic logic) के नियम के आधार पर स्वयं ही निर्धारित होता है, जैसा कि दुर्खीम के पूर्व उल्लेखित 'आत्महत्या के सिद्धान्त में दर्शाया जा चुका है कि कुछ प्राक्कथन अन्य उच्च स्तरीय प्राक्कथनों में से निगमित किए जाते है । उदाहरणार्थ दुखीम का पाँचवां प्राक्कथन उनके तीसरे व चौथे प्राक्कथनों में से तार्किक आधार पर निगमित है ।

4.5 सारांश

तथ्य एवं सिद्धान्त एक-दूसरे के पूरक हैं तथा आनुभाविक अध्ययन एवं वैज्ञानिक पद्धति द्वारा सह-संबंधित होते हुए सामाजिक यथार्थ को समझने में सहायता प्रदान करते हैं । तथ्य सिद्धान्त को परिष्कृत करते हैं पुन: परिभाषित करते हैं तथा सिद्धान्त भी तथ्यों को व्यवस्थित वर्गीकृत करते हुए अर्थ प्रदान करते हैं । सिद्धान्त निर्माण में तथ्य संबोधो, प्राक्कथनों एवं प्राकल्पनाओं में प्रयुक्त होने वाले चरों के रूप में सक्रिय भूमिका का निर्वहन करते है

4.6 अभ्यास प्रश्न

1. सामाजिक तथ्य को परिभाषित कीजिए?
2. तथ्य एवं सिद्धान्त के मध्य संबंधों की व्याख्या कीजिए?
3. सिद्धान्त रचना में संबोधों की भूमिका की व्याख्या कीजिए?
4. सिद्धान्तों के प्रकार बताइये?

4.7 संदर्भ ग्रंथ

- शर्मा, विरेन्द्र प्रकाश : समाजशास्त्रीय अनुसंधान के तर्क एवं पद्धतियाँ; पंचषील प्रकाशन, जयपुर ।
- कोहेन,मोरिस आर. एवं अर्नेस्ट नैग्ल: एन इटरोडक्श्न टू लॉजिक एण्ड साईंटिफिक मैथड, हारकोर्टब्रेस न्यू यार्क ।
- मर्टन, रॉबर्ट, के.: सोष्यिल थ्योरि एण्ड सोशियल स्ट्रक्चर, फ्री प्रेस, ग्लेन्को ।

इकाई - 5

पैराडाईम एवं मॉडल

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य
5.2 प्रस्तावना
5.3 मॉडल एवं पैराडिम की अवधारणात्मक रचना
5.4 मॉडल, पैराडिम एवं सिद्धान्त निर्माण
5.5 मॉडल के प्रकार / स्वरूप
5.6 पैराडिम के प्रकार / स्वरूप
5.7 सामाजशास्त्र के विकास में मॉडल व पैराडिम की भूमिका
5.8 सारांश
5.9 अभ्यास प्रश्न
5.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

5.1 उद्देश्य

इस पाठ का उद्देश्य विद्यार्थी को निम्नलिखित मुद्दों से परिचित कराना है -

1. मॉडल एवं पैराडिम का वैज्ञानिक अनुसंधान से सम्बंध
2. मॉडल एवं पैराडिम के अर्थ
3. मॉडल, पैराडिम एवं सिद्धांत निर्माण की प्रकिया में सम्बंध
4. मॉडल एव पैराडिम की समाज विज्ञान के विकास में भूमिका
5. मॉडल एव पैराडिम के विचारधाराओं से एव परिप्रेक्ष्यों से सम्बंध
6. एक 'मल्टी-पैरामिड' ' विषय के रूप में समाजशास्त्र की उपस्थिति

इस पाठ का उद्देश्य इस दृष्टि से समाजशास्त्र की विषय सीमा के परे जाता है और इस दृष्टिकोण का विद्यार्थी को अहसास कराता है कि विज्ञान, विचारधारा एवं पद्धति का क्षेत्र इतना व्यापक है कि समाज विज्ञानों के विकास की तीव्र गति का मापन नहीं किया जा सकता । साथ ही मॉडल एवं पैराडिम के अर्थो को जानकर एवं उन्हें व्यावहारिक रूप में प्रयुक्त कर विषय से सम्बन्धित विचारों को परिपक्व बनाया जा सकता है । यह भी जाना जा सकता है कि चित्रमय प्रस्तुतियाँ विषय को कितना सहज बना सकती हैं ।

5.2 प्रस्तावना

यह पाठ अनुसंधान प्रकिया के उन महत्वपूर्ण पक्षों का परिचयात्कम विवेचन प्रस्तुत करता है जो सिद्धांत निर्माण को मूर्त रूप प्रदान करते हैं । यदि आपने स्नातक स्तर पर समाजशास्त्र का अध्ययन किया है तो सामाजिक अनुसंधान एवं अन्वेषण की प्रकिया का प्रारम्भिक ज्ञान आपको हो चुका है फिर भी यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि कोई भी वैज्ञानिक

अध्ययन यर्थाथ पर आधारित होता है जिसे प्राथमिक एवं द्वैतियक तथ्यों के रूप में एकत्रित कर अंवेषणकर्त्ता कारण-परिणाम सम्बंधो को निर्मित करता है । ये कारण-परिणाम सम्बंध व्यवस्थित रूप से जोड़े जाते है ताकि अनुभाविक सामान्यीकरण की रचना की जा सके । इस प्रश्न में आपने अनुसंधान प्रारूप के पाठ को भी अध्यन्न किया है जो यह दर्शाता है कि विवेचन, विश्लेषण, अन्वेषण, परीक्षण इत्यादि का विज्ञान में भिन्न-भिन्न अर्थ है और जिन्हें केन्द्र में रखकर अनुसंधानकर्ता एक ब्लू प्रिंट निर्मित करता है ताकि वह समूचे अनुसंधान को निर्देशन दे सके ।

समाजविज्ञानों में चूंकि अनेक विचारधाराएं एवं सिद्धांत अस्तित्व में है अत: प्रविधि, अवधारणा, विचारधाराएं एवं अनुसंधानकर्ता की रचनात्मक दृष्टि जैसे सवाल भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाते है और अनुसंधान की दिशा क्या हो? के प्रश्नों को उभारते हैं । मॉडल एवं पैराडिम इन्हीं प्रश्नों का उत्तर देने की कोशिक करते हैं । आप इस पाठ के विभिन्न पहलुओं में प्रवेश करेंगे तो आप पायेंगे कि सामाजिक अनुसंधान का हर पहलु न केवल रूचिकर है अपितु वह अनुसंधानकर्ता को उत्साहित भी करता है कि वह मॉडल एवं पैराडिम के उपयोग द्वारा विषय का विकास भी करें । आपको यह भी अहसास होगा कि मॉडल एवं पैराडिम का समाजशास्त्र में “सजामशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य” (sociological perspective) एवं "परिप्रेक्ष्य के अंतर्गत परिप्रेक्ष्य" (perspectives within perspective) के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है । वास्तव में परिप्रेक्ष्यों की रचना बिना मॉडल एवं पैराडिम के नहीं हो सकती वहीं दूसरी ओर प्रत्येक परिप्रेक्ष्य किसी भी समाज वैज्ञानिक को "मॉडल" एवं “पैराडिम” में संशोधन, अस्वीकृत अथवा वैकल्पिक मॉडल एवं पैराडिम के निर्माण समांमी विचार हेतु प्रेरित करता है । इन सब की चर्चा आपको समाजशास्त्रीय सिद्धांतो की प्रकृति को समझने में सहायक सिद्ध होगी ।

5.3 मॉडल एवं पैराडिम की अवधारणात्मक रचना

मॉडल एक ऐसा शब्द है जिसे लोकप्रिय अर्थ में "किसी ऐसे पक्ष के लिए जो उदाहरण योग्य है, आदर्श है, और इतना प्रभावी है कि उसका अनुकरण किया जा सके" के लिए प्रयुक्त किया जाता है । समकालीन पद्धतिशास्त्र में मॉडल का हय लोकप्रिय अर्थ अनुपयुक्त नहीं है । वैज्ञानिक जब भी मॉडल रचना (model building) की चर्चा करते हैं तो सामन्यत: यह अर्थ भी निकलता है कि उनका यह प्रयास वैज्ञानिक ज्ञान को और अधिक उत्कृष्ट बनाएगा और साथ ही आधुनिक वैज्ञानिक गतिविधियों में वह एक महत्वपूर्ण प्रयास के रूप में स्थापित होता है । समाज विज्ञानों में इस दृष्टि से मॉडल को निर्माण एक वैज्ञानिक प्रकिया है जिसमें संज्ञानात्मक स्टाइल, साहित्यिक स्टाइल, अकादमिक स्टाइल, प्रतीकात्मक स्टाइल, एरिस्टिक (विमर्शात्मक) स्टाइल एवं पॉस्ट्यूलेशन (स्वयं सिद्ध तर्क) स्टाइल के पक्ष सम्मिलित होते हैं । इस प्रकार मॉडल सभी पक्षों को सम्मिलित करता हैं ।

संज्ञानात्कम स्टाइल में यह ध्यान दिया जाता है कि विभिन्न प्रकार के विचारों की स्टाइल क्या है? यहाँ यह देना जरूरी है कि यह प्रस्तुति की स्टाइल नहीं है । उदाहरण के लिए प्लेटो एवं गैलिलियो ने डायलाग्स लिखे परन्तु दोनों की संज्ञानात्कम स्टाइल मित्र प्रकार की थी । हालांकि यह सच है कि विचार एवं उसकी अभिव्यक्ति को बिना सम्बद्ध किए नहीं समझा जा

सकता । मॉडल में इस प्रकार विचारों को एक व्यवस्थित रूप के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जाता है और वह व्यवस्थित रूप इतना स्पष्ट होता है कि उसे अन्य मॉडलस से पृथक किया जा सकता है ।

संज्ञानात्मक स्टाइल के उपरान्त **साहित्यिक स्टाइल** मॉडल का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है जिसमें व्यक्ति, विशिष्ट व्यक्ति, घटनाओं का समुच्चय, एकल अध्ययन, क्लीनिकल निष्कर्ष इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है । इन सबको सम्बद्ध कर एक योजना बनायी जाती है जिसकी एक निश्चित महत्ता होती है । साहित्यिक स्टाइल में कृत्य, क्रिया, सक्रियता, आंदोनल इत्यादि को इस रूप में प्रस्तुत किया जाता है कि समूची संस्कृति विवेचित की जा सके । इस प्रकार का मॉडल हमें फ्रायड एवं तोक्यावली के अध्ययनों में देखने को मिलता है जिन्होंने मानव व्यवहार के विभिन्न पक्षों को विशिष्ट तरीकों से प्रस्तुत किया है ।

मॉडल का एक अन्य स्टाइल, जिसे सम्मिलित किया जाता है, **अकादमिक** चरित्र का है जिसमें अमूर्तता एवं सामान्यता के पक्ष सम्मिलित होते हैं । यह स्टाइल मौखिक अधिक होता है और क्रियात्मक कम होता है । इसके अन्तर्गत तुलना, विश्लेषण, अवलोकन, सिद्धांत इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है । इस स्टाइल में नियमों **(principles)** को अधिक महत्व दिया जाता है जो सामान्यीकरण की रचना करते है । टायनबी, पारसंस वेबलिन एवं क्लासिकल इकनॉमिक्स में इस प्रकार की स्टाइल पर अधिक ध्यान दिया गया है ।

ऍस्टाइल स्टाइल (विमर्शात्मक) में सदैव प्रामाणिकता पर विशेष बल दिया जाता है और इसके आधार पर विशिष्ट क्रमविन्यासों को निर्मित किया जाता है । इस प्रकार की स्टाइल में प्रयोग एवं सांख्यिकीय प्रदत्त महत्वपूर्ण हो जाते हैं । साथ ही निगमनमूलक सम्बंध एवं तार्किक अन्त:स्त्रोत को पर्याप्त स्थान दिया जाता है । इस प्रकार की स्टाइल में सार (substance) आनुभविक वाक्य (empirical statements) महत्वपूर्ण हो जाते हैं । ऍरिस्टिक स्टाइल में वैज्ञानिक पद्धति एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लेती है । 20वीं शताब्दी के व्यवहारवादी विज्ञानों में यह पक्ष केन्द्रीय महत्व प्राप्त करते हैं । पॉवलाव, पैरेटो, कींस मिशेल, लॉसवेल एवं समकालीन भाषाशास्त्रियों ने जिन पक्षों को प्रस्तुत किया है वह ऐरिस्टिक स्टाइल को व्यक्त करता है ।

प्रतीकात्कम स्टाइल में गणित एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करती है ताकि प्रिसीजन (precision) की विशेषता को स्थापित किया जा सके । इस प्रकार की स्टाइल में अवधारणाएं संक्षिप्तीकरण के साथ प्रस्तुत की जाती है । समस्या एवं समाधान इस स्टाइल का महत्वपूर्ण हिस्सा है । इसके साथ ही मापन की प्रणालियाँ महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लेती है । गणितीय अर्थशास्त्र, साईको मैट्रिक, समाजमिति, राजनितिक समस्याओं के अध्ययन हेतु गेम थियोरी इत्यादि में इस प्रकार की स्टाइल को प्रयुक्त किया जाता है ।

पोसट्चुलेशनल स्टाइल (स्वयं सिद्ध तर्क) में विशिष्ट चरों (special variants) को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है । इस स्टाइल में साक्ष्यों की वैधता पर बल दिया जाता है ।

क्रमविन्यास की अन्तर्वस्तु जोकि विभिन्न चरणों पर उभरती है, को इस प्रकार की स्टाइल में स्वसिद्ध प्रमाण / नियम (axioms) का महत्वपूर्ण स्थान होता है । जो पोस्टचुलेट्स

होते हैं उनमें आनुभाविक कंटेट होता है और इसलिए उनका सच तथ्यों पर आश्रित हो जाता है । उपयोगितावादी सिद्धांत में इस प्रकार की स्टाइल प्रयुक्त होती है । इसके साथ-साथ सीखने के सिद्धांत, संचार, अंतर्राष्ट्रीय सम्बंध एवं नातेदारी व्यवस्थाओं में इस स्टाइल को महत्व दिया जाता है ।

मॉडल में जो आखिरी स्टाइल प्रयुक्त की जाती है उसे **औपचारिक स्टाइल** की संज्ञा दी जाती है । इस प्रकार की स्टाइल में सम्बधों के स्वरूपों पर बल दिया जाता है । इसके साथ-साथ इस स्टाइल में भिन्न-भिन्न प्रकार के विवेचन न केवल सम्मिलित होते हैं अपितु उन्हें समान प्रकार का महत्व दिया जाता है । औपचारिक स्टाइल में विवेचनाओं की यह बहुस्तरीयता विषयवस्तु के विस्तार में योगदान करती है । कार्टराइट एवं हैरी ने संगठन के सिद्धांत के विवेचना में इस स्टाइल को प्रयुक्त किया है । इस सिद्धांत में संचार-तंत्र (communication net) सत्ता की संरचना एवं प्रभाव मित्रता के पैटन्रस इत्यादि को सम्मिलित किया गया है ।

उपरोक्त सभी उदाहरणों से स्पष्ट है कि विज्ञान के विभिन्न विषयों में न केवल विषयवस्तु के आधार पर वर्गीकरण होते है अपितु स्टाइल भी वर्गीकरण का आधार बन जाते हैं । **कलात्मक स्टाइल** में कलाकार की सृजनशीलता का चरित्र मॉडल की रचना करता है । एक रोमांटिक कविता या अभिव्यीकामूलक पेटिंग ऐसे मॉडल्स प्रस्तुत कर देती हैं जो विषयवस्तु की भित्रता को और विषयवस्तु के अन्तर्गत उत्पत्र होने वाली भिन्नता को महत्व दे देते हैं । **कॉगनिटिव स्टाइल** में अन्वेषण का चरित्र एवं उसका विकास महत्वपूर्ण हो जाता है । इस प्रकार मित्र-मित्र प्रकार की स्टाइलस विषय में अनेक संभावनाओं को जन्म दे देती है । मॉडल का यह अर्थ अनेक संदर्भो को हमारे सामने ले आता है । सामान्यत: यह कहा जाता है कि मॉडल का अवलोकन कर कारण-परिणाम संबंघों को तत्काल जाना जा सकता है । सामान्यत: मॉडल की रचना तब की जाती है जब अनुसंधानकर्त्ता को यह लगे कि अध्ययन की जाने वाली प्रघटना में अनेक चर हैं और जिनके कारण-परिणाम अन्तःसम्बंधो को अवलोकनकर्त्ता प्रकाश में लानों चाहता है । इस कारण मॉडल वैज्ञानिक अनवेषण की एक महत्वपूर्ण विधा बन जाता है ।

पैराडिम अनुसंधान की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता है । समाजशास्त्र में संभवत: राबर्ट के मर्टन तथा थॉमस कुहन ने पैराडिम की अवधारणा को व्यवस्थित रूप में प्रयुक्त किया । मर्टन के अनुसार 'पैराडिम किसी भी विशिष्ट क्षेत्र में किए जाने वाले अंवेषण को दिश देने के लिए प्रयुक्त होने वाली अवधारणाओं एवं परिकल्पनाओं का एक समुच्चय है' । हम यह सब स्वीकार करते हैं कि अनुसंधानकर्त्ता जब भी समाजशास्त्रीय विश्लेषण के प्रयास करता है तो अवधारणाओं एवं कार्यकारी अवधारणाओं, उपकल्पनाओं एवं कार्यकारी उपकल्पनाओं और उस अध्ययन से सम्बंधित विशिष्ट प्रपोजीशन,/ वाक्य विन्यास (proposition) जो अस्तित्व में हैं, को एक नियोजित रूप में प्रदर्शित करता है । साधारण शब्दों में विभिन्न प्रकार की सामग्री को नियाजित ढंग से प्रस्तुत करना पैराडिम है मर्टन ने "सोशल थियोरी एण्ड सोशल स्ट्रक्चर” में प्रकार्यात्म विश्लेषण को इसी पैराडिम के अन्तर्गत प्रस्तुत किया है ।

थॉमस कुहन ने "द स्ट्रक्चर ऑफ सांइटिफिक रिवोल्यूशन' में पैराडिम का प्रयोग प्राकृतिक विज्ञानों एवं समाज विज्ञानों में स्पष्ट अन्तर प्रस्तुत करने के लिए किया है । जब

सार्वभौमिक एवं एकमत्यततामूलक वैज्ञानिक उपलब्धियाँ निर्मित की जा सके जिनसे ना केवल प्रघटनाओं का समाधान संभव हो अपितु व्यवस्थित निष्कर्ष नियम का आकार ले सकें । तब पैराडिम को सामान्य विज्ञान की परिधि में सर्वाधिक महत्व दे दिया जाता है चूंकि समाज में इस प्रकार की स्थितियां अस्तित्व में नहीं आ पाई हैं । इसलिए कुहन सभी समाज विज्ञानों को "पूर्व पैरामिडिक स्थिति का प्रतिनिधित्व करने वाले विज्ञानों की संज्ञा देते है' ।

पैराडिम को अनेक वैज्ञानिकों ने अपने-अपने तरीके से परिभाषित करने का प्रयास किया हैं । "ब्लैकवेल डिक्शनरी ऑफ सोसियोलॉजी " (1999,226) में पैराडिम को एक सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है । इस दृष्टि से पैराडिम उन विभिन्न अनुमानों का समुच्च है जो प्रघटना की प्रकृति को व्यक्त करते है और उसमें प्रस्तुत किए गए प्रश्न और उनके उत्तरों को व्यवस्थित आकार दिया जाता है ताकि किसी परिणाम पर पहुँचा जा सके । यदि इस परिभाषा को स्वीकार कर लिया जाए तो समाज विज्ञानों में हम संघर्ष, अन्तक्रियावाद प्रकार्यवाद पारिस्थिकीय विवेचनाओं को पैराडिम के रूप में प्रस्तुत करते है । यह परिभाषा फिर एक बार कुहन के विचारों के साथ सम्बद्ध की जानी चाहिए । कुहन का मत है कि किसी भी विषय का विज्ञान के अंतर्गत विकास अचानक भी हो सकता है । अर्थात् विज्ञान का विकास सामान्यत: सतत प्रक्रिया नहीं है और इसलिए अचानक होने वाले बदलावों को कुहन "स्ट्रक्चर ऑफ सांइटिफिक रिवोल्यूश्न" में पैराडिम शिफ्ट की संज्ञा देते हैं । कुहन विज्ञान एवं समाज विज्ञानों के विकास में तीन चरणों का उल्लेख करते हैं-

1. पूर्व वैज्ञानिक चरण (pre-scientific phase)
2. सामान्य विज्ञान (normal science)
3. पैराडिम बदलाव (paradigm shift)

कुहन के अनुसार ऐसे सिद्धांत हो सकते हैं जिनकी रचना कर सामान्य विज्ञान के चरण में प्रवेश किया जा सकता है । यही चरण पैराडिम है । इस दृष्टि से कोई भी सिद्धांत, पद्धति अथवा अनुसंधान साम्रगी में अन्तर्निहित अनुमानों (जो कि प्रकट एवं अप्रकट हो सकते हैं) एवं अवधारणा निर्माण के प्रयासों को पैराडिम कहा जा सकता है । वस्तुत: पैराडिम एक अवधारणात्कम प्रतिमान एवं सुस्थापित फ्रेमवर्क **(fram work)** है जिसमें अनुसंधान की समूची प्रणाली को निर्देशन प्राप्त होता है । अत: यह कहा जा सकता है कि अनुसंधानकर्त्ता के द्वारा समूचे कार्य संचालन के लिए चुनी गई अवधारणाओं, उपकल्पनाओं, पद्धितियों, विचार-विन्यासों इत्यादि का सम्मुचय जो योजना एवं रूपरेखा को निर्मित कर देता है पैराडिम कहलाता है । अत: मॉडल एवं पैराडिम दोनों विज्ञान में अनुसंधानकर्ता के वे प्रयास हैं जिनसे क्रमश: विचार की एवं पद्धति की स्पष्टता सुनिश्चित हो जाती है । अनुसंधान के परिपक्व चरण में मॉडल एवं पैराडिम का निर्माण आवश्यक है ताकि एक विषय को अन्य विषयों से पृथक करने का व्यवस्थित प्रयास हो सके ।

5.4 मॉडल, पैराडिम एवं सिद्धांत निर्माण

कोई भी विषय जब परिपक्वता की तरफ जाता है तब सिद्धांत निर्माण की प्रक्रिया पर बल देने लगते है । यहाँ हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि पैराडिम में अनुसंधानकर्त्ता मूल्यों पर

बल नहीं देता जबकि मॉडल में मूल्य एक-. महत्वपूर्ण अवयव बन जाते हैं । वस्तुत: अनुसंधान प्रारूप, मॉडल एवं पैराडिम वे प्रयास है जिन्हें सिद्धांत निर्माण वाले पाठ से यह जान चुके होंगे कि समाजशास्त्रीय सिद्धांत तर्क पर आधारित अवधारणाओं का एक ऐसा समुच्चय है जिसने सामान्यीकरण को वैज्ञानिकता पूर्वक स्थापित किया है और जिसे आधार बनाकर सम्बद्ध प्रघटना की समाजशास्त्रीय व्याख्या की जा सकती है । यह भी संभव है कि एक सिद्धांत को केन्द्र में रखकर अनेक पैराडिम एवं मॉडल की रचना की जा सके । वहीं दूसरी तरफ मॉडल एवं पैराडिम को निर्मित कर सिद्धांत निर्माण की संभावनाओं को तलाशा जा सके । अवधारणाएं किसी भी वैज्ञानिक विषय में अनेक चरों से निर्मित किए जाते हैं और मूल्यों, वैचारिक स्थापनाओं एवे सामान्यीकृत तर्क संरचनाओं को केन्द्र में रखकर मॉडल की रचना की जाती है । इन सबको अन्त:सम्बद्धता प्रदान कर एक ऐसा सुनिश्चित आकार दिया जाता है जिसे आधार बनाकर सम्बद्ध प्रघटना की कार्य-कारणता को प्रस्तुत किया जा सके । यही कार्य-कारणता सिद्धांत निर्माण है । विभिन्न सिद्धांतों से किसी भी विषय में परिप्रेक्ष्यों की विशिष्ट प्रकृति को रेखांकित करने का प्रयास सम्बद्ध विषय के विशेषज्ञ करते हैं और यही प्रयास मॉडल को सिद्धांत के निकट ले आता है, ऐसा टर्नर का मत है । टर्नर "द स्ट्रक्चर ऑफ सोसियोलॉजिकल थियोरी” में सामाजिक प्रधटना के चित्रमय प्रदर्शन को मॉडल की संज्ञा देते हैं । टर्नर के अनुसार मॉडल में उन अवधारणाओं को सम्मिलित किया जाता है जो सार्वभौम की सुनिश्चित विशेषताओं को रेखकित करते हैं । विभित्र अवधारणों के मध्य का क्रम एवं सम्बंध और उनमें प्रयुक्त होने वाले प्रतीक मॉडल निर्माण के केन्द्रीय तत्व बन जाते हैं । टर्नर यह भी तर्क देते हैं कि जब अनेक चरो की उपस्थिति हो और अन्वेषणकर्ता अनेक कार्य-कारणतामूलक सम्बंधों को विशेष रूप में प्रस्तुत करने का इच्छुक हो तब मॉडल का निर्माण आवश्यक हो जाता है । टर्नर इस विचार के साथ विष्लेषणात्मक मॉडल एवं कार्य-कारणतामूलक मॉडल (Analytical model and Causal mode) की चर्चा करते हैं । इस विचार के साथ समाज विज्ञानों मेंमॉडलसू के वर्गीकरण सम्भव है, हम कुछ ऐसे समाजशास्त्रियों का उल्लेख करेंगे जो कहीं न कहीं मॉडल के वर्गीकरण को प्रस्तुत करते है ।

5.5 मॉडल के प्रकार

ऐलेक्स इंकेल्स ने अपनी पुस्तक "व्हाट इज सोसियोलॉजी” में समाजशास्त्रीय विश्लेषण हेतु निम्नलिखित प्रमुख मॉडलस की चर्चा की है-

1. उद्विकासीय प्रतिरूप / मॉडल (Evolutionary Model)
2. सावयवी प्रतिरूप / मॉडल: संरचनात्मक / प्रकार्यवाद (The Organismic Model)
3. सन्तुलन बनाम संघर्ष प्रतिरूप / मॉडल (Equiliibrium vs. Conflict Model)
4. भौतिक विज्ञान का प्रतिरूप / मॉडल (Physical science Model)
5. सांख्यिकीय एवं गणितीय प्रतिरूप / मॉडल (Statistical and Mathematical Model)

1. **उद्विकासीय मॉडल -** उद्विकासीय प्रतिरूप समाजशास्त्र में ऐतिहासिक पक्षों पर बल देकर सामाजिक सम्बंधों, सामाजिक अंतःक्रिया, सामाजिक नियंत्रण एवं सामाजिक संस्थाओं के अध्ययन पर बल देता है । इस प्रतिरूप के अनुसार व्यक्ति एवं समाज की अवधारणा का विकास सरलता से जटिलता की तरफ, समरूपपता से विषमरूपता की तरफ तथा समानता से विभिन्नता की तरफ उद्विकासीय क्रम में हुआ है । यह धीमी गति से होने वाला तथा सदैव आगे की ओर होने वाला विकास है । इस मॉडल को प्रयोग समाजशास्त्र में अगस्त कोत (बौद्धिक समाज, औद्योगिक समाज), सोरोकिन (संस्कृति के उद्विकासात्मक चरण-विचारात्मक, आर्दशात्मक इन्द्रियपरक), दुर्खीम (यांत्रिक समाज, सावयवी समाज), टॉनीज (गैमिनशैफट) इत्यादि समाज वैज्ञानिकों ने किया ।

2. **सावयवी मॉडल - संरचनात्मक-प्रकार्यवादी :** इस मॉडल में समाज की तुलना सावयव से की गई है । अत: सावयव की भाँति समाज को भी संरचना (structure) एवं प्रकार्य (function) के साथ सम्बद्ध करके समझा जाता है । यह प्रतिरूप तुलनात्मक अध्ययनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है तथा सामाजिक जीवन की निरन्तरता के अनेक पक्षों के प्रति चेतनशीलता भी उत्पन्न करता है । इस प्रतिरूप के द्वारा यह समझने का प्रयास किया जाता है कि किसी एक भाग में परिवर्तन का अन्य भागों पर क्या प्रभाव पड़ता है तथा किसी भी संरचना की विभिन्न इकाइयॉ किस प्रकार सम्बधिंत है और किस प्रकार वे एक संतुलनकारी व्यवस्था का निर्माण करती हैं । इस प्रतिरूप का प्रयोग मेलिनोवस्की, रेडक्क्लि ब्राउन, पारसंस किंग्सले डेविस, रार्बट मर्टन इत्यादि समाजवैज्ञानिकों ने किया है । इन मॉडल्स की विस्तार से विवेचना आप, समाजशास्त्रीय सिद्धांत वाले प्रश्न-पत्र में देखेंगे ।

3. **संतुलन बनाम संघर्ष प्रतिरूप -** संतुलन या समन्वयात्मक प्रतिरूप का वस्तुत: प्रकार्यवादी प्रतिरूप के एक विशिष्ट स्वरूप की संज्ञा दी जाती है । इस प्रतिरूप के साथ मुख्यत: टालकट पारसंस एवं उनके अनुयायियों को सम्बद्ध किया जाता है । इन विचारकों का मत है कि समाज विभिन्न आन्तरिक एवं बाहय शक्तियों का समुच्चय है तथा सदैव संतुलन की स्थिति में बना रहता है अर्थात् समाज में तनाव एवं संघर्ष की स्थिति को नकारते हैं । यह प्रतिरूप सामाजिक तनाव एवं संघर्ष की उपेक्षा करने के कारण समाज के एक पक्षीय अध्ययन को समाजशास्त्र में उत्पन्न करता है जिसकी आलोचना "संघर्ष प्रतिरूप” ने की है ।

संघर्ष प्रतिरूप के प्रतिपादकों का मत है कि समाज को संतुलनकारी व्यवस्था मानना एक भ्रामक अवधारणा है । समाज में संतुलन एवं असंतुलन दोनों प्रक्रियाएं समान रूप से पायी जाती है । इन्होंने पारसंस की मूल्य एकमत्यता एवं संतुलन की अवधारणा की आलोचना करते हुए समाज को "दंडात्मक एकता" क्रा प्रतिनिधित्व करने वाली व्यवस्था माना है । इन विचारकों का मत है कि सामाजिक परिवर्तन एक मात्र सातत्य की प्रक्रिया है और संघर्ष इस परिवर्तन का मूल कारण है । इस प्रतिरूप के समथर्को में मार्क्स, कोजर, डेहरन्डोर्फ गालटुंग एवं सीराइट मिल्स प्रमुख है । यह कहा जा सकता है कि संघर्ष प्रतिरूप के द्वारा सामाजिक प्रघटनाओं का अध्ययन प्रक्रिया के आधार पर किया जाता है ।

वस्तुत: समाजशास्त्र में उपर्युक्त तीन प्रतिरूपों को ही अधिक प्रयुक्त किया जाता है तथापि इंकेल्स ने "प्राकृतिक विज्ञानों के प्रतिरूप" तथा "सांख्यिकीय व गणितीय प्रतिरूप” के समाजशास्त्रीय अध्ययनों में प्रयोग की संभावना से इन्कार नहीं किया है । परन्तु समाज विज्ञानों में इन प्रतिरूपों के प्रयोग को लेकर अनेक मतभेद देखे जा सकते हैं । इन प्रततरूपों के अतिरिक्त समाजशास्त्र में अवधारणात्मक मॉडल (conceptual model) तथा सैद्धांतिक मॉडल (theoretical model) की चर्चा भी की जाती है-

1. **अवधारणात्मक प्रतिरूप** में सामाजिक विश्व या सामाजिक प्रघटनाओं को अनेक सम्बंधित अवधारणाओं के संदर्भ में प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता हैं उदारण के लिए संरचनात्मक-प्रकार्यवादी सैंद्धांतिक प्रतिरूप में प्रतिमानों, भूमिकाओं, व्यवस्था, सामाजिक नियंत्रण, संतुलन, समाजीकरण तथा अनुकूलन इत्यादि अवधारणाओं को सम्मिलित किया जाता है ।
2. **सैद्धांतिक प्रतिरूप** सिद्धांत एवं शोध के मध्य सम्बंधो को अभिव्यक्त करता है । सैद्धांतिक प्रतिरूप किसी विशिष्ट प्रघटना से सम्बंधित अवधारणाओं एवं विवेचनात्मक पक्षों को प्रस्तुत करता है । विलर के अनुसार 'सैद्धांतिक प्रतिरूप प्रघटनाओं के एक समूह का संप्रत्यीकरण है जो कि तार्किकता पर आधारित है और जिसका अन्तिम लक्ष्य शब्दावली, वाक्य विन्या (प्रपोजीशनस) तथा सम्बंधों को स्पष्ट कर सिद्धांत का निर्माण करना है" प्रतिरूपों के इन प्रकारों की विवेचना के उपरान्त पैराडिम के मुख्य प्रकारों को हम जानने का प्रयास करेंगे ।

5.6 पैराडिम के प्रकार

पैराडिम वाक्य विन्यासों का एक समुच्चय है जो यह बताता है कि समाज या सामाजिक प्रघटनाओं को किस आधार पर विवेचन / विश्लेषित किया जाता है । समाज विज्ञानों में मुख्यत: निम्नलिखित पैरामिडिमस की चर्चा की जाती है-

1. **प्रत्यक्षवादी पैराडिम (Positivist paradigm) -** प्रत्यक्षवाद से अभिप्राय किसी प्रघटना का अध्ययन आनुभविक तथ्यों के आधार पर करना है जिसमें प्रयोग, तुलना एवं अवलोकन प्रविधियों का प्रयोग कर एक कारण-एक परिणाम सम्बंध स्थापित किया जाता है । अगस्त कोंत ने सेंट साइमन के विचारों से प्रभावित होकर इस अवधारणा को प्रस्तुत किया जिसे "विज्ञानवाद" की संज्ञा भी दी जाती है । यह पैराडिम इस तर्क पर आधारित है कि विज्ञान मूल्य निरपेक्ष (value free) अवधारणा के रूप में निश्चित नियमों एवं कार्यप्रणालियो पर आधारित है । यह पैराडिम सामाजिक इकाई को “तार्किक प्राणी” के रूप में स्वीकार करता है जो अपनी स्वतंत्र इच्छाओं से मुक्त होता है तथा वाहय नियमों से निर्देशित होता है । इस पैराडिम में यथार्थ का वस्तुपरक अध्ययन करने पर बल दिया जाता है । समाज विज्ञानों में इस पैराडिम के प्रयोग करने पर समाजवैज्ञानिकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे सामाजिक क्रिया, सामाजिक सम्बंधों तथा सामाजिक संस्थानों का अध्ययन वैज्ञानिक नियमों के आधार पर करें ताकि सामाजिक जीवन का वस्तुपरक एवं यथार्थपरक अध्ययन सम्भव हो सके ।

2. **विवेचनात्मक पैराडिम (Interpretive paradigm) -** यह पैराडिम मैक्स वेबर द्वारा सामाजिक क्रिया के अध्ययन के दौरान विकसित किया गया जो सामाजिक क्रिया / मानव व्यवहार के निर्वचनात्मक बोध (interpretive) पर बल देता है । इस पैराडिम का उद्देश्य सामाजिक जीवन को विषयपरक बोध व वस्तुपरक विवेचन प्राप्त करना है । यह पैराडिम इस तर्क को स्थापित करता है कि विज्ञान " सामान्य चेतना " (understanding) पर आधारित है न कि मूल्य निरपेक्षता (value free) पर । चूंकी यह दृष्टिकोण यह स्वीकार करता है कि सामाजिक इकाई अपने विश्व का निर्माण स्वयं करती है तथा जिसे वाहय नियमों के द्वारा नियंत्रित अथवा निर्देशित नहीं किया जा सकता । अत: इस पैराडिम के अनुसार यथार्थ का अध्ययन कर्त्ता के विषयपरक अर्थ एवं अनुसंधानकर्त्ता के वस्तुपरक विवेचन के आधार पर सम्भव है । प्रघटनाशास्त्र (phenomenology), पैराडिम में सम्मिलित किया जा सकता है ।

3. **आलोचनात्मक पैराडिम (Critical paradigm) -** यह परिप्रेक्ष्य वाहय यथार्थ एवं आन्तरिक यथार्थ के मध्य अन्तर स्थापित करने पर बल देता है । इस दृष्टिकोण को 19वीं शताब्दी के मध्य में कार्ल मार्क्स द्वारा विकसित किया गया जो मूलत: संघर्ष सिद्धांत, आलोचनात्मक / रेडिकल सिद्धांत तथा नारीवादी परिप्रेक्ष्य को सम्मिलित करता है । इन विचारकों का मत है कि विज्ञान मूल्य निरपेक्ष नही होता तथा इसकी व्याख्या / विवेचना परिवर्तित की जा सकती है । यह पैराडिम तर्क पर आधारित है कि सामाजिक इकाई समाज की निर्माता है और स्वयं ही अपने द्वारा उत्पादित वस्तु से नियंत्रित होती है जो उसे अलगावित शोषित एवं अधीनस्थ बना देती है । परिणामस्वरूप वह अपनी क्षमता / शक्ति के प्रति भ्रामक चेतना विकसित कर लेता है अर्थात संदेहास्पद हो जाता है । अत: इस पैराडिम के अनुसार यथार्थ का निर्माण सामाजिक इकाई के द्वारा किया जाता है न कि प्रकृति के द्वारा तथा जो दमन व शोषण की प्रक्रिया पर आधारित होता है ।

उपर्युक्त वर्गीकरण के अतिरिक्त समाजशास्त्र में हम संरचनात्म-प्रकार्यवादी, नव-संरचनावादी, नव-प्रकार्यवादी, मार्क्सवादी, रेडिकलवादी, अतःक्रियावादी इत्यदि पैराडिमस की चर्चा भी कर सकते हैं ।

5.7 समाजशास्त्र के विकास में मॉडल व पैराडिम की भूमिका

इस पाठ के प्रारम्भ मे आप पैराडिम एवं मॉडल अर्थ से परिचित हो चुके है जिसके आधार पर यह समझ चुके होंगे कि मॉडल एवं पैराडिम दोनों ही वैज्ञानिक अनुसंधान की महत्वपूर्ण इकाईयाँ हैं । यद्यपि रार्बट मर्टन नें अपने अध्ययनों में इन दोनों अवधारणाओं के मध्य अन्तर नहीं किया परन्तु विश्लेषण की दृष्टि से दोनों पृथक अवधारणाएं हैं । पैराडिम जहाँ एक तरफ एक मूल्य--तटस्थ / मूल्य निरपेक्ष अवधारणा है वही दूसरी तरफ मॉडल मूल्य-युक्त और मूल्य सापेक्ष अवधारणा है । तथापि सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में मॉडलसू की उपयोगिता को निम्न पक्षों के आधार पर समझा जा सकता है-

1. प्रतिरूपों के माध्यम से अध्ययन की जाने वाली प्रघटना का विवेचन एवं विश्लेषण किया जा सकता है ।

2. प्रतिरूप सिद्धांत निर्माण की महत्वपूर्ण निर्मायक इकाई है ।
3. इसके माध्यम से प्रघटना से सम्बद्ध चरों के मध्य सम्बंधों को समझने में सहायता मिलती है ।
4. समाज विज्ञानों में अनेक प्रतिरूपों की उपस्थिति प्रत्येक सामाजिक प्रघटना को विशिष्ट ढ़ग से समझने में महायक है ।
5. प्रतिरूपों के आधार पर भविष्णवाणी एवं सत्यापन अनुसंधान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है ।

प्रतिरूपों की भाँति पैराडिम्स भी सामाजिक अनुसंधान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है । थामस कुहन पैराडिम की उपयोगिता को इस तर्क मे माध्यम से सिद्ध करते हैं कि पैराडिम "क्या है “ (what is) और “क्या होना चाहिए' ' (what should be) दोनों प्रकार के पक्षों को प्रस्तुत करता है । पैराडिम की उपयोगिता को निम्न पक्षों के आधार पर समझा जा सकता है-

1. पैराडिम के आधार पर उन पक्षों को जो समरूप हो, पृथक करने में सहायता मिलती है।
2. पैराडिम अनुसंधान की सीमाओं का निर्धारण करती है अर्थात् किसी अनुसंधान के लिए कौन से प्रश्न सार्थक है और कौन से अर्थहीन, का निर्णय पैराडिम के आघार पर ही किया जा सकता है ।
3. प्रत्येक पैराडिम सामाजिक विश्व को देखने के एक वैकल्पिक एवं विशिष्ट द्दष्टिकोण प्रस्तुत करता है ।
4. पैराडिम के माध्यम से संज्ञानात्मक (cognitive) एवं आर्दशात्मक (normative) दोनों ही विचारों को जाना जा सकता है ।

5.8 सारांश

समाजशास्त्र सामाजिक सम्बंधो सामाजिक क्रियाओं, सामाजिक संरचनाओं का वैज्ञानिक-आनुभविक-विश्लेषणात्मक अध्ययन करने वाला विज्ञान है । समाजशास्त्रीय प्रघटनाओं का अध्ययन करने के लिए अनेक परिप्रेक्ष्यों का प्रयोग किया जाता है । इन परिप्रेक्ष्यों को पैराडिम के समकक्ष रखा जा सकता है । इसके साथ ही एक परिप्रेक्ष्य में अनेक परिप्रेक्ष्यों का समावेश होता है क्योंकि अवधारणाओं एवं अवधारणात्मक श्रेणियों के अर्थो को लेकर समाजवैज्ञानिकों में सहमति का अभाव होता है । परिणामस्वरूप अन्य विज्ञानों की भाँति समाजशास्त्र भी एक बाहु ल्यतामूलक प्रारूपीय विज्ञान के रूप में स्थापित हो जाता है । इस संदर्भ में ब्रियंट का मत है कि समूचे समाजशास्त्र को विचारधारायी अवधारणात्मक, पद्धतिशास्त्र भी एक बाहु ल्यताओं एवं अन्तविर्रोधों का गत्यात्मक संकलन कहा जा सकता है जिसमें प्रत्यक्षवादी, मार्क्सवादी, वेबरवादी एवं नव्य-समाजशास्त्रवादी पैराडिम सक्रिय हैं और जिनसे समूचे विकास को केन्द्र में रखकर समाज की दिशा को परखा जाता है । यही स्थिति समाजशास्त्र को बाहु ल्यतामूलक प्रारूपीय विज्ञान बना देती है और जिसे जानना प्रत्येक विद्यार्थी का एक सजग लक्ष्य है ।

5.9 अभ्यास प्रश्न

1. मॉडल के प्रकार बताइये?

2. पैराडिम के प्रकार बताईये?

5.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

- इंकेल्स ऐलेक्स 1964, व्हाट इज सोसियोलॉजी पी. एच आई. नई दिल्ली ।
- मर्टन, रार्बट, के. 1949, सोशल थ्योरी एण्ड सोशल स्ट्रक्चर, फ्री प्रेस, न्यूयार्क ।.
- ब्रियंट, क्रिस्टोफर, जी. ए. 1976, सोशियोलॉजी इन एक्शन, जार्ज एलन एण्ड अनविन, लंदन ।
- कुहन थामस, 1970, द स्ट्रक्चर ऑफ साइंटिफिक रेवोल्यूश्न्स यूनिवसर्टी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो ।

इकाई-6

आँकड़े एकत्रित करने के स्त्रोत पद्धति , प्रविधि एवं यन्त्र

इकाई की संरचना

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 औंकड़ों का अर्थ एवं परिभाषा

6.2.1 पद्धति, प्रविधि एवं यंत्र

6.2.2 आँकड़े के प्रकार

6.2.2.1 प्राथमिक

6.2.2.2 द्वैतीयक

6.2.2.3 प्राथमिक एवं द्वैतीयक आँकड़े में अन्तर

6.3 आँकड़े के स्त्रोत

6.3.1 प्राथमिक

6.3.1.1 प्राथमिक आँकड़े के स्त्रोत

6.3.1.2 प्रत्यक्ष

6.3.1.3 अप्रत्यक्ष

6.3.2 द्वैतीयक

6.6.2.1 प्रकाशित

6.3.2.2 अप्रकाशित

6.3.2.2.1 व्यक्तिगत

6.3.2.2.2 सार्वजनिक

6.4 मुख्य बिन्दु

6.5 सारांश

6.6 कठिन शब्द

6.7 अभ्यास प्रश्न

6.8 सन्दर्भ ग्रंथ

6.0 उद्देश्य

इस अध्याय को पढ़कर आप जान सकेंगे कि-

(1) आँकड़ों का अभिप्राय क्या है?

(2) पद्धति, प्रविधि एवं यन्त्र किसे कहते हैं?

(3) आँकड़ो के कितने प्रकार हैं?

(4) आकड़े एकत्रित करने के स्त्रोतों को समझ पायेंगे। -

6.1 प्रस्तावना

तथ्य संकलन शोध प्रकिया का एक महत्वपूर्ण चरण है । सामाजिक शोध में प्रस्तावित अध्ययन विषय से संबंधित समंको / सूचनाओं / जानकारियों को एकत्रित करना ही ऑकडों का संकलन या तथ्यों का संकलन कहलाता है । इस प्रकार आँकड़े के संकलन से अभिप्राय उन समस्त तथ्यों अथवा सूचनाओं को एकत्रित करने से है, जिन्हें विभिन्न विधियों के अन्तर्गत प्राथमिक अथवा द्वैतीयक स्त्रोतों से प्राप्त किया जाता है । किसी भी शोध कार्य में वैज्ञानिक निष्कर्ष तक पहुँचने एवं सामान्यीकरण तथा सैद्धान्तीकरण हेतु आँकड़ो का संकलन अनिवार्य है ।

प्रस्तुत पाठ का मूल मंतव्य है कि प्रस्तावित समस्या का संकलता पूर्वक अध्ययन किस प्रकार किया जा सकता है । सामग्री या आँकड़ो का संकलन ही किसी भी सामाजिक सर्वेक्षण के सम्पूर्ण आयोजना का सबसे महत्वपूर्ण चरण है । यह आँकड़े ही सम्पूर्ण शोध की नींव या आधारशिला होते हैं ।

6.2 आँकड़ो का अर्थ एवं परिभाषा

सामाजिक अनुसन्धान में तथ्यों का संकलन एक महत्वपूर्ण चरण है । अनुसंधान के दौरान समंकों (आकड़ों) को एकत्रित करना ही समंक संकलन' तथ्यों का संकलन या आकड़ों का संकलन कहलाता है । किसी भी सामाजिक सर्वेक्षण, या अनुसन्धान के लिए आकड़ों को एकत्रित करना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इनके अभाव में न तो शोध के निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं । और न ही नियमों का प्रतिपादन किया जा सकता है । वास्तव में तथ्य या आकड़े ही अनुसन्धान की आधारशिला होते है ।

गुडे और हैट्ट : "एक अनुभवाश्रित सत्यपनीय अवलोकन ही तथ्य है । " अत: आँकड़ो के अन्तर्गत उन सूचनाओं को सम्मिलित किया जाता है जो अवलोकन योग्य हों और जिन्हें लिखित रूप में रखा जा सकता है । अर्थात शोध कार्य के दौरान संकलित की गई सूचनाएं और जानकारियाँ ही आंकड़े कहलाती है । इन्ही संकलित आँकड़े के आधार पर विविध घटनाओं के कारणों एवं प्रभावों को जाना जा सकता है, अत: आँकड़े (तथ्य) जितने अधिक शुद्ध एवं विश्वसनीय होंगे अनुसंधान उतना ही अधिक लाभदायक होगा ।

अनुसंधानकर्ता के द्वारा वैज्ञानिक निष्कर्ष की प्राप्ति हेतु शोध कार्य के दौरान सामग्री का संकलन मनमाने ढंग से नहीं किया जाता अपितु संकलन का यह कार्य अत्यधिक सावधानी पूर्वक किया जाता है । जिसके लिए सामाजिक अनुसंधान में प्रचलित विभिन्न उपकरणों एवं प्रविधियों की सहायता ली जाती है ।

6.2.1 पद्धति, प्रविधि एवं यंत्र -

किसी भी अध्ययन को एक निश्चित प्रणाली के अन्तर्गत लाने से ही ज्ञात होता है कि किस तरीके से या किन-किन वस्तुओं को प्रयोग करके इस कार्य को आगे बढाया जा सकता है । किसी पद्धति (method) में प्रस्तावित अध्ययन के संगठन अथवा व्यवस्था तथा उसमें तथ्यों के संकलन से लेकर अन्तिम प्रकिया अर्थात सामान्यीकरण निकालने तक की सभी बातें सम्मिलित की जाती हैं । पद्धति एक विस्तृत अवधारणा है जिसे कई तरीकों या विशेष प्रविधियों

(technique) तथा उनमें प्रयोग किये जाने वाले यन्त्रों (tools) तथा साधनों (apparatus) को आवश्यकतानुसार निर्धारित किया जाता है ।

किसी एक ही अध्ययन-पद्धति के द्वारा सभी सामाजिक समस्याओं का सफलतापूर्वक अध्ययन नहीं किया जा सकता । एक ही समस्या को समझने के लिए कई पद्धतियों का भी एक साथ प्रयोग हो सकता है । एक ही समस्या अनेक विषयों या विज्ञानों से संबंधित हो सकती है, जैसे निर्धनता, बेकारी, जनाधिक्य इत्यादि जिन्हें आर्थिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक, धार्मिक या सांस्कृतिक पक्षों से देखा जा सकता है ।

सामाजिक सर्वेक्षण की पद्धतियाँ -

समाजशास्त्रीय अध्ययन प्राय: दो प्रकार के आँकड़े अर्थात गुणात्मक (Qualitative) तथा संख्यात्मक अथवा परिमाणात्मक (quantitative) तथ्यों पर आधारित होते हैं । अभी तक प्राय: सामाजिक सर्वेक्षण केवल सामान्य समस्याओं के संबंध में आँकड़े एकत्रित करने की ही पद्धति समझी जाती है तथा इसे परिमाणात्मक पद्धतियों में गिना जाता था; परन्तु वास्तविकता यह है कि अब तो विभिन्न प्रकार के अदृश्य (invisible) तथ्यों तथा दृश्य (visible) घटनाओं का सामाजिक सर्वेक्षणों के ही अन्तर्गत अध्ययन किया जाता है । चाहे हमें सामाजिक दशाओं की जानकारी करनी हो, सामान्य समस्याओं के बारे में आंकड़े एकत्रित करने हों या किसी समुदाय अथवा विशेष समूहों के विचार-व्यवहार, आदर्श-प्रतिमान, भावनाएँ, मनोवृत्तियों तथा सामाजिक मूल्य इत्यादि ज्ञात करने हों, इन समस्त अध्ययनों में सामाजिक सर्वेक्षण का ही प्रचलन बढ़ता जा रहा है । अतएव सामाजिक सर्वेक्षण स्वयं ही कई पद्धतियों का मिश्रण या समन्वय माने जाते हैं। इनमें निम्नांकित पद्धतियाँ प्रमुख रूप से प्रयोग की जाती हैं ।

(1) **क्षेत्रीय-अध्ययन पद्धति (Field-Study Method) -** सामान्यत: यही पद्धति सामाजिक सर्वेक्षण में अत्यधिक महतवपूर्ण समझी जाती है । किसी सामाजिक समस्या या दृश्य घटनाओं को तुरन्त ही 'घटित होते हुए देख सकना जहाँ पर सम्भव हो तथा आवश्यक हो, अध्ययनकर्ता को उक्त स्थल पर या क्षेत्र में जाना पड़ता है । सामाजिक तथा सांस्कृतिक दशाओं को जानने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है ।

(2) **सांख्यिकीय पद्धति (Statistical Method) -** सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत जब किसी ऐसी समस्या का अध्ययन करना हो जिसके तथ्य या सूचनाएँ आकड़ों या 'संख्याओं के रूप में उपलब्ध हो सकती हों, तथा जिन्हें एकत्रित कर लेना मात्र ही पर्याप्त न हो, बल्कि उन्हें संकलित करने के बाद किसी छोटे रूप में परिवर्तित करके समझने योग्य बनाना हो ताकि निश्चित परिणाम निकाले जा सकें । ऐसी दशा में सांख्यिकीय पद्धति प्रयोग की जाती है ।

आकड़ों का सारणीयन करने के पश्चात उन्हें सांख्यिकीय सूत्रों (formulae) के द्वारा एक निश्चित रूप प्रदान किया जाता है । इसी पद्धति के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के माध्य, मध्यिक, मध्यिका, भूमिष्ठक इत्यादि) तथा इन पर आधारित विचलन, प्रमाप-विचलन (standard deviation)ए तथा सह-सम्बन्ध (correlation) इत्यादि ज्ञात किये जाते हैं ।

(3) **ऐतिहासिक पद्धति (Historical Method) -** अतीत की अनेक दशाएँ तथा उनसे संबंधित जानकारी तथा उसके स्त्रोतों का प्रयोग बहुत-सी वर्तमान समस्याओं को सुलझाने तथा भली प्रकार समझने में सहायक होती हैं । प्राचीन घटनाओं पर आधारित निष्कर्ष सम्भवत: हमारे अध्ययनों को अधिक प्रमाणित बनाते हैं । इतिहास अतीत का समाजशास्त्र है और समाजशास्त्र वर्तमान का इतिहास है । इसी के अन्तर्गत संग्रहालय (museum) तथा पुस्तकालय (library) पद्धति से सम्मिलित किया जाता है ।

इसमें प्राय: प्रलेखों (documents) जैसे आत्मकथाएँ, जीवन-चरित्र, ऐतिहासिक विवेचन तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों के विवरण इत्यादि प्रयोग किये जाते हैं । ये समस्त प्रमाण भूतकालीन समाज की झांकी प्रस्तुत करते हैं और सूचनाओं के संकलन में द्वैतयीक स्त्रोत माने जाते हैं । इनमें आवश्यक रूप से निर्भरता या अधिक विश्वसनीयता नहीं पायी जाती है । इस पद्धति के अन्तर्गत मौलिकता 'कम तथा निजी झुकाव अधिक होते हैं ।

(4) **प्रयोगात्मक पद्धति (Experimental Method) -** यह प्रद्धति मुख्यत: मनो-सामाजिक (Psychosocial) अध्ययनों में काम आती है । इसके अन्तर्गत सामूहिक व्यवहार, मनोवृत्तियों एवं मूल्यों को जानने का प्रयास किया जाता है । इस पद्धति के द्वारा अन्तर-समूह व्यवहार के प्रभावों तथा प्रतिक्रियाओं (reactions) इत्यादि को भी समझा जा सकता है । इस पद्धति को अन्य मिलते-जुलते रूपों में, अनुभवात्मक (empirical) अध्ययन, प्रयोगशाला (laboratory) अध्ययन, इत्यादि के नाम से प्रयोग किया जाता है ।

(5) **तुलनात्मक पद्धति (Comparative Method) -** इस पद्धति का मुख्य उद्देश्य तथ्यों को तुलनात्मक रूप में प्रस्तुत करना होता है । इसके अन्तर्गत समयान्तर अथवा विभिन्न स्थानों पर घटित होने वाली घटनाओं, समस्याओं इत्यादि का पृथक रूप से अध्ययन किया जाता है तथा परिवर्तन की परिस्थितियाँ तथा प्रवृत्ति जानने का प्रयास किया जाता है । मानव-जीवन तथा समाज के प्रत्येक क्षेत्र में सदैव ही कुछ परिवर्तन होते रहते हैं, इसमें स्थिरता नहीं बनी रहती है । भूतकालीन तथा वर्तमान घटनाओं की तुलना से अनेक उपयोगी परिणाम निकाले जा सकते हैं ।

(6) **विश्लेषणात्मक पद्धति (Analytical Method) -** यह पद्धति प्रमुख रूप से समस्याओं के कारण-परिणाम सम्बन्धों का विश्लेषण करने में प्रयोग की जाती है । उपलब्ध तथ्यों के आधार पर अध्ययनकर्ता प्राय: कुछ आदर्श प्रारूप (ideal-type) निर्धारित कर लेता है । इन्हें आधार मानकर वह सामाजिक परिस्थितियों तथा घटनाओं का मूल्यांकन करता है । व्यावहारिक समाजशास्त्री इस पद्धति के अन्तर्गत विघटनकारी लक्षणों की जानकारी से सम्बन्धित अनेक सर्वेक्षण आसानी से आयोजित करता है ।

उपर्युक्त पद्धतियों को ध्यानपूर्वक देखने से ज्ञात होगा कि सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत, सूचना संकलन के प्राथमिक स्त्रोतों में क्षेत्रीय अध्ययन पद्धति का ही अत्यधिक प्रचलन है । प्रलेखीय स्त्रोतों के द्वारा सामग्री एकत्रित करने का ऐतिहासिक पद्धति से घनिष्ट सम्बन्ध है । सूचनाओं का यह संकलन मात्र ही पर्याप्त नहीं होता है । अतएव इसका विश्लेषण करने

और निश्चित निष्कर्षो पर पहुँचने के लिए सांख्यिकी पद्धति भी अधिक महत्वपूर्ण समझी जाती है और इसका निरन्तर प्रयोग बढ़ता ही जा रहा है ।

सामाजिक सर्वेक्षण की प्रविधियाँ -

विश्वसनीय तथा निर्भरता योग्य तथ्यों को प्राप्त करने के लिए वर्तमान में कुछ नवीन तरीकों या प्रणालियों को अपनाया जाने लगा है । इनके प्रयोग करने में सर्वेक्षणकर्ता को एक विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है । इन प्रविधियों को निम्नांकित प्रकार से विभाजित किया जा सकता है (1) अवलोकन या निरीक्षण (observation), (2) साक्षात्कार (interview) (3) प्रपत्र-लेखन (Form-filling) (4) निदर्शन (sampling), तथा (5) समाजमितीय (sociometrical)

(1) **अवलोकन (observation) -** जब प्रथम-स्तरीय सूचनाओं को घटनास्थल पर जाकर स्वयं देखा जाता है, अर्थात उनका निरीक्षण स्वयं ही सर्वेक्षणकर्ता के द्वारा किया जाता है इसे अवलोकन कहते हैं ।

(2) **साक्षात्कार (interview) -** जहाँ कोई तथ्य केवल अपनी आँखों से देख लेना मात्र ही पर्याप्त नहीं होता है तथा बातचीत करके विभिन्न सूचनादाताओं से जानकारी प्राप्त करनी पड़ती है, आमने-सामने की स्थिति में एक-दूसरे से प्रश्नोत्तर करके सामग्री एकत्रित की जाती है, इसे साक्षात्कार कहते हैं ।

(3) **प्रपत्र-लेखन (Form-filling) -** जहाँ साक्षात्कार अनावश्यक या अनुपयुक्त हो, सूचनादाता पढ़े-लिखे हों तो स्थानीय स्तर पर सामान्य आँकड़े एकत्रित करने के लिए प्रगणकों (investigators) के द्वारा घर-घर जाकर अनुसूचियाँ (schedules) भरी जाती हैं । सूचना दाताओं की संख्या अधिक होने तथा विभिन्न स्थानों में फैले हुए होने पर उनसे प्रश्नावलियाँ (questionnaires) भरवायी जाती है ।

(4) **निदर्शन (Sampling) -** जब सूचनादाताओं की बहुत बड़ी संख्या का सर्वेक्षण करना हो, उनकी प्रकृति में समानता का लक्षण पाया जाता हो, समय तथा धन और कार्यकर्ताओं की कमी हो, तो समस्त सूचनादाताओं का अध्ययन न करके, उनमें से कुछ थोड़े से लोगों का ही नमूने के बतौर अध्ययन कर लें जो समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकें, इसे ही निदर्शन कहते हैं ।

(5) **समाजमितीय प्रविधि (Sociometical) -** यह विधि किसी समूह के सदस्यों के गुणों, उनके पारस्परिक सम्बन्धों तथा भावात्मक विशेषताओं को मापती है । यह अमूर्त एवं गुणात्मक तथ्यों को अनुमानों पर आधारित न करके अधिमान-व्यवस्था (preferential system) के अनुसार अध्ययन करती है । मनोवृत्तियाँ, सामाजिक दूरी इत्यादि को जानने के लिए मापक-पैमाना विधि (scaling techniques) है ।

अध्ययन-यन्त्र एवं साधन -

सामाजिक सर्वेक्षण के कार्य को भली प्रकार पूरा करने के लिए सर्वेक्षणकर्ता के पास कुछ आवश्यक कागजात या प्रपत्र होते हैं जिन पर वह अपने सम्पूर्ण अध्ययन के लिए निर्भर

होता है । यदि उसके ये यन्त्र किसी भी रूप में अनुपयुक्त या अपूर्ण है अथवा उनमें कोई दोष है तो उसको अपने अध्ययन-कार्य में सफलता प्राप्त नहीं हो सकेगी । इन यन्त्रों (प्रपत्रों) में प्रमुख रूप से निम्नलिखित को सम्मिलित कर सकते है (i) **प्रश्नावलियाँ** (questionnaires) (ii) **अनुसूचियाँ** (shedules) (iii)**अवलोकन-कार्ड** (observation-cards) (iv) **साक्षात्कार निर्देशिका** (interview-guide) तथा (v) **नोटबुकें डायरियाँ,** इत्यादि । इनका सदुपयोग ही सर्वेक्षण की सफलता का रहस्य माना जा सकता है ।

क्षेत्रीय कार्य की प्रमुख विधियों; जैसे निरीक्षण, साक्षात्कार तथा समाजमिति में, उपर्युक्त यन्त्रों के अतिरिक्त कुछ अन्य साधन (apparatus) भी आवश्यक होते हैं । कौन-सा साधन कहीं और कब अधिक लाभकारी सिद्ध होगा, यह सर्वेक्षण की प्रकृति तथा उद्देश्य और विशेष आवश्यकताओं पर निर्भर होता है ।

इनमें-मुख्यत: **कैमरा** (camera) किसी घटनास्थल चित्र के लिए, अवलोकन के समय अधिक लाभकारी हो सकते हैं । **टेपरिकार्डर** (tape-recorder) किसी साक्षात्कार के दौरान व्यक्तियों या समूहों के प्रश्नोत्तरों या बातचीत को भरने के लिए प्रयोग किये जाते हैं । **ऑडीमीटर** (audimeter) को किसी साक्षात्कार के समय स्पष्ट रूप से सूचनाएँ सुनने में तथा **लाउडस्पीकर** (loud-speaker) जन-सम्पर्क स्थापित करने और अपने सामूहिक कार्यक्रमों की घोषणा करने हेतु प्रयोग किये जा सकते हैं ।

साक्षात्कार में अब **दूरभाष** (telephone) तथा आँकड़े के जोड़ने-घटाने के लिए **कैल्कुलेटर** (calculators) की सहायता ली जाती है । प्राथमिक सूचनाओं के अप्रत्यक्ष संकलन में रेडियो अपील (radio appeals) में रेडियो का अधिक प्रचलन बढ़ता जा रहा है । सर्वेक्षणकर्ता को अपने क्षेत्र में जाते समय वहाँ के स्थानीय **मानचित्रों** (maps) **चार्ट** (diagrams), **प्रवृत्ति मापकों** (attitude-scales) तथा **लेखन-सामग्री** इत्यादि की भी अधिक आवश्यकता पड़ती है । लेखक को अपने क्षेत्रीय अध्ययन अर्थात लोकज्ञान (folklore)ए का संग्रह करने में टेपरिकार्डर अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ था ।

अन्त में, यह बताना आवश्यक है कि किसी सामाजिक सर्वेक्षण को अधिक विश्वसनीय तथा वैज्ञानिक बनाने के लिए उसकी पद्धति, विधि, अध्ययन यन्त्रों तथा प्रसाधनों इत्यादि को यथोचित्र रूप से प्रयोग किया जाना चाहिए । इनके अभाव में, वैज्ञानिक दृष्टि से सर्वेक्षण में अपूर्णता तथा दोष बने रहने की सम्भावना हो सकती है ।

6.2.2 आँकड़ो के प्रकार (Types of Data) - प्रत्येक शोध या विषय से संबंधित आँकड़े अत्यधिक विविधतापूर्ण होते हैं । अर्थात आँकड़े गुणात्मक भी हो सकते हैं और परिभाणात्मक भी । इसी प्रकार से कई बार आकड़े स्वयं अध्ययन कर्ता द्वारा क्षेत्रीय अध्ययन के द्वारा संकलित किए जाते हैं और कई बार यह अन्य शोधकर्ताओं के द्वारा पहले से संकलित किए जा चुके होते हैं । अत: आँकड़ो को दो भागों में बांटा गया है ।

(1) प्राथमिक आँकड़े (Primary Data)

(2) द्वैतीयक आकड़े (Secondary Data)

6.2.2.1 प्राथमिक (Primary Data) - प्राथमिक आँकड़े वे आकड़े होते हैं जिन्हें किसी भी अनुसन्धान में प्रारम्भ से अन्त तक नये सिरे से संकलित किया जाता है । प्रथम बार संकलित किए जाने के कारण ही इन्हे प्राथमिक आकड़े कहा जाता है । इसी कारण ये मौलिक भी होते हैं ।

पी.वी यंग :- प्राथमिक तथ्य-सामग्री का तात्पर्य उन सूचनाओं व आँकड़ों से है जिनको पहली बार संकलित किया गया हो जिनके संकलन का उत्तरदायित्व शोधकर्ता या अन्वेषणकर्ता का अपना है । "

उपरोक्त परिभाषा के आधार पर कहा जा सकता है कि प्राथमिक आकड़े वे आँकड़े हैं जो प्रथम बार संकलित किए जाते हैं और जिन्हें संकलित करने का श्रेय स्वयं अनुसंधान कर्ता को होता है । इन सूचनाओं का संकलन अवलोकन अथवा शोध विषय से संबंधित लोगों से बात-चीत कर किया जाता है । लेकिन कई बार शोधकर्ता समय की कमी या अध्ययन क्षेत्र के विस्तृत होने पर आँकड़े का संकलन अपनी देख रेख में अन्य सहायकों से भी करवा सकता है । अत: यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि इन आँकडों को संग्रहित करने में अधिक समय, श्रम, योग्यता एवं कुशलता की आवश्यकता होती है । यद्यपि यह नए सिरे से संकलित होते हैं अत: नवीनतम, सत्य एवं विश्वासनीय होते है ।

प्राथमिक आँकडों की विशेषताएं -

(1) इन आकड़ों का संकलन प्रथम बार किया गया होता है ।

(2) यह आँकड़े नवीन होते हैं ।

(3) प्राथमिक आँकड़ो के संकलन का श्रेय स्वयं शोधकर्ता को होता है ।

(4) प्राथमिक आँकड़ों का संकलन क्षेत्रीय सर्वे के द्वारा किया जाता है ।

(5) प्राथमिक आँकड़े अधिक सत्य एवं विश्वसनीय होते हैं ।

6.2.2.2 द्वैतीयक (Secondary Data) - द्वैतीयक आकड़े वे आँकड़े होते हैं जो संबंधित शोध के पहले ही किसी अन्य शोध कार्य हेतु संकलित किए गए होते हैं, लेकिन वर्तमान अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण ओर उपयोगी होने के कारण पुन: प्रयोग में लाये जाते हैं । द्वैतीयक आकड़े प्रकाशित अथवा अप्रकाशित हो सकते है

पी. वी. यंग :- "द्वैतीयक तथ्य वे होते है जिन्हें भौतिक स्त्रोतों से एक बार प्राप्त कर लेने के पश्चात् काम में लिया गया हो एवं जिनका प्रसारण अधिकारी उस व्यक्ति से भिन्न होता है जिसने प्रथम बार तथ्य संकलन को नियमित किया था ।"

द्वैतीयक आँकड़े में मौलिकता का अभाव होता है । शोध कार्य के दौरान उपयोगी होने के कारण इन आँकड़े का प्रयोग द्वितीय बार किया जाता है अत: इन्हें द्वितीयक समंक कहते हैं । इन आँकड़े को एकत्रित करने में अधिक धन समय और कठिनाई नहीं होतीं क्योंकि यह आँकड़े किसी भी सरकारी, अर्द्ध सरकारी या व्यक्तिगत सूचनाओं द्वारा प्राप्त किए जा सकते हैं । दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि द्वैतीयक ऑकड़ों का संकलन स्वयं शोधकर्ता या उसके सहायकों के द्वारा नहीं किया जाता और इस सामग्री या आँकड़ो का उपयोग करने वाला व्यक्ति

इसके क्षेत्रीय संकलन से संबंधित नहीं होता । शोधकर्ता सीमित साधनों के कारण या अध्ययन की प्रकृति के लिए नए सिरे से तथ्यों के संकलन की आवश्यकता नहीं होने पर द्वैतीयक आँकड़े का अपने शोध कार्य में उपयोग करता है, लेकिन इस प्रकार के आँकड़ो के संकलन हेतु भी शोधकर्ता का कुशल, योग्य और अनुभवी होना आवश्यक है ।

द्वैतीयक ओंकड़ो की विशेषताएँ -

(1) द्वैतीयक आँकड़ो का उपयोग द्वितीय बार किया जाता है ।
(2) इन आँकड़े में नवीनता का अभाव होता है ।
(3) द्वैतीयक आँकड़ो का उपयोग करने वाला व्यक्ति इसके क्षेत्रीय संकलन करने वाले से भिन्न होता है ।
(4) द्वैतीयक आकड़ों का संकलन प्रकाशित या अप्रकाशित लिखित सामग्री से किया जाता है।

6.2.2.3 प्राथमिक एवं द्वैतीयक आँकड़ो में अन्तर

प्राथमिक	द्वैतीयक
(1) प्राथमिक आंकड़ो का संकलन अनुसंधानकर्ता के द्वारा प्रथम बार किया जाता है ।	द्वैतीयक आकड़ों का संकलन पूर्व मे ही कर लिया गया होता है और शोधकर्ता अपने शोधकार्य मे महत्वपूर्ण होने के कारण इन्हे दुबारा प्रयोग मे लाता है ।
(2) प्राथमिक आंकड़े मौलिक होते है।	द्वैतीयक आँकड़ो मे मौलिकता का अभाव होता है ।
(3) स्वयं अनुसंधानकर्ता के द्वारा संकलित किए जाने के कारण ये आँकड़े विश्वसनीय होते है ।	इन आँकड़ो का संकलन पूर्व मे ही कर लिया जाता है अतः अनुसंधानकर्ता हेतु ये पूर्ण विश्वसनीय नहीं होते है।
(4) प्राथमिक आंकड़ो मे संकलित करने मे अधिक श्रम धन व समय की आवश्यकता होती है।	द्वैतीयक आँकड़े पूर्व मे एकत्रित किए जा चुके होते है अतः इन्हे संकलित करने मे आधिक धन समय और श्रम की आवश्यकता नहीं होती है ।
(5) प्राथमिक आँकड़े अप्रकाशित होते है ।	द्वैतीयक आँकड़े कभी कभी प्रकाशित भी होते है ।
(6) प्राथमिक आँकड़े नवीन होते है।	द्वैतीयक आँकड़ो मे नवीनता का अभाव होता है ।

6.3 आँकड़ो के स्त्रोत (Sources of Data)

सामाजिक अनुसंधान में जब शोधकर्ता सूचनाओं का संग्रहण करता है तब कुछ सामग्री तो उसे लिखित प्रलेखों, रिकार्ड आदि के रूप में प्राप्त हो जाती है परन्तु यह आवश्यक नहीं है

कि सुरक्षित सामग्री सदैव उपयोगी हो अपितु प्रगतिशील और परिवर्तनशील मानव समाज के अध्ययन, नवीनतम व यथार्थ सूचनाओं की प्राप्ति हेतु क्षेत्रीय समूहों से भी सम्पर्क स्थापित कर सामग्री एकत्रित करने की आवश्यकता होती है । अत: आकड़ों के प्रकारों के साथ-साथ ऑकड़ें एकत्रित करने के स्त्रोतों पर चर्चा करने का प्रयास भी किया गया है । सामाजिक अनुसंधान में यह कार्य अत्यधिक महत्वपूर्ण है । शोध कार्य में उपकल्पनाओं के निर्माण के पश्चात् अनुसंधानकर्ता ऑकड़ों के संकलन हेतु सर्वप्रथम यह निश्चित करता है कि वह आँकड़े का संकलन किन स्त्रोतों से करेगा । आँकडों के संकलन के स्त्रोत का चुनाव भी विशेष सावधानी पूर्वक किए जाने की आवश्यकता होती है अन्यथा शोध परिणामों और सिद्धान्तों के गलत सिद्ध होने की सम्भावना बनी रहेगी । शोध कार्य मानव सामज से संबंधित होने के कारण सूचनाएं प्रत्यक्ष अवलोकन, वार्तालाप या लिखित सामग्री से भी प्राप्त की जा सकती हैं जिनमें से आवश्यकतानुसार एक या अधिक तरीकों से आकड़ों का संकलन किया जा सकता है । आकड़ों के स्त्रोतों को वैज्ञानिकों के द्वारा मोटे तौर पर दो भागों में बांटा गया है:-

(1) प्राथमिक स्त्रोत (Primary source)

(2) द्वैतीयक स्त्रोत (Secondary source)

6.3.1 प्राथमिक (Primary source) - आंकड़े एकत्रित करने के प्राथमिक स्त्रोत के अन्तर्गत शोधकर्ता स्वयं विषय से संबंधित अध्ययन क्षेत्र में जाकर समग्र या समग्र में से चुनी हुई इकाईयों (निदर्शन) से सम्पर्क स्थापित कर सूचनाओं को संकलित करता है । इन स्त्रोतों से प्राप्त ऑकड़े प्रथम बार संकलित किए गए होते हैं ।

पी. बी. यंग "प्राथमिक स्त्रोत वे स्त्रोत हैं जो प्राथमिक स्तर पर तथ्यों के संकलन में सहायक होते हैं ।"

प्राथमिक स्त्रोत प्रथम बार तथ्य या ऑकड़े प्रदान करते हैं । संकलन कर्ता के द्वारा ही इन आकड़ों को प्रस्तुत भी किया जाता है इस कारण ये मौलिक भी होते हैं । आकड़ों के संकलन के इस स्त्रोत में अध्ययन कर्ता और उत्तरदाता का सीधा सम्पर्क होता है अत: इन ऑकड़ों को क्षेत्रीय आंकड़े भी कहा जाता है । इन आँकड़े की विश्वसनीयता एवं उपयुक्तता के लिए स्वयं शोधकर्ता उत्तरदायी होता है । स्वयं शोध कर्ता के द्वारा संकलित किए जाने के कारण इन आकड़ों से शोधकर्ता का विशेष लगाव होता है और वह निष्पक्ष रहकर सामग्री संकलित करता है लेकिन कई बार इस लगाव के कारण ऑकड़े पूर्वाग्रह से भी ग्रसित हो जाते हैं । प्राथमिक सामग्री स्वयं अपने आप में मिले-जुले तथा अनुपयोगी सूचनाओं के रूप में बिखरी होती है जिसे शोधकर्ता के द्वारा आवश्यकतानुसार काम में लेने के योग्य बनाना पड़ता है अर्थात जब तक इन आकड़ों को सुविधापूर्वक उचित रूप न प्रदान कर दिया जाये अध्ययनकर्ता अपने उद्देश्य की प्राप्ति नहीं कर सकता ।

दैनिक जीवन की सामान्य घटनाऐं संबंधित व्यक्ति उनके द्वारा बताये गए विवरण तथा उनसे सूचनाओं को प्राप्त करने हेतु प्राथमिक स्त्रोतों की सहायता ली जाती है ।

प्राथमिक स्त्रोतों के गुण (Merits of Primary Sources)

(1) **अधिक विश्वसनीय:** प्राथमिक स्त्रोतों से प्राप्त सूचनाएं प्रत्यक्ष सम्पर्क की विधियों से संकलित होने के कारण अधिक विश्वसनीय होती हैं ।

(2) **वास्तविक चित्रण (Presenting Realites).** इन स्त्रोतों से आँकड़े का संकलन करते समय शोधकर्ता अपनी अध्ययन इकाईयों से सम्पर्क कर अवलोकन का अवसर भी प्राप्त करता है जिससे वास्तविक और गोपनीय सूचनाएं भी प्राप्त कर सकता है ।

(3) **स्वाभाविक प्रदर्शन (Indicating raturalness)** प्राथमिक स्त्रोतों से आकड़ों का संकलन करते समय शोध कर्ता को उत्तरदाता के व्यवहार के अवलोकन का अवसर भी प्राप्त होता है जिससे उत्तरदाता के कृत्रिम अथवा बनावटीपन को भी समझा जा सकता है और उससे पूरक प्रश्न पूछते हुए मौलिकता को बनाए रखने का अवसर भी मिलता है।

(4) **अधिक लोचपूर्ण (More flezxibility) :** प्राथमिक स्त्रोत का एक महत्वपूर्ण गुण इसका लोचपूर्ण होना है अर्थात तथ्य संकलन के दौरान यदि निदर्शन का आकार कम या अपर्याप्त लगे तो अध्ययनकर्ता इनकी संख्या को घटा-बढा भी सकता है तथा अध्ययन विधि के चुनाव व स्वरूप को भी आवश्यकतानुसार परिवर्तित कर सकता है ।

(5) **अधिक व्यवहारिक (Practical Utilise)** आकड़ों को संकलित करने का यह स्त्रोत अधिक व्यावहारिक है क्यों कि प्रत्यक्ष सम्पर्क से सूचनाऐं एकत्रित करना अधिक सरल और सुविधाजनक हैं । जब सूचनाओं का संकलन अवलोकन तथा साक्षात्कार से किया जाता है जिसमें अध्ययनकर्ता एवं सूचनादाता दोनों की सुविधा से सामग्री एकत्रित की जा सकती है ।

प्राथमिक स्त्रोतों के दोष - यद्‌यपि सामाजिक अनुसंधान में ओंकड़ों का संकलन प्राथमिक स्त्रोतोंसे करना अत्यधिक लाभदायक तथा विश्वसनीय होता है परन्तु तथ्य संकलन के इस स्त्रोत की कुछ सीमाऐं भी हैं जिनकी अवहेलना नहीं की जा सकती है ।

(1) **लोचपूर्णता का दुरुपयोग** प्राथमिक स्त्रोतों से आँकड़ो को एकत्रित करने हेतु जब सर्वेक्षणकर्ता अन्य व्यक्तियों से सूचनाऐं संग्रहित करवाता है तो ऐसी स्थिति में इस लोचपूर्णता का कई अध्ययनकर्ताओं के द्‌वारा अनुचित लाभ उठाया जाता है । इकाईयों की संख्या को घटान बढ़ाने में प्राप्त इस सुविधा का दुरुपयोग कर स्वेच्छा से संकलन को अधिक महत्व देते है ।

(2) **अभिनतिपूर्ण संकलन:** तथ्य संकलन के इस स्त्रोत में अध्ययन यन्त्रों की रचना, विधियों का चुनाव एवं तथ्यों को तोड़ मरोड़ कर संकलित करने में सर्वेक्षणकर्ता की अभिमति विचार या निजी झुकाव सम्मिलित होने की सम्भावना रहती है ।

(3) **साधनों की आवश्यकता:** प्राथमिक स्त्रोत द्‌वैतीयक की तुलना में अधिक खर्चीली है अर्थात इन स्त्रोतों से ऑकड़ों का संकलन करते समय अधिक समय,धन, और कार्य कर्ताओं की आवश्यकता होती है ।

(4) **सामग्री संग्रहण की समस्या:** प्राथमिक स्त्रोतों के अन्तर्गत संकलित की गई सामग्री संग्रहित रूप में हाथों-हाथ प्राप्त नहीं होती अपितु इसे एकत्रित करना पड़ता है तथा इन स्त्रोतों के द्‌वारा केवल वर्तमान तथ्यों की जानकारी प्राप्त होती है ।

6.3.1 प्राथमिक आँकड़ों के स्त्रोत - आँकड़े संकलित करने के प्राथमिक स्त्रोतों की परिभाषा, गुण और दोष को जानने के साथ ही प्राथमिक स्त्रोत के प्रकारों को जानना भी आवश्यक है । इन स्त्रोतों को दो भागों में बांटा गया है (i) प्रत्यक्ष स्त्रोत (direct rourses) तथा (ii) अप्रत्यक्ष स्त्रोत (indirect sources) प्राथमिक स्त्रोतों का यह वर्गीकरण उत्तरदाताओं से सम्पर्क के तरीके के आधार पर किया गया है । अर्थात आँकड़े का संकलन या तो सीधे उत्तरदाताओं के साथ सम्पर्क कर किया जाता है अथवा किसी माध्यम से ।

6.3.1.2 प्रत्यक्ष स्त्रोत (Direct sources) - आँकड़ो के संकलन की प्रत्यक्ष अनुसंधान पद्धति में अध्ययन कर्ता, उत्तरदाता से मिलकर व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करता है लेकिन यह विधि उसी समय अधिक उपयोगी होती है जब अध्ययन क्षेत्र सीमित हो । प्रत्यक्ष स्त्रोत में आँकड़े का संकलन करने वाले शोधकर्ता को उत्तरदाताओं की भाषा रीति-रिवाज, व्यवहार, स्थानीय दशाओं की जानकारी के साथ-साथ विनम्र, व्यवहार कुशल धैर्यवान और उत्साही होना आवश्यक है ।

प्रत्यक्ष क्षेत्र को पुन: दो भागों में विभाजित किया गया है ।

(1) **व्यक्तिगत अवलोकन :** जैसा की नाम से ही स्पष्ट है व्यक्तिगत अवलोकन के अन्तर्गत अध्ययन कर्ता स्वयं घटना स्थल पर उपस्थित रहता है और घटना को देखकर आँकड़े का संकलन करता है इस पद्धति में आँखों का प्रयोग किया जाता है । व्यक्तिगत अवलोकन तीन प्रकार का होता है:-

(i) **सहभागी (Participant)** इस अवलोकन में अध्ययनकर्ता जिस घटना का अध्ययन करता है उसमें सकीय रूप से भाग लेता है । इस अवलोकन में शोधकर्ता दोहरी भूमिका का निर्वाह करता है एक ओर आँकड़े का संकलन करना और दूसरी ओर अध्ययन समूह के सदस्यों जैसा आचरण और व्यवहार करना ।

(ii) **अर्ध-सहभागी (Quasi-participant)** अर्ध सहभागी अवलोकन में शोधकर्ता अवलोकन समूह में पूर्णतया भागीदार नहीं होता अपितु आवश्यकतानुसार कुछ सीमा तक घटनाओं में सम्मिलित होता है और कुछ दशाओं में पृथक रहकर केवल दृष्टा के रूप में लोगों के व्यवहार को समझने की कोशिश करता है ।

(iii) **असहभागी (Non participant)** वह अवलोकन जिसमें सर्वेक्षणकर्ता घटनाओं में स्वयं किसी प्रकार से भाग नहीं लेता बल्कि केवल एक अज्ञात दर्शक के रूप में घटना को देख कर सूचनाऐं संकलित करता है, असहभागी अवलोकन कहलाता है ।

(2) **मौखिक अनुसंधान (Oral investigation)**: शोध कार्य के दौरान जिन घटनाओं का प्रत्यक्ष अवलोकन सम्भव नहीं हो पाता अथवा आँकड़ो को एकत्रित करने में अवलोकन विधि उपयुक्त नहीं होती तब ऐसी स्थिति में प्राथमिक सूचनाओं को संकलित करने हेतु अध्ययनकर्ता, उत्तरदाता से आमने सामने की स्थिति में केवल उन्ही लोगों से सूचनाऐं एकत्रित करता है, जो उसके संबंध में जानकारी रखते हों । यह सूचनाऐं अनुसूची एंव साक्षात्कार से संकलित की जाती हैं ।

अनुसूची :- तथ्य संकलन की इस प्रविधि में स्वयं अध्ययन कर्ता अथवा कार्यकर्ता उत्तरदाताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर आवश्यक पूछताछ करते हुए आँकड़े एकत्रित करते है । अत: अनुसूची प्रश्नों का एक छपा हुआ एक प्रपत्र है । जिसे उत्तरदाताओं से पूछकर भरा जाता है । इस विधि द्वारा अशिक्षित व्यक्तियों से भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है ।

साक्षात्कार - प्राय: जटिल सामाजिक घटनाओं एवं समस्याओं का अध्ययन साक्षात्कार द्वारा किया जाता, है । जिसमें अध्ययनकर्ता अथवा प्रगणक प्रश्न करता है एवं सूचनादाता उत्तर देता हैं । उत्तरदाताओं के विचार मनोवृति आदि को जानने में साक्षात्कार महत्वपूर्ण है । आँकड़ों के संकलन हेतु अध्ययनकर्ता अनुसूची अथवा साक्षात्कार निर्देशिका का निर्माण करता है । जिसमें साक्षात्कार के दौरान पूरक प्रश्न पूछकर एकत्रित सामग्री की जांच भी की जा सकती है।

मौखिक अनुसंधान के गुण -

(1) अध्ययन क्षेत्र के विस्तृत होने पर अनुसूची और साक्षात्कार महत्वपूर्ण होते हैं ।

(2) अवलोकन की तुलना में यह परिश्रम, समय और व्यय की दृष्टि से कम महंगी होती हैं।

(3) साक्षात्कार के साथ-साथ अध्ययनकर्ता को अवलोकन के, अवसर भी प्राप्त होते हैं ।

(4) भूतकाल में घटित हो चुकी घटनाओं की जानकारी भी इससे प्राप्त की जा सकती है ।

दोष-

(1) स्त्रोतों में अध्ययनकर्ता पूर्ण रूप से उत्तरदाताओं की सूचनाओं पर निर्भर करता है ।

(2) पूर्व में घठित हो चुकी घटना से संबंधित आँकड़े संदिग्ध हो सकते हैं ।

(3) साक्षात्कार के दौरान कई बार उत्तरदाता स्वयं को अत्यधिक महत्वपूर्ण मानने लगता है अत: बढ़ा चढ़ाकर वर्णन प्रस्तुत करता है ।

6.3.1.3 अप्रत्यक्ष स्त्रोत- आँकड़े संकलित करने के अप्रत्यक्ष स्त्रोत में अध्ययनकर्ता और सूचनादाता का प्रत्यक्ष सम्पर्क नहीं हो पाता । इस स्त्रोत में मुख्य रूप से प्रश्नावली एवं मत पत्र सम्मिलित किए जाते हैं जिन्हें प्राय: डाक द्वारा भेजा जाता है । इस कारण अध्ययनकर्ता एवं उत्तरदाता को बातचीत का अवसर भी नहीं मिलता। गोपनीय सूचनाओं के संकलन में यह उपयोगी विधि है ।

प्रश्नावली :- अनुसूची के समान ही प्रश्नावली भी प्रश्नों का एक छपा हुआ प्रपत्र है । लेकिन इसे उत्तरदाता के द्वारा भरा जाता है अर्थात प्रश्नावली प्राय: डाक द्वारा उत्तरदाताओं के पास भेजी जाती है या अधय्यनकर्ता अथवा प्रगणक इसे वितरित कर देते हैं । उत्तरदाताओं द्वारा इन प्रश्नावलियों को भरकर पुन: लौटा दिया जाता है । अत: प्रश्नावली से आँकड़े एकत्रित करने हेतु उत्तरदाताओं का शिक्षित होना आवश्यक है ।

पोर्टेन ने प्रश्नावली के अतिरिक्त अप्रत्यक्ष स्त्रोत के तीन नवीन साधनों का और उल्लेख किया है ।

(A) **रेडियो अपील :** यह विधि रेडियो सुनने वाले श्रोता समूह के लिए उपयोगी है । इस विधि में केवल वे ही श्रोता अध्ययनकर्ताओं को महत्वपूर्ण सूचना प्रदान कर सकते हैं जो

नियमित रूप से रेडियो सुनते हैं । इस अपील में श्रोताओं को उपहार देने की व्यवस्था भी की जाती है । इस विधि में सूचनाओं का संकलन टेलीफोन, या पत्र के द्वारा किया जाता है ।

(B) **दूरभाष साक्षात्कार :** सूचना संकलन की इस विधि में व्यक्तिगत साक्षात्कार से भिन्न दूरभाष की सहायता से ऑकड़े एकत्रित किए जाते हैं । इसमें अध्ययनकर्ता और उत्तरदाता का सम्पर्क दूरभाष द्वारा ही होता है प्रत्यक्ष या आमने सामने नहीं इसी कारण इसे अप्रत्यक्ष स्त्रोत कहा जाता है । क्षेत्रीय भ्रमण अथवा विभिन्न व्यक्तियों से प्रत्यक्ष संबंध की तुलना में यह विधि अधिक सरल है ।

(C) **दलीय प्रविधियाँ :** किसी सर्वेक्षण के लिए विशाल समूह से पूर्ण रूप से सम्पर्क न हो पाने के दोष को दूर करने के लिए गिने-चुने सूचनादाताओं के दल बना दिये जाते हैं जो विशेष प्रकृति की विचारधारा, मनोवृति अथवा रूचि आदि का प्रतिनिधित्व करती है । अध्ययनकर्ता समय-समय पर इन दलों के सदस्यों से ऑकड़े एकत्रित करता है ।

प्राथमिक स्त्रोतों के गुण -

(1) तथ्य संकलन के इस स्त्रोत में अध्ययनकर्ता को परिस्थिति के अनुरूप प्रश्न, पूरक प्रश्न, और प्रविधि में परिवर्तन की अनुमस्ति प्राप्त होती है अत: इसमें लचीलेपन का गुण होता है ।

(2) जब अध्ययन का क्षेत्र व्यापक हो, तो प्रश्नावली या अप्रत्यक्ष स्त्रोत समय, धन व श्रम की पुष्टि से कम खर्चीले होते हैं ।

(3) प्राथमिक सामग्री से प्राप्त आकड़े यर्थाथ एवं विश्वसनीय होते हैं ।

(4) अवलोकन द्वारा कई महत्वपूर्ण सूचनाओं का संकलन किया जा सकता है ।

प्राथमिक स्त्रोतों के दोष -

(1) प्राथमिक स्त्रोतों से तथ्य संकलन में शोधकर्ता का कुशल होना आवश्यक है अन्यथा तथ्यों में पक्षपात या मिथ्या झुकाव की सम्भावना बनी रहती है ।

(2) शोधकर्ता द्वारा अपनी सुविधानुसार तथ्यों का संकलन कर लिये जाने के करण अध्यन्न में वस्तुनिष्ठाता । में कमी आ जाती है ।

(3) प्राथमिक स्त्रोतों में प्रत्यक्ष सम्पर्क से आकड़े एकत्रित किए जाते हैं तब कई बार अध्ययनकर्ता के द्वारा उत्तरदाता को सुझाव दे दिए जाने के कारण तथ्यों की स्वाभाविकता समाप्त हो जाती है ।

(4) प्राथमिक स्त्रोतों से आँकड़ो के संकलन में अधिक मानवशक्ति की आवश्यकता होती है।

6.3.2 द्वैतीयक स्त्रोत- सामाजिक अनुसन्धान में कई बार अध्ययनकर्ता को ऐसी सामग्री की भी. आवश्यकता पड़ती है जिसे कोई अन्य व्यक्ति लगभग उसी प्रकार से संग्रहित कर चुका होता है अर्थात इस, सामग्री को एकत्रित करने वाला स्त्रोत अथवा साधन कोई और व्यक्ति,संगठन या विभाग होता है । पहले से ही - उपलब्ध सामग्री को आवश्यकतानुसार आधार मानकर प्रयुक्त किए जाने के कारण इसे द्वैतीयक कहा जाता है । इस प्रकार किसी शोध कार्य में लिखित वर्णन, विभिन्न प्रलेख, आँकड़े इत्यादि सुरक्षित रूप में उपलब्ध होते हैं और जिन्हें

सरलतापूर्वक प्राप्त कर सर्वेक्षण कर्ता द्‌वारा काम में लिया जा सकता है तो ऐसी सामग्री को एकत्रित करने हेतु प्रयोग किये जाने वाले साधनों को द्‌वैतीयक स्त्रोत कहा जाता है । अत: द्‌वैतीयक अथवा प्रलेखीय साधन वे स्त्रोत हैं जिनमें किसी भी रूप में प्रकाशित अथवा अप्रकाशित समस्त लिखित सामग्री जो सर्वेक्षण कर्ता को महत्वपूर्ण सूचनाऐं उपलब्ध करवाते हैं।

पी. वी. यंग :- ' इन तथ्यों (द्‌वैतीयक) का उपयोग करने वाले एवं इन्हें प्रथम बार एकत्रित करने वाले लोग पृथक होते हैं । "

आँकड़े संकलित करने के द्‌वैतीयक स्त्रोत तथ्य संकलन में पुनरावृति को रोकने एवं आमने-सामने की स्थिति में आने वाली कठिनाइयों को कम करते हैं ।

द्‌वैतीयक स्त्रोतों के गुण -

(i) द्‌वैतीयक स्त्रोतों से प्राप्त सूचनाऐं स्वयं अध्ययनकर्ता द्‌वारा संकलित नहीं की जाती अत: सर्वेक्षणकर्ता के निजी विचार व सुझाव को सम्मिलित होने से बचाती हैं ।

(ii) **भूतकालीन घटनाओं की जानकारी :** द्‌वैतीयक स्त्रोतों में ऐसी सूचनाऐं जो कि प्राथमिक या क्षेत्रीय साधनों से उपलब्ध नहीं होती, का भी संकलन सम्भव कर लेती हैं ।

(iii) **गोपनीय सूचनाओं का ज्ञान:** व्यक्तिगत पत्र, डायरियाँ और संस्मरण आदि शोधकर्ताओं को कई गोपनीय सूचनाओं की जानकारी भी प्रदान करते हैं ।

(iv) **असंभव सूचनाओं की प्राप्ति:** साधन सामर्थ्य की कमी के कारण व्यक्तिगत स्तर पर या किसी छोटे शोध संगठन द्‌वारा कई ऐसी सूचनाओं जैसे गजेटियर, जनगणना रिपोर्ट आदि का संकलन नहीं किया जा सकता, को एकत्रित करने में भी द्‌वैतीयक स्त्रोत सहायक होते है

(v) **एतिहासिक ज्ञान की आधारशिला :** द्‌वैतीयक सामग्री लिखित रूप से उपलब्ध होने के कारण किसी सक्ता समुदायों की ऐतिहासिक जानकारी प्रदान करने में सहायक होते हैं।

(vi) समय साधन व धन की दृष्टि से कम खर्चीले होते है ।

द्‌वैतीयक स्त्रोतों के दोष

(1) द्‌वेतीयक स्त्रोत अधिकांशत: भूतकालीन घटनाओं सें संबंधित होते हैं अत: इनकी जांच अधिकांशत: असम्भव होती है ।

(2) आत्मकथा, जीवनी और संस्मरण आदि जैसे स्त्रोतों में वास्तविकता से परे काल्पनिक विवरण अधिक मिलता है।

(3) प्राय: लेखक अपनी ख्याति व प्रसिद्धि को ध्यान में रखकर लिखते हैं अत: व्यक्तिगत विचार एवं आदर्श सूचनाओं को एक विशेष दिशा प्रदान करते हैं ।

(4) अव्यवस्थित विवरण, व्यक्तिगत विचार एवं निजी दृष्टिकोण से लेखक का व्यक्तित्व तो अधिक झलकता है परन्तु विश्वसनीयता का अभाव पाया जाता है ।

द्वितीयक आँकड़े दो प्रकार से प्राप्त होते हैं :

6.3.2.1 प्रकाशित - जब संकलित आंकड़े किसी व्यक्ति, संस्था, राष्ट्र या अन्तर्राष्ट्रीय संगठन द्वारा प्रकाशित कर दिए जाते हैं तब उन्हें प्रकाशित समंक' कहा जाता है ।

प्रत्येक राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों पर सरकार द्वारा समय-समय पर कराए गए सर्वेक्षण, जनगणना के आँकड़े, राष्ट्रीय आय, औद्योगिक मूल्य आदि के आंकड़े सरकार द्वारा समय-समय पर प्रकाशित किए जाते हैं । इसी प्रकार से संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक, एशियाई बैंक, कोलम्बो योजना, अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ के अनुसंधान में प्राप्त आँकड़े । प्रत्येक राष्ट्र की आर्थिक स्थिति के सर्वेक्षण हेतु गठित समितियों एवं आयोगों की रिपोर्ट, अर्द्ध-सरकारी संगठनों द्वारा आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं से संबंधित समस्त प्रकाशित सामग्री इसी में सम्मिलित की जाती है ।

द्वैनिक साप्ताहिक, मासिक, वार्षिक पत्र-पत्रिकाओं में भी कृषि, उद्योग, विकास, सामाजिक, व राजनीतिक समस्याओं से संबंधित सामग्री शोध कार्य की दृष्टि से उपयोगी सिद्ध होती हैं । इनके अतिरिक्त व्यक्तिगत शोध कार्य, अथवा यू जी. सी. द्वारा भी अपने शोध पत्रों को प्रकाशित किया जाता है जिनका प्रयोग द्वैतीयक सामग्री के रूप में अन्य शोधकर्ताओं द्वारा किया जा सकता है ।

6.3.2.2 अप्रकाशित - अप्रकाशित स्त्रोत वे स्त्रोत होते हैं जो किसी व्यक्ति, संस्था, सरकार या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संकलित तो कर लिए जाते हैं लेकिन गोपनीयता, आर्थिक या किसी अन्य कारण से उन्हें प्रकाशित नहीं किया जाता, परन्तु अन्य शोध कर्ता यदि उनका उपयोग करता है तो उन्हें द्वैतीयक समंक / आँकड़े कहा जाता है।

6.3.2.2.1 व्यक्तिगत प्रलेख : इस स्त्रोत में उन प्रलेखों को सम्मिलित किया जाता है जो सूचनादाताओं अथवा अध्ययन की इकाईयों के व्यक्तित्व अथवा उनके व्यक्तिगत जीवन से संबंधित हों । स्वयं उनके द्वारा लिखे गए हों या निजी अनुभवों पर आधारित हों । इस प्रकार व्यक्तिगत प्रलेख स्वरचित होते हैं,अत: इन प्रलेखों में निजी विचारधारा मनोवृति व व्यक्तित्व की झलक मिलती है । व्यक्तिगत प्रलेखों की रचना निजी कार्यो, अनुभवों तथा विश्वासों आदि पर आधारित होती है जो कि प्राय: कुछ बुजुर्गो, प्रोढों, वृद्धजनों या इनमें रूचि रखने वालों के पास सुरक्षित मिलते हैं ।

व्यक्तिगत प्रलेखों के सामान्यत: चार स्त्रोत माने जाते हैं:-

(अ) जीवन इतिहास (Life history) जीवन इतिहास के अन्तर्गत स्वरचित आत्मकथाएं तथा जीवनियाँ आते हैं । जिनमें संबंधित व्यक्ति के जीवन की विशेष घटनाओं का विवरण सम्मिलित होता है ।

(ब) डायरियाँ (Diaries) कई लोगों द्वारा दिन प्रतिदिन की घटनाओं का विवरण डायरी में अंकित किया जाता है । जिनमें विशेष सूचनाओं,घटनाओं समसामयिक या तात्कालिक परिर्वतनों का उल्लेख किया जाता है । डायरी वस्तुत: एक गोपनीय दस्तावेज है इस कारण यह

विश्वसनीय भी होता है क्योंकि इसमें घटनाओं को तोड़ मरोड़कर प्रस्तुत नहीं किया जाता, लेकिन इसकी सबसे बड़ी कमी यह है कि इसमें घटनाओं का क्रमबद्ध विवरण नहीं मिलता ।

(स) पत्र (Letters) यद्यपि पत्र व्यक्तिगत होते हैं जिनके द्वारा विभिन्न व्यक्ति अपनी विचारधारा का आदान प्रदान करते हैं । अध्ययन की दृष्टि से इतिहासकारों. जीवन लेखकों आदि के द्वारा पत्रों का प्रयोग किया जाता है । पत्रों के द्वारा महत्वपूर्ण विचारों, अनुभवों, घटनाओं आदि की विस्तृत जानकारी मिलती हैं । पारिवारिक तनाव, वैवाहिक संबंध, राजनैतिक गतिविधियों आदि की जानकारी पत्रों से सुगमता से प्राप्त की जा सकती है ।

अध्ययन की दृष्टि से पत्रों की उपयोगिता सीमित होती है । व्यक्तिगत होने के कारण इन्हें प्राप्त करना कठिन है, इसी प्रकार से पूर्ण सन्दर्भ सहित घटनाओं का विवरण भी इनसे प्राप्त नहीं होता । पत्रों में अपूर्ण सूचनाएं एवं प्रचार का उद्देश्य होने के कारण आकड़े विश्वसनीय नहीं मिल पाते ।

(3) संस्मरण (Memories) : संस्मरण में लोगों द्वारा अपनी यात्राओं, जीवनकी महत्वपूर्ण घटनाओं एवं रोमांचकारी अनुभवों का विवरण लिखा जाता है । घटनाओं के संस्मरण लिखने का प्रचलन प्राचीन काल से चला आ रहा है जिसमें राजनैतिक यात्राओं, ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर संस्मरण लिखे जाते हैं संस्मरण से एक काल विशेष की सामाजिक,आर्थिक राजनैतिक दशाओं, लोगों के रहन-सहन, रीति-रिवाज, धर्म, भाषा एवं सम्पूर्ण जीवनविधि को समझाने में सहायता प्राप्त होती है, परन्तु संस्मरण में भी कमबद्धता एवं वस्तुनिष्ठता का अभाव पाया जाता है ।

व्यक्तिगत प्रलेखों के महत्व को स्पष्ट करते हुए मोजर लिखते हैं कि व्यक्तिगत प्रलेख सर्वेक्षण की अन्य विधियों की अपेक्षा अधिक विस्तारपूर्वक जानकारी प्रदान करते हैं । व्यक्तिगत चरित्र, अनुभवों तथा विश्वासों में ये ऐसी अन्तदृष्टि प्रदान करते हैं जो औपचारिक साक्षात्कार से प्राप्त नहीं होती इसी प्रकार से शोध कार्य के प्रारम्भिक स्तर पर ये स्त्रोत प्राकल्पनाओंके निर्माण के साधन के रूप में भी मार्गदर्शन करते हैं ।

व्यक्तिगत प्रलेखों की सीमाऐं : व्यक्तिगत प्रलेखों की सबसे बड़ी कठिनाई इनकी उपलब्धता या इन्हें प्राप्त करने की होती है, इन स्त्रोतों में पूर्णता, कमबद्धता एवं वस्तुनिष्ठता का भी अभाव पाया जाता हैं । इन स्त्रोतों में से अध्ययनकर्ता स्वयं अपनी स्वेच्छानुसार अंशों का चुनाव करता है अत: निजी पक्षपात की सम्भावना भी रहती है । किसी विशेष प्रयोजन जैसे प्रचार, आर्थिक लाभ आदि को ध्यान में रखकर लिखे जाने के कारण लेखक का झुकाव भी किसी विशेष दिशा की ओर होने के कारण इनकी यर्थाथता भी संदिग्ध होती है ।

6.3.2.2.2 सार्वजनिक प्रलेख (Public Documents) : द्वैतीयक स्त्रोत के रूप में सामाजिक अनुसन्धान में र्सावजनिक प्रलेखों का अपना महत्वपूर्ण स्थान है । जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है इन्हें सार्वजनिक हित को अध्यन्न में रख कर सरकारी, या गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा तैयार करवाया जाता है । इन प्रलेखों में सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है कि यह अधिक विश्वसनीय और प्राय: व्यक्तिगत पक्षपात से मुक्त होते हैं ।

सार्वजनिक प्रलेखों में सरकारी या अर्द्ध सरकारी संगठन द्वारा जो भी प्रकाशित या अप्रकाशित सामग्री सामान्य जनता के हित हेतु उपलब्ध करवाए जाते हैं उन्हें सरकारी सूचनाऐं कहा जाता है । सरकारी लेखों में किसी प्रलेख को किस दशा मे सार्वजनिक माना जा सकता है यह उक्त प्रलेख की प्रकृति, प्रयोग की स्वतन्त्रता और परिस्थितियों से संबंधित होता हैं । इनमें प्रमुख रूप से सरकारी रिपोर्ट, ऑकड़े, विभिन्न समितियां व आयोगों के प्रतिवेदन, शोध संस्थानों के प्रतिवेदन, आदि सम्मिलित हैं । लेकिन कई बार सरकारी व गैर सरकारी संगठनों द्वारा एकत्रित सामग्री उसकी गोपनीयता को बनाये रखने हेतु प्रकाशित नहीं भी करवाई जाती है । इनमें पुलिस विभाग, न्याय विभाग के रिकार्ड आदि सम्मिलित हैं, परन्तु इन्हें सुरक्षित रखा जाता है । यह अप्रकाशित सामग्री शोध कार्य से संबंधित होने के कारण कई बार अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है जिसे प्राप्त करने हेतु संबंधित विभाग से आज्ञा प्राप्त करनी होती है । इन अप्रकाशित प्रलेखों में विभिन्न समितियों, आयोगों के प्रतिवेदन, पांडुलिपियां, शिला लेख, लोक गाथाएं आदि सम्मिलित हैं ।

सार्वजनिक प्रलेखों के गुण -

(1) सार्वजनिक प्रलेख अधिक विश्वसनीय, एवं नवीन होते हैं ।

(2) व्यक्तिगत स्तर पर जिन गोपीनय सूचनाओं की जानकारी प्राप्त नहीं की जा सकती उन्हें इन प्रलेखों से प्राप्त किया जा सकता है ।

(3) जब अध्ययन का क्षेत्र काफी विस्तृत हो और व्यक्तिगत स्तर पर आँकड़े का संकलन संकलित हो,तो ऐसी स्थिति में भी सरकारी और गैर सरकारी सर्वेक्षण सहायक सिद्ध होते है ।

(4) सार्वजनिक स्त्रोतों में कमबद्धता भी पाई जाती है ।

(5) इस प्रकार के आकड़ों का संकलन व्यापक स्तर पर और विविध सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए सरकारी व अन्य संस्थाओं द्वारा किया जाता है जिसमें अधिक साधन (समय, धन, परिश्रम) की आवश्यकता हे और यह व्यक्तिगत स्तर पर सम्भव नहीं है।

सार्वजनिक प्रलेख के दोष -

(1) पुलिस, सी. आई. डी. आदि की सूचनाऐं गोपनीय होने के कारण अप्राप्य होती हैं ।

(2) सरकारी संस्थाओं की कार्य प्रणाली आदि दोषपूर्ण हो तो सूचनाएं शीध्र व उचित समय पर नहीं मिल पाती ।

(3) सरकारी सूचनाओं में कई बार लक्ष्य पूरा करने की दृष्टि से ऑकड़ों व सूचनाओं को बढ़ा चढ़ाकर प्रस्तुत किया जाता है ।

(4) विशाल क्षेत्र एवं विविध परिस्थितियों से संबंधित होने के कारण इन ऑकड़ो की जांच करना सम्भव नहीं हो पाता ।

प्रस्तावित समस्या से संबंधित आवश्यक तथ्यों, आँकड़ो एवं सूचनाओं को जो अध्ययन कर्ता जितनी अधिक सावधानी से संकलित करता है वह उतना ही कुशल शोधकर्ता माना जाता है अर्थात शोधकार्य की सफलता काफी हद तक ऑकड़ों के संकलन पर ही निर्भर करती है ।

यदि आँकड़ो का संकलन सही प्रकार से नहीं किया जाए अथवा दोष या त्रुटिपूर्ण तरीके से किया जाए तो शोध कार्य से प्राप्त होने वाले परिणाम भी सन्देहस्पद होते है ।

समग्री के स्त्रोत
(SOURCES OF DATA)

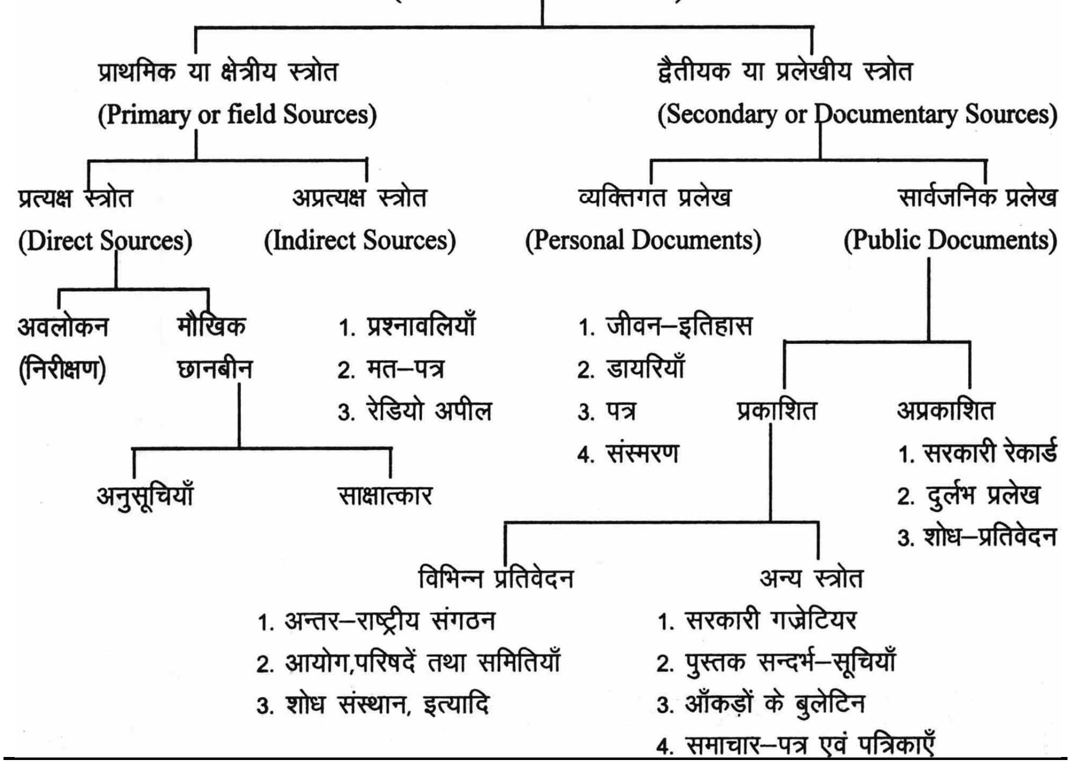

6.4 मुख्य बिन्दु

(1) सामाजिक अनुसन्धान में शोध कार्य के निष्कर्ष निकालने हेतु संकलित की गई सूचनाओं जानकारियाँ आदि तथ्य या आँकड़े कहलाते हैं ।

(2) आकड़े दो प्रकार के होते हैं- (i) प्राथमिक (ii) द्वैतीयक

(3) प्राथमिक आँकड़ो के संकलन का श्रेय स्वयं अध्ययनकर्ता या उसके सहायकों को होता है प्रथम धार संकलित होने के कारण इन्हें प्राथमिक कहा जाता है ।

(4) द्वैतीयक आंकड़े संबंधित शोध कार्य से पूर्व किसी अन्य कार्य के लिए प्रयुक्त किए जा चुके होते, हैं तथा जिनका प्रसारण अधिकारी उस व्यक्ति से भिन्न होता है जिसने उन्हें एकत्रित किया है ।

(5) आकड़े एकत्रित करने के दो प्रमुख स्त्रोत हैं (i) प्राथमिक (ii) द्वैतीयक

(6) प्राथमिक स्त्रोतों में अध्ययनकर्ता स्वयं या अपने सहायकों की सहायता से अध्ययन क्षेत्र में जाकर आँकड़ो का संकलन करता है ।

(7) आकड़े एकत्रित करने के प्राथमिक स्त्रोत दो प्रकार के हैं (i) प्रत्यक्ष (ii) अप्रत्यक्ष

(8) प्रत्यक्ष रूप से आकड़ों का संकलन व्यक्तिगत अवलोकन अथवा मौलिक साक्षात्कार द्वारा किया जाता है ।

(9) अप्रत्यक्ष रूप से आँकड़े को प्रश्नावली, रेडियो अपील या दूरभाष से एकत्रित किया जाता है ।

(10) आँकड़े एकत्रित करने के द्वैतीयक स्त्रोत प्रकाशित अथवा अप्रकाशित हो सकते हैं ।

(11) द्वैतीयक स्त्रोतों को व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक दो भागों में बांटा गया है ।

6.5 सारांश

किसी भी शोध कार्य में आकड़ों का संकलन सर्वाधिक महत्वपूर्ण चरण और शोध कार्य की आधारशिला होते हैं । आकड़ों के अभाव में न तो निष्कर्ष प्राप्त किए जा सकते है और न ही नियमों का प्रतिपादन किया जा सकता है । किसी भी प्रस्तावित विषय से सम्बन्धित सूचनाओं या जानकारी का संकलन ही तथ्य या आँकड़े कहलाते हैं ।

आँकड़ो को संकलित करने के तरीके के आधार पर प्राथमिक और द्वैतीयक दो प्रकारों में बांटा गया है । प्राथमिक तथ्य या आँकड़े प्रथम बार संकलित किए गए होते हैं जिनके संकलन के स्त्रोत भी अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची, जैसे प्रत्यक्ष अथवा प्रश्नावली, रेडियो या दूरभाष साक्षात्कार जैसे अप्रत्यक्ष भी होते हैं वहीं द्वैतीयक आकड़ों का संकलन पहले से ही किसी सरकारी या गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा किया जा चुका होता है । द्वैतीयक स्त्रोत भी व्यक्तिगत प्रलेख एवं सार्वजनिक प्रलेख दो रूपों में उपलब्ध होते हैं । इन प्रलेखों में संस्मरण, पत्र, डायरियां, पाण्डुलिपियां, सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं की रिपोर्ट, आँकड़े आदि सम्मिलित है ।

6.6 कठिन शब्द

(1) **आँकड़े (Data) :** तथ्य, सामाजिक शोध में अध्ययन विषय से सम्बन्धित सूचनाऐं या जानकारियाँ ।

(2) **प्रगणक (Invcestigator)** शोधकर्ता के सहायक ।

(3) **लोचपूर्णता (Flexibility):** उत्तरदाताओं की संख्या अध्ययन विधि यन्त्र में परिवर्तन की अनुभूति ।

(4) **अभिनितिपूर्ण (Bias)** शोधकर्ता द्वारा संकलित सूचनाओं को अपने ही दृष्टिकोण से तोड़ मरोड़ कर प्रस्तुत करना या निजीविचार मिला देना ।

(5) **संस्मरण (Memories):** किसी व्यक्ति द्वारा अपनी यात्राओं, रोमांचकारी अनुभवों एवं जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का विवरण ।

6.7 अभ्यास प्रश्न

(1) आँकड़े से आपका क्या अभिप्राय है? आंकड़े एकत्रित करने के स्त्रोतों को स्पष्ट कीजिये।

(2) सामाजिक सर्वेक्षण में प्रचलित पद्धतियों, प्रविधियों एवं यन्त्रों को स्पष्ट कीजिये ।

(3) प्राथमिक एवं द्वैतीयक आँकडों से आपका क्या अभिप्राय है ?

6.8 सन्दर्भ ग्रंथ

(1) P.V Young, Scientific Social Sarveys and Research.

(2) C.A. Moser, Survey Methods in Social Investigation.
(3) G.A. Lundberg Social Research.
(4) P.H Mann, Methods of Sociological Enquiry..
(5) डी.एस. बघेल, सामाजिक अनुसंधान

इकाई-7

सर्वेक्षण और प्रकरण अध्ययन

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 सर्वेक्षण का अर्थ एवं परिभाषा

7.3 विशेषताएं

7.4 सर्वेक्षण के उद्देश्य

7.5 सर्वेक्षण की उपयोगिता

7.6 सीमाएं

7.7 बोध प्रश्न

7.8 एकल अध्ययन पद्धति

7.8.1. अर्थ एवं परिभाषा

7.8.2. विशेषताएं

7.8.3. उद्देश्य

7.8.4. एकल अध्ययन के प्रकार

7.8.5. एकल अध्ययन: तथ्य संकलन के स्त्रोत

7.8.6. एकल अध्ययन एवं सर्वेक्षण में अन्तर

7.8.7. उपयोगिता

7.8.8. सीमाएं

7.8.9. एकल अध्ययन एवं सर्वेक्षण में अन्तर

7.9 सारांश

7.10 शब्दावली

7.11 अभ्यास प्रश्न

7.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

7.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने पर आप समझ पायेंगे कि -

- सर्वेक्षण एक विधि के रूप में किस प्रकार परिभाषित की जा सकती है ।
- सर्वेक्षण की विशेषताओं से इसके अर्थ को अच्छी प्रकार समझ पायेंगे ।
- सर्वेक्षण विधि के उद्देश्यों से यह स्पष्ट होगा कि इस विधि का प्रयोग क्यों और किस दशा में संभव है ।
- सर्वेक्षण के विषय क्षेत्र को जान सकेंगे ।
- एकल अध्ययन पद्धति का अर्थ समझ पायेंगे ।

- एकल अध्ययन पद्धति की विशेषताएं आपको इसका अर्थ स्पष्ट करने में सहायक होगी।
- एकल अध्ययन विधि के विभिन्न प्रकारों को समझ पायेंगे
- शोध कार्य के लिए एकल अध्ययन विधि किस प्रकार से प्रयोग की जाती है यह जान सकेंगे।
- इस विधि की उपयोगिता के बारे में समझ सकेंगे ।
- सर्वेक्षण विधि एवं एकल अध्ययन में अन्तर कर पायेंगे ।

7.1 प्रस्तावना

वैज्ञानिक अनुसंधान में विधियों एवं प्रविधियों का विशिष्ट स्थान है । इन्ही के आधार पर शोध कार्य सही दिशा में बढ़ता है । यहा पर हम अनुसंधान विधि का विवेचन करेंगे । विधि से तात्पर्य तथ्य संकलन के लिए प्रयोग किये जाना वाला यंत्र अथवा तकनीक । इसे हम प्रक्रिया भी सकते है जो कि आनुभाविक अवलोकन पर आधारित ज्ञान प्राप्त करने में सहायक है । इसी प्रकार जब हम विधिशास्त्र की बात करते है तो हमारा तात्पर्य उन विधियों से होता है जिनका प्रयोग समाजशास्त्रियों द्वारा किया जाता है । जैसे सर्वेक्षण विधि, एकल अध्ययन विधि, प्रयोगात्मक विधि, सांख्यिकी विधि आदि । अत: विधि शास्त्र का अर्थ विधियों के वर्णन स्पष्टीकरण और न्याय संगत से है न कि स्वयं विधि से । इस प्रकार विधि का संबंध तथ्य संकलन प्रक्रिया से है और विधिशास्त्र उस प्रक्रिया का वर्णन करना है । पहले हम सर्वेक्षण का एक विधि के रूप में विस्तार से विवेचना करेंगे उसके बाद एकल अध्ययन विधि की चर्चा होगी।

7.2 सर्वेक्षण का अर्थ एव परिभाषा

सर्वेक्षण विधि वह विधि है जिसमें किसी विशिष्ट समुदाय, संगठन समूह आदि का व्यवस्थित एवं विस्तृत अध्ययन किया जाता है । यह अध्ययन एक सामाजिक समस्या के विश्लेषण के लिए किया जाता है ताकि उसके समाधान हेतु अनुशषाएं प्रस्तुत की जा सके । जैसे ग्रामीण निर्धनता पर सर्वेक्षण, अपराध वृद्धि, राजनीतिक भ्रष्टाचार, बालश्रम, सरकार का एक वर्ष का कार्यकाल आदि ।

सर्वेक्षण के अर्थ को समझने को एक अन्य तरीका भी है । इसमें हम सर्वेक्षण शब्द का शाब्दिक विश्लेषण करते हैं । अंग्रेजी शब्द Survey को ही हिन्दी में सर्वेक्षण कहते है । अंग्रेजी का Survey दो शब्दों के योग से बना हैं । Sur अर्थात् over ऊपर एवं दूसरा शब्द vey यह बना है veeir अथवा veoir से इसका अर्थ है देखना । इस प्रकार Survey के शाब्दिक विश्लेषण से भी इसका अर्थ होता है ऊपर से देखना, अवलोकन करना निरीक्षण करना आदि ।

सर्वेक्षण की परिभाषा - सामाजिक सर्वेक्षण को परिभाषित करने के लिए चार आधार हो सकते है।

(i) सामाजिक समस्या का अध्ययन एवं उसके समाधान हेतु सुझाव ।

(ii) सर्वेक्षण एक वैज्ञानिक पद्धति के रूप में

(iii) एक सहयोगी प्रक्रिया के रूप में परिभाषा

(iv) सामान्य सामाजिक घटनाओं का अध्ययन

उपर्युक्त चारों आधार पर सर्वेक्षण को परिभाषित करने का प्रयास करेंगे ।

(i) **सामाजिक समस्या का अध्ययन एवं उसके समाधान हेतु सुझाव -** सामाजिक सर्वेक्षण प्रारम्भिक अवस्था में सामाजिक समस्याओं के बारे मे पूर्ण जानकारी प्राप्त कर तदनुसार उन समस्याओं का हल करने के लिए किये जाते थे । पश्चिम के देशों में 18वी और व 19वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप अनेक सामाजिक समस्याएं उत्तर होने लगी । तब उन समस्याओं का अध्ययन करने और समाधान निकालने के लिए सर्वेक्षण की आवश्यकता होने लगी । इस सन्दर्भ में वर्गेस ने सर्वेक्षण को परिभाषित करते हुए लिखा कि एक समुदाय का सर्वेक्षण सामाजिक विकास की एक रचनात्मक योजना प्रस्तुत करने के उद्देश्य से किया गया वैज्ञानिक अध्ययन है जो कि उस समुदाय की दशाओं तथा आवश्यकताओं से सम्बंधित हैं । इसी प्रकार पी.वी. यंग एवं फेयर चाइल्ड ने भी सर्वेक्षण की परिभाषा सामाजिक समस्याओं, दशाओं के अध्ययन एवं समाधान के सन्दर्भ में दी है ।

(ii) **सर्वेक्षण एक वैज्ञानिक पद्धति के रूप में -** सामाजिक सर्वेक्षण को एक वैज्ञानिक पद्धति के रूप में परिभाषित करने वाले विद्वानों में मार्स, चेपमेन, मोजरआदि सम्मिलित हैं । जब बीसवीं सदी में सर्वेक्षण के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ तब सर्वेक्षण को वैज्ञानिक विधि के रूप में परिभाषित किया । मार्स ने इसे परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया कि सर्वेक्षण किसी सामाजिक स्थिति अथवा समस्या अथवा जनसंख्या के परिभाषित उद्देश्यों के लिए वैज्ञानिक तथा व्यवस्थित रूप में विश्लेषण की एक पद्धति हैं ।

(iii) **एक सहयोगी प्रक्रिया के रूप में परिभाषा -** हैरीसन तथा जोसेफ एच. बन्जेल ने सामाजिक सर्वेक्षण को वैज्ञानिक अनुसंधान की एक सहयोगी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया कि सामाजिक सर्वेक्षण एक सहकारी प्रयास है जो निश्चित भौगोलिक सीमाओं एंव स्थिति रखने वाली सामयिक सम्बंधित सामाजिक समस्याओं तथा दशाओं के उपचार तथा अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग करता है, साथ ही अपने तथ्यों, निष्कर्षो तथा सुझावों को इस तरह प्रसारित करता है कि वे यथा सम्भव समुदाय के सामान्य ज्ञान तथा बुद्धिमत्तापूर्ण सहकारी क्रिया के लिए शक्ति बन सके ।

(iv) **सामान्य सामाजिक घटनाओं का अध्ययन -** कई विद्वान सामाजिक सर्वेक्षण को सामान्य घटनाओं का अध्ययन के रूप में परिभाषित करते हैं, जैसे-ए. एफ. वेल्स, सिन पाओ अब्राम्स आदि । वेल्स के अनुसार सामान्यतया सामाजिक सर्वेक्षण को किसी विशिष्ट प्रदेश में रहने वाले एक मानव समूह की सामाजिक संस्थानों एवं क्रिया कलापों के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है ।

चारों आधारों के अनुसार दी गई परिभाषाओं का निष्कर्ष दिया जाय तो कह सकते हैं कि सामाजिक सर्वेक्षण सामाजिक अनुसंधान की वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले लोगों के सम्बन्ध में सामाजिक तथ्यों का संकलन किया जाता है तथा उनकी सामाजिक समस्याओं के बारे में वास्तविक जानकारी प्राप्त कर उनका निदान और उपचार किया जा सके ।

7.3 सर्वेक्षण की विशेषताएं

सामाजिक सर्वेक्षण की अवधारणा को अच्छी तरह से समझने के लिए इसकी प्रमुख विशषताओ का उल्लेख निम्न प्रकार से है

1. **वैज्ञानिक पद्धति -** सामाजिक सर्वेक्षण एक वैज्ञानिक पद्धति है क्योंकि वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कर समूह संगठन समुदाय आदि का अध्ययन किया जाता है । सर्वेक्षण के लिए चयनित क्षेत्र से तथ्यों का संकलन करने हेतु प्रश्नावली, साक्षात्कार, अनुसूची आदि तकनीक का प्रयोग किया जाता है । इसके साथ घटनाओं के बारे में कार्यकारण सम्बन्धों को ज्ञात किया जाता है तथा प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर सामान्यीकरण किया जाता है । इसी प्रकार प्राप्त तथ्यों की सत्यता की जाँच भी की जा सकती है ।

2. **समस्याओं का अध्ययन एवं उपचार -** सामाजिक सर्वेक्षण वह विधिहै जिसके द्वारा सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करके समस्याओं के कारणों का पता लगाया जाता है कि उनके समाधान हेतु योजना बनाई जा सके । बर्गेस ने जोर देकर कहा है कि सर्वेक्षण से प्राप्त निष्कर्षो का प्रयोग सामाजिक समस्याओं के निवारण, सुधार एवं प्रगति के सुझावों के लिए किया जाता है ।

3. **सामाजिक चरों के वितरण से सम्बन्धित -** सर्वेक्षण सामाजिक चरों के वितरण से सम्बन्धित होता है । ये चर सर्वेक्षण किये जाने वाले वृहद समूह में होते हैं । जैसे सम्पूर्ण देश में बेराजगारी पर सर्वेक्षण करना है तो पूरे देश से जब सर्वेक्षण हेतु निदेर्शन का चयन किया जाता है तब उपसमूहों से बेराजगारी के चर का उचित प्रतिनिधित्व सुनिश्चित कर लिया जाता है । अर्थात प्रत्येक समूह में बेरोजगारी अवश्य होंगे ।

4. **ज्ञात समग्र का प्रतिनिधित्व -** सर्वेक्षण विधि में प्रयास यह होता है कि ज्ञात समग्र का प्रतिनिधित्व हो सके । जिस समग्र का सर्वेक्षण करना है उनमें से प्रत्येक का प्रतिनिधित्व इस विधि में होता है । जैसे परिवार नियोजन के बारे में लोगों की मनोवृति जानने के लिए सर्वेक्षण करना हो तो सम्पूर्ण राष्ट्र अथवा संपूर्ण राज्य अथवा समस्त नगर को सम्मिलित किया जा सकता है । इस कार्य हेतु जनसंख्या को उप समूहों में बांटा जाता है । ये उपसमूह ग्रामीण और नगरीय हो सकते है, पुरूष-स्त्री, शिक्षित-अशिक्षित निर्धन और धनवान हो सकते है ।

5. **सहकारी प्रक्रिया -** कुछ विद्‌वान सामाजिक सर्वेक्षण को एक सहकारी प्रक्रिया के रूप में समझाते हैं । सामान्यतया वृहद स्तर पर सर्वेक्षण करने के लिए विशेषज्ञों के एक दल की आवश्यकता होती है तथा विभिन्न स्तरों पर अनेक लागों का सहयोग लेना अनिवार्य होता है । इसलिए सामाजिक सर्वेक्षण को सहकारी प्रक्रिया कहा जा सकता है ।

6. **समाजशास्त्रियों के लिए उपयोगी -** सामाजिक सर्वेक्षण विधि समाजशास्त्रियों के लिए अधिक उपयोगी एवं सुविधाजनक है । जब हम क्षेत्रीय अध्ययन विधि और सर्वेक्षण विधि में अन्तर करते है तो स्पष्ट हो जाता है कि जिस प्रकार सामाजिक मानवशास्त्रियो द्वारा क्षेत्रीय अध्ययन विधि का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार समाजशास्त्रियों के लिए सर्वेक्षण विधि बहुत उपयोगी है । आर. के. मुकर्जी, आई. पी. देसाई, एम. एस. गोरे, के. एम. कापडिया अलेन डी.

रॉस, सचिचदानन्द ए. एम. शाह आदि ने भारत में परिवार का अध्ययन करने के लिए सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया ।

7.4 सर्वेक्षण के उद्देश्य

सामान्यतया किसी भी सर्वेक्षण एवं शोध के दो उद्देश्य हो सकते हैं शुद्ध वैज्ञानिक अथवा सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक । इसके साथ सर्वेक्षण के लिए निम्न उद्देश्य भी होते है।

1. **सामाजिक दशाओं एवं समस्याओं का अध्ययन -** सर्वेक्षण की शुरूआत पश्चिम देशों में हुई । इंगलैण्ड व अमेरिका में मानव जीवन की दशाओं की जाकारी प्राप्त करने के लिए सर्वेक्षण कार्य किये जाने लगे साथ ही औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप अनेक सामाजिक समस्याएं उत्पन्न हुई । उन समस्याओं के बारे में तथ्यात्मक जानकारी एकत्र करने के उद्देश्य से सर्वेक्षण कार्य होने लगे । जैसे बेरोजगारी, निर्धनता, अशिक्षा, अपराध, गन्दी बस्तियाँ, स्वास्थ्य, रहन-सहन, पारिवारिक जीवन आदि के बारे में वास्तविक तथ्यों का पता लगा कर समस्याओं के कारणों को खोजने का प्रयत्न किया जाता है । प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर समाधान किया जाता है ।

2. **कार्य-कारण सम्बन्धों की खोज -** सामाजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य सामाजिक घटनाओं के कारणों को ज्ञात करना भी है । समाज में किसी भी घटना के घटित होने की परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त करना तथा घटना को पुनरावृत्ति के कारणों के साथ समाज पर पड़ने वाले प्रभावों को समझाने के लिए सर्वे क्षणों का आयोजन किया जाता है ।

3. **प्राक्कल्पना निर्माण एवं सिद्धान्त परीक्षण -** प्राक्कल्पना निर्माण, प्राक्कल्पना की जांच एवं सिद्धान्तों का प्रमाणीकरण सर्वेक्षण प्रारम्भ से ही सम्भव होता है । अध्ययन किये जाने वाले समुदाय, संगठन और समूह का वृहद सर्वेक्षण प्रारम्भ करने से पूर्व एक लघुस्तरीय सर्वेक्षण किया जाता है । इसे पूर्वगामी सर्वेक्षण (प्त1ः10। ध्ण्प्फ्त?) कहते हैं । इस प्रकार से सर्वेक्षण से प्राप्त वास्तविक तथ्यों के आधार पर प्राक्कल्पनाएं बनाई जाती है एवं प्राक्कल्पना की जांच एवं सत्यापन पर सर्वेक्षण करना है तो पूरे देश से जब सर्वेक्षण हेतु निदेर्शन का चयन किया जाता है तब उपसमूहों से बेराजगारी के चर का उचित प्रतिनिधित्व सुनिश्चित कर लिया जाता है । अर्थात प्रत्येक समूह में बेरोजगारी अवश्य होंगी ।

4. **ज्ञात समग्र का प्रतिनिधित्व -** सर्वेक्षण विधि में प्रयास यह होता है कि ज्ञात समग्र का प्रतिनिधित्व हो सके । जिस समग्र का सर्वेक्षण करना है उसमें से प्रत्येक का प्रतिनिधित्व इस विधि में होता है । जैसे परिवार नियोजन के बारे में लोगों की मनोवृति जा. के लिए सर्वेक्षण करना हो तो सम्पुर्ण राष्ट्र अथवा संपूर्ण राज्य अथवा समस्त नगर को सम्मिलित किया जा सकता है । इस कार्य हेतु जनसंख्या को उप समूहों में बांटा जाता है । ये उपसमूह ग्रामीण और नगरीय हो सकते है, पुरूष-स्त्री, शिक्षित-अशिक्षित निर्धन और धनवान हो सकते है ।

5. **सहकारी प्रक्रिया -** कुछ विद्वान सामाजिक सर्वेक्षण को एक सहकारी प्रक्रिया के रूप में समझाते हैं । सामान्यता वृहद स्तर पर सर्वेक्षण करने के लिए विशेषज्ञों के एक दल की आवश्यकता होती है तथा विभिन्न स्तरों पर अनेक लोगों का सहयोग लेना अनिवार्य होता है । इसलिए सामाजिक सर्वेक्षण को सहकारी प्रक्रिया कहा जा सकता है ।

6. **समाजशास्त्रियों के लिए उपयोगी -** सामाजिक सर्वेक्षण विधि समाजशास्त्रियों के लिए अधिक उपयोगी एवं सुविधाजनक है । जब हम क्षेत्रीय अध्ययन विधि और सर्वेक्षण विधि में अन्तर करते है तो स्पष्ट हो जाता है कि जिस प्रकार सामाजिक मानवशास्त्रियों द्वारा क्षेत्रीय अध्ययन विधि का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार समाजशास्त्रियों के लिए सर्वेक्षण विधि बहुत उपयोगी है । आर. के. मुकर्जी, आई. पी. देसाई, एम. एस. गोरे, के. एम. कापडिया अलेन डी. रॉस, सचिचदानन्द ए. एम. शाह आदि ने भारत में परिवार का अध्ययन करने के लिए सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया ।

सामाजिक सर्वेक्षण का विषय क्षेत्र - सामाजिक सर्वेक्षण से किस प्रकार समुदायों, संगठनों, समूहों, सामाजिक दशाओं, क्रिया किलापों मनोवृतियों आदि का सर्वेक्षण किया जा सकता है इन्हीं बातो का उल्लेख विषयक्षेत्र के अन्तर्गत किया जा रहा है । मोजर ने सामाजिक सर्वेक्षण के विषय क्षेत्र को चार भागों में वर्गीकृत किया है ।

1. **जनसंख्यात्मक विशेषताए -** जनसंख्या सम्बन्धी विशेषताओं को इनके अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है । सर्वेक्षण पारिवारिक संरचना, स्त्री-पुरूष अनुपात, आयुवर्ग, वैवाहिक स्थिति, प्रजनन सम्बन्धी नियम, जन घनत्व, जन्म-मृत्युदर, औसत आयु, परिवार नियोजन, जनसंख्या की गतिशीलता आदि के बारे मे तथ्य संकलित किये जाते है ।

2. **सामाजिक पर्यावरण -** लोगों को प्रभावित करने वाले सामाजिक आर्थिक कारकों का उल्लेख इसके अनतर्गत किया जाता है । इसमें समुदाय में रहने वाले लोगों के व्यवसाय, आय, शिक्षा स्वास्थ्य, भौतिक सुख-सुविधाएं, घरों की दशा पड़ोस आदि को सम्मिलित किया हैं मोजर ने स्पष्ट किया है कि इस प्रकार के सर्वेक्षण में व्यक्तियों के रहन-सहन उनकी भौतिक आवश्यकताएं, आवश्यकताओं को पूरा करने के साधन आदि के बारे में जानने का प्रयास किया जाता है ।

3. **सामाजिक क्रियाएं -** लोगों के विभिन्न क्रिया-कलापों के बारे में जानने का प्रयास किया जाल है । क्रिया कलापों में व्यक्तियों के मनोरंजन, रेडियो सुनना, टी. वी. देखना, अखबार पढ़ना, यात्रा करना, खेलकूद, त्यौहार, नाच-गान, सामूहिक भोज, धूम्रपान, उत्सव, कर्मकाण्ड आदि विषयों को सम्मिलित करते है । इन विषयों के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए सर्वेक्षण किये जाते हैं ।

4. **राय एवं मनोवृत्ति -** इसके अन्तर्गत उन सर्वेक्षणों को सम्मिलित किया जाता है जिनके द्वारा विभिन्न. विषयों पर लोगों के विचारों, दृष्टिकोणों, मनोवृतियों, मानसिक स्थिति एवं राय जानने का प्रयास किया जाता हैं । जनमत संग्रह, अस्पृश्यता विधवा-विवाह, मतदान व्यवहार आदि के बारे में लोगों की राय जानने के लिए किये जाने वाले सर्वेक्षणों को इसके अन्तर्गत सम्मिलित करते हैं ।

मोजर द्वारा किये गये विषय क्षेत्र के विभाजन को अन्तिम नहीं कहां जा सकता है । परिस्थितियों के बदलाव के साथ नये विषय भी उभरते रहते हैं । अत: सामाजिक सर्वेक्षण के विषय क्षेत्र में नये आयाम भी जुड़ते रहते हैं ।

7.5 सर्वेक्षण की उपयोगिता

सर्वेक्षण विधि सामाजिक अनुसंधान की प्रमुख विधि होने से बहुत उपयोगी है । इसके उपयोग एवं महत्व को निम्नांकित बिन्दुओं के आधार पर प्रभाणित कर सकते हैं-

1. **अनुभविक-वैयक्तिक अध्ययन -** सर्वेक्षण विधि में अध्ययनकर्त्ता घटनाओं के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आता है । तथ्यों का प्रत्यक्ष संकलन किया जाता है इसलिए व्यक्तिगत पक्षपात की कोई सम्भावना नहीं रहती हे । इसे आनुभविक-वैषयिक अध्ययन कहा जाता है । घटनाओं के प्रत्यक्ष ज्ञान पर आधारित तथ्यों से विश्वनीय निष्कर्ष निकाले जाते है ।

2. **प्राक्कल्पना निर्माण में सहायक -** नवीन प्राक्कल्पनाओं का निर्माण सर्वेक्षण विधि से प्राप्त तथ्यों एवं अनुभवों से किया जाता है । इसी प्रकार पूर्व में स्थापित प्राक्कल्पनाओं का पुर्नपरिक्षण भी किया जाता है और नवीन अनुसंधान के लिए इनका उपयोग किया जाता है ।

3. **सामाजिक संस्थानों एवं संरचना का अध्ययन -** सामाजिक सर्वेक्षण किसी भी समाज की संस्थाओं एवं संरचनाओं के विभिन्न अंगों जैसे परिवार, विवाह, नातेदारी, धर्म, शिक्षा मनोरंजन, न्याय, व्यवस्था, कानून, प्रथाओं रिति-रिवाजों, परम्पराओं, संस्कृति आदि के बारे में विस्तृत एवं गहन जानकारी उपलब्ध कराने में सहायक है ।

4. **समस्याओं का अध्ययन एवं समाधान -** समाज की समस्याओं के बारे में विस्तृत जानकारी, उनके उत्पन्न होने के कारण एवं उन समस्याओं को हल करने के उपाय आदि के बारे में विस्तार से जानने के लिए सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया जाता है । समाज के विभिन्न पक्षों में होनेवाले परिवर्तनों की दिशा, प्रवृति और कारणों की जानकारी भी सामाजिक सर्वेक्षण से प्राप्त करते है । इसी प्रकार समस्याओं एवं परिवर्तन के कारणों की जानकारी के आधार पर सुझाव एवं समाधान भी संभव हो सकता है ।

5. **व्यावहारिक उपयोगिता -** अनेक समस्याओं का व्यावहारिक हल ढूंढने के लिए सामाजिक सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया जाता है । उदारीकरण और भूमंडलीकरण की प्रक्रियाओं के फलस्वरूप मुक्त बाजार व्यस्था स्थापित हुई है । बाजारीकरण भी तीव्र गति से होने लगा है । व्यापारिक संस्थाएं अपने उत्पादों की बिक्री बढ़ाने के लिए बाजार सर्वेक्षण करवाती है । राजनीति क्षेत्र में भी सर्वेक्षण की उपयोगिता बढ़ी है । चुनाव पूर्व सर्वेक्षणों के आधार पर चुनावी राजनीति निर्धारित की जाती है । अत: सामाजिक सर्वेक्षण व्यावहारिक दृष्टि से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के लिए उपयोगी बनता जा रहा है ।

7.6 सर्वेक्षण विधि की सीमाएं

सर्वेक्षण विधि अनुसंधान की महत्वपूर्ण विधि है । इसकी उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता है लेकिन इस विधि की कुछ कमियां भी है । इन कमियों का उल्लेख निम्न बिन्दुओं में किया जा सकता है-अमूर्त एवं अदृश्य प्रघटनाओं के अध्ययन हेतु अनुपयुक्त विधि अर्थात संख्यात्मक एवं प्रत्यक्ष आनुभाविक तथ्यों के लिए अधिक अनुकूल है ।

- सामाजिक प्रधटनाओं के बारे में गहन अध्ययन करने हेतु सर्वेक्षण विधि उपयोगी नहीं है ।

- पक्षपात की संभावना रहती हैं क्योंकि प्रत्यक्ष अनुभव करने के लिए सर्वेक्षण कर्त्ता घटना का साक्षी होता
- ऐसी दशा में सर्वेक्षणकर्त्ता वस्तुनिष्ठ होकर तथ्यों को एकत्र करे यह संभावना भी संदिग्ध रह सकती है ।
- दूरस्थ सामाजिमक समस्याओं का अध्ययन करने के लिए सर्वेक्षण विधि उपयोगी नहीं है यह तो केवल अध्ययन हेतु उपयोगी है ।

7.7 अभ्यास प्रश्न

1. सर्वेक्षण विधि का अर्थ समझाइए?

   ....

   ....

   ....

2. सामाजिक सर्वेक्षण विधि को परिभाषित करने के लिए किन आधारों का उल्लेख है?

   ....

   ....

   ....

3. सर्वेक्षण की विशेषताएं समझाइए?

   ....

   ....

   ....

4. सर्वेक्षण के उद्देश्यों की विवेचना कीजिये ।

   ....

   ....

   ....

5. मोजर द्वारा वर्गीकृत समाजिक सर्वेक्षण के विषय क्षेत्र का विवेचना करिये ।

   ....

   ....

   ....

6. सामाजिक सर्वेक्षण की उपयोगिता एवं सीमाओं पर प्रकाश डालिये ।

   ....

   ....

   ....

7.8 एकल अध्ययन पद्धति

एकल अध्ययन किसी विषम का गहन अध्ययन है । गहन अध्ययन किये जाने वाला विषम एक व्यक्ति हो सकता है, एक संस्था हो सकती है, एक समुदाय, एक संगठन, एक घटना अथवा सम्पूर्ण संस्कृति भी एक केस हो सकता है ।

7.8.1 परिभाषा -

अध्ययन के एकल अध्ययन को परिभाषित करते हुए लिखा कि ' एकल अध्ययन एक आनुभाविक पड़ताल है । जो कि एक समकालीन प्रघटना का अन्वेषण इसकी वास्तविकता के सन्दर्भ में करता है । जब प्रघटना और सन्दर्भ के बीच की सीमाएं स्पष्ट न हो, तथा जहां साक्ष्य के लिए विभिन्न स्त्रोतों का उपयोग किया जाये । " क्रोम्रे का मत है कि ' एकल अध्ययन व्यक्तिगत केस का अध्ययन उसके स्वाभाविक परिवेश में लम्बी अवधि तक किया जाता है ।

एकल अध्ययन को एक प्रकार का अनुसंधान प्रारूप कहा जा सकता है । जिसमें तथ्य संकलन के स्त्रोत के लिए गुणात्मक विधि का प्रयोग होता है । अध्ययन किये जाने वाले केस के बारे में गहन जानकारी प्राप्त करने के लिए समग्र केस का अथवा केस की सम्पूर्णता का अध्ययन किया जाता है ।

यह स्पष्ट है कि एकल अध्ययन तथ्य संकलन की विधि नहीं है । यह एक शोध रणनीति है । अथवा आनुभाविक पड़ताल है । इसमें साम्य के विभिन्न स्त्रोतों का प्रयोग करते हुए समकालीन प्रघटनाओं को अन्वेषण किया जाता है । एकल अध्ययन की अनिवार्यता यह है कि इसे एक इकाई के रूप में माना जाय । एकल अध्यान्न के बारे में एक रोचक तथ्य यह है कि इसका उपयोग केवल समाजशास्त्र, सामाजिक मानवशास्त्र एवं राजनीतिशास्त्र जैसे समाजविज्ञानों तक सीमित नहीं है अपितु चिकित्सा विज्ञान एवं समाजकार्य जैसे व्यावसायिक विज्ञानों के लिए भी उपयोगी है ।

7.8.2 विशेषताएं - जब हमने एकल अध्ययन के अर्थ और परिभाषा के समझने का प्रयास किया तो कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं को रेखांकित किया । इन्ही बिन्दुओं की विशेषता के रूप में समझने से एकल अध्ययन का अर्थ पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है ।

- एकल अध्ययन में इकाइयों की समग्रता का अध्ययन किया जाता है । अर्थात इन इकाइयों के कुछ चयनित पहलुओं अथवा चरों तक ही सीमित नहीं रहते है ।
- तथ्य संकलन के लिए अनेक विधियों का प्रयोग किया जाता है ताकि त्रुटियों से बचा जा सके ।
- अक्सर एकल अध्ययन में एक इकाई का अध्ययन किया जाता है अर्थात एक इकाई ही एक अध्ययन है।
- एकल अध्ययन में उत्तरदाता को केवल तथ्य का एक स्त्रोत नहीं कहा जा सकता क्योंकि उत्तरदाता ज्ञानवान नही होता है ।
- इसमें जटिल केस का अध्ययन किया जाता है ।

7.8.3 एकल अध्ययन के उद्देश्य - बर्न्स ने एकल अध्ययन के निम्न उद्देश्यों का उल्लेख किया है-

1. किसी वृहद अध्ययन से पूर्व एक प्रारम्भिक खोज के रूप में एकल अध्ययन विभिन्न चरों प्रक्रियाओं के सम्बन्धों को समझने के उद्देश्य से किया जाता है । इस प्रकार एकल अध्ययन भावी अनुसंधान के लिए प्राक्कल्पना का स्त्रोत भी हो सकता है ।
2. जिस ईकाई को एकल अध्ययन के लिए चुना जाता है उससे सम्बन्धित प्रघटनाओं का गहन विश्लेषण कर वृहद जनसंख्या की दृष्टि से सामान्यीकरण करना एकल अध्ययन का उद्देश्य है ।
3. विवरणात्मक प्रमाण प्राप्त करना ताकि अधिक सामान्य निष्कर्ष निकाले जा सकें ।
4. सार्वभौमिक सामान्यीकरण को अस्वीकार करना । एक मात्र केस सिद्धांत निर्माण में प्रतिनिधित्व कर सकता है । तथा महत्वपूर्ण योगदान देकर भविष्य के अन्वेषणों की दिशा निर्धारित कर सकता है ।
5. एक केस को अजीबोगरीब, जटिल और रोचक मानकर उपयोग में लाना एकल अध्ययन का उद्देश्य है ।

7.8.4 एकल अध्ययन के प्रकार - बर्न्स ने छः प्रकार के एकल अध्ययनों को उल्लेख किया है -

1. **ऐतिहासिक एकल अध्ययन -** इस प्रकार के एकल अध्ययनों में किसी संगठन अथवा व्यवस्था के बीते समय में विकास का पता लगाया जाता है । जैसे एक. पौढ अपराधी का उसके बचपन, किशोरावस्था युवावस्था के द्वारा अध्ययन करना । इसमें साक्षात्कार, रिकार्डिग एवं डाक्यूमेन्ट्स पर निर्भरता रहती है ।

2. **अवलोकनात्मक एकल अध्ययन -** इस प्रकार के एकल अध्ययन के किसी एक इकाई पर ही केन्द्रित होकर अवलोकन किया जाता है । अवलोकन के लिए चयन की गई इकाई का पूर्ण गहन अध्ययन किया जाता है । इकाई के रूप में कोई घटना, गतिविधि, विशिष्ट व्यक्तियों का कोई समूह अथवा कोई विद्यार्थी, शिक्षक,नेता शराबी आदि हो सकता है । इस प्रकार के अध्ययन में अनुसंधानकर्ता बहुत कम ही पूर्ण सहभागी होता है । अथवा पूर्ण अवलोनकर्त्ता होता है ।

3. **मौखिक इतिहास एकल अध्ययन -** इनमें सामान्यतया प्रथम व्यक्ति वर्णनकर्ता होता है । अनुसंधानकर्ता एक व्यक्ति से विस्तृत साक्षात्कार के द्वारा वर्णन एकत्र करता है । जैसे कोई मादक पदार्थ व्यसनी, मद्पानकर्त्ता, वैश्या अथवा कोई सेवा निवृत व्यक्ति अपने पुत्र के साथ परिवार में अपने आपको समायोजित करने में असफल रहता है । यह अध्यन उत्तरदाता की प्रकृति और उसके द्वारा किये जाने वाले सहयोग पर अधिक निर्भर है ।

4. **परिस्थिति से सम्बन्धित एकल अध्ययन -** इसके अन्तर्गत विशेष घटनाओं का अध्ययन किया जाता है । घटना के भागीदार समस्त लोगों के दृष्टिकोण इस अध्ययन में सम्मिलित किये जाते है । जैसे साम्प्रदायिक दंगा एक घटना है । इसका एकल अध्ययन करने के लिए हम यह जानना चाहेंगे की इसकी शुरूआत दो भिन्न धार्मिक समूहों के दो लोगों के संघर्ष के साथ

किन परिस्थितियों में हुई । घटना स्थल पर उपस्थिति अपने अपने आर्थिक लोगों को प्रत्येक व्यक्ति को समर्थन किस प्रकार प्राप्त हुआ। पुलिस को सूचना किस प्रकार मिली, एक विशिष्ट धार्मिक समूहों के लोगों को पुलिस ने कैसे हिरासत में लिया । शक्तिशाली अभिजनों ने पुलिस विभाग पर दवाब डालने में किस प्रकार हस्तक्षेप किया । लोगों ने तथा मिडीया ने कैसे प्रतिक्रिया दी आदि । इन सभी दृष्टिकोणों को एक साथ लेने की घटना की गहराई तक पहुंचने में सहायता मिलती है तथा घटना को समझा जा सकता है ।

5. **निदानात्मक एकल अध्यन -** एक व्यक्ति विशेष को गहराई तक समझने के उद्देश्य से यह अध्यन्न किया जाता है । जैसे अस्पताल का कोई मरीज, जेल में कोई कैदी, मुक्तग्रह में कोई महिला, विद्यालय में समस्या उलत्र करने वाला बालक आदि । इन अध्ययनों के लिए विस्तृत साक्षात्कार लिये जाते है, अवलोकन किया जाता है तथा रिकॉर्ड और रिपोर्ट आदि देखे जाते हैं ।

6. **बहु-एकल अध्ययन -** यह एकल अध्ययनों का संग्रह है अथवा एकल अध्ययनों की प्रतिकृति तर्क के आधार पर उनको विश्लेषण कर सकते हैं । तर्क यह है कि प्रत्येक केस का परिणाम या तो विरोधी होगा अथवा समान परिणाम होगा । परिणाम यह दर्शायेगा कि या तो प्रारम्भ के प्रस्ताव को समर्थन करना है अथवा पुर्नसमीक्षा की अवश्यकता है । बहु एकल अध्ययन का लाभ यह है कि इसके प्रमाण अधिक प्रभावी होते है । इस प्रकार के एकल अध्ययन में अधिक समय और प्रयास की आवश्यकता होती हैं ।

7.8.5 एकल अध्ययन : तथ्य संकलन के स्त्रोत -

एकल अध्ययन के लिए तथ्य संकलन के दो मुख्य स्त्रोत हैं- (i) प्राथमिक तथ्यों का संकलन साक्षात्कार एवं अवलोकन द्वारा (ii) द्वितीयक तथ्यों का संकलन कई स्त्रोतों से सम्भव है जैसे रिपोर्ट, रिकॉर्ड, समाचार-पत्र, पत्रिकाए, पुस्तकें, फाइलें, डायरियां आदि द्वितीय स्त्रोतों में परिशुद्धता की संभावना कम रहती है इनमें मिथ्या झुकाव हो सकता है । लेकिन साक्षात्कार की तुलना में ये घटनाओं और मुद्दों का अधिक विस्तार से विशिष्टीकरण कर सकते है ।

साक्षात्कार संरचित अथवा असंरचित हो सकता है । सामान्यतया अनुसंधानकर्ता असंरचित साक्षात्कार का प्रयोग करता है । प्रश्न भी सामान्यतया खुले होते हैं जिनमें बातचीत जैसे सहज अनुभव होता है । कभी- कभी संरचित साक्षात्कार को भी एकल अध्ययन के भाग के रूप में प्रयोग किया जाता है । प्रयोग की जाने वाली अवलोकन विधि भी या तो सहभागी होती है अथवा असहभागी । भारत में समाजशास्त्रीयों द्वारा असहभागी अवलोकन विधि का प्रयोग अधिक हुआ है । जेसे एम. एन. श्री निवास सच्चिदानन्द एल. पी विद्यार्थी ने एकल अध्ययन के लिए असहभागी अवलोकन का प्रयोग किया । दोनों ही प्रकार के अवलोकन में अनुसंधानकर्त्ता को एक बाहरी व्यक्ति के नजरिये से वास्तविकता को समझने का अवसर प्राप्त होता है । उदाहरण के लिए एक परिवार में पति-पत्नि के संघर्ष का अवलोकन, एक विद्यार्थी का कक्षा में आचरण, मंत्रालयिक कर्मचारियों का व्यवहार आदि । इस प्रकार के अवलोकन आकस्मिक भी हो सकते हैं । तथा अनौपचारिक भी हो सकते है ।

7.8.6 एकल अध्ययन आयोजन -एकल अध्ययन के अयोजन मे चार घटक महत्वपूर्ण होते है- (i) प्रारम्भिक प्रश्नों का निर्माण (ii) कथन का अध्ययन (iii) इकाई विश्लेषण (iv) परिणाम निर्वचन । हम चारों घटकों को थोड़ा विस्तार से समझने का प्रयास करेंगे ताकि एकल अध्यन प्रक्रिया को अच्छे प्रकार से विश्लेषित किया जा सके ।

(i) **प्रारम्भिक प्रश्नों का निर्माण -** इसका सम्बन्ध 'कौन' 'क्या' 'कहीं' और 'कैसे' हैं जैसे एक मादक पदार्थ व्यसनी का एकल अध्ययन करने के लिए प्रारम्भिक प्रश्न यह आता है कि किस प्रकार के मादक पदार्थो को सेवन किया जाता है । मादक पदार्थ का सेवन प्रारम्भ करने में प्रतिदिन, प्रति सप्ताह प्रतिमाह कितना धन खर्च किया जाता है । इसी प्रकार के प्रश्न प्रारम्भिक अवस्था में निर्मित किये जाते हैं तथा सम्बन्धित केस पूछे जाते है ।

(ii) **अध्ययन का कथन -** इसे हम कथन का अध्ययन करना भी कह सकते है । क्योंकि हम प्रारम्भिक स्तर पर बहुत ही सामान्य प्रकार के प्रश्न तैयार करते है । विशिष्ट प्रकार के प्रश्न विशिष्ट प्रमाण प्राप्त करने के लिए तैयार किये जाते हैं । ये प्रश्न कथन के रूप में होते है । जिनकी सहायता की परख की जाती है । जैसे हमने मादक पदार्थ व्यसनी के केस में प्रारम्भिक प्रश्न बनाये अब उसे विशिष्ट प्रश्न यह पूछ सकते है कि पिछले एक सप्ताह में उसने कौन-कौन से मादक पदार्थो का सेवन किया गया है, ये पदार्थ उसने कहां से प्राप्त किये, इनको खरीदन के लिए उसने धन का प्रबन्ध कहां से किया आदि ।

(iii) **विश्लेषण की इकाई -** इसका सम्बन्ध वास्तविक 'कैसे' को परिभाषित करने से है । अर्थात अध्ययन किया जाने वाला व्यक्ति घटना और व्यवस्था को स्पष्ट करना । जैसे उपर्युक्त केस में हम मादक व्यसनी को एक विशेष कॉलेज अथवा यूनिवर्सिटी से चयन करते हैं और उन्ही विद्यार्थीयों के अध्ययन तक सीमित रहते हैं । दूसरा उदारण हम किसी विशेष संगठन में कार्यरत महिलाओं को ले सकते हैं । इसमें हम कामकाजी महिलाओं की दोहरी भूमिका और उनका समायोजन से सम्बन्धित अध्ययन कर सकते हैं । इस प्रकार अनुसंधानकर्ता प्रतिबद्ध हो जाता है तथा देवयोग से चयनित व्यक्तियों से तथ्य संकलन के लिए लालायित नहीं रहता है । कई अनुसंधानों में यह संदेह हो जाता है कि एक संगठन के एकल अध्ययन को एक छोटे समूह के एकल अध्ययन के समान समझ लिया जाता है । हमने जो कामकाजी महिलाओं का उल्लेख किया है वह कामकाजी महिलाओं के छोटे समूह से सम्बन्धित हैं न कि फैक्ट्री, सचिवायल आदि संगठन से । जब एक बार केस का निर्धारण कर दिया जाता है, तो विश्लेषण की अन्य इकाईयां स्पष्ट जो जाती है । यदि अध्ययन की इकाई समूह है तो समूह में सम्मिलित किये जाने वाले व्यक्तियों को निर्धारित किया जाता है ।

(iv) **एकल अध्ययन आयोजन -** प्रक्रिया का अन्तिम चरण तथ्य विश्लेषण से सम्बन्धित हैं इस स्तर पर हम प्राप्त तथ्यों को प्रस्तावित कथन से प्रमाणित करते हैं । तथा निष्कर्ष हेतु निर्वचन करते हैं ।

7.8.7 एकल अध्ययन की उपयोगिता - निम्न बातों के आधार पर एकल अध्ययन की उपयोगिता को प्रमाणित किया जा सकता है-

- गहन अध्ययन करना सम्भव हो जाता है ।

- तथ्य संकलन विधियों के प्रयोग में लचीलापन रहता है । जैसे प्रश्नावली, साक्षात्कार, अवलोकन आदि का उपयोग आवश्यकतानुसार किया जा सकता है ।
- विषय के किसी भी आयाम का अध्ययन संभव है अर्थात इसमें: किसी एक विशेष पहलु का अध्ययन किया जा सकता है तथा अन्य पहलुओं को सम्मिलित नहीं कर सकते है।
- व्यावहारिक दृष्टि से किसी प्रकार की सामाजिक स्थिति में अध्ययन किया जा सकता है।
- एकल अध्ययन कम खर्चीले होते है ।

यिन ने एकल अध्ययन की निम्न तीन उपयोगिताओं का उल्लेख किया है:-

इसमें एक सिद्धान्त की जाँच की जा सकती है इससे सिद्धान्त को चुनौती भी दी जाती है अथवा उसका विस्तार भी किया जा सकता है ।इसमें एक अजीबो-गरीब केस के अध्ययन में सहायता मिलती है जो कि केवल निदानात्मक मनोविज्ञान के लिए ही उपयोगी नहीं होता अपितु समाजशास्त्र में भी विचलित समूहों, समस्यात्मक व्यक्तियों आदि के अध्ययन में भी उपयोगी होते है ।

उस स्थिति में घटित होने वाली प्रघटना के अध्ययन में भी सहायक है । जिस प्रघटना का अध्ययन पूर्व में नहीं किया गया हो । जैसे तटीय क्षेत्रों में तूफान पीड़ित लोगों की समस्याओं और पुर्नवास का अध्ययन किसानों के लिए सिंचाई नहरों के प्रबन्ध का अध्ययन, पर्यावरणीय विनास का अध्ययन आदि ।

7.8.8 एकल अध्ययन की सीमांए - एकल अध्ययन विधि की कमियों का विवेचन निम्न आधारों पर किया गया है -

1. **वैषयिक झुकाव -** अन्वेषणकर्ता के व्यक्तिनिष्ठ होने की संभावना के कारण एकल अध्ययन की आलोचना की जाती है । तथ्य संकलन के दौरान किसी विशेष स्पष्टीकरण के स्वीकार करने तथा अस्वीकार करने में अन्वेषण व्यक्तिनिष्ठ हो सकता है । कई बार अन्वेषणकर्त्ता निष्कर्ष देते समय भी व्यक्ति दृष्टिकोण से प्रभावित होकर निष्कर्ष दे सकता है । क्योंकि उस पर बाहरी नियंत्रण इतना कमजोर होता है कि वह अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करने का अवसर छोड़ नहीं पाता है ।
2. **वैज्ञानिक सामान्यीकरणों के लिए बहुत कम प्रमाण -** ऐसा कहा जाता है कि एकल अध्ययन किसी सिद्धान्त के सामान्यीकरण के बहुत कम प्रमाण उपलब्ध करवा पाता है । यह एक सामान्य शिकायत है कि केवल एक केस पर आधारित सामान्यीकरण कैसे सम्मत है ।
3. **समय अधिक लगना -** एकल अध्ययन में समय बहुत अधिक लगता हैं । इसमें कई प्रकार की सूचनाएं एकत्र की जाती है जिनका उचित विश्लेषण करना भी बहुत कठिन हैं अगर हम चयन करके कुछ पहलुओं का अध्ययन करे तो पक्षपात की संभावना भी बन जाती है । इसलिए सभी पहलुओं का अध्ययन करने के कारण एकल अध्ययन में समय बहुत अधिक लगता है ।
4. **सन्देहास्पद विश्वसनीयता -** एकल अक्षयन में विश्वसनीयता को स्थापित करना बहुत ही कठिन है तथ्य प्राप्त करने के लिए अन्वेषणकर्त्ता अपनी विश्वसनीयता को प्रमाणित नहीं

कर सकता है । यदि कोई पुन: प्रमाणीकरण हेतु अध्ययन को दोहराना चाहे तो बहुत कठिन हो जाता है ।

5. **प्रमाणिकता का लुप्त होना -** एकल अध्यन में अन्वेषणकर्त्ता क्रियात्मक उपायों को विकसित करने में असफल रहता है । जैसा कि विश्वसनीय उपकरणों द्वारा रोक एवं सन्तुलन नहीं हो पाता ऐसी दशा में अन्वेषणकर्त्ता के लिए जो सही है । उसके स्थान पर उसे जो सही लगता है वह महत्वपूर्ण हो जाता है । अन्तत: एकल अध्ययन गलत निष्कर्षो की ओर बढ़ जाता है । प्रमाणिकता का प्रश्न इसलिए भी उभरता है कि अन्वेषणकर्त्ता की उपस्थिति से अवलोकलन किये जाने वाले क्रिया कलाप भी प्रभावित हो जाते हैं ।

6. **एकल अध्ययन की अवलोचना -** एकल अध्ययन की अवलोचना के लिए यह तर्क भी दिया जाता है कि इसमें प्रतिनिघित्व का अभाव होता है । क्योंकि एक केस जिसका अध्ययन किया जाता है वह दूसरे केसे से भिन्न होता है अत: इसमें प्रतिनिधित्व का अभाव होता है ।

7.8.9 एकल अध्ययन एवं सर्वेक्षण में अन्तर - हमने एकल अध्ययन विधि एवं सर्वेक्षण विधि का विवेचन किया है । दोनों विधियां अपने-अपने महत्व के कारण उपयोगी है । दोनों आधारों पर अन्तर किया जा सकता हैं उसे निम्न प्रकार से प्रस्तुत करेंगे :-

- सर्वेक्षण विधि में समस्त इकाईयों की जानकारी होती है । इसे हम कह सकते हैं कि समस्त जनसंख्या ज्ञात होती है । जबकि एकल अध्ययन विधि मे समस्त जनसंख्या से व्यक्तियों का निदर्शन लिया जाता है
- निदर्शन की विशेषताओं की गणना और वर्णन किया जाता है । जबकि एकल अध्ययन में केवल केस की विशेषताओं का वर्णन किया जाता है ।
- सर्वेक्षण विधि में जनसंख्या के निदर्शन की विशेषताओं के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाता है जबकि एकल अध्ययन के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाती है ।

7.9 सारांश

सर्वेक्षण विधि एवं एकल अध्ययन विधि अनुसंधान के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं । दोनों को ही हम तथ्य संकलन की विधियों नहीं कह सकते हैं क्योंकि दोनों ही विधियों की प्रक्रिया को पूर्ण कर निष्कर्ष निकालने के लिए तथ्यों का संकलन किया जाता है । सर्वेक्षण का सम्बन्ध जिस प्रकार किसी समुदाय संगठन अथवा समूह से है उसी प्रकार एकल अध्ययन करने के लिए किसी व्यक्तिगत समूह, एक समुदाय, समाज, संगठन, एक प्रक्रिया अथवा सामाजिक जीवन की किसी ईसाई की समग्रता का अध्ययन करते हैं ।

7.10 शब्दावली

एकल अध्ययन - गुणात्मक विश्लेषण का ऐसा रूप जिसमें किसी एक व्यक्ति, घटना, अथवा संस्था का सर्वागीण अध्ययन किया जाता है ।

प्राक्कल्पना - घटनाओं के सम्बन्ध में निर्मित एक अनुमान अथवा प्रस्थापन ।

साक्षात्कार - एक व्यक्ति अथवा समूह के साथ विशिष्ट प्रयोजन से आयोजित औपचारिक वार्तालाप की प्रक्रिया ।

अवलोकन - किसी घटना अथवा वस्तु को व्यवस्थित एवं सूक्ष्म रूप से देखने- परखने तथा आलेखन की विधि ।

प्रश्नावली - तथ्य संकलन की एक प्रविधि जिसका प्रयोग निश्चित शोध क्षेत्र में प्रश्नों के एक समूह द्वारा उत्तर प्राप्त करनें के लिए किया जाता है ।

निदर्शन - एक समग्र में से चुनी गई कुछ प्रतिनिधित्वपूर्ण इकाईयां ।

चर - किसी विशिष्ट सामाजिक विशेषता अथवा सामाजिक कारक (आयु, लिंग, आय, शिक्षा, व्यवसाय, धर्म, जाति) के लिए प्रयोग किया जाने वाला शब्द ।

7.11 अभ्यास प्रश्न

1. एकल अध्ययन विधि का अर्थ एवं परिभाषा समझाइए ?

   ....

   ....

   ....

2. एकल अध्ययन विधि की विशेषताओं का उल्लेख किजिये?

   ....

   ....

   ....

3. एकल अध्ययन के उद्देश्य बताईये?

   ....

   ....

   ....

4. एकल अध्ययन के विभिन्न प्रकारों की विवेचना कीजिये ।

   ....

   ....

   ....

5. एकल अध्ययन विधि मे तथ्य संकलन के स्त्रोतों के बारे मे बताईये ?

   ....

   ....

   ....

6. एकल अध्ययन आयोजन की प्रमुख बातों का उल्लेख कीजिये ।

   ....

   ....

   ....

7. एकल अध्ययन विधि कि उपयोगिता एवं सीमाओ के बारे मे टिप्पणी कीजिये ।

....
....
....

7.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

- Bailey, kennth Dr. Methods of Social Research, Horton and hunt, Sociology
- Normen Blaikie, Designing Socal Research
- Yin, R.K., Case Stady Research: Design and Method.

इकाई-8

अवलोकन

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 अवलोकन : अर्थ, परिभाषाएँ

8.3 सामान्य देखना बनाम वैज्ञानिक अवलोकन

8.4 अवलोकन की विशेषताएँ

8.5 अवलोकन के प्रकार

8.5.1 अनियन्त्रित अवलोकन

8.5.2 नियंत्रित अवलोकन

8.5.3 सहभागी अवलोकन

8.5.4 असहभागी अवलोकन

8.5.5 अर्द्धसहभागी अवलोकन

8.5.6 सामूहिक अवलोकन

8.5.7 अवलोकन के प्रकार की सारणी

8.6 अवलोकन प्रविधि के गुण

8.7 अवलोकन विधि की सीमाएँ एवं कमियाँ

8.8 अवलोकनकर्ता के गुण

8.9 सारांश

8.10 शब्दावली

8.11 अभ्यास प्रश्न

8.12 सन्दर्भ गन्थ सूची

8.0 उद्देश्य

मानव ने सामान्य अवलोकन से ही अतीत में बहुत सारा ज्ञान प्राप्त किया किन्तु वैज्ञानिक विधि के रूप में अवलोकन आकड़ों को व्यवस्थित रूप से संकलित करने की एक मूलभूत प्रविधि है । व्यवस्थित रूप से प्रघटनाओं को देखना, सुनना, समझना फिर लिखना होता है । इस इाकाई का उद्देश्य अवलोकन प्रविधि के व्यवस्थित रूप को समझना है । हमारे सामने प्रश्न यह है कि अवलोकनकर्ता को प्रघटनाओ के वैज्ञानिक अवलोकन के लिए किस मार्ग पर चलना चाहिए क्या इसके लिए उसे कुशल व प्रशिक्षित होना चाहिए और गुड्डे एवं हट्ट के इस कथन कि "विज्ञान का शुभारम्भ अवलोकन से होता है और इसे अपनी अन्तिम प्रमाणिकता की जाँच हेतु अन्ततः अवलोकन पर ही लोटना पड़ता है । " को स्पष्टतः आप इस इकाई के अध्ययन के माध्यम से जान पायेंगे। आप जानेंगे कि :

- अवलोकन क्या है? सामान्य देखना, वैज्ञानिक अवलोकन से किस प्रकार भिन्न है?
- अवलोकन प्रविधि को अध्ययन के दृष्टिकोण से किस प्रकार वर्गीकृत किया गया हैं?
- अवलोकन की कुछ सीमाएँ एवं कमियाँ होते हुए भी यह सर्वाधिक शोध विधि है ।

8.1 प्रस्तावना

अवलोकन सामाजिक अनुसंधान की एक प्रविधि है जिसका प्रयोग अनुसंधान मे आँकड़े एकत्रित करने के लिए किया जाता है । ' यह प्रविधि केवल समाजशास्त्र में ही नही बल्कि अन्य सामाजिक व प्राकृतिक विज्ञानों में भी महत्वपूर्ण प्रविधि मानी गयी है । इस प्रविधि द्वारा घटनाएँ जिस रूप में हैं उसी रूप में उनके प्रभावों व संबंधो को अवलोकित किया जाता है । अवलोकन धार्मिक पंथ, गृहहीन समूह, अपराधी, बाल अपराधी, बन्धुआ मजदूर व विधवाओं के जीवन और कष्टों का, खेलकूद की क्रियाओं, सामाजिक अन्तःसम्बन्धों का संचित्र वर्णन करता है।

सामाजिक सम्बन्धों का बहुत सारा ज्ञान अनियंत्रित प्रकार के सहभागिक अथवा असहभौगिक अवलोकन द्वारा प्राप्त किया गया है । इसमें सन्देह नहीं है कि वैज्ञानिक अवलोकन का हमारे अति आकस्मिक अनुभवों के आधार पर ही विकास होता है । इन अनुभवों को जब परिशुद्ध उपकरणों के द्वारा अत्यधिक व्यवस्थित कर दिया जाता है तब ये अनुभव ही वैज्ञानिकता का रूप धारण कर लेते हैं । आज विज्ञान में इतनी वृद्धि हो गयी है फिर भी हमारे देखने तथा सुनने के सामान्य रूपों का स्थान अन्य कोई विधि नहीं ले पायी है ये विधियाँ हमें केवल सामाजिक सम्बन्धों का ही मौलिक ज्ञान प्राप्त नही कराती बल्कि आधुनिक अन्वेषणों के लिए आज भी ये तथ्य संकलन की मूलभूत विधियाँ हैं । गुड्डे एवं हट्ट ने सही लिखा है कि "विज्ञान का शुभारम्भ अवलोकन से होता है और इसे अपनी अन्तिम प्रामाणिकता की जांच हेतु अन्ततः अवलोकन पर ही लौटना पड़ता है ।

प्रत्येक विज्ञान का प्रारम्भ अवलोकन से होता है और अन्त में सत्यापन या प्रामाणिकता की जाँच भी निरीक्षण द्वारा ही होती है । यह प्रविधि अति प्राचीन होने के साथ साथ अत्यधिक आधुनिक शोध विधि है ।

8.2 अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

"अवलोकन" शब्द अंग्रेजी शब्द "Observation" का पर्याय है, जिसका अर्थ होता है देखना,अवलोकन करना, प्रेक्षण करना, या निरीक्षण करना, किन्तु सामाजिक अनुसंधान की एक व्यवस्थित पद्धति के रूप में अवलोकन का अपना एक पृथक ही अर्थ है । ऑक्सफोर्ड कनसाइज शब्दकोष में अवलोकन की परिभाषा इस प्रकार की गई है, ' 'प्रकृति में घटनाएँ जिस रूप में घटती है, उनके कारण तथा प्रभावों तथा उनके पारस्परिक संबंदों को सही रूप में देखने तथा उनको प्रलेखित करने की विधिा को अवलोकन कहते हैं । "

सी. ए. मोजर ने लिखा है कि "सामाजिक विज्ञानों में बहुधा इस संज्ञा का प्रयोग अधिक विस्तृत अर्थो में किया जाता है । सही अर्थो में एक सहभागिक अवलोकन कर्ता उद्‌यम समुदाय के जीवन तथा क्रियाओं में भाग लेता हुआ उन सब बातों का अवलोकन नहीं करता, जो

उसके आस-पास घटती है, अपितु अवलोकित की हुई घटनाओं को वार्तालाप, साक्षात्कार तथा प्रलेखों के अध्ययनों द्वारा पूर्ण बनाता है । विस्तृत अर्थो में अवलोकन की विशिष्टता इस बात से प्रकट होती है कि अपेक्षित सूचनाओं का संग्रहण अन्य व्यक्तियों की कही-सुनी बातों की अपेक्षा, प्रत्यक्ष किया जाता है । व्यक्तियों के व्यवहार के अध्ययन में भी एक व्यक्ति यह देख सकता है कि वह क्या करता है इसकी अपेक्षा की वह जो कुछ करता है उसके सम्बन्ध में वह क्या कहता है ।"

सी.ए. मोजर के कहा है कि "सही अर्थो में कानो तथा वाणी की अपेक्षा आँखों का प्रयोग ही अवलोकन कहलाता है ।"

पी. वी. यंग के अनुसार "घटनाओं को स्वत: घटित होने के समय आँखों द्वारा एक व्यक्ति तथा सुविचारित रूप में अध्ययन करने को अवलोकन कहते हैं ।"

सैलटिज, जाहोदा तथा अन्य के अनुसार "निरीक्षण केवल दैनिक जीवन की ही अत्यधिक व्यापक क्रियाओं में से एक क्रिया-मात्र नहीं है, अपितु यह वैज्ञानिक अन्वेषण का एक प्राथमिक यन्त्र भी है । "

डॉलार्ड के अनुसार "निरीक्षण अनुसंधान के एक प्राथमिक यंत्र के रूप में मानव-बुद्धि के प्रेक्षण तथा अनुभवों के आधार पर ज्ञान प्राप्त करना है । "

ए.वुल्फ ने अवलोकन विधि के सम्बन्ध में लिखा है कि "वस्तुओं तथा घटनाओं उनकी विशेषताओं एवं उनके मूर्त सम्बन्धों को समझने और उनके सम्बन्ध में हमारे मानसिक अनुभवों की प्रत्यक्ष चेतना को जानने की क्रिया को अवलोकन कहते हैं" ।

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि अवलोकन एक ऐसी अनुसंधान प्रविधि है जिसमें ऑखों से ऑकड़े संकलित करके उन्हें लेखबद्ध किया जाता है । यह घटनाओं एवं व्यवहार का स्वाभाविक रूप से अध्ययन है जिसमें अवलोकनकर्ता सुनियोजित एवं व्यवस्थित रूप से घटनाओं एवं व्यवहार का अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अवलोकन करता है । इन परिभाषाओं से अवलोकन को समझ लेने के पश्चात् प्रश्न यह उठता है कि "अवलोकन" विधि में क्या अवलोकित किया जाता है? जिकमण्ड के अनुसार, छ: प्रकार के आयामों का अवलोकन किया जा सकता है जो निम्नलिखित है-

1. शारीरिक क्रियाएँ जैसे काम करने का व टेलीविजन देखने का तरीका ।
2. बातचीत जैसे पति-पत्नि, ससुरालवालों, सहयोगियों व श्रमिकों के साथ वार्तालाप
3. अभिव्यक्तात्मक व्यवहार जैसे बोलने का अन्दाज, चेहरे के हावभाव
4. स्थानिक सम्बन्ध जैसे, एक फैक्ट्री में मजदूरों के बीच की शारीरिक दूरी ।
5. ऐहिक प्रतिदर्श जैसे धार्मिक कृत्य सम्पन्न करने खरीदारी, बातचीत और टीवी. देखने में बिताया गया समय ।
6. मौखिक अभिलेख जैसे, स्मृति पत्र का मसौदा, नारेबाजी ।

इस प्रकार भावनाओं अभिवृतियों प्रेरणाओं, अपेक्षाओं, अन्तर्क्रियाओं तथा अभिरूचियों का अवलोकन नहीं किया जा सकता है ।

8.3 सामान्य देखना बनाम वैज्ञानिक अवलोकन

हम अपने आस पास होने वाली घटनाओं को निरन्तर देखते हैं । सुबह होने पर हम अपनी खिड़की से यह देखते हैं कि सूर्य उदय हुआ है या नहीं, कहीं बाहर वर्षा तो नहीं हो रही है । यदि हम मोटर चला रहे होते हैं तो यह ध्यान रखते हैं कि कोई बालक हमारी गाडी से कुचल न जाए, कहीं हमारी गाडी टकरा न जाए, साथ ही यह ध्यान रखते हैं कि सड़क पर मार्गदर्शक लाल रोशनी है अथवा हरी आदि इस प्रकार अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं । जो यह प्रकट करते हैं कि निन्द्रावस्था को छोड्कर हमारी ऑखें निरन्तर कुछ न कुछ देखने में व्यस्त रहती है । ऑखों का प्रयोग केवल जीवन की दैनिक क्रिया-कलापों को देखने के लिए ही नहीं किया जाता अपितु देखना वैज्ञानिक शोध की एक आधारभूत विधि है ।

सामान्य देखना तथा वैज्ञानिक रूप में देखना दोनों के बीच अन्तर है इसको सैलिज जहोदा डेयुटस्व तथा कुक ने बताया कि सामान्य देखना एक वैज्ञानिक पद्धति के रूप में अवलोकन का रूप धारण कर लेता है जब उसमें निम्नांकित विशेषताएँ जुड जाती है :-

1. जब अवलोकन का एक विशिष्ट उद्देश्य हो ।
2. जब अवलोकन नियोजित तथा सुव्यवस्थित रूप में किया गया हो ।
3. जब अवलोकन की प्रामाणिकता तथा विश्वसनीयता पर आवश्यक नियंत्रण एवं प्रतिबंध लगाया गया हो ।
4. जब अवलोकन के निष्कर्षो को क्रमबद्ध रूप में लिखा गया हो तथा सामान्य उपकल्पना के साथ उसका सह-सम्बन्ध स्थापित किया गया हो ।

पी.वी.यंग ने वैज्ञानिक अवलोकन की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है :-

1. निश्चित उद्देश्य
2. योजना तथा प्रलेखन की व्यवस्था
3. वैज्ञानिक परीक्षण तथा नियंत्रण हेतु उपयोगी ।

सैलिज जहोदा एवं कुक तथा पी.वी.यग के उपरलिखित विवेचन से स्पष्ट है कि वैज्ञानिक अवलोकन एक विशिष्ट ढंग से किया जाता है, उसकी कुछ विशेषताएँ हैं जो उसे सामान्य देखने की प्रक्रिया से भिन्न करती है ।

8.3.1 अवलोकन का एक उद्देश्य होता है - अवलोकन का अर्थ सामान्य अनुभव प्राप्त करने के लिए केवल इधर उधर देखना मात्र नहीं होता है बल्कि वैज्ञानिक अवलोकन सतर्कतापूर्ण पूर्व-निर्धारित उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है । चार्ल्स डार्विन ने एक स्थान पर लिखा था कि यह कितना अजीब है कि किसी भी व्यक्ति को सभी कुछ नहीं देखना चाहिए । अवलोकन तभी लाभप्रद हो सकता है जब अवलोकन किसी दृष्टि बिन्दु के पक्ष या विपक्ष में किया गया हो । पी.वी.यग ने भी कहा कि हम बहुत सारी जटिल घटनाओं को देखते रहते हैं किन्तु हमारा देखना तभी अत्यधिक अर्थपूर्ण होता है जब हमारी आँखें किसी अध्ययन के लिए अपनाई गई विचार दृष्टि तथा प्रारम्भिक उपकल्पन के अनुरूप कार्य करती हों । उदाहरण के लिए यदि हम यह जानते हैं कि सड्कों पर दुर्घटनाएं क्यों होती है? सड्कों पर दुर्घटनाएं तंग अथवा टूटी-फूटी सड्कों के कारण नहीं होती अपितु वाहनों की तेज रफ्तार के कारण होती है ।

यह उपकल्पना हमारे अवलोकनों का उद्देश्य हो सकती है । जिसके अनुसार हम अपना ध्यान इधर उधर की बातों जैसे सड्कों पर से गुजरने वाले विभिन्न प्रकार के वाहनों सड़क की परिपाटियों, सड़क की दिशा, वाहन चालक अथवा उनकी वेशभूषा, वाहन के यात्री वाहन का रंग या नम्बर आदि से हटाकर पूर्णतया वाहन की रफ्तार पर केन्द्रित कर देते हैं, ताकि हम अपनी उपकल्पना, की परीक्षा कर सकें । उपरोक्त उपकल्पना यदि हमारे परीक्षण द्वारा सिद्ध नहीं होती तब हम दूसरी उपकल्पना का निर्माण करेंगे और उसके अनुरूप ही हम सार्थक घटनाओं का अवलोकन करेंगे ।

8.3.2 अवलोकन में एक व्यवस्था होती है - वैज्ञानिक अवलोकन मनमाने ढंग से नहीं किया जाता है बल्कि यह नियोजित व व्यवस्थित ढंग से किया जाता है । अवलोकन करने से पूर्व किन, कब, क्यों, कैसें तथा कहां प्रश्नों के सम्बन्ध में एक पूर्ण विचार कर लिया जाता है ।

8.3.3 अवलोकन चयनात्मक होता है - हमारी आँखों के सामने जो घटनाएँ घटित होती हैं, उनमें से हम देखते समय कुछ चीजों तथा घटनाओं को ही देखते हैं तथा कुछ को अकारण रूचि-अरूचि के आधार पर छोड़ देते हैं, किन्तु वैज्ञानिक अवलोकन में सामान्य देखने की भाँति अवलोकित की जाने वाली घटनाओं का चुनाव रूचि-अरूचि के द्वारा नहीं किया जाता, अपितु शोध के उद्देश्य के आधर पर किया जाता है । गुड्डे एवं हट्ट ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि "हम सभी कुछ चीजों को देखते हैं किन्तु कुछ को नहीं देख पाते । हमारी सतर्कता, प्राथमिकताएँ, हमारे ज्ञान की गहनता तथा विस्तार तथा हमारा लक्ष्य जिसे हम प्राप्त करना चाहते हैं ये सभी हमारे चयनात्मक अवलोकन के रूप का निर्धारण करते हैं बहुत कम छात्र ऐसे हैं जो सामाजिक व्यवहार का अध्ययन सोच समझकर करते हैं । इसे हम एक उदाहरण द्वारा समझ सकते हैं । यदि हम विद्यार्थियों के एक समूह को कोई कारखाना दिखाने ले जाते हैं और उन्हें अवलोकन की एक रिपोर्ट लिखने के लिए कहते है तो उनकी रिपोर्ट से ज्ञात होगा कि अधिकांश विद्यार्थियों ने सामाजिक व्यवहार की सूक्ष्मताओं को देखने की अपेक्षा ऐसी क्रियाओं अथवा प्रक्रियाओं को देखने में अधिक रूचि प्रदर्शित की जो एक समाज विज्ञान के विद्यार्थियों के लिए महत्वहीन थी । जैसे कारखाने में घूमते समय किसी मशीन के चलने का ढंग, उसकी रफ्तार उसमें निकलने की आवाज व प्रदर्शन कक्ष में रखी हुई नारी मॉडल देखने में उन्होनें अधिक समय गुजारा और सामाजिक व्यवहार की बातें नोट करना भूल गये, जैसे कारखानें में शोरगुल पूर्ण वातावरण में कर्मचारी आपस में किस प्रकार एक दूसरे से बातचीत करते हैं, कारखाने में मजदूरों का वितरण आयु-लिंग के आधार पर किस प्रकार हुआ है, आदि । "

8.3.4 अवलोकन का प्रलेखन - "अवलोकन किये जाने के तुरन्त बाद अथवा जितना शीघ्र हो सके उसका प्रलेखन किया जाता है जिससे अवलोकित घटनाओं के किसी भी पक्ष को भुलाया न जा सके, इसके लिए अनुसूची अथवा अन्य साधनों जैसे कैमरा, टेपरिकार्डर आदि का प्रयोग भी इसी कार्य हेतु किया जाता है ।

8.3.5 प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा अवलोकन - वैज्ञानिक अवलोकन एक तकनीकी प्रक्रिया है अत: इसके लिए एक सामाजिक वैज्ञानिक को अपने आप को प्रशिक्षित करना होता है

। उदाहरण के लिए किसी भी यंत्र का प्रयोग व्यक्ति सही ढंग से तभी कर सकता है जब उसने उस यंत्र के प्रयोग का प्रशिक्षण लिया हो ।

8.3.6 अवलोकन के परिणामों का प्रशिक्षण तथा प्रमापीकरण - वैज्ञानिक अवलोकन की एक और विशेषता यह है कि व्यवस्थित अवलोकन द्वारा प्राप्त परिणामों का परीक्षण ही नही अपितु प्रमाणीकरण भी संभव है । यह प्रमाणीकरण अन्य अवलोकन कर्ताओं द्वारा प्राप्त परिणामों से अथवा इसी अध्ययन को दुबारा करके किया जा सकता है ।

8.4 अवलोकन की विशेषताएँ

वैज्ञानिक अवलोकन आधार सामग्री संग्रह की अन्य विधियों से अलग है क्योंकि यह चार प्रकार से दूसरी विधियों से अलग हैं :-

1. अवलोकन हमेशा प्रत्यक्ष होता है जबकि अन्य विधियाँ प्रत्यक्ष या परोक्ष हो सकती है ।
2. फील्ड अवलोकन वास्तविक स्थितियों में होता है ।
3. अवलोकन कम ही संचरित होते हैं ।
4. यह केवल गुणात्मक अध्ययन करता है (मात्रात्मक नहीं) और इसका उद्देश्य व्यक्तियों के अनुभवों और उनका क्या अर्थ लगाते हैं को जानना है (दृश्य घटना विज्ञान) और वे जीवन को किस प्रकार समझते हैं (व्याख्यात्यवाद)

लोफ्टलैण्ड ने कहा है कि यह विधि जीवन शैलियों या उपसंस्कृतियो रिवाजों घटनाओं, मुठभेड़ों, सम्बन्धों, समूहों, संगठनों, आबादियों और भूमिकाओं के अध्ययन के लिए अधिक उपयुक्त है ।

ब्लैक और चैम्पियन ने अवलोकन की निम्नलिखित विशेषताएँ बताई है :-

- व्यवहार का अध्ययन स्वाभाविक स्थितियों में होता है ।
- यह सहभागियों के सामाजिक सम्बन्धों को प्रभावित करने वाली महत्वपूर्ण घटनाओं को समझने योग्य बनाती है ।
- यह स्वयं अवलोकित व्यक्ति के दृष्टिकोण की वास्तविकता का निर्धारण करती है ।
- यह एक अध्ययन की आधार सामग्री की अन्य अध्ययनों की आधार सामग्री में तुलना के द्वारा समाजिक जीवन में पुनरावृतियों और अनियमितताओं की पहचान करती है ।

इसके अतिरिक्त इसकी अन्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :-

8.4.1 मानव इन्द्रियों का प्रयोग - अवलोकन में मानव-इन्द्रियों जैसे आँख, कान व वाणी का प्रयोग कर सकते हैं, परन्तु नेत्रों के प्रयोग पर अधिक बल दिया जाता है । मोजर के अनुसार, "सच्चे अर्थ में अवलोकन में कानों तथा वाणी की अपेक्षा नेत्रों का उपयोग ही विशेष रूप से सम्मिलित है ।"

8.4.2 प्राथमिक सामग्री को प्राप्त करना - अवलोकन की मुख्य विशेषता घटना-स्थल पर जाकर वस्तुस्थिति को देख, प्राथमिक सामग्री का संकलन करना है ।

8.4.3 सूक्ष्मता - निरीक्षण के अन्तर्गत मात्र देखना ही नहीं है वरन् घटना का गहरा एवं सूक्ष्म अध्ययन भी करना है जिससे वह उद्देश्य की प्राप्ति में सफल हो जाता है ।

8.4.4 कार्य कारण सम्बन्ध दर्शाना - अवलोकन का शाब्दिक अर्थ देखना या निरीक्षण करना है, वैज्ञानिक अर्थ में इनका उद्देश्य कारण-परिणाम के सम्बन्ध का पता लगाना है । निरीक्षणकर्ता स्वयं घटना को देखकर आवश्यक कारणों तथा परिणाम के मध्य सम्बन्ध स्थापित करता है ।

8.4.5 व्यावहारिक या आनुभवाश्रित अध्ययन - अवलोकन कल्पना पर आधारित न होकर अनुभव पर आधारित है । आनुभवाश्रित अध्ययन चाहे किसी संस्था का हो या समुदाय का, सामाजिक अनुस्तश्वान में बड़ा उपयोगी है ।

8.4.6 निष्पक्षता - अध्ययनकर्ता स्वयं अपनी आँखों से घटना का निरीक्षण करता है व उसकी भलीभाँति जाँच करता है, अत: उसका निर्णय दूसरों के निर्णय या कहने-सुनने पर आधारित नहीं होता । स्वयं का सूक्ष्म व गहन अध्ययन उसे अभिनति से बचाता है ।

8.5 अवलोकन के प्रकार

गुडे एवं हट्ट ने अवलोकन विधि को दो भागों में बाँटा है-

(1) **सामान्य अवलोकन विधि -** इसमें उन्होंने अनियन्त्रित, सहभागिक तथा असहभागिक विधियों को सम्मिलित किया है ।

(2) **व्यवस्थित अवलोकन विधि -** इसमें उन्होंने नियन्त्रित अवलोकन को दो भागों में बाँटा है । प्रथम, अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण दूसरा अध्ययन की गयी घटना पर नियन्त्रण।

पी.वी. यंग ने भी अवलोकन की विधि को दो भागों में बाँटा है ।

(1) अनियन्त्रित अवलोकन (2) नियन्त्रित अवलोकन

इन्होंने भी सहभागिक व असहभागिक अवलोकन को अनियन्त्रित अवलोकन के अन्तर्गत रखा है ।

सैलिज राइटमेन कुक ने अवलोकन विधि को दो भागों में बाँटा है (1) संरचित, (2) असंरचित लुण्डबर्ग, मोजर, कालटन, मारग्रेट, स्टेसी तथा फोरेक्स एवं रिएचर आदि ने भी अवलोकन के दो प्रकार बताये हैं-

(1) सहभागिक अवलोकन, (2) असहभागिक अवलोकन

रेड्स ने अवलोकन का वर्गीकरण व्यवस्थित / अव्यवस्थित वर्ग में किया है ।

सारान्ताकोज ने छ: प्रकार के अवलोकन बताए हैं :-

- **संरचित और असंरचित अवलोकन -** संरचित अवलोकन संगठित और नियोजित होता है, जिसमें औपचारिक कार्यविधि होती है, जिसमें सुपरिभाषित वर्ग होते हैं और जिसे उच्च कोटि के नियन्त्रण का विभेदीकरण से गुजरना होता है । असंरचित अवलोकन मुक्त रूप से संगठित होता है और प्रक्रिया निश्चित करना अवलोकनकर्त्ता पर छोड़ दिया जाता है ।
- **स्वाभाविक और प्रयोगशाला अवलोकन -** स्वाभाविक अवलोकन वह है जिसमें अवलोकन स्वाभाविक परिवेश में किया जाता है । प्रयोगशाला अवलोकन वह है जिसमें अवलोकन एक प्रयोगशाला में किया जाता है ।

- **स्पष्ट एवं छिपा हुआ अवलोकन -** स्पष्ट अवलोकन वह है जिसमें अनुसंधानकर्ता की पहचान तथा अध्ययन का उद्देश्य दोनों ही सहभागियों को मालूम होते हैं । छिपे अवलोकन में अनुसंधानकर्ता की पहचान व अध्ययन का उद्देश्य दोनों ही अवलोकन किये जा रहे व्यक्तियों से छिपे रहते हैं ।
- **प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अवलोकन -** प्रत्यक्ष अवलोकन में अवलोकनकर्त्ता निष्क्रिय रहता है अर्थात स्थिति को नियन्त्रण में रखने या उसमें छलयोजना करने की कोई चेष्टा नहीं होती । अवलोकनकर्ता जो कुछ हो रहा है उसे अभिलेखित करता है । परोक्ष अवलोकन वह है जिसमें व्यक्तियों का प्रत्यक्ष अवलोकन सम्भव नहीं होता क्योंकि व्यक्ति या तो मर गया है या वह अध्ययन में भाग लेने से मना कर देता है । अवलोकनकर्त्ता भौतिक चिन्हों का अवलोकन करता है जो अध्ययन के अन्तर्गत घटनाओं के पीछे और व्यक्ति के विषय में निष्कर्ष निकालता है जैसे, बम विस्फोट के स्थल का अवलोकन जहाँ मृत, घायल लोग व नष्ट हुए वाहन पड़े हो ।
- **गुप्त एवं प्रकट अवलोकन -** गुप्त अवलोकन में व्यक्तियों को पता नहीं रहता है कि उन्हें अवलोकित किया जा रहा है । इस प्रकार के अवलोकन में प्राय: अनुसंधानकर्ता सभी गतिविधियों में सहभागी होता है अन्यथा उसे अपनी उपस्थिति के विषय में बताना कठिन हो जायेगा । यह अवलोकन असंरचित होते हैं । प्रकट अवलोकन में व्यक्तियों को मालूम रहता है कि उनका अवलोकन किया जा रहा है ।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अवलोकन विधियों का वर्गीकरण विद्‌वानों ने अपने-अपने तरीके से किया है । अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से अवलोकन को प्राय: निम्नांकित भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

8.5.1 अनियन्त्रित अवलोकन

8.5.2 नियन्त्रित अवलोकन

8.5.3 सहभागी अवलोकन

8.5.4 असहमागी अवलोकन

8.5.5 अर्द्ध-सहभागी अवलोकन

8.5.6 सामूहिक अवलोकन

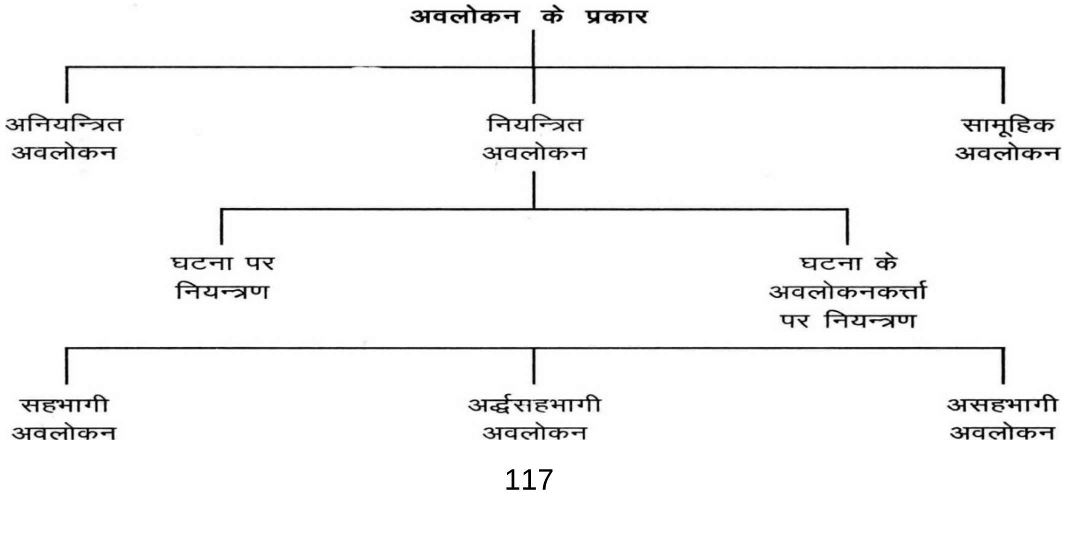

8.5.1 अनियन्त्रित अवलोकन - अनियन्त्रित अवलोकन ऐसे अवलोकन को कहा जाता है जिसमें अवलोकनकर्ता घटनाओं का अवलोकन बिना किसी प्रकार का नियन्त्रण रखे करता है । डी. पी.वी. यंग ने अनियन्त्रित अवलोकन की व्याख्या करते हुए लिखा है कि अनियन्त्रित अवलोकन में हम वास्तविक जीवन की घटनाओं का सतर्कतापूर्वक अध्ययन करते हैं । इस विधि में न तो हम सूक्ष्मता-मापक यन्त्रों का प्रयोग करते हैं और न ही अवलोकित घटना की यथार्थता की परख करने का कोई प्रयास करते हैं । जिन दिशाओं के अन्तर्गत अवलोकन किया जाता है तथा सामग्री का चयन कर उन्हें प्रलेखित किया जाता है, उन सबको अवलोकनकर्त्ता तथा उन कारकों पर छोड़ दिया जाता है जो उन्हें प्रभावित करते हैं । इस प्रकार के अवलोकन में अवलोकनकत्ता तथा अध्ययन की जाने वाली घटना पर किसी प्रकार के नियन्त्रण का प्रयास नहीं किया जाता है।

वास्तव में सामाजिक अनुसन्धान में अनियन्त्रित अवलोकन विधि अत्यधिक प्रयुक्त होती है । गुडे एवं हट्ट ने लिखा है कि "मनुष्य के पास सामाजिक सम्बन्धों के बारे में जो कुछ भी ज्ञान है, उसका अधिकांश भाग अनियन्त्रित अवलोकन द्वारा ही प्राप्त हुआ है, चाहे वह अवलोकन सहभागी हो या असहभागी । "

8.5.1.1 अनियन्त्रित अवलोकन के गुण - यह विधि सामान्यत: अध्ययन घटना का मूल्यवान तथा प्रत्यक्ष ज्ञान उपलब्ध करवाती है । इसमें अवलोकनकर्त्ता घटना की वास्तविक जटिलताओं का यथारूपेण अध्ययन करता है । इस प्रकार का अवलोकन सामाजिक जीवन की दशाओं को प्रभावित करने वाली घटनाओं को अधिक व्यवस्थित रूप में अध्ययन करने का मार्ग प्रशस्त करता है । सामान्यत: इस अवलोकन विधि का प्रयोग किसी शोध योजना के प्रारम्भिक चरण में किया जाता है ।

सैलिए जाहोदा एवं कुक ने इस विधि के दो गुणों का उल्लेख किया है

(1) यह प्राककल्पना की रचना में सहायता करती है ।

(2) इसके द्वारा घटना का गहन अध्ययन सम्भव है ।

पी.वी. यंग ने भी कहा है कि "ऐसी बहुत कम जीवन की घटनाएँ हैं जिनका नियन्त्रित तथा अस्वाभाविक दशाओं में ठीक प्रकार से अध्ययन किया जा सकता है अधिकांश घटनाओं की वास्तविकताओं को परखने के लिए घटनास्थल पर ही उनका अध्ययन सबसे उपयुक्त होता है ।"

8.5.1.2 अनियन्त्रित अवलोकन की सीमाएँ - अनियन्त्रित अवलोकन विधि की अत्यधिक आलोचना की गई है । इसमें अवलोकनकर्ता पर अवलोकन के समय किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं होता है, जिससे उसके व्यक्तिगत विचार आवश्यक रूप से अध्ययन में प्रवेश पा जाते हैं जिसके कारण निष्कर्षो में वैज्ञानिकता नहीं आ पाती । अनियन्त्रित अवलोकन की कमियों पर प्रकाश डालते हुए बरनार्ड ने लिखा है कि "अनियन्त्रित अवलोकन यह आशंका उत्पन्न करता है कि यह सम्भव है कि इस विधि के प्रयोग द्वारा हमें यह अनुभव होने लगे कि जो कुछ वास्तव में हमने देखा है, उससे हम ज्यादा जानते हैं । अध्ययन सामग्री इतनी वास्तविक तथा सजीव होती है कि हमारी भावनाएँ उसके प्रति दृढ़ हो जाती हैं कि कभी-कभी अपने अपार मनोवेग को ही व्यापक ज्ञान का स्थान देने की भूल कर जाते हैं । "

8.5.2 नियन्त्रित अवलोकन - जिस प्रकार सामाजिक विज्ञानों का धीरे-धीरे विकास होता है उसी प्रकार सामाजिक अनुसन्धान की प्रविधियों का भी उत्तरोत्तर विकास होता है । नियन्त्रित अवलोकन अनियन्त्रित अवलोकन के विस्तृत स्वरूप के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है । अनियन्त्रित अवलोकन के दोषों को दूर करने के लिए ही नियन्त्रित अवलोकन विधि का सूत्रपात हुआ है । इस अवलोकन विधि की यह विशेषता है कि इसमें अवलोकनकर्ता पर तो नियन्त्रण रहता ही है साथ ही साथ अवलोकन की जा रही घटना पर भी नियन्त्रण किया जाता है, परन्तु समाजशास्त्र में अवलोकन को प्रायोगिक विधि के रूप में नियन्त्रित न करके अन्य रूप में नियन्त्रित किया जाता है । एक समाजशास्त्री बहुधा एक खगोलशास्त्री, एक ज्वालामुखी विशेषज्ञ अथवा एक तुलनात्मक मनोवैज्ञानिक जैसी स्थिति में होता है जो पशु-जीवन का अध्ययन उनके वास्तविक प्राकृतिक परिवेश से ही करता है । इसी प्रकार एक खगोलशास्त्री भी चाँद-सितारों पर अपने परीक्षण के लिए उन्हें अपनी प्रयोगशाला में लाकर उन पर नियन्त्रण स्थापित नहीं कर सकता, अपितु इन नक्षत्रों को इनकी स्वाभाविक स्थिति में ही अपनी प्रमाणीकृत वैज्ञानिक विधियों तथा उपकरणों की सहायता से अध्ययन करता है । इस प्रकार वह अवलोकित वस्तु पर नियन्त्रण न लगाकर स्वयं अपने पर नियन्त्रण लगाता है । अवलोकन विधि में नियन्त्रण का प्रयोग दो रूपों में किया जाता है।

8.5.2 (1) अवलोकनकर्त्ता पर नियन्त्रण

8.5.2 (2) सामाजिक घटना पर नियन्त्रण

8.5.2 (1) अवलोकनकर्त्ता पर नियन्त्रण - नियन्त्रित अवलोकन में स्वयं अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण होता है । इस प्रकार के नियन्त्रण के लिए कई प्रकार के साधनों का प्रयोग किया जाता है जैसे - अवलोकन की विस्तृत योजना पहले ही बना लेना, अनुसूची व प्रश्नावली का प्रयोग, मानचित्र का प्रयोग, क्षेत्रीय नोट्स एवं अन्य यन्त्र यथा डायरी, फोटोग्राफ, कैमरा, टेपरिकार्डर आदि का प्रयोग आदि ।

8.5.2 (2) सामाजिक घटना पर नियन्त्रण - इस प्रविधि में अवलोकन करने वाली घटना को नियन्त्रित किया जाता है । इसको हम सामाजिक प्रयोग भी कह सकते हैं । जिस प्रकार भौतिक वैज्ञानिक भौतिक दुनिया की परिस्थितियों को प्रयोगशाला नियन्त्रित अवस्थाओं के अन्तर्गत लाकर अपने अध्ययन विषय का अध्ययन करते हैं उसी प्रकार समाजशास्त्री भी सामाजिक घटनाओं को सामाजिक परिस्थितियों के अन्तर्गत नियन्त्रित करने का प्रयत्न करते हैं । इसी प्रविधि द्वारा किए गए कुछ अध्ययनों में थकान का अध्ययन, समय तथा गति का अध्ययन, उत्पादकता का अध्ययन आदि अर्द्ध-सामाजिक विषय विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

इस प्रविधि में दोष यह है कि जब व्यक्तियों को यह मालूम हो जाता है कि उनका अवलोकन किया जा रहा है और उन्हें किसी विशिष्ट दशाओं में रहने के लिए बाध्य किया गया है तब उनके व्यवहार में परिवर्तन आने की सम्भावना रहती है । जिससे स्वाभाविक स्थिति का अध्ययन नहीं हो सकता ।

अधिकांश विद्वानों ने इस विधि की प्रशंसा की है । गुडे एवं हट्ट के अनुसार, सामाजिक अनुसंधान के लिए अनुसन्धान विषय पर नियन्त्रण रखना अति कठिन होता है अत: उसे अपने ऊपर नियन्त्रण अवश्य रखना चाहिए ।

8.5.2 (क) भाग

नियन्त्रित और अनियन्त्रित अवलोकन में अन्तर -

1. नियन्त्रित अवलोकन में उन अवस्थाओं या घटनाओं पर नियन्त्रण किया जाता है जिनका कि हमें अध्ययन करना है । इसके अन्तर्गत हो सकता है कि हम कुछ बालकों को अपनी इच्छानुसार कुछ इच्छित परिस्थितियों में रखकर उनके व्यवहारों का अध्ययन करें अर्थात् बालक और परिस्थिति दोनों पर ही हमारा नियन्त्रण होता है । इसके विपरीत अनियन्त्रित अवलोकन में इनमें से किसी पर भी हमारा नियंत्रण नहीं होता है। इसमें लोग जैसे भी एवं जैसी भी परिस्थिति में हैं उसी रूप में उनका अध्ययन किया जाता है।
2. इस रूप में नियन्त्रित अवलोकन कृत्रिम है जबकि अनियन्त्रित अवलोकन स्वाभाविक है। अनियन्त्रित अवलोकन में परिस्थिति और व्यक्ति दोनों ही अपनी स्वाभाविक स्थिति में होते हैं इसलिए इस प्रकार के निरीक्षण से जीवन की विभिन्न वास्तविक परिस्थितियों में मनुष्य के स्वाभाविक व्यवहारों या क्रियाकलापों का अध्ययन होता है, पर नियंत्रित निरीक्षण में कृत्रिम नियन्त्रण होने के कारण यह स्वाभाविकता नष्ट हो जाने की आशंका सदा ही रहती है ।
3. नियन्त्रित अवलोकन में स्वयं अनुसंधानकर्ता पर भी नियंत्रण रखा जाता है और उसे कुछ निश्चित ढंग व प्रविधियों द्वारा ही निरीक्षण कार्य करने की छूट होती है । इसके विपरीत, अनियन्त्रित अवलोकन में अनुसंधानकर्ता पर कोई भी नियंत्रण नहीं होता और उसे स्वतंत्रतापूर्वक समुदाय में घूमने-फिरने व सूचनाओं को एकत्रित करने की स्वतन्त्रता रहती है ।
4. नियन्त्रित अवलोकन में कुछ साधनों, तथा यन्त्रों को काम में लिया जाता है, जैसे - निरीक्षण, अनुसूची, क्षेत्रीय नोट्स मानचित्र आदि । इसके विपरीत, अनियन्त्रित अवलोकन में किसी भी कृत्रिम साधन का उपयोग नहीं किया जाता ।
5. नियन्त्रित अवलोकन में निरीक्षण की एक योजना पहले से ही बना ली -जाती है और उसी के अनुसार निरीक्षण कार्य को आयोजित किया जाता है । इसके विपरीत अनियन्त्रित अवलोकन में कोई खास योजना बनाने की आवश्यकता नहीं होती । इसमें घटनाओं या परिस्थितियों को उसी रूप में देखना होता है जैसी कि वे स्वाभाविक रूप में हैं ।
6. नियन्त्रित अवलोकन क्योकि कृत्रिम होता है इसलिए इसके द्वारा घटनाओं का गहन और सूक्ष्म अध्ययन संभव नहीं होता, समूह या समुदाय के जीवन से सम्बन्धित गुप्त तथ्यों को भी नहीं खोला जा सकता पर अनियन्त्रित अवलोकन (जिसका कि एक प्रकार

सहभागी अवलोकन है) के द्वारा घटनाओं का गहरा व सूक्ष्म अध्ययन तथा गोपनीय पक्ष का भी ज्ञान सम्भव है ।

7. नियन्त्रित अवलोकन में चूंकि निरीक्षण करने वाले पर नियन्त्रण रखा जाता है । इसलिए निरीक्षण के परिणामों में व्यक्तिगत आदर्श मूल्य मिथ्या-झुकाव पक्षपात आदि की छाप नहीं पड़ने पाती है । परन्तु अनियन्त्रित अवलोकन का निरीक्षणकर्ता अपनी व्यक्तिगत पसन्द पक्षपात, आदर्श आदि के द्वारा निरीक्षण के परिणामों को स्वीकृत कर सकता है ।

8.5.3 सहभागी अवलोकन -सहभागी अवलोकन शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम लिण्डमैन ने 1924 में अपनी पुस्तक "सोशियल डिस्कवरी" में किया वे लिखते हैं कि "सहभागी अवलोकन इस सिद्धान्त पर आधारित है कि किसी भी घटना का विश्लेषण तभी शुद्ध हो सकता है, जबकि वह बाहय तथा आन्तरिक दृष्टिकोण से मिलकर बना हो । इस प्रकार उस व्यक्ति का दृष्टिकोण जिसने घटना में भाग लिया तथा जिसकी इच्छाएँ एवं स्वार्थ उसमें किसी न किसी रूप में निहित थे उस व्यक्ति के दृष्टिकोण से निश्चित ही कहीं अधिक यथार्थ व भिन्न होगा जो सहभागी न होकर केवल ऊपरी दृष्टा या विवेचनकर्ता के रूप में रहा है । "

फोरेक्स तथा रिचर ने लिखा है कि "सहभागिक अवलोकन में शोधकर्ता अध्ययन किए जाने वाले समूह का सदस्य बन जाता है ।"

पी.वी.यंग ने कहा है कि "सामान्यत: अनियन्त्रित अवलोकन का प्रयोग करते हुए, एक सहभागिक अवलोकनकर्ता अध्ययन किए जाने वाले समूह के साथ रहता है अथवा उनके जीवन की गतिविधियों में भाग लेता है।"

गुडे एवं हट्ट के अनुसार - "इस कार्य-प्रणाली का प्रयोग उस समय किया जाता है जबकि अनुसंधानकर्ता अपने को समूह के सदस्य के रूप में स्वीकृत हो जाने योग्य बना लेता है । "

मोजर ने लिखा है कि "निरीक्षणकर्ता अध्ययन किये जाने वाले समूह के प्रतिदिनि के जीवन में बीतने वाली घटनाओं में भाग लेता है । वह यह देखता है कि समुदाय में क्या-क्या होता है, वे किस प्रकार व्यवहार करते हैं तथा वह उनसे यह जानने के लिए बातचीत भी करता है कि घटित घटनाओं के प्रति उनकी क्या प्रतिक्रियाएँ हैं, वे उनका क्या अर्थ लगाते हैं । "

इस विधि में केवल घटनाओं का ही अवलोकन नहीं किया जाता है बल्कि घटनाओं की वास्तविकताओं को जानने के लिए समुदाय से बातचीत की जाती है । इस प्रकार सहभागिक अवलोकन विधि उन औपचारिक साक्षात्कार तथा अवलोकन विधियों का एक सम्मिश्रण हैं ।

शोधकर्ता को समूह का सदस्य बनने के लिए निम्न प्रकार की भूमिका अपनानी चाहिए-

(अ) सहभागिता तथा लगाव की मात्रा - सहभागी दृष्टा का पहला कार्य उद्धत समूह के जीवन में प्रवेश पाना है इसलिए जॉनमेज ने कहा है कि जहाँ दृष्टा के हृदय की धडकने समूह के अन्य व्यक्तियों की धडकनों से मिल जाती है तथा वहां किसी दूरस्थ प्रयोगशाला में आये हुए तटस्थ प्रतिनिधि के समान नहीं रह जाता तो समझना चाहिए कि उसने सहभागी दृष्टा कहलाने का अधिकार प्राप्त कर लिया हैं । "

(ब) सहभागिता का प्रकट रूप - सहभागी दृष्टा को अपनी भूमिका के सम्बन्ध में समाज वैज्ञानिकों में एक मत्यता नहीं है । कुछ वैज्ञानिक इनके पक्ष में कुछ इसके विपक्ष में है । कुछ वैज्ञानिकों ने दोनों स्थितियों की कमियों को ध्यान में रखते हुए आंशिक गुताता की बात कहीं है । ऐसी स्थिति में शोधकर्ता अपना परिचय तो देता है, परन्तु अपने मन्तव्य को नहीं बताता है । इससे यह लाभ होता है ।

(स) सहभागिक निरीक्षण या अवलोकनकर्ता की भूमिका - एक सहभागिक अवलोकनकर्ता में यह गुण होना चाहिए कि वह ऐसी भूमिका निभाये जिससे वह समुदाय के जीवन का सम्पूर्ण तथा पक्षपातरहित चित्रण प्राप्त कर सकें ।

8.5.3 (क) सहभागिक अवलोकन के गुण -

8.5.3.1 सहभागिक व्यवहार का अध्ययन - एक सामाजिक वैज्ञानिक के रूप में हमारा अन्तिम लक्ष्य किसी भी सामाजिक समूह के प्रतिदिन के स्वाभाविक व्यवहार का अध्ययन करना होता है क्योंकि अवलोकनकर्ता जितना अधिक अपने आप को अध्ययन करने वाले समूह में घुलमिल लेता है उतना ही वह उसके स्वाभाविक व्यवहार के अध्ययन के लिए सक्षम बन जाता है ।

8.5.3.2 गहन अनुभवों की प्राप्ति - क्योंकि इसमें अध्ययनकर्ता समूह का सदस्य बनकर अध्ययन करता है, अत: वह समूह के समस्त पक्षों के बारे में सम्पूर्ण एवं छोटी बाते जान लेता है । अत: यह विधि अवलोकनकर्ता को समूह की गहराईयों में जाने का अवसर प्रदान करती है ।

8.5.3.3 विस्तृत सूचनाओं का संकलन - रेमण्ड फर्थ ने सहभागिक प्रेक्षण के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि" किसी भी समूह के सामाजित तथा आर्थिक सम्बन्धों की सरंचना तथा प्रकायों की जटिलताओं का अध्ययन करने का यह एक मात्र तरीका है । " क्योंकि सहभागिक अवलोकनकर्ता की समयावाधि कई महीनों तक चलती है । अन्य विधियों की अपेक्षा इस विधि से प्राप्त तथ्य अधिक सूक्ष्म व विश्वसनीय होते हैं । क्योंकि यह विधि अवलोकनकर्ता को समूह की भावनाओं, विचारों, व्यवहारों की पीछे छुए हुए भावों को जानने के लिए आवश्यक सूक्ष्य दृष्टि प्रदान करती है ।

8.5.3 (ख) सहभागिक अवलोकन के दोष - गुड़े एवं हट्ट ने सहभागिक अवलोकन विधि को शोध्कार्य में प्रयोग किए जाने के प्रति यह चेतावनी दी है कि इस विधि के जहाँ कुछ गुण हैं वहाँ कुछ निम्नलिखित अवगुण भी हैं -

8.5.3 (1) वस्तुनिष्ठता का अभाव - सहभागिक अवलोकनकर्ता अध्ययन समूह का सक्रिय सदस्य बन जाता है इस कारण समूह के प्रति अवलोकनकर्ता की घनिष्ठता, व आत्मीयता की प्रवृति अत्यधिक विकसित हो जाने से अध्ययन समूह के प्रति उसमें लगाव होने की संभावना रहती है । कई बार यह लगाव की भावना उसे समूह की भावनाओं में बह जाने के लिए बाध्य कर देती है और घटनाओं की वास्तविकताओं को जानने तथा इन्हें नोट करने से वंचित कर देती है ।

8.5.3 (2) अनेक परिस्थितियाँ सहभागिता से परे - सहभागी निरीक्षण का दूसरा प्रमुख दोष यह है कि इसका प्रयोग अनेक परिस्थितियों में नहीं किया जा सकता । उदाहरण के लिए - कैदियों का अध्ययन करने के लिए अनुसंधानकर्ता स्वये कैदी, पुलिस के अफसरों का अध्ययन करने के लिए पुलिस अफसर, लोकसभा के सदस्यों का अध्ययन करने के लिए लोकसभा का सदस्य तथा डाकुओं का अध्ययन करने के लिए स्वयं डाकू नहीं बन सकता है । अत: यह केवल सीमित परिस्थितियों के अध्ययन में ही सहायक है ।

8.5.3 (3) तथ्यों की प्रामाणिकता में कमी - इस विधि के प्रयोग द्‌वारा तथ्यों की समरूपता को बनाए रखना कठिन होता है । विभिन्न विषयों पर प्रत्येक व्यक्ति से घर पर जाकर सूचनाओं को एकत्र करना तथा मनोवृतियों का परीक्षण करना इस विधि द्‌वारा संभव नहीं हो पाता । सहभागिक तथा असहभागिक दोनों विधियों में अवलोकन की समस्याएँ ज्यों की त्यों बनी रहती हैं । जिस सीमा तक एक अवलोकनकर्ता सहभागिक बन जाता है उसके अनुभवों में एक विशिष्टता आ जाती है । उनके इन अनुभवों को किसी अन्य शोधकर्ता द्‌वारा दुहराया जाना कठिन होता है ।

8.5.3 (4) अत्यधिक समय तथा क्षमताओं का नष्ट होना - इस विधि में कई बार घटनाओं के लिए लम्बा इंतजार करना पड़ता है । जिसमें अत्याधिक समय के साथ-साथ क्षमताओं का भी व्यय होता हैं । शोधकर्ता इच्छानुसार धटनाओ का परीक्षण नहीं कर सकता है।

8.5.3 (5) अपरिचितता के लाभ का अभाव - कभी-कभी हम एक परिचित की भूमिका में जो सूचनाएँ किन्हीं व्यक्तियों से प्राप्त कर लेते हैं । वे हमें समूह की क्रियाओं में भाग लेने से प्राप्त नहीं हो पाती । समूह मे हमारा पूर्ण एकीकरण हो जाने से हम कभी-कभी कुछ बातों को सामान्य समझकर छोड़ देते हैं इसे वाइटे ने अपरिचितता के लाभ का अभाव कहा है ।

8.5.3 (6) सर्वांग दृष्टिकोण का अभाव - फारेक्स तथा रिचर ने लिखा है कि जब हम किसी समूह के अत्यन्त आत्मीय सदस्य बन जाते हैं तब घटनाओं को सम्पूर्णता में देखने का हमारा परिप्रेक्ष्य प्राय: लुप्त हो जाता है । जैसे-हम पेड़ों को देखने में कभी-कभी सम्पूर्ण जंगल की वास्तविकता से अनभिज्ञ रह जाते हैं । समूह के सदस्यों के सम्बन्ध में तो हम बहुत कुछ जान जाते हैं किन्तु कुछ अन्य सदस्यों के सम्बन्ध में हमारी जानकारी अपूर्ण रह जाती है ।

8.5.4 असहभागी अवलोकन - सहभागी अवलोकन विधि की कमियों को दूर करने में असहभागी अवलोकन विधि सहायता करती है असहभागी अवलोकन अनियन्त्रित अवलोकन का एक प्रमुख स्वरूप है । इस प्रकार के अवलोकन में अवलोकनकर्ता समूह या समुदाय का जिसका कि उसे अध्ययन करना है, अवलोकन एक तटस्थ दृष्टि तथा वैज्ञानिक भावना से करता है । इस प्रकार के अवलोकनकर्ता समुदाय या समूह का न तो अस्थाई सदस्य बनता है और न ही उसकी क्रियाओं में भागीदार बनता है, दूर से ही जो कुछ देखता है उनकी गहराईयों तक पहूँचाने का प्रयास करता है । सामाजिक जीवन को ऐसी अनेक स्थितियाँ हैं, जहां सहभागी अवलोकन करना संभव नहीं होता । वहाँ यह विधि अत्यधिक उपयुक्त होती है । यही नहीं, यह विधि बहुत कुछ रायों के अभिनतिपूर्ण दृष्टि के प्रभाव से रहित तथा वाइटे के अपरिचितता के लाभ से

युक्त होती है । इस प्रकार कई स्थितियों में एक शोधकर्ता में पूर्ण सहभागिक बनना यदि संभव नहीं तो कम से कम दुष्कर अवश्य है ।

फोरेक्स तथा रिचर ने असहभागिक अवलोकन को परिभाषित करते हुए लिखा है, "असहभागिक अवलोकन में अवलोकनकर्ता अपने व्यक्तित्व को बिना छुपाए घटना का अवलोकन करता है । शोधकर्ता अध्यित समूह को शोध के उद्देश्य को बता देता है तथा इस आधार पर समूह में प्रवेश करने का प्रयास किया जाता है । " इस परिभाषा में स्पष्ट है कि अवलोकनकर्ता समूह में उपस्थित तो रहता है परन्तु अध्यित समूह की क्रियाओं तथा व्यवहारों में भाग नहीं लेता तथा वह उनका अवलोकन एक तटस्थ अवलोकनकर्ता अर्थात समूह से एक पृथक व्यक्ति के रूप में करता है ।

असभागिक अवलोकन स्वाभाविक तथा प्रयोगात्मक दोनों स्थितियों में किया जाता है ।

(अ) स्वाभाविक स्थिति में असहभागिक अवलोकन - इस प्रकार के अवलोकन में अवलोकनकर्ता किसी भी समूह के व्यवहार को उसकी स्वाभाविक स्थिति में अध्ययन करता है । वार्नर तथा लन्ट ने ऐसी सारी स्थितियों तथा सामाजिक अन्त:क्रियाओं का उल्लेख किया है जिनका अध्ययन इस प्रविधि द्वारा किया जा सकता है जैसे - जन्म विवाह अथवा मृत्यु संस्कारों के अध्ययन के लिए इस विधि का चुनाव किया जा सकता है ।

इस विधि में सबसे बड़ी कमी यह है कि अवलोकनकर्ता के प्रभाव से अवलोकन प्रभावित हो सकता है जब कभी खेल के मैदान में बालकों के व्यवहार का अध्ययन किया जा रहा हो तब अवलोकनकर्ता की उपस्थिति के कारण बालकों के व्यवहार में परिवर्तन आने की सम्भावना रहती है ।

कभी कभी इस स्थिति से बचने के लिए पर्दे या शीशे का प्रयोग किया जाता है जिससे अध्यित समूह को यह पता न चले कि उनके व्यवहार का अध्ययन किया जा रहा है परन्तु यह प्रयोग केवल सीमित मात्रा में किया जा सकता है ।

(ब) प्रयोगात्मक स्थिति में असहभागिक अवलोकन - इस प्रकार की विधि में समूह का अवलोकन अपेक्षतया अस्वाभाविक स्थिति में करने का प्रयास किया जाता है अर्थात अवलोकन किए जाने वाले समूह के लिए एक विशिष्ट परिवेश का निर्माण किया जाता है जैसे बालकों के किसी समूह का एक प्रयोगशाला में उनका अध्ययन ।

असहभागिक अवलोकन के प्रयोग द्वारा वे लाभ प्राप्त होते हैं जो विशेषत: सहभागिक अवलोकन की सीमाओं अथवा दोनों द्वारा उत्पन्न होते हैं । इस विधि में धन, समय, तथा क्षमता तीनों का व्यय सहभागिक अवलोकन की अपेक्षा कम होता है । साथ ही साथ इस विधि में अवलोकनकर्ता का अध्यित समूह से कोई लगाव न होने के कारण अभिनति पक्षपात अथवा व्यक्ति परकता के अवगुणों से भी बचाव हो जाता है ।

8.5.4 (क) सहभागी और असहभागी अवलोकन में अन्तर

1. सहभागी अवलोकन अनियन्त्रित अवलोकन का वह प्रकार है जिसमें अनुसंधानकर्ता स्वयं उव समुदाय में जाकर बस जाता है । जिसका कि उसे अध्ययन करना है इसके विपरीत असहभागी अवलोकन में अवलोकन- कर्ता उस समुदाय में जाकर बस नहीं

जाता अपितु कभी कभी आवश्यकता- नुसार वहाँ जाकर एक तटस्थ दर्श के रूप में निरीक्षण करता है ।

2. सहभागी अवलोकन में अनुसंधानकर्ता केवल जाकर उस समुदाय में बस जाता है अपितु उसकी एक अभिन्न इकाई भी बन जाता है और उस में समस्त क्रियाकलापों उत्सवों संस्कारों आदि में भी भाग लेता है परन्तु असहभागी अवलोकन में निरीक्षणकर्ता एक बाहर का आदमी ही बना रहता है और समुदाय के क्रियाकलापों में प्रत्यक्षत: भाग नही लेता ।
3. सहभागी अवलोकन में समुदाय के जीवन के गहरे स्तर तक पहुँचकर उसका गहरा आन्तरिक एवं सूक्ष्य अध्ययन करना संभव है । इसके विपरीत असहभागी अवलोकन के द्वारा सामुदायिक जीवन के केवल बाहय पक्षों अर्था ऊपर ही ऊपर दिखाई देने वाली घटनाओं का ही अध्ययन किया जा सकता है ।
4. सहभागी अवलोकन के द्वारा एक समुदाय या समूह के गुप्त पक्षों के सम्बन्ध में भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है जबकि असहभागी अवलोकन में अनुसंधानकर्ता एक अजनबी होने के कारण सभी गुप्त पक्ष उसके लिए गुप्त ही रह जाते हैं ।
5. सहभागी अवलोकन में अनुसंधानकर्ता स्वयं ही विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में बार बार भाग लेता है अत: संकलित सूचनाओं की शुद्धता की परीक्षा करने का अवसर उसे कई बार मिलता है । पर असहभागी अवलोकन में निरीक्षणकर्ता कभी कभी समुदाय में जाता है, अत: सूचनाओं की शुद्धता की परीक्षा करने का अधिक अवसर उसे नहीं मिलता ।
6. सहभागी अवलोकन में चूंकि अनुसंधानकर्ता सामुदायिक जीवन में घुल मिल जाता है और वहां के लोगों को यह जानने नहीं देता कि उसका अध्ययन किया जा रहा है । इसलिए घटनाओं का अवलोकन उनके सरल स्वाभाविक रूप में संभव होता है और किसी भी अपरिचित विपरीत असहभागी अवलोकन में अनुसंधानकर्ता एक अपरिचित व्यक्ति होता है और किसी भी अपरिचित व्यक्ति के सम्मुख कोई भी आदमी अपने सरल स्वाभाविक रूप को प्रकट नहीं करता है । जब लोगों को यह पता हो जाता है कि बाहर का कोई आदमी उनके व्यवहार को देख रहा है तो वह सहज ही उनके व्यवहार क्रियाकलापों में अनेक कृत्रिमताएँ पनप जाती है । अत: असहभागी अवलोकन के द्वारा घटनाओं को उनके स्वाभाविक रूप में देखना कठिन होता है ।
7. अन्त में सहभागी अवलोकन प्रविधि अत्यधिक खर्चीली है और साथ ही अधिक समय खर्च करने वाली भी है । इसकी तुलना में असहभागी अवलोकन में कम समय और कम धन की जरूरत पड़ती है क्योंकि अनुसंधानकर्ता को निरीक्षण के लिए कभी कभी समुदाय में जाना पड़ता है ।

8.5.5 अर्द्धसहभागी अवलोकन - अर्द्धसहभागी अवलोकन भी अनियन्त्रित अवलोकन का ही एक प्रकार है । क्योंकि पूर्णरूप से व्यावहारिक जीवन में सहभागिता अथवा असहभागिता संभव नहीं है इसलिए गुडे एवं हट्ट ने इन दोनों प्रविधियों के समन्वित रूप एवं मध्यवर्ती मार्ग के अनुसरण करने पर बल दिया है जिसे अर्द्ध-सहभागी निरीक्षण कहा जाता है । इस प्रकार के

निरीक्षण में निरीक्षणकर्ता समूह के दैनिक जीवन में भी भाग लेता है और अनेक विशेष परिस्थितियों में वह एक तटस्थ दर्शक बन जाता है । यह प्रविधि अधिक व्यावहारिक एवं सरल मानी जाती है । गुडे एवं हट्ट का कहना हे कि व्यक्ति के लिए सहभागी या असहभागी में से किसी एक रूप को पूर्णत: धारण करने की अपेक्षा इन दोनों कार्यो की साथ-साथ पूर्ति करना ही अधिक सुगम होता है । अनुसन्धानकर्ता के लिए सहभागी तथा असहभागी निरीक्षणकर्ता की भूमिका निभाना अपने उद्देश्य को छिपाने से सरल है । इस प्रकार के अवलोकन में यद्यपि सहभागी एवं असहभागी निरीक्षण के दोष समाप्त हो जाते हैं फिर भी दोनों के गुण पाये जाते हैं । प्रो. विलियम व्हाइट का कहना है कि हमारे समाज में जो जटिलता के कारण पूर्ण एकीकरण का दृष्टिकोण अव्यावहारिक रहता है, एक वर्ग के साथ एकीकरण से अन्य वर्गो के साथ उसका सम्बन्ध समाप्त हो जाता है । इसलिए अद्धतटस्थ नीति बनाए रखना ही अति उत्तम है जैसे सामाजिक उत्सवों में भाग लेना, खेलों में भाग लेना, अन्य कार्यक्रमों में भाग लेना । फिर अपनी स्थिति को इस प्रकार बनाये रखना कि हमारा उद्देश्य अनुसंधान है ।

8.5.6 सामूहिक अवलोकन - सामूहिक अवलोकन नियन्त्रित और अनियन्त्रित विधियों का मिश्रण है । इस प्रविधि में एक ही समस्या या सामाजिक घटना का अवलोकन कई अनुसन्धान कर्त्ताओं द्वारा होता है, जो कि उस सामाजिक घटना के विभिन्न पहलुओं के विशेषज्ञ होते हैं ।

श्री सिन पाओ यांग ने सामूहिक अवलोकन को निम्न ढंग से स्पष्ट किया है- "यह नियन्त्रित व अनियन्त्रित अवलोकन का सम्मिश्रण होता है । इसमें कई व्यक्ति मिलकर सामग्री एकत्रित करते हैं और बाद, मे एक केन्द्रीय व्यक्ति द्वारा उन सबकी देन का संकलन एवं उससे निष्कर्ष निकाला जाता है । "

8.5.7 अवलोकन के प्रकार की सारणी

	अवलोकन के प्रकार	वर्गीकरण के आधार	उप प्रकार
1.	सहभागी / गैर सहभागी	स्थिति का हिस्सा बनकर/अलग रहकर	सहभागी : अवलोकनकर्ता स्वयं को स्थिति मे शामिल कर लेता है तथा अवलोकितों की क्रियाओं मे भाग लेता है ।
2.	व्यवस्थित/ अव्यवस्थित	आधार सामग्री लाभकारी जानकारी देती है	व्यवस्थित : नियमों का पालन होता है और पुनरावृत्ति सम्भव होती है अव्यवस्थित : नियमों का पालन नहीं होता पुनरावृत्ति सम्भव नहीं
3.	सरल / वैज्ञानिक	योजना	सरल : अनियोजित वैज्ञानिक : नियोजित
4.	संरचिता / असंरचित	कार्यविधि व नियन्त्रण	संरचित: औपचरिक कार्यविधि लागू होती है और अत्यधिक नियंत्रण असरचित: मुक्त रूप से संगठित
5.	प्राकृतिक	अवलोकन के लिए	प्राकृतिक. प्राकृतिक परिवेश में अध्ययन

	/प्रयोगशाला	परिवेश	प्रयोगशाला : बनावटी परिवेश में अध्ययन
6.	स्पष्ट / छिपा हुआ	अन्वेषण उद्देश्यों का ज्ञान	स्पष्ट : अन्वेषण के उद्देश्य तथा अन्वेषक की पहचान ज्ञात छिपा हुआ : अध्ययन का उद्देश्य और अन्वेषक की पहचान अज्ञात
7.	प्रत्यक्ष / परोक्ष	घटना या विषय का सीधा अवलोकन या पीछे छूटे चिन्हों का अवलोकन	प्रत्यक्ष: घटना / विषयों का सीधा अवलोकन होता है परोक्ष: घटना के पीछे छूटे हुए चिन्हों का अवलोकन
8.	गुप्त / प्रकट	अवलोकित होने का ज्ञान	गुप्त : व्यक्तियों को पता नहीं रहता कि उन्हें अवलोकित किया जा रहा है । प्रकट : व्यक्तियों को पता रहता है कि उन्हें अवलोकित किया जा रहा है ।

इस प्रविधि का सर्वप्रथम प्रयोग जमेका में वहाँ की स्थानीय दशाओं के अध्ययन के लिए किया गया था । इसके लिए वहाँ प्रत्येक माह में सामुदायिक जीवन के एक विशेष पहलू का अध्ययन किया जाता है । इसके लिए विभिन्न अवलोकनकर्ताओ को जिलों में आकड़े एकत्रित करने के लिए भेजा जाता था, इसके बाद वे सभी आकड़े केन्द्रीय कार्यालय को भेजे जाते थे और वहाँ पर एक मीटिंग होती थी जिसमें इन एकत्रित आँकड़ो के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते थे ।

इस प्रविधि में अधिक धन की आवश्यकता होती है किन्तु इस विधि में अनुसन्धान कार्य बहुत अच्छे ढंग से होता है ।

8.6 अवलोकन प्रविधि के गुण

8.6.1 सूचनादाताओं को अध्ययन करने का प्रत्यक्ष साधन - व्यक्तियों की दैनिक क्रियाओं का अवलोकन समाजशास्त्रियों को इस प्रकार के तथ्य प्रदान करने में सक्षम होता है, जो कि वह किसी अन्य साधन द्वारा कठिनाई से ही विश्वसनीय रूप से प्राप्त कर सकता है । साक्षात्कार में व्यक्ति जो कुछ करते हैं, उसके विषय में वे क्या सोचते हैं, लेकिन जो कुछ वे बताते हैं, बहुत कुछ उनके वास्तविक व्यवहार से भिन्न है क्योंकि व्यक्ति अपने सम्बन्ध में सही सूचनाएँ देने योग्य होते हुए भी देना पसन्द नहीं करते ऐसी घटनाओं के अध्ययन के लिए अवलोकन उपयोगी है ।

8.8.2 स्वाभाविक व्यवहार का वास्तविक अध्ययन - अवलोकन के द्वारा मानवीय व्यवहार का उनकी स्वाभाविक स्थिति में अध्ययन किया जाना सम्मव होता है जो किसी भी अन्य विधि द्वारा नहीं किया जा सकता । सैलिज तथा उसके सहयोगियों ने लिखा है कि "अवलोकन विधियों का सर्वाधिक गुण यही है कि इन विधियों द्वारा घटनाओं का उस समय ही अध्ययन किया जाना सम्भव होता है जब वे घटती हैं । "

8.8.3 सूचनादाताओं की सूचना देने की योग्यता से स्वतन्त्र - जब सूचनादाता सूचना देने के अयोग्य होते हैं अथवा अपर्याप्त सूचना देते हैं या दे पाते हैं ऐसी स्थिति में अवलोकन विधि ही सही सूचनाओं को एकत्रित करने का एकमात्र साधन होती है ।

8.8.4 सूचनादाताओं की सूचना देने से स्वतन्त्र - सामाजिक शोध में कई बार ऐसे अवसर आते हैं जब अध्ययन किए जाने वाले व्यक्ति अथवा समूह सूचना देना नहीं चाहते । कई बार वे सूचना देना तो चाहते हैं किन्तु उनके पास समय नहीं होता अथवा वे साक्षात्कार किया जाना पसन्द नहीं करते या जो उनसे प्रश्न किए जाते हैं उनके पास उनके जवाब नहीं होते ऐसी स्थितियाँ अवलोकन विधि के प्रयोग पर बल देती है ।

8.8.5 सूचनादाताओं की स्मरण शक्ति से स्वतन्त्र - साक्षात्कार द्वारा सूचनाएँ कभी-कभी अविश्वसनीय होती हैं क्योंकि वे सूचनादाताओं की स्मरण शक्ति पर निर्भर करती हैं । कुछ विषयों पर याददास्त की कमजोरी के कारण तथ्य गम्भीर रूप से विकृत हो जाते हैं । अवलोकन विधि में ऐसा नहीं होता है क्योंकि अवलोकन स्वाभाविक घटनाओं की स्थिति में होता है जिसमें भूलने की सम्भावना कम होती है ।

8.8.6 प्रत्युत्तर में त्रुटियों की कम सम्भावना - सूचना देते समय सही उत्तर देने के योग्य होते हुए भी यह नहीं कहा जा सकता वे सही उत्तर देंगे ही । सूचनादाता कई बार प्रश्न को गलत समझने के कारण असत्य उत्तर देता है । ये कमियाँ हमको प्रत्यक्ष अवलोकन में दिखाई नहीं देती हैं, किन्तु साक्षात्कार की भाँति अवलोकन में अभिनति आने की कम सम्भावना रहती है ।

8.8.7. घटनाओं का गहन अध्ययन सम्भव - अवलोकन विधि के द्वारा ही हम जटिल घटनाओं को गहराई से समझ सकते हैं पी.वी. यंग ने लिखा है कि "किसी भी समूह की भावनाओं, विचारों तथा क्रियाओं के पीछे छुपे हुए अर्थ को ढूँढना सम्भव है । यह विधि सामाजिक परिवेश अर्थात समूह तथा उसके सदस्यों के मध्य पाए जाने वाले सम्बन्धों को समझने तथा उनका अर्थ जानने में सहायता करती है ।“

8.7 अवलोकन विधि की सीमाएँ एवं कमियाँ

अवलोकन विधि का सामाजिक अनुसन्धान में अपना पृथक महत्व है, फिर भी इस प्रविधि की कुछ सीमाएँ हैं । अवलोकनकर्ता उन्हीं बातों को याद रख पाता है, जो उसे अच्छी लगती हैं और इस प्रकार कभी-कभी वह अवलोकन की महत्वपूर्ण बातों को नजरअंदाज करके भुला देता है । अवलोकन की ये कठिनाइयाँ अवलोकन की सीमाओं पर प्रकाश डालती हैं ।

अवलोकन की कुछ सीमाओं का उल्लेख पी.वी. यंग ने किया है । उन्होंने लिखा कि "सभी घटनाएँ अवलोकन के लिए समान अवसर प्रदान नहीं करती, सभी घटनाएँ जिनका अवलोकन किया जा सकता है, उस समय नहीं घटती जब अवलोकनकर्ता उपस्थित होता है, सभी घटनाओं का अध्ययन अवलोकन विधियों के द्वारा किया जाना सम्भव नहीं है । "

पी.वी. यंग ने अवलोकन की सीमाओं का निम्नलिखित उल्लेख किया -

8.7.1 सभी घटनाएँ प्रेक्षण के लिए स्वतन्त्र नहीं होती - कुछ इस प्रकार के सामाजिक सम्बन्ध तथा घटनाएँ होती हैं जिनका अवलोकन प्राय: निषिद्ध होता है । यदि किसी प्रेमी-प्रेमिका के व्यक्तित्व एवं व्यावहारिक जीवन का निरीक्षण करना हो तो शायद कोई भी व्यक्ति इसके लिए तैयार नहीं है ।

8.7.2 निश्चित समय व स्थान - कुछ घटनाएँ इस प्रकार की होती हैं जिनका निश्चित समय व स्थान नहीं होता है । उदाहरण - यदि किसी को गृह कलह के कारणों / दशाओं का अध्ययन करना है तो यह निश्चित नहीं है कि कब पति-पत्नी का झगड़ा होगा । हो सकता है जब झगड़ा हो तब अवलोकनकर्ता उपस्थित न हो ।

8.7.3 कुछ घटनाओं का अवलोकन असंभव है - अनेक प्रकार के सामाजिक अनुसन्धान अमूर्त तथ्यों से सम्बन्धित रहते हैं । ये अमूर्त तथ्य व्यक्ति के विचार, उद्वेग, भावनाएँ, प्रवृत्तियाँ आदि हो सकते हैं । इनका अवलोकन करना सम्भव नहीं है ।

8.7.4 पिछली बातों का अवलोकन सम्भव नहीं है - ऐतिहासिक घटनाओं का अध्ययन अवलोकन विधि द्वारा सम्भव नहीं है । बीती हुई बातों व पुरानी घटनाओं के सम्बन्ध में हमें दस्तावेजों के निरीक्षण के साथ-साथ व्यक्तियों के कथनों पर यह जानते हुए भी कि उनमें याददाश्त सम्बन्धी त्रुटि रह सकती है निर्भर रहना पड़ता है ।

इसके अतिरिक्त अवलोकनकर्त्ता के स्वयं के आदर्श, मूल्य, विचारों का उसके अध्ययन में अवश्य प्रभाव पड़ता है क्योंकि तथ्यों व घटनाओं को देखने में व्यक्ति अपना दृष्टिकोण प्रयोग में लाता है जो कि वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए अत्यन्त हानिकारक है । इसके साथ जब व्यक्तियों को यह पता चल जाता है कि उनके व्यवहार का अध्ययन किया जा रहा है तो उनके व्यवहार में कृत्रिमता आ जाती है । अवलोकन का सबसे बड़ा अवगुण यह होता है कि अवलोकन चयनात्मक रूप से किया जाता है । एक घटना जो अवलोकनकर्त्ता के लिए अर्थपूर्ण हो सकती है वह सम्भव है दूसरे अवलोकनकर्त्ता के लिए अर्थपूर्ण न हो । इसका कारण यह है कि अवलोकन करते समय अवलोकनकर्त्ता का पिछला अनुभव तथा अभिज्ञान की शक्ति आदि उसे प्रभावित करती है, वास्तव में अवलोकन हमारी आँखों, कानों अथवा हाथों की प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया नहीं होती अपितु यह प्रतिक्रिया हमारी बहुत सारी पुरानी आदतों, शारीरिक अनुक्रियाओं तथा गतिविधियों पर निर्भर करता है । हम अपने सम्पूर्ण पिछले मानसिक अनुभव के आधार पर प्रेक्षण करते हैं ।

कैनेथ बेली ने अवलोकन विधि की निम्नलिखित कमियाँ बतायी हैं -

क **नियन्त्रण की कमी -** कृत्रिम परिवेश में चरों पर नियन्त्रण सम्भव है लेकिन प्राकृतिक वातावरण में अनुसन्धानकर्ता का चरों पर कोई नियन्त्रण नहीं रहता है जो आधार सामग्री को प्रभावित करते हैं ।

ख **प्रमाणीकरण की कठिनाइयाँ -** अवलोकन के माध्यम से संग्रहित आधार सामग्री का प्रमाणीकर नहीं किया जा सकता । अभिलिखित आधार सामग्री यह तो दर्शाएगी कि लोगों ने एक दूसरे के साथ कैसे अन्तर्क्रिया की लेकिन यह अन्तर्क्रिया कितनी बार की, यह पूर्ण नहीं को जा सकती । साम्प्रदायिक दंगों में लूट, आगजनी व हत्या का अवलोकन तो किया जा सकता है,

किन्तु इसे प्रमाणीकृत नहीं किया जा सकता है कि किस प्रकार लोग इसमें लिप्त थे । भावनात्मक व मानवीयतापरक आधार सामग्री को गहराई से वगीकृत करना कठिन काम है ।

ग **लघु प्रतिदर्श आकार -** अवलोकन अध्ययन में सर्वेक्षण अध्ययन से कहीं छोटे आकार का प्रतिदर्श प्रयोग करते है। दो या अधिक अवलोकनकर्ता एक बड़े प्रतिदर्श का अध्ययन कर सकते हैं किन्तु तब उनके अवलोकनों की तुलना नहीं की जा सकती चूंकि अवलोकन लम्बे समय तक किये जाते हैं । अत: अनेक अवलोकनकर्ताओं को काम पर लगाना खर्चीला होता है ।

घ **प्रवेश प्राप्ति -** कई बार अवलोकनकर्त्ता को अध्ययन हेतु अनुमति प्राप्त करने में कठिनाइ होती है । प्रशासन की अनुमति प्राप्त किए बिना किसी संगठन या संस्था का अवलोकन कठिन होता है इस प्रकार के मामलों का अभिलेखन उसी समय नहीं होता, बल्कि रात को नोट्स तैयार कर सकता है ।

संवेदनशील मामलों के अध्ययन में अज्ञानता की कमी अवलोकनीय अध्ययन में उत्तरदाता के नाम को अज्ञात रखना कठिन होता है । सर्वेक्षण में पति के लिए यह कहना आसान होता है कि पत्नी के साथ उसका कोई झगड़ा नहीं है लेकिन अवलोकन में लम्बे समय तक वह यह बात छिपा नहीं सकता है ।

इन सीमाओं व कमियों के बावजूद भी अवलोकन वैज्ञानिक अन्वेषण की एक महत्वपूर्ण तथा प्रारम्भिक विधि है ।

8.8 अवलोकनकर्त्ता के गुण

एक अच्छे अवलोकनकर्त्ता को कुशलता व प्रशिक्षण के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना है-

(क) **कुशलता -** आधार सामग्री संग्रह के अन्य तरीकों में अन्वेषकों की अपेक्षा अवलोकनकर्त्ता के गुण अधिक महत्वपूर्ण होते हैं । अवलोकन विशेष रूप से सहभागी अवलोकन जानकारी की मात्रा व गुणवत्ता दोनों के लिए अनुसन्धानकर्त्ता के गुणों पर निर्भर करता है । प्राय: अवलोकनकर्त्ता से अकेले ही आधार सामग्री एकत्र करने की अपेक्षा की जाती है । विषय का सही ज्ञान, पूर्व अनुभव, विविध स्थितियों से निपटने की योग्यता, अनुकूलन क्षमता, लचीलापन, दूसरों के साथ मिलकर काम करने की योग्यता, वैचारिक दबावों से मुक्त तथा निष्पक्ष रहना बड़े महत्व के गुण होते हैं ।

(ख) **प्रशिक्षण -** इन कुशलताओं के लिए न केवल अवलोकनकर्त्ताओं के सावधानी पूर्वक चयन की आवश्यकता होती है बल्कि उनके नियोजित प्रशिक्षण की भी आवश्यकता होती है प्रशिक्षण उन प्रमुख मुद्दों पर केन्द्रित होना चाहिए जो अध्ययन में केन्द्रीय महत्व के हो । बेकर, मार्टिन, साराान्ताकोस ने निम्नलिखित बिन्दुओं पर बल दिया है -

- अनुसन्धान विषय की विस्तृत व्याख्या अवलोकनीय लोगों का ज्ञान
- अध्ययन में आने वाली अनपेक्षित समस्याओं की समझ
- अनुकूलन क्षमता और लचीलापन
- एक साथ कई चीजों का अवलोकन करने की क्षमता
- लिप्तता की सीमा निर्धारण

- निरन्तर अवलोकन ताकि घटना के समूचे दौरान घटनाक्रम को अवलोकित किया जा सके ।

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि अवलोकन विधि वैज्ञानिक अध्ययन की एक प्रभावी तकनीक हो सकती है यदि यह व्यक्तिगत रूप से नियोजित व्यवस्थित रूप से अभिलिखित, इसमें बंधन व नियन्त्रण चयनित अवलोकनकर्त्ता कुशल व प्रशिक्षित हो ।

8.9 सारांश

सारांशत: कहा जा सकता है कि अवलोकन सामाजिक व प्राकृतिक विज्ञानों में विशेषत: समाजशास्त्र में अधिक सरल, विश्वसनीय, निरन्तर उपयोगी एवं सत्यापन सुविधा प्रदान करने वाली महत्वपूर्ण प्रविधि है । यह सामाजिक जीवन की अनेक दशाओं को प्रभावित करने वाली घटनाओं का प्रत्यक्ष एवं अनेक प्रकारों से अध्ययन करती है । कुछ सीमाओं व कमियों के होते हुए भी यह सर्वाधिक उपयोगी है । समयानुसार इस प्रविधि का उत्तरोत्तर विकास होता रहा है और होता रहेगा ।

8.10 शब्दावली

तथ्य — एक तथ्य यथार्थता की कोई प्रामाण्य घटना है जिसकी प्रामाणिकता की पुष्टि आनुभाविक आधार पर संभव होती है । विज्ञान के तथ्य प्रेक्षण-परीक्षण की उपज होते हैं

प्रेक्षण — किसी घटना अथवा वस्तु को व्यवस्थित एवं सूक्ष्म रूप से देखने-परखने तथा आलेखन की विधि अवलोकन या प्रेक्षण कहलाती है ।

प्रघटना — कोई भी घटना जिसकी उत्पत्ति एक या अधिक व्यक्तियों के प्रभाव पड़ने स्वरूप हुईहै। वे घटनाएँ जो आनुभाविक हो तथा जिस रूप में समाज में विद्यमान हैं उसी रूप में समझे ।

वस्तुनिष्ठता — वस्तुपरकता घटनाओं के अध्ययन का एक दृष्टिकोण है । जिसके अनुसार एक व्यक्ति घटना से सम्बन्धित तथ्यों को पूर्वाग्रह अथवा भावनाओं की अपेक्षा साक्ष्य एवं तर्क के आधार पर निष्पक्ष, तटस्थ तथा किसी भी प्रकार की पूर्वधारणाओ से मुक्त होकर देखता परखता है ।

वैज्ञानिक विधि — ज्ञान प्राप्ति की एक विधि, एक तरीका जिसमें तथ्यों का संकलन, परीक्षण विश्लेषण कर उनका सत्यापन किया जाता है, वैज्ञानिक विधि कहलाती है । प्राकल्पना निर्माण से लेकर सत्यापित तथ्यों के आधार पर सामान्यीकरण की रचना तक इसमें कई चरणों/प्राककल्पना की रचना, तथ्यों का संकलन, वर्गीकरण, सारणीयन, विश्लेषण और सिद्धान्त रचना का प्रयोग किया जाता है ।

8.11 अभ्यास प्रश्न

अभ्यास प्रश्न 1. निम्न प्रश्नों के उत्तर 500 शब्दों में दीजिए ।

8.12.1 सामाजिक अनुसन्धान की एक वैज्ञानिक प्रविधि के रूप में अवलोकन की व्याख्या कीजिए इसके गुण व दोष बताइये । (इकाई संख्या 8.2,8.3 व 8.6 व 8.7 में उद्दत)

8.12.2 अवलोकन को परिभाषित कीजिए । सहभागी अवलोकन एवं असहभागी अवलोकन में अन्तर स्पष्ट कीजिए। (इकाई संख्या 8.2 व 8.5.उ(क) में उद्दत)

8.12.3 अवलोकन के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कीजिए ।
(इकाई संख्या 8.5 में उद्धृत)

अभ्यास प्रश्न 2. निम्न प्रश्नों के उत्तर 150 शब्दों में दीजिए ।

8.12.2.1 अवलोकन की विशेषताएँ बताइये । (8.4 में उद्धृत)

8.12.2.2 अवलोकन के गुण । (8.8 में उद्धृत)

8.12.2.3 अर्द्धसहभागी अवलोकन (8.7.5 में उद्धृत)

8.12.2.4 सामूहिक अवलोकन (इकाई संख्या 6.5.6 में उद्धृत)

8.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. सी.ए. मोजर : सर्वे मैथड्स इन सोशियल इन्वेस्टिगेशन
2. गुडे एवं हट्ट :मैथड्स इन सोशियल रिसर्च
3. जाहोदा एण्ड अदर्स :रिसर्च मैथड्स इन सोशियल रिसर्च
4. पी.वी. यंग: साइन्टिफिक सोशियल सर्वे एण्ड रिसर्च
5. राम आहूजा :सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान
6. सारान्ताकोज : सोशियल रिसर्च

इकाई-9

प्रश्नावली

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 प्रश्नावली के प्रकार

9.3 प्रश्नावली की विशेषताऐं

9.4 प्रश्नावली की रचना

9.4.1 अध्ययन की समस्या

9.4.2 प्रश्नों की उपयुक्तता, प्रकृति एवं शब्दावली

9.4.3 प्रश्नावली का बाह्य अथवा भौतिक पक्ष

9.5 प्रश्नावली का प्रयोग

9.5.1 पूर्व परीक्षण

9.5.2 सहगामी पत्र

9.5.3 डाक द्वारा प्रेषण

9.5.4 अनुगामी पत्र

9.6 प्रश्नावली की विश्वसनीयता

9.7 प्रश्नावली के गुण

9.8 प्रश्नावली की सीमायें

9.9 सारांश

9.10 शब्दावली

9.11 अभ्यास प्रश्न

9.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

9.0 उद्देश्य

सामाजिक अनुसंधान में प्राथमिक तथ्यों के संकलन हेतु आजकल प्रश्नावली विधि का प्रयोग बढ़ रहा है । सामाजिक सर्वेक्षण में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका को देखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि प्रश्नावली की प्रकृति, इसकी रचना एवं इसके प्रयोग की विधि आदि की पूर्ण विवेचना की जायें ।

- इस अध्याय में हम प्रश्नावली के प्रकार
- प्रश्नावली की निर्माण विधि
- प्रश्नावली के प्रयोग की विधि समझ सकेगें ।

9.1 प्रस्तावना

सामाजिक अनुसंधान में तथ्यों के संकलन की विभिन्न प्राविधियों में प्रश्नावली एक महत्वपूर्ण प्रविधि है । प्रश्नावली ऐसा प्रपत्र है जिसमें विषय से सम्बन्धित प्रश्न क्रमबद्ध रूप में लिखे हुए होते है । अध्ययनकर्ता इस प्रपत्र को डाक अथवा अन्य किसी माध्यम से उत्तरदाताओं के पास भेज देता है । उत्तरदाता इस प्रपत्र को भर कर वापस अध्ययनकर्त्ता को लौटा देता है । जब अध्ययन विषय विस्तृत क्षेत्र में फैले हुए व्यक्तियों से सम्बन्धित होता हैं और जिसमें प्रत्यक्षत: मिलकर सूचनाएँ प्राप्त करना कठिन कार्य होता है तो ऐसी स्थिति में प्रश्नावली विधि का प्रयोग किया जाता है । गुडे एवं हट्ट: मैथडस इन सोशियल रिसर्च, के अनुसार, सामान्यतः: प्रश्नावली शब्द एक ऐसी विधि का संकेत देता हैं जिसमें एक सूची (फार्म) के प्रयोग द्वारा प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किये जाते हैं, जिसे सूचनादाता स्वंय भरता है ।" ई. बोगार्डस: सोशियोलोजी के अनुसार, 'प्रश्नावली विभिन्न व्यक्तियों को उत्तर देने के लिये प्रेषित की गई प्रश्नों की एक सूची है । "

प्रश्नावली डाक से भेजी जाती है इसलिये इसे डाक प्रश्नावली भी कहा जाता हैं इसे भेजने के तीन तरीके है-

- डाक से
- किसी अन्य माध्यम जैसे व्यक्ति से
- अनुसंधानकर्ता स्वयं अध्ययन क्षेत्र में जाकर प्रश्नावली वितरित कर सकता हैं पर उपस्थित होने के बावजूद भी वह उत्तर देने में उत्तरदाता की कोई सहायता नहीं करता हैं ।

प्रश्नावली उन अध्ययनों में काम आती है जिनका विषय क्षेत्र सीमित व स्पष्ट है, उत्तरदाता शिक्षित होते है व साथ ही दूर दूर तक बिखरे हुए होते है ।

9.2 प्रश्नावली के प्रकार

प्रश्नावली की रचना, विषय-वस्तु, प्रश्नों की प्रकृति आदि के आधार पर प्रश्नावली को विभिन्न प्रकारों में विभाजित किया जाता हैं । जी.ए. लुण्डबर्ग: सोशियल रिसर्च, ने मुख्य रूप से प्रश्नावली के दो प्रकार बताए हैं -

1. **तथ्य सम्बन्धी प्रश्नावली -** इस प्रश्नावली का उपयोग किसी समूह की सामाजिक, आर्थिक दशाओं से सम्बन्धित तथ्यों क। संग्रह करने के लिये किया जाता हैं । किसी व्यक्ति की आय, आयु, जाति, शिक्षा, विवाह, व्यवसाय, पारिवारिक रचना आदि के बारे में सूचना संकलित करने के लिये इस प्रकार की प्रश्नावली का प्रयोग किया जाता है । उदाहरण के लिये -

   (अ) विवाह की स्थिति - विवाहित अविवाहित

   (ब) पारिवारिक रचना - एकल / संयुक्त

2. **मत एवं मनोवृति सम्बन्धी प्रश्नावली -** किसी विषय पर सूचनादाता की रूचि, राय, मत, विचारधारा, विश्वास एवं दृष्टिकोण जानना चाहते हैं तो इस प्रकार की प्रश्नावली का प्रयोग होता है ।

(अ) आप दूरदर्शन पर कौनसे कार्यक्रम देखना पसंद करते हैं?

(ब) क्या आप विधवा पुर्नविवाह के पक्ष में हैं?

पी.वी. यंग : साइंटिफिक सोश्यल सर्वे एण्ड रिसर्च, में प्रश्नावली के दो प्रकार बताये है-

1. **संरचित प्रश्नावली -** इसकी रचना अनुसंधान शुरू करने से पूर्व कर ली जाती है । इसमें प्रश्नों की भाषा, शब्द, वाक्य आदि पहले से ही तय कर लिये जाते हैं जिसमें अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान के दौरान परिवर्तन करने की कोई छूट नहीं होती है ।

2. **असंरचित प्रश्नावली -** इसके अन्तर्गत प्रश्नों को पहले से नहीं बनाया जाता है बल्कि मात्र अध्ययन विषय, क्षेत्र आदि के सम्बन्ध में उल्लेख होता है जिनके बारे में सूचनाएँ संकलित करनी होती हैं । इस दृष्टि से असंरचित प्रश्नावली साक्षात्कार-पथ प्रदर्शिका के समान होती है ।

इसके अलावा प्रश्नावली के कुछ और भी प्रकार हैं -

1. **बन्द प्रश्नावली -** इस प्रकार की प्रश्नावली में प्रश्नों के सामने ही कुछ निश्चित वैकल्पिक उत्तर लिखे होते हैं और उत्तरदाता को उनमें से ही उत्तर छाँट कर लिखने होते हैं । उत्तरदाता को स्वतंत्र मत देने की छूट नहीं होती इस प्रश्नावली में उत्तरदाता को ही । नहीं में उत्तर देने होते हैं । कुछ उदाहरण इस प्रकार है -

(अ) क्या आप इन्टरनेट के बारे में जानते हैं? हाँ / नहीं

(ब) आप इन्टरनेट का कितना प्रयोग करते हैं?

नियमित रूप से / कभी-कभी शायद ही कभी / कभी नहीं

2. **खुली (मुक्त) प्रश्नावली -** जिन प्रश्नावलियों में उत्तरदाताओं को अपना उत्तर व्यक्त करने में पूर्ण स्वतन्त्रता हो, उसे खुली प्रश्नावली कहते हैं । वह अपनी स्वेच्छा से उत्तर दे सकता है, उस पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं लगाया जाता । कुछ उदाहरण इस प्रकार है-

(अ) दहेज प्रथा की समाप्ति कैसे की जा सकती है? ....

(ब) भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम के असफल होने के क्या कारण है? ....

3. **चित्रमय प्रश्नावली -** ऐसी प्रश्नावलियों में समस्त या कुछ प्रश्नों के सम्भावित उत्तर चित्रों के रूप में छाप दिये जाते है । सूचनादाता इनमें से किसी एक पर निशान लगाकर अपना उत्तर व्यक्त कर देता हैं । ये प्रश्नावलियाँ बड़ी आकर्षक होती है, तथा अशिक्षित व बच्चे भी अपने उत्तर अंकित कर सकते है ।

4. **मिश्रित प्रश्नावली -** इसमें सभी प्रकार की प्रश्नावलियों को सम्मलित किया जाता है । कुछ सामाजिक तथ्य इतने जटिल होते हैं कि उनके बारे में जानकारी किसी एक निश्चित प्रश्नावली द्वारा नहीं हो सकती, अत: सुविधा व उपयोगिता की दृष्टि से विभिन्न प्रश्नावलियों को सम्मिलित किया जाता है ।

9.3 प्रश्नावली की विशेषताऐ

1. प्रश्नों की संख्या कम होनी चाहिये ।
2. प्रश्न ऐसे होने चाहिये जिनका उत्तर 'हाँ' या 'नहीं' में दिया जा सकता है ।

3. प्रश्न सरल, स्पष्ट और अर्थ वाले होने चाहिये ।
4. व्यक्तिगत पक्षपात की संभावना न हो ऐसे प्रश्नों की रचना होनी चाहिये ।
5. प्रश्न अशिष्ट नहीं होने चाहिये ।
6. प्रश्न इस प्रकार के हो जिनसे इच्छित सूचनायें प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त हो सके ।

9.4 प्रश्नावली की रचना

प्रश्नावली के प्रश्नों का उत्तर सूचनादाता बिना अनुसन्धानकर्ता की सहायता के देता है, इसलिए प्रश्नावली के निर्माण में अधिक सावधानी व सतर्कता की आवश्यकता होती है । वर्गीकरण में सुविधा हो, इस दृष्टि से भी प्रश्नावली को सरल एवं स्पष्ट बनाया जाना चाहिए । प्रश्नावली की रचना में तीन बातों पर विशेष; रूप से ध्यान देना चाहिए (1) अध्ययन की समस्या (2) प्रश्नों की उपयुक्तता, प्रकृति एवं शब्दावली (3) प्रश्नावली की बाह्य आकृति अथवा भौतिक पक्ष । इन्हें इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है -

9.4.1 अध्ययन की समस्या - प्रश्नावली विधि द्वारा अध्ययन करने और प्रश्नों की रचना करने से पूर्व यह आवश्यक है कि (1) समस्या के विभित्र पक्षों का विश्लेषण किया जाय ताकि यह स्पष्ट हो जाय कि समस्या के किन पक्षों से सम्बन्धित सूचनाएं प्राप्त करनी और प्रश्न बनाने हैं । अनुसन्धानकर्ता के पूर्व अनुभवों का प्रश्नों के निर्माण में उपयोग करना चाहिए जिससे कि सभी प्रश्नों के सम्मलित होने की सम्भावना रहे । (3) प्रश्नावली की रचना से पूर्व क्षेत्र तथा सूचनादाता के विस्तार को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए । क्षेत्र बड़ा होने पर निदर्शन की संख्या तय कर लेनी चाहिए ।

9.4.2 प्रश्नों की उपयुक्तता, प्रकृति एवं शब्दावली - प्रश्नावली में किसी भी प्रश्न को सम्मिलित करने से पूर्व यह देखना चाहिए कि वह विषय के बारे में झूमना संकलित करने में कितना सहायक होगा । प्रश्नों के निर्माण के समय निम्न बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए:

(1) **प्रश्नों की स्पष्टता एवं विशिष्टता -** प्रश्नावली को उत्तरदाता को बिना किसी प्रगणक की सहायता के स्वयं ही भरना होता है, अत: प्रश्न स्पष्ट एवं सरल होने चाहिए जिन्हें उत्तरदाता उसी अर्थ में समझे जिस अर्थ में वे पूछे गये हैं । अप्रचलित, भावात्मक, सापेक्षिक, दोषपूर्ण एवं बहु अर्थक शब्दों से बचा जाना चाहिए । यह प्रश्न पूछना, "क्या आप निम्न मध्यम, धनी वर्ग के हैं? " उत्तरदाता के लिये अनेकार्थी होगा । यह पूछना सही होगा कि -आपकी मासिक पारिवारिक आय क्या है?'

(2) **इकाइयों की स्पष्ट परिभाषा -** ऐसा न होने पर प्रत्येक उत्तरदाता इनका भिन्न-भिन्न अर्थ लगा सकता है और उनके उत्तर भी अलग-अलग हो सकते हैं । उदाहरण के लिए, यह प्रश्न करना कि 'आपके परिवार में प्रौढ़ व्यक्ति कितने हैं'' इसके स्थान पर यह प्रश्न किया जाना चाहिए कि 'आपके परिवार में अमुक आयु के व्यक्ति कितने हैं?''

(3) **सही सूचना प्राप्त करने योग्य प्रश्न -** उत्तम प्रश्न वे होते हैं जो सही एवं स्पष्ट सूचना प्राप्त करने में सहायक होते हैं । प्रश्न ऐसे हो जिनसे कि व्यक्ति सही स्थिति को छिपा नहीं सके । जैसे - 'आपने कहीं तक शिक्षा प्राप्त की है?''

(4) **संक्षिप्त एवं श्रेणीबद्ध उत्तर -** प्रश्नावली में प्रश्न इस प्रकार के हो जिनका उत्तर संक्षिप्त एवं श्रेणीबद्ध रूप में प्राप्त किया जा सके । उदाहरण के लिए, व्यक्ति की वैवाहिक स्थिति को ज्ञात करने के लिए यह प्रश्न किया जा सकता है - 'आपकी वैवाहिक स्थिति क्या है?' अविवाहित, विवाहित, परित्यक्त, तलाकशुदा, पुनःविवाहित, विधवा, विधुर आदि और उत्तरदाता को इनमें से किसी एक के आगे निशान लगाना होता है । ऐसे प्रश्न पूरी तरह से श्रेणीबद्ध एवं समावेशी होते हैं जिनके उत्तर में कोई अस्पष्टता नहीं हो सकती ।

(5) **कम प्रश्न -** प्रश्नावली में प्रश्नों की संख्या कम होनी चाहिए । अधिक प्रश्नों वाली प्रश्नावलियों के भरकर लौट आने की सम्भावना कम होती है क्योंकि उन्हें भरने में उत्तरदाता ऊब महसूस करता है । लम्बी प्रश्नावलियों में समय, श्रम एवं धन भी अधिक खर्च होता है ।

(6) **गणना -** प्रश्नावली में इस प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित किया जाना चाहिए जिनकी गणना, वर्गीकरण एवं सारणीयन सरलता से किया जा सके । अधिकांशत: प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' या 'नहीं' में होने पर अध्ययन में वस्तुनिष्ठता बनी रहती है ।

(7) **गुप्त सूचनाऐं -** प्रश्नावली में सूचनादाता से सम्बन्धित गुप्त सूचनाओं को जानने वाले प्रश्न सम्मिलित नहीं किये जाने चाहिए क्योंकि ऐसे प्रश्नों का उत्तर वह नहीं देना चाहेगा । यौन व्यवहार, अपराधी प्रवृत्ति, व्यापारिक रहस्यों आदि से सम्बन्धित प्रश्न इसी प्रकार के होते हैं ।

(8) **अत्यधिक गहन सूचनाएं -** प्रश्नावली में इस प्रकार के प्रश्नों को भी सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए जो व्यक्ति के बारे में गहन सूचना प्राप्त करने वाले हों । इससे व्यक्ति के नाराज होने की सम्भावना रहती है । उदाहरण के लिए, व्यक्ति से उसके पारिवारिक कलह, पत्नी से सम्बन्ध, रिश्वत, आदि के बारे में प्रश्न करने पर उसके क्रोधित होने की सम्भावना रहती है ।

(9) **पथ-प्रदर्शक प्रश्नों से बचाव -** प्रश्नावली में ऐसे प्रश्नों से बचा जाना चाहिए जो स्वयं उत्तरों की ओर संकेत करते हों । जैसे, क्या तुम दहेज प्रथा के पक्ष में हो? क्या तुम अंतरजातीय विवाह के पक्ष में हो?' इन प्रश्नों के उत्तर में पहले से ही सकारात्मक पक्ष मौजूद है जिसका उत्तरदाता कभी-कभी समर्थन कर देता है ।

(10) **कल्पनात्मक प्रश्न -** प्रश्नावली में ऐसे प्रश्नों को सम्मिलित नहीं करना चाहिए, जिनका सम्बन्ध वास्तविकता से न होकर कल्पना से हो । जैसे 'क्या तुम अमेरिका के राष्ट्रपति बनना चाहते हो?

(11) **व्यंग्यात्मक प्रश्नों से बचाव -** प्रश्नावली में इस प्रकार के प्रश्न नहीं होने चाहिए जो सूचनादाता पर व्यंग्य करते हों । ऐसी स्थिति में प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करना सम्भव नहीं रहता ।

प्रश्नों को क्रमबद्ध करना -

(1) प्रश्नों का समूह अध्ययन के अन्तर्गत विषय से सम्बद्ध होना चाहिए । जैसे - वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में कमियाँ" विषय होने पर प्रश्न हो सकता है - अध्यापकों के कक्षाओं में पढ़ाने में नियमितता से आप कितने संतुष्ट हैं? (पूर्ण संतुष्ट संतुष्ट / असंतुष्ट / पूर्णतया असंतुष्ट) उत्तरदाता जब एक बार अध्ययन के उद्देश्यों के विषय में निश्चित हो जाये तब वे अन्य प्रश्नों का जवाब भी देंगे ।

(2) प्रश्न सबसे अधिक परिचित विषय से कम परिचित विषय की ओर अग्रसर होने चाहिये । सबसे पहले उत्तरदाता की स्वयं की भावनाओं के विषय में प्रश्न पूछे जाने चाहिये बाद में अन्य जैसे छात्रों, अध्यापकों, प्रशासकों आदि की भावनाओं के विषय में ।

(3) बहुत सामान्य प्रश्नों को टालें, इस प्रकार के प्रश्न 'आपने कम्प्यूटर पर काम करना कब से शुरू किया?' एक बहुत सामान्य प्रश्न है । उचित प्रश्न होगा, 'जब आप दसवीं कक्षा में थे तब क्या आपको कम्प्यूटर पर काम करने में रूचि थी? "

(4) सरलता से उत्तर दिये जाने योग्य प्रश्नों को पहले रखें - जब प्रारम्भ में ही कठिन प्रश्न पूछे जाते हैं तब उत्तरदाता थकान महसूस करता है, हो सकता है वह गंभीरता से प्रश्नों के उत्तर न दे । आयु, आय, व्यवसाय, जाति, शिक्षा, वैवाहिक स्थिति, निवास, पृष्ठभूमि आदि से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर आसानी से दिये जा सकते है।

(5) संवेदनशील प्रश्नों को मध्य में रखा जाये, राजनैतिक भ्रष्टाचार के प्रति दृष्टिकोण, सरकार की शिक्षा नीति, व्यवसायिक शिक्षा की गुणवत्ता के सुधार के लिये प्रोत्साहन, आरक्षण नीति का पुनरावलोकन आदि से सम्बन्धित प्रश्न मध्य में रखे जाने चाहिये, ताकि उत्तरदाता इन पर अधिक ध्यान देने का इच्छुक हो और ठीक से उत्तर देने में थकान महसूस न करे ।

(6) एक से दिखाई देने वाले प्रश्नों को एक स्थान पर रखने से बचें ।

(7) प्रश्नों को तर्कसंगत क्रम में रखें । जैसे परिवार पर प्रश्न पूछने के बाद देश की ज्वलंत समस्याओं पर, उत्तरदाताओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं पर, राज्य में साम्प्रदायिक दंगों पर, राजनैतिएक अभिजात वर्ग की कार्यप्रणाली आदि, यह प्रश्नों का तर्क संगत क्रम नहीं है।

9.4.3 प्रश्नावली का बाह्य अथवा भौतिक पक्ष - प्रश्नावली की सफलता केवल प्रश्नों की भाषा एवं शब्दों पर ही निर्भर नहीं करती, वरन् उसकी भौतिक बनावट पर भी निर्भर करती है । चूंकि प्रश्नावली भरते समय अनुसन्धानकर्ता उपस्थित नहीं होता है, अत: सूचनादाता का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रश्नावली की भौतिक बनावट जैसे उसका कागज, आकार, छपाई, रूपरंग, लम्बाई, आदि आकर्षक होनी चाहिए । प्रश्नावली के भौतिक पक्ष में निम्न बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए -

(1) **आकार -** सामान्यत: प्रश्नावली बनाने के लिए कागज का आकार 8" x 12" अथवा 9" x 11" - का होना चाहिए जिन्हें आसानी से मोड़कर लम्बे लिफाफों में रखा जा सके, किन्तु वर्तमान में छोटे आकार की प्रश्नावली जो कि पोस्टकार्ड साइज में होती है, का प्रचलन भी बढ़ा

है । कम पृष्ठों की प्रश्नावली होने पर उसका डाक व्यय भी कम लगता है तथा उसके भरकर लौट आने की सम्भावना भी अधिक रहती है ।

(2) **कागज -** प्रश्नावली के लिए प्रयोग किये जाने वाला कागज भी कड़ा, चिकना, मजबूत एवं टिकाऊ होना चाहिए । जहां तक हो कागज रंगीन तथा ध्यान आकर्षित करने वाला होना चाहिए । विभिन्न प्रकार के विषयों से सम्बन्धित प्रश्नावलियों में भित्र-भित्र रंगों के कागज का प्रयोग करने से उनकी छंटाई आसान हो जाती है । कागज पतला होने पर डाक व्यय भी कम लगता है ।

(3) **छपाई -** प्रश्नावलियों को छपाया जा सकता है अथवा साइक्लोस्टाइल कराया जा सकता है । छपाई स्पष्ट व शुद्ध होनी चाहिए ताकि उन्हें आसानी से पढ़ा जा सके । आकर्षक छपाई सूचनादाता पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालती है ।

(4) **प्रश्नावली की लम्बाई -** प्रश्नावली बहुत अधिक लम्बी भी नहीं होनी चाहिए जिसे भरने में उत्तरदाता ऊब और नीरसता महसूस करे । सामान्यत: आधे घण्टे में भरी जाने वाली प्रश्नावलियां उपयुक्त मानी जाती है ।

(5) **हाशिया एवं जगह छोड़ना -** प्रश्नावली का निर्माण करते समय बाई और 3 / 8° एवं दायीं ओर 1 / 5° अथवा 1 / 6° हाशिए का छोड़ना आवश्यक है । इससे प्रश्नावली आकर्षक बन जाती और आवश्यकता पड़ने पर हाशिए में टिप्पणी भी अंकित की जा सकती है, इसमें कागज को पंच कर फाइल करने में भी सुविधा होती है । प्रश्नावली को छापते समय अक्षरों तथा प्रश्नों के बीच पर्याप्त जगह छोड़नी चाहिए ताकि उसे पढ्ने में सुविधा हो तथा मुक्त प्रश्नों के उत्तर लिखे जा सके ।

(6) **प्रसंगों (मदों) की व्यवस्था -** एक विषय से सम्बन्धित सभी प्रश्नों को एक साथ एक क्रम में लिखा जाना चाहिए और यदि प्रश्नों की संख्या अधिक हो तो उन्हें व्यवस्थित करके विभित्र समूहों में बांट देना चाहिए । प्रश्नावली में शीर्षक -उपशीर्षक कॉलम तथा सारणियां, आदि सही क्रम में छपे होने चाहिए ताकि उनके सम्पादन में अधिक समय व धन नहीं लगाना पडे ।

9.5 प्रश्नावली का प्रयोग

प्रश्नावली के प्रयोग की समस्त प्रक्रिया को निम्नलिखित चार भागों में विभाजित किया जा सकता है - (1) पूर्व-परीक्षण, (2) सहगामी-पत्र (3) डाक द्‌वारा प्रेषण, तथा (4) अनुगामी-पत्र ।

9.5.1 पूर्व परीक्षण - प्रश्नावली का निर्माण हो जाने के पश्चात् तथा डाक द्‌वारा इसे भेजने के पूर्व इसकी जाँच एक छोटे निदर्शन को मानकर कर लेनी चाहिए जिससे इसके सम्बन्ध में किसी प्रकार के संदेह की स्थिति न रहे । पूर्व परीक्षण में निम्न बातें ध्यान देने योग्य हैं -

(i) परीक्षण प्रणाली वास्तविक प्रणाली से पूर्णतया मिलती-जुलती होनी चाहिए ।

(ii) इसे समग्र के प्रतिनिधियों अथवा निदर्शन-समूह के सदस्यों को भेजा गया हो ।

(iii) इसे कम संख्या में छपवाया गया हो ।

(iv) निदर्शन-समूह के उत्तरों एवं कठिनाइयों के आधार पर इसमें सुधार किया गया हो ।

(v) यदि इसमें अधिक परिवर्तन किए गए हैं तो इसका पुन: पूर्व-परीक्षण कर लिया गया हो।

पूर्व परीक्षण से ऐसे प्रश्नों की जानकारी हो जायेगी जिनके विषय में उत्तरदाता मैं नहीं जानता" अथवा "पता नहीं" आदि लिखते हैं । उत्तरदाता की योग्यता व उत्सुकता का ज्ञान हो जाता है तथा विश्वसनीयता व प्रमाणिकता में वृद्धि हो जाती है ।

9.5.2 सहगामी-पत्र : प्रत्येक प्रश्नावली के साथ एक छपा हुआ सहगामी-पत्र संलग्न कर देना चाहिए । इस पत्र में आयोजित अध्ययन के उद्देश्य तथा सूचनादाता के सहयोग पर प्रकाश डाला जाना चाहिए । इसमें प्रश्नावली को यथाशीघ्र भरकर लौटा देने का भी अनुरोध किया जाता है । इस पत्र में अध्ययनकर्ता का नाम, उसका विभाग, सम्बन्धित व्यक्तियों का उल्लेख, अध्ययन के उद्देश्य आदि का विवरण देना चाहिये । साथ ही यह भी लिखा जाना चाहिए कि प्राप्त सूचनाएँ गुप्त रखी जायेंगी । इस प्रकार सहगामी पत्र में निम्नलिखित मुख्य बिन्दु होते हैं-

1. अनुसंधानकर्ता व अनुसंधान प्रायोजक की पहचान ।
2. अध्ययन के सामाजिक महत्त्व को समझना ।
3. अध्ययन के मुख्य उद्देश्य बताना ।
4. अज्ञातता तथा गोपनीयता के प्रति आश्वस्त करना ।
5. प्रश्नावली भरने के लिये अनुमानित आवश्यक समय बताना ।

पत्र के अंत में उत्तरदाता के सहयोग के प्रति आभार प्रकट किया जाना चाहिये । पत्र छोटा आकर्षक तथा प्रभावाशाली होना चाहिए । शीघ्र प्रत्युत्तर पाने के उद्देश्य के साथ में जवाबी लिफाफा भी भेजना चाहिए ।

9.5.3 डाक द्वारा प्रेषण : एक क्षेत्र की प्रश्नावलियाँ यथासंभव एक साथ भेजी जानी चाहिए जिससे उस क्षेत्र के सूचनादाताओं के उत्तर साथ-साथ ही प्राप्त हो सकें ।

- सूचनादाताओं के पते पूरे, सही व पिन कोड सहित लिखने चाहियें जिससे प्रश्नावली यथा समय पहुँच सके ।
- प्रश्नावलियाँ ऐसे समय उनके पास पहुँचे, जब वे साप्ताहिक अवकाश आदि के कारण घर पर ही हों । इससे वे उन्हें उसी समय भरकर भेज सकेंगे ।
- अपना पता लिखा व टिकट लगा लिफाफा अवश्य साथ में संलग्न करना चाहिए ।

9.5.4 अनुगामी-पत्र : अनुगामी पत्रों का प्रयोग उत्तरदाता को उत्तर देने के लिए प्रेरित करने के उद्देश्य से किया जाता है । प्राय: ऐसा देखने में आता है कि सामाजिक सर्वेक्षणों में सूचनादाता प्रश्नावलियों को भरकर नहीं लौटाते । अनुगामी पत्र भेजने की सूची इस प्रकार बताई है - (i) प्रथम अनुगामी पत्र 16 दिन पश्चात (ii) द्वितीय अनुगामी-पत्र प्रथम अनुगामी-पत्र के एक सप्ताह बाद (iii) तृतीय अनुगामी-पत्र द्वितीय पत्र के दो सप्ताह बाद भेजना चाहिए । इस पर भी सूचना न मिले तो सूचनादाता का नाम ही सूची से हटा देना चाहिए ।

9.6 प्रश्नावली की विश्वसनीयता

उत्तरदाताओं ने जो कुछ सूचनाएँ दी हैं, वे कहीं तक विश्वसनीय हैं, इस प्रश्न पर भी ध्यान दिया जाना चाहिये । विश्वसनीयता का पता तभी लग जाता है जब अधिकतर प्रश्नों के अर्थ अलग-अलग लगाए गए हों, ऐसी स्थिति में शंका उत्पन्न होती है -

अविश्वसनीयता की समस्या निम्नलिखित कारणों से उत्पन्न होती है -

1. **गलत एवं असंगत प्रश्न -** जब गलत और असंगत प्रश्नों को प्रश्नावली में सम्मिलित किया जाता है तो उनके उत्तर भी उत्तरदाता अपने-अपने दृष्टिकोण से देते हैं । ऐसी स्थिति में उत्तरदाताओं द्वारा दी गई सूचनाएँ विश्वसनीय नहीं हो सकती ।

2. **पक्षपातपूर्ण निदर्शन -** निदर्शन का चयन करते समय यदि सावधानी नहीं रखी गई तो उसके परिणामों में विश्वसनीयता नहीं आ सकती है । यदि सूचनादाताओं के चयन में अनुसंधानकर्ता प्रभावित हुआ है तो निश्चित रूप से प्राप्त सूचना प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो सकती।

3. **नियंत्रित व पक्षपातपूर्ण उत्तर -** प्रश्नावली प्रणाली द्वारा प्राप्त उत्तर बहुधा कम सही होते हैं । कुछ लोग गोपनीय एवं व्यक्तिगत सूचनाएँ देने से संकोच करते हैं और अपने हाथ से लिख कर देने से डरते हैं । अत: उनके उत्तरों में पक्षपात की भावना होती है । उनके उत्तरों में या तो तीव्र आलोचना मिलेगी या पूर्ण सहमति । संतुलित उत्तर प्राप्त नहीं हो पाते ।

4. **विश्वसनीयता की जाँच -** प्रश्नावलियों में दिए गए उत्तरों में विश्वसनीयता प्राय: कम पाई जाती है इसलिए उनकी जांच कर लेनी चाहिए । इसके कतिपय तरीके निम्नवत हैं।

(i) **प्रश्नावलियों को पुन: भेजना -** विश्वसनीयता की परख के लिए प्रश्नावलियों को उत्तरदाताओं के पास पुन: भेज देना चाहिए । यदि उनके उत्तर इस बार भी पहले की तरह मेल खाते हैं तो प्राप्त सूचना पर विश्वास किया जा सकता है । यह जाँच तभी उपयोगी सिद्ध हो सकती है जब उत्तरदाता की सामाजिक, आर्थिक या मानसिक परिस्थिति में कोई परिवर्तन न हुआ हो ।

(ii) **समान वर्गो का अध्ययन -** विश्वसनीयता की जाँच के लिए वही प्रश्नावली अन्य समान वर्गो के पास भेजी जाये । यदि उनसे प्राप्त उत्तरों और पहले वाले वर्गो द्वारा दिए गए उत्तरों में समानता है तो दी गई सूचना पर विश्वास किया जा सकता है । यदि दोनों में काफी अंतर है तो विश्वास नहीं किया जा सकता ।

(iii) **उपनिदर्शन का प्रयोग करना -** यह भी जाँच करने की एक महत्त्वपूर्ण विधि है । प्रमुख निदर्शन में से एक उपनिदर्शन का चयन कर, प्रश्नावली की परख की जा सकती है । उपनिदर्शन से प्राप्त सूचनाओं और प्रमुख निदर्शन से प्राप्त सूचनाओं में यदि काफी अंतर पाया जाता है तो प्रश्नावली अविश्वसनीय समझी जायेगी । यदि दोनों में बहुत कम असमानता है तो इसे विश्वसनीय समझा जाएगा ।

(iv) **अन्य तरीके -** प्रश्न पद्धतियों में साक्षात्कार, अनुसूची एवं प्रत्यक्ष निरीक्षण को सम्मिलित किया जा सकता है । इन विधियों द्वारा प्रश्नों के उत्तर लगभग समान हों तो प्रश्नावली को विश्वसनीय समझा जाएगा, अन्यथा नहीं ।

9.7 प्रश्नावली के गुण

प्राथमिक तथ्यों को प्राप्त करने में प्रश्नावली-प्रणाली बहुत महत्त्वपूर्ण है । इसके गुणों के कारण तथ्यों को आसानी से एकत्र किया जा सकता है । कुछ प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं ।

(i) **विशाल अध्ययन -** इस पद्धति द्वारा विशाल जनसंख्या का अध्ययन सफलतापूर्वक हो सकता है । अन्य प्रणालियों में विशाल समूह के अध्ययन के लिए धन, समय और परिश्रम अधिक खर्च होता है और साथ-साथ सूचनादाताओ के पास भटकना पड़ता है । इन समस्त बुराइयों से यह प्रणाली बची हुई है ।

(ii) **कम व्यय -** इस प्रणाली में क्षेत्रीय-कार्यकर्त्ताओं को नियुक्त करने की आवश्यकता नहीं रहती, अत: व्यय की बचत होती है । केवल छपाई और डाक खर्च ही होता है या फिर एक या दो अन्वेषक प्रश्नावली को हाथ से बांटने के लिये नियुक्त किये जा सकते हैं ।

(iii) **सुविधाजनक -** इस प्रणाली की सबसे बड़ी सुविधा यह है कि सूचनाओं को कम समय के अन्दर ही प्राप्त कर लिया जाता है । प्रश्नावलियों को उत्तरदाताओं के पास भेज दिया जाता है ओर कुछ ही समय के भीतर इनको उत्तरदाता सूचना सहित भेज देते हैं । अनुसूची, साक्षात्कार आदि प्रणालियों में अध्ययनकर्ता स्वयं को व्यक्तिगत रूप से जाना पड़ता है और सूचना एकत्र करनी पड़ती है । अत: इस दुविधा से बचने के लिए प्रश्नावली प्रणाली बड़ी सुविधाजनक है ।

(iv) **पुनरावृत्ति की संभावना -** अलग-अलग समय में प्रश्नावलियों को उत्तरदाताओं के दृष्टिकोण का पता लगाने के लिए भेज दिया जाता है या कुछ ऐसे अनुसंधान होते हैं जिनमें निश्चित समय के बाद कई बार सूचना प्राप्त करनी होती है तो उसके लिए प्रश्नावली पद्धति बड़ी उपयोगी है ।

(v) **स्वतंत्र एवं निष्पक्ष सूचना -** प्रश्नों के उत्तर देने में उत्तरदाताओं को पूर्ण स्वतंत्रता रहती है । इस प्रणाली में अनुसंधानकर्त्ता को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदाता के समक्ष नहीं आना पड़ता । अत: उत्तरदाता बिना संकोच और हिचकिचाहट के स्वतंत्र और निष्पक्ष सूचना देने का प्रयत्न करता है । साक्षात्कारकर्ता की अनुपस्थिति उत्तरदाता को एकान्तता का अहसास देती है ओर इसलिये वे उन सभी घटनाओं का विवरण देते हैं जिन्हें अन्यथा वे प्रकट न कर पाते । अत: इस पद्धति द्वारा प्राप्त सूचना अधिक विश्वसनीय होती है ।

9.8 प्रश्नावली की सीमाऐं

यह प्रणाली भी दोष रहित नहीं है । इसकी अपनी कुछ सीमाएँ हैं, जो इस प्रकार हैं -

(i) **प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन की संभावना नहीं -** चूँकि प्रश्नावली का प्रयोग केवल शिक्षित व्यक्तियों से तथ्य सामग्री प्राप्त करने के लिए किया जाता है, अत: प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शनों का चयन नहीं हो सकता । इस प्रकार यह उत्तरदाताओं की संख्या सीमित करती है । डाक का पता सही न होने के कारण कुछ योग्य उत्तरदाता छूट जाते हैं इसलिये चयनित प्रतिदर्श को कई बार पक्षपातपूर्ण कहा जाता है ।

(ii) **गहन अध्ययन के लिए अनुपयुक्त -** प्रश्नावली द्वारा केवल मोटे-मोटे तथ्यों को एकत्र किया जाता है। प्रश्न की गहराइयों तक नहीं पहुँचा जा सकता । साक्षात्कार द्वारा मनुष्य के मनोभाव, प्रवृतियाँ, आवेगों तथा आंतरिक मूल्यों का गहराई से अध्ययन हो सकता है जबकि प्रश्नावली द्वारा केवल सहायक सूचनाएँ प्राप्त हो सकती हैं । इसमें कोई संदेह नहीं कि सर्वोत्तम प्रश्नावली की अपेक्षा उत्तम साक्षात्कार द्वारा अधिक गहन अध्ययन किया जा सकता है ।

(iii) **पूर्ण सूचना की कम संभावना -** प्रश्नावली के सम्बन्ध में यह कटु अनुभव है कि उत्तरदाता बहुधा अधिक दिलचस्पी नहीं लेते क्योंकि पहली बात तो उनका अनुसंधानकर्ता से प्रत्यक्ष संबंध नहीं होता और दूसरी बात उनका स्वयं का कोई प्रयोजन हल नहीं होता । अत: वे लापरवाही से जवाब देते हैं । आशिक उत्तर विश्लेषण को प्रभावित करते हैं । शब्दों का अर्थ अलग-अलग लगाया जाता है, फलस्वरूप उनके उत्तर विश्वसनीय नहीं होते ।

(iv) **उत्तर प्राप्ति की समस्या -** प्रश्नावलियों के उत्तर न तो समय पर आते हैं और न उनके उत्तर ही सही आते हैं । बार-बार याद दिलाने पर भी वे समय पर नहीं लौटाई जाती, आमतौर पर 30 या 40 प्रतिशत प्रश्नावलियाँ ही वापस आती हैं । अत: कई बार अनुसंधानकर्ता परेशान होकर उनको लिखना ही छोड़ देता है । ऐसी स्थिति में वास्तविकता का पता नहीं लग सकता ।

9.9 सारांश

प्रश्नावली विधि की सहायता से विशाल जनसंख्या, बड़े क्षेत्र में बिखरे हुए व्यक्तियों, व्यवस्थाओं आदि का अल्प समय में तथा सीमित खर्च में अध्ययन किया जा सकता है । इसमें सूचनाएँ प्राप्त करने के लिये कार्यकर्ताओं को नियुक्त करने, उनके आने जाने का खर्च देने, समय नष्ट करने आदि की कोई आवश्यकता नहीं होती । सूचनाओं से उनकी सुविधा एवं इच्छानुसार स्वतंत्र तथा प्रमाणित सूचनाऐं प्राप्त की जा सकती हैं । प्रश्नावली एक स्वयं चालित प्रणाली है । इसे डाक से प्रेषित कर देने के बाद सूचना संकलन का काम स्वत: होने लगता है । इसे से अधिक सुगम व सुविधाजनक विधि और कोई नहीं है । किसी विषय या व्यक्ति पर जनमत, किसी विधेयक पर प्रतिक्रिया, संभावित योजनाओं व सुधारों पर सुझाव अथवा सम्बद्ध व्यक्तियों की कठिनाइयों को ज्ञात करने के लिये इसे उपयोगी माना गया है ।

9.10 शब्दावली

प्रश्नावली	तथ्य संकलन का एक उपकरण जिसका प्रयोग एक निश्चित शोध क्षेत्र में प्रश्नों के एक सामान्य समूह द्वारा उत्तर प्राप्त
समंक / तथ्य	किसी घटना से सम्बन्धित ऐसी व्यवस्थित जानकारी, जिसके आधार पर कोई निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं अथवा सिद्धान्त की जांच की जा सकती है ।
प्रतिदर्शा/ निदर्श	एक वृहत क्षेत्र में से चुनी गई कुछ प्रतिनिधि इकाईयों का समूह ।

9.11 अभ्यास प्रश्न

प्र.1 प्रश्नावली से आप क्या समझते हैं, इसकी विशेषताऐं बताइये ।

उत्तर प्रश्नावली की परिभाषा ।

प्रश्नावली की विशेषताऐं ।

प्र.2 प्रश्नावली की रचना करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखा जाना आवश्यक है?

उत्तर अध्ययन की समस्या ।

प्रश्नों की उपयुक्तता, प्रकृति एवं शब्दावली

प्रश्नावली का बाह्य अथवा भौतिक पक्ष

प्र.3 सामग्री संकलन के एक उपकरण के रूप में प्रश्नावली के महत्त्व तथा सीमाओं को स्पष्ट कीजिये ।

उत्तर प्रश्नावली के गुण ।

प्रश्नावली की सीमाऐं ।

9.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राम आहूजा : सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान,
2. गुडे एवं हाट्ट : मैथड्स इन सोशियल रिसर्च
3. उम्मेदराज नाहर, कीर्ति राजमवाले: सामाजिक अनुसंधान
4. जी.ए. लुण्डबर्ग : सोशियल रिसर्च

इकाई- 10

साक्षात्कार

इकाई की रूपेरखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 साक्षात्कार की विशेषताएँ
10.3 साक्षात्कार के प्रमुख उद्देश्य
10.4 साक्षात्कार की प्रक्रिया एवं तकनीक
10.5 साक्षात्कार का समापन एवं प्रतिवेदन
10.6 सारांश
10.7 शब्दावली
10.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप

- साक्षात्कार का अर्थ व विशेषतायें समझ सकेंगे ।
- साक्षात्कार के उद्देश्य जान सकेंगे ।
- साक्षात्कार के प्रकार तथा प्रविधियों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे ।
- साक्षात्कार की प्रक्रिया के विभिन्न चरणों तथा एक अच्छे साक्षात्कारकर्ता के गुणों के बारे में जानेंगे ।

10.1 प्रस्तावना

साक्षात्कार सामूहिक अनुसंधान तथा सर्वेक्षण के अन्तर्गत तथ्य संकलन की एक प्रमुख प्रविधि है, सम्बन्धित व्यक्तियों की भावनाओं, मनोवृत्तियों, प्रवृत्तियों, उद्‌वेगों, रूझानों आदि का पता लगाने के लिये इस प्रविधि का प्रयोग किया जाता है । इसमें सम्बद्ध व्यक्ति से आमने सामने बैठकर वार्तालाप किया जाता है । साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्ता द्‌वारा अनुसंधान से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करने के विशेष उद्देश्य के साथ चलाया जाने वाला दो व्यक्तियों का वार्तालाप होता है जो अनुसंधान उद्देश्य के वर्णन और कारकों से सम्बन्धित विषय वस्तु पर केन्द्रित रहता है । गुडे एवं हाट्ट ने इसे मूल रूप में 'एक सामाजिक अन्तक्रिया की प्रक्रिया' माना है । अंग्रेजी का 'इन्टरव्यू शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है - 'इन्टर' अर्थात 'भीतर' अथवा 'अन्दर' तथा 'व्यू, अर्थात 'दृष्टि' या देखना' अर्थात 'अन्तर-दृष्टि' । सी.ए. मोजर के अनुसार 'एक सर्वेक्षण साक्षात्कार साक्षात्कारकर्ता तथा उत्तरदाता के मध्य एक वार्तालाप है, जिसका उद्देश्य उत्तरदाता से निश्चित सूचना प्राप्त करना होता है । "पी.वी. यंग के अनुसार' साक्षात्कार एक ऐसी क्रमबद्ध प्रणाली के रूप में माना जा सकता है, जिसके द्‌वारा एक व्यक्ति

दूसरे व्यक्ति के आंतरिक जीवन में थोड़ा बहुत कल्पनात्मक रूप से प्रवेश करता है जो कि उसके लिये सामान्यतया तुलनात्मक रूप से, अपरिचित होता है । " वी.एम. पामर ने साक्षात्कार को एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया माना है ।

- साक्षात्कार के मुख्य तत्व निम्न कहे जा सकते हैं -

  (1) दो या दो से अधिक व्यक्ति (2) आमने सामने के सम्बन्ध (3) विशेष उद्देश्य हेतु तथ्यों का संकलन ।
- जिसमें दो व्यक्तियों के बीच उत्तर-प्रत्युत्तर होते हैं । स्पष्ट है कि साक्षात्कार एक ऐसी व्यवस्थित पद्धति है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी विशिष्ट उद्देश्य को सामने रखकर परस्पर आमने सामने होकर संवाद, वार्तालाप एवं उत्तर प्रतिउत्तर करते हैं । अत: यह एक सामाजिक प्रक्रिया है ।

10.2 साक्षात्कार की विशेषताएँ

ब्लैक एंड चैम्पियन ने साक्षात्कार की निम्नलिखित विशेषताएँ बताई हैं -

1. साक्षात्कारकर्ता और उत्तरदाता के बीच प्रत्यक्ष समपर्क, वार्तालाप और मौखिक संभाषण होता है ।
2. साक्षात्कार कर्ता व उत्तरदाता दोनों समान प्रस्थिति में होते हैं ।
3. साक्षात्कार सूचना संकलन की मौखिक विधि है । इसमें मौखिक रूप से प्रश्न पूछे जाते हैं तथा मौखिक उत्तर मिलते हैं ।
4. जानकारी साक्षात्कारकर्ता द्वारा लिखी जाती है न कि उत्तरदाता द्वारा ।
5. साक्षात्कारकर्ता और उत्तरदाता एक दूसरे के लिये अजनबी होते हैं तथा उनके बीच सम्बन्ध अस्थाई होते है।
6. साक्षात्कार के स्वरूप में लचीलापन होता है ।
7. साक्षात्कार में दोनों पक्षों के बीच आमने सामने के और प्राथमिक सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं ।

10.3 साक्षात्कार के प्रमुख उद्देश्य

सामाजिक अनुसंधान में अनेक उद्देश्यों से साक्षात्कार की सहायता से तथ्यों का संकलन किया जा सकता है। मुख्य उद्देश्य निम्न हैं -

1. **व्यक्तित्व के आतरिक पक्ष की जानकारी प्राप्त करना :** अन्य प्रविधियों की तुलना में साक्षात्कार अधिक अच्छी तरह से वास्तविक व्यक्तित्व का पता लगा सकता है । आमने-सामने के सम्पर्क में बातचीत-विशेषकर यदि वह अनौपचारिक वातावरण में हो रही हो व्यक्तित्व के आंतरिक पक्षों को उद्घाटित करती है ।

2. **मानव व्यक्तित्व को रेखित करना :** व्यक्ति के जीवन इतिहास को जानने के लिये उसके अनुभवों, मनोवृत्तियों, मूल्यों व व्यवहारों के बारे में पूर्ण जानकारी आवश्यक होती है । ऐसे समय में गैर निर्देशित, स्वत: प्रवाहित साक्षात्कार के माध्यम से साक्षात्कारकर्ता न केवल

उसके विगत जीवन के बारे में पर्याप्त जानकारी एकत्रित कर सकता है बल्कि उसके विचारों व व्यवहारों के पीछे छिपी मूल भावनाओं को भी समझ सकता है ।

3. **अवलोकन का अवसर पाना :** साक्षात्कार केवल व्यक्ति क्या कहता है पर ही ध्यान नहीं देता बल्कि कैसे कहता है पर भी ध्यान देता है । कुशल साक्षात्कारकर्त्ता उत्तरदाताओं के हाव-भाव, स्वर के उतार-चढ़ाव आदि के आधार पर यह अनुमान लगाता है कि वह पूरी व सही सूचनायें दे रहा है या कुछ छिपाने का प्रयत्न कर रहा है । उदाहरण के लिए उत्तरदाता अपनी आर्थिक जिस स्तर की बता रहा है उसकी कुछ सीमा तक पुश्टि उसके रहन-सहन, घर के वातावरण, फर्नीचर, सजावट आदि से हो सकती है ।

4. **उपकल्पना का स्त्रोत :** व्यक्तियों का व्यवहार, उनकी मनोवृत्तियाँ टिप्पणियाँ या सूचनायें कई बार साक्षात्कारकर्त्ता को गहन अन्तदृष्टि प्रदान करती हैं । इससे उसे न केवल विषय को अच्छी तरह समझने में मदद मिलती है वरन शोध के लिये नई दिशा या विश्लेषण के नये आयाम भी मिल जाते हैं ।

5. **अन्य प्रविधियों से प्राप्त तथ्यों का परीक्षण करना :** जब अनुसंधान हेतु तथ्य अन्य प्रविधियों जैसे अवलोकन या प्रश्नावली की सहायता से संकलित किये गये हों तब उनकी सत्यता व विश्वसनीयता की जांच का तरीका साक्षात्कार द्वारा उनकी पृष्टि करना है ।

6. **प्रश्नावली का पूर्व परीक्षण**: जब तथ्य संकलन के लिये प्रश्नावली प्रविधि का प्रयोग करना हो तब साक्षात्कार के द्वारा इसका पूर्व परीक्षण किया जाता है ताकि उसकी कमियों को दूर करके उसे अधिक उपयोगी बनाया जा सके ।

10.4 साक्षात्कार की प्रक्रिया एवं तकनीक

साक्षात्कार मौलिक रूप से सामाजिक अन्तःक्रिया की एक प्रक्रिया है । इसलिए इसे योजनाबद्ध रूप से संगठित किया जाना चाहिए । किसी भी साक्षात्कार की प्रक्रिया के मुख्यत: तीन चरण होते हैं: (1) साक्षात्कार के बारे में प्रारम्भिक तैयारी, (2) साक्षात्कार की प्रक्रिया, (3) साक्षात्कार का समापन एवं प्रतिवेदन । हम इन सब पक्षों पर यहीं विचार करेंगे ।

साक्षात्कार की प्रारम्भिक तैयारी : किसी भी साक्षात्कार को प्रारम्भ करने से पूर्व साक्षात्कार के विषय में सूचनादाताओं की प्रकृति, साक्षात्कार के प्रकार, साक्षात्कार का समय, स्थान व उपकरण के बारे में प्रारम्भिक विचार कर लेना चाहिए । साक्षात्कार के प्रारम्भिक चिंतन अथवा तैयारी में निम्न बातों को सम्मिलित किया जाता

1. **समस्या की पूर्ण जानकारी :** विषय के ज्ञान के अभाव में साक्षात्कार कर्ता को लज्जित होना पड़ सकता है और ऐसी स्थिति में अनुसंधान की सफलता भी संदिग्ध हो जाती है । अत: यह आवश्यक है कि साक्षात्कारकर्ता को विषय के बारे में पूर्ण जानकारी हो जिसे वह सूचनादाता के समक्ष स्पष्ट कर सके ।
2. **सूचनादताओं के बारे में जानकारी:** साक्षात्कारकर्ता को सूचनादाताओं की योग्यता, उनके निवास स्थान, व्यवसाय, स्वभाव, अवकाश तथा मिलने के समय, आदि के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए ।

3. **साक्षात्कारदाताओं का चुनाव :** साक्षात्कारदाताओं का चुनाव करते समय हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि हम अनुभवी, अध्ययन समस्या से सम्बन्धित तथा तटस्थ व्यक्तियों का चयन करें जो कि समस्या के बारे में गहन, विस्तृत विश्वसनीय एवं प्रामाणिक सूचनाएं दे सकें । कई बार स्थायी साक्षात्कारदाताओं का एक समूह बना लेना भी लाभदायक होता है ओर यदि साक्षात्कारदाता बहुत अधिक संख्या में हों तो निदर्शन द्वारा उसमें से वांछित मात्रा में सदस्यों का चयन कर लिया जाता है ।
4. **समय एवं स्थान का निर्धारण :** साक्षात्कार के लिए उचित समय एवं स्थान का निर्धारण भी एक आवश्यक चरण है जो कि साक्षात्कारदाता की सलाह से किया जाना । इसके लिए उससे पत्र, टेलीफोन या व्यक्तिगत रूप से सम्पर्क स्थापित कर लिया जाता है । समय ऐसा होना चाहिए जब उसे अवकाश हो और वह किसी कार्य में व्यस्त न हो । सार्वजनिक स्थान एवं व्यवसाय स्थल पर सामान्यत: साक्षात्कार लेना उपयुक्त नहीं रहता है ।
5. **साक्षात्कार यंत्रों की रचना:** साक्षात्कार के संचालन के लिए प्रमुखत: दो यंत्रों की रचना की जाती है । (1) अनुसूची (2) साक्षात्कार प्रदर्शिका (निर्देशिका) की । इनमें से कौनसा यंत्र कहां प्रयोग में लाया जाएगा, यह साक्षात्कार के प्रकार एवं अध्ययन-विषय पर निर्भर करता है । हम संक्षेप में इन दोनों ही यंत्रों का यहां उल्लेख करेंगे ।

   (i) **साक्षात्कार अनुसूची** यह विषय से सम्बन्धित प्रश्नों की एक सूची है जिसे क्रमबद्ध रूप में लिखा जाता है । इन प्रश्नों को साक्षात्कारकर्ता पूछता जाता है ओर रिक्त स्थान में, उनके सामने लिखता जाता है ।

   (ii) **साक्षात्कार निर्देशिका (पथ-प्रदर्शिका) :** साक्षात्कार निर्देशिका एक लिखित प्रपत्र होता है । जिसमें समस्या के विभिन्न पक्षों का विवरण होता है । अनिर्दिष्ट और अनौपचारिक साक्षात्कार में इसका प्रयोग प्रमुख रूप से किया जाता है । साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका में समस्या के विभिन्न पहलुओं की रूपरेखा निहित होती है । साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका की रचना करते समय यह ध्यान रहे कि यह नियंत्रक सिद्ध न हो, वरन केवल मार्गदर्शक ही हो । साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका के निम्नांकित लाभ हैं :

क इससे अध्ययन में एकरूपता आती है ।
ख यह अध्ययन के प्रधान तत्वों की ओर ध्यान आकर्षित करती है ।
ग यह विभिन्न साक्षात्कारों द्वारा तुलनात्मक तथ्यों की प्राप्ति में सहायक है ।
घ साक्षात्कारकर्ता की स्मरणशक्ति पर अनावश्यक भरोसा नहीं करना पड़ता है ।
ङ इससे अध्ययन में क्रमबद्धता आती है ।
च निर्मित उपकल्पना के आधार पर आवश्यक सामग्री का संग्रहण किया जाता है ।
छ विशिष्ट प्रकार के ठोस तथ्यों का संग्रहण किया जाता है ।

साक्षात्कार की प्रक्रिया - साक्षात्कार की प्रारम्भिक तैयारी कर लेने के बाद सूचनादाता से साक्षात्कार है । साक्षात्कार का संचालन करते समय निम्नांकित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए ।

1. **सूचनादाता से सम्पर्क:** साक्षात्कार को प्रारम्भ करने के लिए सबसे पहला कार्य होता है, सूचनादाता से पूर्व निश्चित समय एवं स्थान पर सम्पर्क स्थापित करना ।
2. **उद्देश्य बताना :** साक्षात्कारकर्ता को साक्षात्कारदाता को अपने अध्ययन का उद्देश्य बता देना चाहिए जिसमें अनुसंधान करने वाली संस्था और विषय आदि का भी उल्लेख कर देना चाहिए ताकि वह यह जान जाए कि उसके 'द्वारा दी गई सूचना का कोई दुरूपयोग नहीं होगा ।
3. **सहयोग की प्रार्थना :** अनुसंधान का उद्देश्य बताने के बाद साक्षात्कारकर्ता को अध्ययन में सहयोग देने की प्रार्थना करनी चाहिए । साथ ही उसे यह भी विश्वास दिलाया जाना चाहिए कि उसके द्वारा दी गई सूचनाएं गुप्त रखी जायेगी तथा अध्ययन का उद्देश्य विशुद्ध वैज्ञानिक है ।
4. **वार्तालाप प्रारम्भ करना.** उपर्युक्त बातों के बाद सूचनादाता से विषय से सम्बन्धित वार्तालाप प्रारम्भ किया `जाता है और विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछे जाते हैं । प्रश्न करते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि प्रश्नों का क्रम सही हो, प्रश्न विषय से सम्बन्धित हो उनकी भाषा सरल हो । प्रश्न आदेशात्मक, उपदेशात्मक, निषेधात्मक तथा पथ-प्रदर्शक भी नहीं होने चाहिए ।
5. **सहानुभूति पूर्वक सुनना** साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता को कम बोलना चाहिए और सूचना दाता को धैर्य एवं सहानुभूतिपूर्वक सुनना चाहिए । साक्षात्कार कर्ता को सूचनादाता की बातें में रूचि का संकेत देना चाहिए ।
6. **प्रोत्साहन एवं पुन:स्मृति :** सूचना दाता कई बार सूचना देते-देते भटक जाता है, थक जाता है अथवा उसकी रूचि कम हो जाती है, ऐसी स्थिति में साक्षात्कारकर्ता को चाहिए कि वह ऐसे वाक्यों का प्रयोग करें जिनसे सूचना दाता को हो और उसे सूचना देने हेतु प्रोत्साहन मिले । उदाहरण के रूप में, 'आपने हमें बहुत ही महत्त्वपूर्ण बातें बतायी है, 'आपके अनुभव अनुसंधान के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगें', 'आपकी सूचना ने तो हमें नवीन दिशा प्रदान की है', आदि वाक्यों का प्रयोग किया जाना चाहिए ।
7. **क्रोधित होने से बचाव :** साक्षात्कारकर्ता को चाहिए कि वह सूचनादाता से ऐसे प्रश्न नहीं पूछे जिससे वह क्रोधित हो जाये और साक्षात्कार को बीच में ही समाप्त करना पड़े ।
8. **अन्य सामान्य बातें :** उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त साक्षात्कार के दौरान कुछ अन्य बातों का भी ध्यान रखना चाहिए जो निम्नांकित हैं - (i) प्रत्यक्ष प्रश्न नहीं पूछने चाहिए, (ii) जटिल प्रश्न नहीं पूछने चाहिए (iii) ऐसे प्रश्न भी नहीं किये जाने चाहिए जिनके उत्तर बहुत संक्षिप्त हों (iv) साक्षात्कारकर्ता को सदैव ही विषय पर रहने का प्रयास करना चाहिए । (v) पथ प्रदर्शक प्रश्न नहीं पूछे जाने चाहिए, (vi) आज्ञा देन एवं उपदेश देने वाले प्रश्नों से भी बचना चाहिए (vii) दोहरे प्रश्नों से बचना चाहिए ।

9. **साक्षात्कार का नियंत्रण एवं प्रमाणीकरण:** साक्षात्कार के प्रमाणीकरण के संदर्भ में निम्नांकित बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए

(i) साक्षात्कार में सूचनादाता ने कोई परस्पर विरोधी बातें तो नहीं कहीं, ऐसा होने का यह कारण हो सकता है कि सूचनादता ने किसी बात को ठीक से न समझा हो या गलत समझा हो ।

(ii) कई बार सूचनादाता साक्षात्कारकर्ता को धोखा देने या झूठ बोलने का प्रयास करता है, जब उसे ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिससे यह प्रकट हो कि ये सब बातें साक्षात्कारकर्ता को पहले ही मालुम हैं ।

(iii) सूचनाओं की प्रामाणिकता को ज्ञात करने के लिए खोजपूर्ण प्रश्न तथा प्रति प्रश्न किये जाने चाहिए ।

(iv) साक्षात्कार द्वारा प्राप्त तथ्यों के बीच कार्य-कारण का सम्बन्ध ज्ञात करना चाहिए, अन्य शब्दों में साक्षात्कार में कही गई बातों की तर्क संगतता को देखा जाना चाहिए ।

10.5 साक्षात्कार का समापन एवं प्रतिवेदन

1. **साक्षात्कार की समाप्ति :** जब सूचना दाता सब कुछ कह चुका होता है तो उसकी गति मंद हो जाती है, या वह रूकने लगता है तो समझ लेना चाहिए कि साक्षात्कार समाप्ति की ओर है । सूचनादाता को साक्षात्कार की समाप्ति के बाद प्रसन्न एवं सन्तुष्ट मुद्रा में छोड़ना चाहिए जिससे कि यदि साक्षात्कार को कभी पुन: प्रारम्भ करना पड़े तो वह सूचनादेने के लिए तैयार रहे । साक्षात्कार के अंत में साक्षात्कारकर्ता को सूचनादाता के प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए तथा उसके द्वारा दिए गए सहयोग के लिए धन्यवाद देना चाहिए और भविष्य में भी सहयोग की अपेक्षा के साथ विदा लेनी चाहिए ।
2. **साक्षात्कार को लिखना :** साक्षात्कार की समाप्ति के बाद एक महत्वपूर्ण कार्य है - साक्षात्कार को लिखना । संरचित साक्षात्कार में तो अनुसूची में सूचनाओं को हाथों-हाथ लिख लिया जाता है, किन्तु असरचित अनिर्देशित तथा अनौपचारिक साक्षात्कारों में सूचनाओं का लिखना एक कठिन कार्य है क्योंकि जो सूचनादाता मुक्त रूप से सूचना दे रहा हो तो सम्पूर्ण वार्तालाप को लिखने में क्रम टूटने का डर रहता है । ऐसी स्थिति में या तो साक्षात्कारकर्ता की केवल कुछ मोटी-मोटी बातों को नोट कर लेना चाहिए अथवा संक्षिप्त शब्दों या संकेत लिपि का या टेपरिकार्डर का प्रयोग करना चाहिए ।
3. **साक्षात्कार प्रतिवेदन :** साक्षात्कार की समाप्ति के बाद एक और महत्त्वपूर्ण कार्य है - साक्षात्कार प्रतिवेदन तैयार करना । प्रतिवेदन तैयार करने के लिए साक्षात्कारकर्ता द्वारा लिए गए नोट्स टेपरिकार्डर आदि की सहायता ली जानी चाहिए । इस रिपोर्ट के आधार पर ही संकलित की गई सूचनाओं का निर्वचन व वर्गीकरण किया जाता एवं निष्कर्ष निकाले जाते हैं । प्रतिवेदन लिखते समय यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि वह सही और पक्षपात रहित हो ।

10.6 सारांश

निःसंदेह एक अच्छे साक्षात्कार की सफलता के लिये साक्षात्कारकर्त्ता से कतिपय गुणों का होना आवश्यक है । इसमें कुशलता, वाकपटुता, ईमानदारी, निष्पक्षता, विनय तथा वैज्ञानिक निष्ठा होनी चाहिये । यह एक 'आदर्श' है और बहुत कम साक्षात्कारकर्त्ता इसे कसौटी पर खरे उतरते हैं । उनका व्यक्तित्व, भाषा, समस्या आदि प्रभावपूर्ण होने पर ही सूचनादाता कुछ कहने के लिये तैयार होता है । सामाजिक अनुसंधान में साक्षात्कार का अत्यधिक महत्व है । साक्षात्कार अमूर्त तथा अदृश्य घटनाओं, ऐतिहासिक परिस्थितियों तथा मनोवैज्ञानिक (प्रभावों का अध्ययन करने की उपयोगी प्रविधि है । इसमें शोध सम्बन्धित अनेक नैतिक समस्याओं का समाधान हो जाता है । व्यवस्थित साक्षात्कारों को दोहरा कर घटना की वास्तविकता के बारे में पूछकर प्राप्त सूचनाओं का सत्यापन या जाँच भी हो सकती है । साक्षात्कार में शोधक के अपने मूल्य, मान्यताऐं, अवधारणायें आदि प्रभाव डालते हैं । साक्षात्कार की सफलता अच्छे सूचनादाता पर निर्भर रहती है । साक्षात्कार एक उपयोगी प्रविधि होते हुए भी उसे सफलतापूर्व प्रयोग करना एक जटिल समस्या भी है ।

10.7 शब्दावली

साक्षात्कार विधि :	एक व्यक्ति अथवा समूह के साथ विशिष्ट प्रयोजन से आयोजित औपचारिक वार्तालाप की प्रक्रिया ।
निदानात्मक साक्षात्कार :	जब साक्षात्कार का मुख्य उद्देश्य किसी घटना अथवा समस्या के कारणों को जानना होता है
केन्द्रित साक्षात्कार :	संरचित एवं असरचित साक्षात्कार का एक समन्वित रूप जिसमें सूचनादाता के ध्यान को उसके जीवन में घटित किसी विशिष्ट घटना अथवा उसके कुछ पक्षों पर केन्द्रित कर साक्षात्कार लिया जाता है ।
समूह साक्षात्कार :	साक्षात्कार का एक ऐसा रूप जिसमें सूचनादाताओं का एक समूह साक्षात्कारकर्ता के प्रश्नों का उत्तर देता है ।
व्यक्तिगत साक्षात्कार :	जब साक्षात्कार की स्थिति में एक साक्षात्कारकर्त्ता और एक ही सूचनादाता होता है ।

10.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सी.ए. मोजर : सर्वे मैथड्स इन सोशियल इन्वेस्टिगेशन
2. पी.वी.यग : साइन्टिफिक सोशियल सर्वे एण्ड रिसर्च
3. वी.एम. पामर : फिल्ड स्टडीज इन सोशियोलोजी
4. जे.ए. ब्लैक डी.जे. चैम्पियन : मेथड्स एण्ड इश्यूज इन सोशियल रिसर्च
5. राम आहूजा : सामाजिक सर्वेक्षण अनुसंधान ।

इकाई-11

अनुसूची

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 अनुसूचियों के प्रकार

11.3 अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया

11.3.1 अनुसूची का भौतिक या बाहय पक्ष

11.3.2 अनुसूची की अन्तर वस्तु

11.3.3 प्रश्नों का निर्माण

11.3.4 प्रश्नों की विशेषताऐं

11.3.5 अनुसूची द्वारा सूचना प्राप्ति

11.3.6 अनुसूचियों का संपादन

11.4 अनुसूची के गुण

11.5 अनुसूची के दोष या सीमाऐं

11.6 प्रश्नावली और अनुसूची में भेद

11.7 सारांश

11.8 शब्दावली

11.9 अभ्यास प्रश्न

11.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के माध्यम आप

- अनुसूची का अर्थ व विशेषताएँ समझ सकेंगे ।
- अनुसूची के प्रकार जान सकेंगे ।
- अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया तथा सूचना संकलन की विधि के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे ।
- प्रश्नावली व अनुसूची में अंतर कर सकेंगे ।

11.1 प्रस्तावना

अनुसूची तथा प्रश्नवाली की मिलती जुलती प्रकृति होती है । शोधकर्ता प्रतेक घटना के घटित होते समय स्वयं उपस्थित नहीं रह सकता । उस समय यह आवश्यक है कि वह सम्बन्धित व्यक्तियों से मिल कर सूचना एवं तथ्य एकत्रित करे । यह कार्य अनुसूची के द्वारा किया जाता है । यद्यपि अनुसूची व प्रश्नावली एक ही प्रकार के शोध उपकरण प्रतीत होते हैं,

किन्तु शोधकर्त्ता के लिये दोनों के विशिष्ट अर्थ है । तथ्यों के संकलन की विभित्र प्रविधियों में अनुसूची सबसे अधिक प्रचलित व उपयोगी प्रविधि मानी जाती है । अनुसूची प्राथमिक तथ्य संकलन करने की एक ऐसी विधि है, जिसमें अवलोकन, साक्षात्कार तथा प्रश्नावली तीनों की ही विशेषताओं राव गुणों का समन्वय पाया जाता है । अनुसूची विधि के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता अध्ययन विषय से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन आरम्भ करने से पूर्व ही प्रश्नों का निर्माण कर लेता है । वह उन सभी प्रश्नों को एक निश्चित क्रम में उत्तरदाताओं से पूछता है और तथ्यों का संकलन करता है । अनुसूची के माध्यम से वैयक्तिक मान्यताओं, सामाजिक अभिवृत्तियों, विश्वासों, विचारों, व्यवहार प्रतिमानों, समूह व्यवहारों, आदतों तथा जनगणना आदि से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन किया जाता है । यही कारण है कि वर्तमान में सामाजिक सर्वेक्षणों एवं अनुसंधानों में अनुसूची का प्रयोग बढ़ता जा रहा है । गुडे एवं हाट मैथड्स इन सोशियल रिसर्च, के अनुसार, 'अनुसूची उन प्रश्नों का समुच्चय है, जिन्हें साक्षात्कारकर्ता द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति के आमने सामने की स्थिति में पूछे और भरे जाते हैं ।' बोगार्डस ने इसे तथ्यों को प्राप्त करने की औपचारिक प्रणाली माना है जो वस्तुपरक तथा सरलतापूर्वक समझने योग्य होती है । पी.वी. यंग. साइंटिफिक सोशियल सर्वे एण्ड रिसर्च, के अनुसार, 'यह गणना की एक विधि है जिसका प्रयोग औपचारिक एवं मानवीकृत गवेषणाओं में विभिन्न प्रकार के परिमाणात्मक तथ्यों के लिये किया जाता है । किसी भी प्रकार की अनुसूची की सफलता प्रश्नों तथा उत्तरों पर निर्भर होती है क्योंकि अनुसूची प्रश्नों के उत्तरों के रूप में प्राप्त सूचनाओं को एकत्रित करने का साधन होती है । एक उत्तम अनुसूची की दो विशेषताऐ होती हैं - (1) सही संदेशवाहन, (2) सही प्रत्युत्तर । अत: अनुसूची प्रश्नों की एक औपचारिक तालिका या फार्म होती है जिसका प्रयोग साक्षात्कारकर्ता प्रत्यक्ष साक्षात्कार की स्थिति में शोध सूचनाऐं एकत्रित करने के लिये करता है ।

11.2 अनुसूचियों के प्रकार

विभिन्न विद्वानों ने अनुसूचियों को अनेक प्रकार से विभाजित किया है । यंग ने इन्हें चार वर्गो में रखा है, यथा (i) अवलोकन अनुसूची, (ii) मूल्यांकनपरक, (iii) प्रलेखीय तथा, (iv) संस्था-सर्वेक्षण अनुसूची । लुण्डवर्ग ने उन्हें तीन श्रेणियों में विभाजित किया है: (क) वस्तुपरक तथ्यों से सम्बन्धित, (ख) सम्मति तथा दृष्टिकोण के मापन से सम्बन्धित, तथा (ग) संस्थाओं एवं संगठनों के अध्ययन से सम्बन्धित । मुख्य रूप से अनुसूची के निम्न प्रकार हो सकते हैं -

1. **अवलोकन अनुसूची -** इस अनुसूची का प्रयोग अवलोकन-कार्य को क्रमबद्ध, व्यवस्थित एवं प्रभावी बनाने के लिए किया जाता है । इसमें प्रश्नों के बजाय कुछ मोटी मोटी बातों का उल्लेख होता है, जो अवलोकन के समय सामने आ सकती है । उस समय उन अवलोकित घटनाओं का विवरण स्वयं देख कर लिखा जाता है । यह सूची प्राय: सारणी के रूप में होती है जो शोध विषय के अनुसार कई शीर्षक तथा उपशीर्षक में बंटी होती है । अवलोकन अनुसूची का प्रयोग अवलोकन किये जाने वाले व्यक्तियों के व्यवहारों तथा सामाजिक स्थितियों के वर्गीकरण के लिये किया जा सकता है । एक अवलोकन सूची के कुछ प्रमुख कार्य निम्न हैं -

(i) यह शोध विषयों की याद दिलाने का कार्य करती है ।

(ii) यह अवलोकन शक्ति को विस्तृत बनाने में सहायता करती है ।

(iii) यह अध्ययन क्षेत्र को परिमित कर शोधकर्ता के ध्यान को शोध के मुद्दों पर केन्द्रित करने में सहायता करती है।

(iv) यह अन्वेषक द्वारा स्वेच्छानुसार अवलोकन करने पर अंकुश का कार्य करती है ।

2. **प्रमापन या मूल्यांकन अनुसूची -** इसमें किसी घटना, समस्या या विषय से सम्बन्धित मामलों में सूचनादाता की पसंद, राय, मनोवृत्ति, विश्वास आदि का प्रमापन या मूल्यांकन किया जाता है । ऐसा करके उसे सांख्यिकीय आकड़ों में व्यक्त किया जा सकता है । मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र के क्षेत्रों में इस अनुसूची का काफी प्रयोग किया है । दहेज प्रथा को निर्बल बनाने वाले कारकों का अध्ययन इस विधि से किया जाता है । राजनीतिक शोध में, ऐसी अनुसूची के द्वारा राजनीति में जाति की भूमिका', लोकतंत्र बनाम स्थायी शासन' आदि विषयों में प्रश्न पूछ कर उत्तरदाताओं की पसंद को ज्ञात किया जा सकता है ।

3. **संस्था सर्वेक्षण अनुसूची -** ऐसी अनुसूची के द्वारा किसी संस्था, दल या समुदाय से सम्बन्धित समस्याओं को ज्ञात किया जा सकता है । सभी विभिन्न पक्षों को जानने का प्रयास करने वाली अनुसूची काफी लम्बी होती है । किन्तु किसी सीमित पक्ष या समस्याओं के सम्बन्ध में अनुसूची अपेक्षाकृत छोटी भी बनायी जा सकती है । जनगणना अनुसूची इस प्रकार की अनुसूचियों का मुख्य उदाहरण है । संस्थागत अनुसूचियों का प्रयोग कभी-कभी विभिन्न संस्थाओं की कार्य प्रणाली तथा समाज में उनकी प्रसिथति की तुलना करने के लिये किया जाता है । धर्म, परिवार व शिक्षा आदि के पक्षों का इसी विधि से अध्ययन किया जा सकता है ।

4. **साक्षात्कार अनुसूची -** ये अनुसूचियाँ साक्षात्कार को व्यस्थित तथा क्रमबद्ध बनाने के लिए होती हैं । इसके द्वारा पहले से ही योजना बना कर सूचनाएँ एकत्रित की जा सकती है । साक्षात्कारकर्त्ता सूचनादाताओं के पास व्यक्तिगत रूप से जाता है तथा प्रश्न पूछकर स्वयं उत्तर लिखता जाता है । ये उत्तर उसके लिए तथ्य बन जाते हैं । इनका वह अपनी समस्या के संदर्भ में वर्गीकरण, विश्लेषण आदि करता है । साक्षात्कार अनुसूची के लाभ इस प्रकार हैं-

(i) इसके द्वारा विश्वसनीय एवं प्रमाणिक सूचनाऐं प्राप्त होती हैं ।

(ii) व्यक्तिगत सम्पर्क के कारण इसमें अनुसंधानकर्त्ता सूचनादाता को सूचना देने के लिये प्रेरित कर सकता

(iii) इसके द्वारा अशिक्षित उत्तरदाताओं से भी सूचनाऐं प्राप्त की जा सकती हैं ।

5. **प्रलेखीय अनुसूची -** यह अनुसूची विधि लिखित स्त्रोतों से सूचनाएँ एकत्रित करने के उपयोग में आती हैं। ये स्त्रोत आत्मकथा, डायरी, सरकारी तथा गैर-सरकारी अभिलेख, पुस्तकें, प्रतिवेदन आदि हो सकते हैं । विषय से सम्बन्धित अध्ययन-इकाइयों के विषय में प्रारम्भिक जानकारी एकत्रित करने के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होती है । उदाहरण के लिए मृत्युदण्ड या दल-बदल के विषय में समस्त प्रलेखीय सामग्री को अनुसूवी के अन्तर्गत एकत्रित किए जाने पर उनसे सम्बन्धित सभी समस्याओं को ज्ञात किया जा सकता है । ऐसा करने से अध्ययन शुरू से ही व्यवस्थित हो जाता है । किसी अपराधी का अध्ययन करते समय जेल के दस्तावेजों

से उसके अपराध के रूप, अपराधों की संख्या, आयु, शिक्षा, व्यवसाय आदि के सम्बन्ध में जानकारी एकत्रित करने के लिये प्रलेखीय अनुसूची की रचना की जा सकती है ।

11.3 अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया

अनुसूची की रचना करते समय निम्न बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिये -

(i) प्रश्नों की विषय वस्तु

(ii) प्रश्नों की शब्द रचना या भाषा

(iii) प्रत्युत्तर के रूप

(iv) प्रश्नों का क्रम

(v) अनुसूची की भौतिक बनावट

अनुसूची के दो प्रमुख भाग होते हैं : (i) भौतिक पक्ष, (ii) आंतरिक पक्ष । अनुसूची की रचना के समय किस बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए, इसी का यही हम उल्लेख करेंगे ।

11.3.1 अनुसूची का भौतिक या बाह्य पक्ष - अनुसूची निर्माण के भौतिक पक्षों या बाह्य पक्षों में भी उन्हीं बातों का ध्यान रखना चाहिए जिनका उल्लेख प्रश्नावली के निर्माण के दौरान किया गया है । संक्षेप में इस संदर्भ में प्रमुख बातें इस प्रकार हैं :

(1) अनुसूची का आकार 8' x 11" से अधिक बड़ा न हो ।

(2) अनुसूची हेतु प्रयुक्त कागज चिकना व साफ हो । रंगीन कागज का प्रयोग आकर्षक होता है ।

(3) सूचनाएं लिखने के लिए पर्याप्त खाली स्थान छोड़ा जाये ।

(4) हाशिया छोड़ा जाये ।

(5) अनुसूची में कागज के एक तरफ ही लिखना श्रेष्ठ होता है ।

(6) कॉलम, शीर्षक तथा उप-शीर्षकों द्वारा मदों को व्यवस्थित कर दिया जाये ।

11.3.2. अनुसूची की अन्तर-वस्तु - अनुसूची की अन्तरवस्तु के अन्तर्गत दो प्रकार की बातें होती हैं : (i) **उत्तरदाता के बारे में प्रारम्भिक जानकारी -** इसमें उत्तरदाता का नाम, पता, आयु, लिंग, शिक्षा, जाति, धर्म, ग्रासा, आय, आदि के बारे में सूचनाएं एकत्रित करनी होती हैं (ii) दूसरे भाग में **समस्या से सम्बन्धित प्रश्न एवं सारणियाँ** होती हैं । साथ ही अनुसूची भरने के लिए अनुसंधानकर्ता के लिए आवश्यक निर्देश भी होते हैं । इसी में अनुसंधान विषय तथा अनुसंधान करने वाले संस्थान या व्यक्ति का परिचय भी होता है ।

11.3.2 प्रश्नों का निर्माण - अनुसूची में प्रश्नों को शामिल करने से पूर्व प्रश्नों के प्रकारों को भलीभाँति समझ लिया जाना चाहिए । विभिन्न प्रश्नों के अलग-अलग उद्देश्य होते हैं, तथा उनके निर्माण करने की शैलियाँ भी विशेष होती हैं -

1. **खुले प्रश्न -** ये प्रश्न सूचनादाता के अपने विचारों, भावनाओं, विश्वासों आदि को जानने के लिए किये जाते हैं । इसके उत्तर अलग-अलग प्रकार के लम्बे या छोटे, सम्बद्ध या असम्बद्ध प्राप्त होते हैं । जैसे, दल-बदल का भारतीय राजनीति पर क्या प्रभाव पड़ता है? या आपकी सम्मति में संसदीय प्रणाली में क्या-क्या बुराइयाँ हैं? जाति प्रथा की

समाप्ति के क्या कारण हैं? भारत में अन्तर्जातीय विवाह को अच्छा क्यों नहीं माना जाता है? आदि ।

2. **संरचित या आयोजित प्रश्न -** इन प्रश्नों में उनके संभावित उत्तरों को भी प्रश्न के सामने रख दिया जाता है । सूचनादाता को उनमें से किसी एक उत्तर को चुनने के लिए कहा जाता है । ये उत्तर संस्था, वाक्यांश या वाक्य के रूप में हो सकते हैं । जैसे, भारत में एक / द्वि / बहुदलीय व्यवस्था पायी जाती है । आपके परिवार के कितने सदस्य शिक्षित हैं? एक / दो / तीन / सभी ।
3. **दोहरे प्रश्न -** किसी किसी प्रश्न के केवल दो ही उत्तर - सकारात्मक या नकारात्मक हो सकते हैं । उत्तरदाता द्वारा किसी एक को चुन लिया जाता है । जैसे, क्या आप समाचार पत्र रोज पढ़ते हैं? हाँ / नहीं । आप धूम्रपान को कैसा समझते हैं? अच्छा / बुरा । क्या आप सहशिक्षा के पक्ष में हैं? हाँ / नहीं ।
4. **बहुबैकल्पिक प्रश्न -** इन प्रश्नों में प्रत्येक प्रश्न के अनेक संभावित उत्तर दिए हुए रहते हैं । इनमें से सूचनादाता कोई एक एकाधिक उत्तर छांट लेता है । अंत में, एक उत्तर 'अन्य कोई' भी जोड़ दिया जाता है । जैसे,-
   (i) आप श्रमिक संघ के सदस्य बनना क्यों पसंद करते हैं? संगठन में पद ग्रहण करने के लिए/ अधिक वेतन तथा सुविधाएँ हासिल करने के लिए / भाई-चारा बढ़ाने के लिए / प्रबन्धकों से टक्कर लेने के लिए / अन्य कोई....... ... ।
   (ii) आपको अध्यापक की नौकरी क्यों पसंद हैं? छुट्टियाँ अधिक होती हैं / टयूशन मिल जाता है/ अपनी बौद्धिक क्षमता की वृद्धि के लिये / भावी पीढ़ी को संस्कारित करने के अवसर मिलते हैं / अन्य कोई .... ।
5. **निर्देशक प्रश्न -** ऐसे प्रश्न में उत्तर का संकेत दिया हुआ रहता है । प्राय: उत्तरदाता उसी संकेत के अनुसार ही उत्तर दे देता है । जब ऐसे प्रश्न में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संकेत भी दिया हुआ रहता है, तो प्रश्न पूछने का प्रयोजन ही समाप्त हो जाता है । ये प्रश्न पक्षपात को प्रोत्साहन देते हैं । अत: ऐसे प्रश्नों से बचना चाहिये । जैसे, क्या चुनावों में राजनैतिक दलों द्वारा प्राइवेट कम्पनियों से चंदा लेना भ्रष्टाचार का कारण नहीं है? क्या आजकल का संगीत विद्यार्थियों को पाश्चात्य संस्कृति की ओर नहीं ले जा रहा है ।
6. **अनेकार्थक प्रश्न -** जब प्रश्न की भाषा या विषयवस्तु ऐसी होती है कि विभिन्न सूचनादाता उसके अपने-अपने ढंग से अनेक अर्थ लगा लेते हैं तो ऐसे प्रश्न 'अनेकार्थक' बन जाते हैं । जैसे, क्या आप किसी राजनैतिक विचारधारा में विश्वास करते है ।? इसमें राजनैतिक विचारधारा के अनेक अर्थ लगाये जायेंगे । आप कहीं के निवासी हैं? इस प्रश्न में यह स्पष्ट नहीं है कि घर, गाँव, प्रान्त, देश आदि में से क्या लिखना है।
7. **अस्पष्ट प्रश्न -** ऐसे प्रश्न किसी सुनिश्चित उत्तर को प्राप्त करने में असमर्थ होते हैं । इनका अनेक अस्पष्ट तरीकों से उत्तर दिया जा सकता है । जैसे, क्या आप सुशिक्षित

हैं? अथवा क्या आप एक योग्य नागरिक हैं? इन प्रश्नों में सुशिक्षित व योग्य नागरिक के अर्थ स्पष्ट नहीं हैं ।

8. **क्रमसूचक प्रश्न -** ऐसे प्रश्न के अनेक उत्तर दिए हुए होते हैं । सूचनादाता को उन उत्तरों को क्रम से बताना होता है । यह कार्य 1,2,3 व 4 लगाकर किया जाता है । जैसे - आप कौनसा व्यवसाय पसंद करते हैं? (क) भारतीय प्रशासनिक सेवा, (ख) पुलिस सेवा, (ग) व्यापार, (घ) वकालत, (ड़) डॉक्टर, (च) इंजीनियर, (छ) प्रोफेसर ।

11.3.4 प्रश्नों की विशेषताएँ - अनुसूची में प्रश्न आमने-सामने बैठकर पूछे जाते हैं । उनका निर्माण समय अपने अध्ययन-विषय के उद्देश्य एवं क्षेत्र, संभावित उत्तरदाताओं के स्वभाव, क्षेत्र के कार्यकर्ताओं की तथा उपलब्ध सुविधाओं का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए । इसके लिए उनमें कतिपय विशेषताओं का होना आवश्यक है -

1. वे छोटे, सुगम, सरल तथा समस्या एवं सूचनादाता से सम्बन्धित हों ।
2. वे सूचनादाता के बौद्धिक स्तर के अनुसार बनाए जाएँ । वे अधिक कठिन या अति सरल नहीं होने चाहिए ।
3. प्रश्नों में वैषयिकता होनी चाहिए । उन्हें अनुभवपरक उत्तर देने की दृष्टि से बनाया जाना चाहिए । इससे वर्गीकरण, सारणीयन आदि करने में सुविधा प्राप्त होगी ।
4. केवल आवश्यक प्रश्न ही पूछे जायें । अनावश्यक प्रश्नों को अनुसूची में शामिल करने से वह लम्बी हो जाती है, तथा सूचनादाता पर बुरा प्रभाव डालती है ।
5. यदि प्रत्यक्ष प्रश्नों से सूचना प्राप्त करने में कठिनाई होती है तो अप्रत्यक्ष प्रश्न पूछे जाने चाहिए । जैसे किसी को, क्या आप दल-बदलू हैं? पूछने के बजाये, पहले आप किस दल में थे? तथा, अब आप किस दल में हैं? ये दो प्रश्न पूछे जाने चाहिए ।
6. प्रश्न क्रमबद्ध तथा परस्पर सम्बद्ध होने चाहिए । एक ही विषय या उप विषय से सम्बन्धित प्रश्न बार-बार तथा विभिन्न स्थानों पर नहीं पूछने चाहिए । जैसे, श्रमिक संघ की आय से सम्बद्ध प्रश्न एक ही स्थान पर होने चाहिए । उन्हें नेताओं के पारस्परिक सम्बन्धों के साथ नहीं पूछना चाहिए ।
7. ऐसे प्रश्न भी पूछे जाने चाहिए जिनसे उत्तरों की सत्यता, प्रामाणिकता आदि की जाँच हो सके । किसी एक प्रश्न के उत्तर की अन्य प्रश्नों या उत्तरों के संदर्भ में जाँच की जा सकती है । जैसे, दलीय निष्ठा तथा कानून के प्रति निष्ठा से सम्बन्धित प्रश्न एक दूसरे के उत्तरों की जाँच कर सकते हैं ।
8. गुप्त जीवन अथवा निषिद्ध क्षेत्र से सम्बन्धित प्रश्न नहीं पूछे जाने चाहिए । ऐसे प्रश्नों का या तो उत्तर ही नहीं दिया जायेगा या गलत उत्तर दिया जायेगा ।
9. प्रश्न ऐसे होने चाहिए कि उनके उत्तर लिखने में कम समय लगे । इसके लिए विभिन्न चिह्नों (या x) या संख्या का उपयोग किया जा सकता है ।
10. विचारात्मक प्रश्नों को गहनता के साथ पूछना चाहिए । उनको पूछते समय क्यों, कब, कैसे आदि प्रश्नों को भी जोड़ा जा सकता है ।

11. प्रश्न एकार्थक होने चाहिए । उन्हें अस्पष्ट, कर्णकटु बोली में नहीं पूछा जाना चाहिए । तकनीकी एच भावात्मक शब्दों के प्रयोग से भी बचना चाहिए ।

12. प्रश्नों में प्रयुक्त शब्दों और वाक्यांशों को निश्चित एवं विशिष्ट बनाने के लिए स्पष्ट कर देना चाहिए । जैसे, युवा शक्ति के संगठन का राजनैतिक दलों के स्वरूप पर क्या प्रभाव पड़ेगा? इस प्रश्न में 'युवा शब्द को स्पष्ट करना आवश्यक है ।

ऐसे प्रश्न नहीं किये जाने चाहिए जिनके अनेक अर्थ निकलते हों, अथवा जो निर्देशक तथा अस्पष्ट हों । सर्वविदित तथा सर्वस्वीकृत ज्ञान से सम्बन्धित प्रश्न करना भी उचित नहीं है, जैसे, क्या आप समझते हैं कि भारत जनसंख्या की दृष्टि से एक बड़ा देश है? इसी तरह, गुप्त जीवन से सम्बद्ध जटिल और लम्बे प्रश्न भी नहीं पूछना चाहिए । किसी के शान की परीक्षा लेने वाले प्रश्न भी पूछना उचित नहीं होता । उससे सूचनादाता के आत्मसम्मान को चोट लगती है । यदि अवलोकन अथवा प्रत्यक्ष साधनों से तथ्य प्राप्त हो सकते हैं तो प्रश्नों पर निर्भर रहने की अधिक आवश्यकता नहीं होनी चाहिए ।

11.3.5 अनुसूची द्वारा सूचना प्राप्ति - अनुसूची द्वारा सामग्री प्राप्त करने के लिए कुछ आवश्यक स्तरों से गुजरना पड़ता है, जिन्हें हम इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं -

1. **उत्तरदाताओं का चयन -** अनुसूची के प्रयोग करने में सर्वप्रथम उत्तरदाताओं का चयन किया जाता है जिनसे कि सूचना एकत्र करनी है । इसके अन्तर्गत दो प्रकार की प्रणालियों को अपनाया जा सकता है - संगणना पद्धति और निदर्शन पद्धति । जहाँ समूह के सभी व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अनुसूची को भरा जाये, उसमें संगणना पद्धति को अपनाया जाता है । संगणना पद्धति को अपनाने से पूर्व अनुसंधानर्त्ता देख लेता है कि अध्ययन-समस्या की प्रकृति किस प्रकार की है । वह समूह को कई उप-समूहों में भी विभाजित कर सकता है । इसके बावजूद भी उन सबके उत्तरों को अनुसूची में स्थान नहीं दे सकता तो निदर्शन पद्धति को काम में लाया जाता है । निदर्शन पद्धति द्वारा कुछ उत्तरदाताओ का चयन कर उनका साक्षात्कार कर लिया जाता है और उनके प्राप्त सूचनाओं को अनुसूचियों में भर दिया जाता है । चुने हुए व्यक्तियों का पूरा ब्यौरा अर्थात् उनके बारे में प्रारम्भिक जानकारी को तुरन्त ही लिख लिया जाना चाहिए।

2. **जाँचकर्ताओं का चयन एवं प्रशिक्षण -** जहाँ कुछ लोगों का साक्षात्कार करना है, वही अनुसंधानकर्त्ता स्वयं जाकर उनसे अभीष्ट सूचना प्राप्त कर उसे अनुसूची में भर सकता है । यदि साक्षात्कारदाताओं की संख्या अधिक हो तो अनुसंधानकर्ता कुछ ऐसे जाँचकर्ताओं का चयन कर सकता है जो बड़ी ही कुशलता, सूझबूझ, धैर्य और होशियारी से अनुसूची में साक्षात्कार द्वारा सूचना को भर सकता हो । उनके चयन में अनुसंधानकर्त्ता को बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है क्योंकि बिना अनुभव वाले जिन जाँचकर्ताओं का चयन किया जा रहा है वे यदि अनुपयुक्त सिद्ध होते हों तो अनुसंधान कार्य सही रूप में संचालित नहीं हो सकता । अत: उन्हें विशेष रूप से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए । उनके लिए प्रारम्भिक प्रशिक्षण शिविर होने चाहिये ताकि उन्हें अध्ययन की प्रकृति, क्षेत्र, उद्देश्य, अनुसूचियों को भरने के तरीके, साक्षात्कार के तरीके, कौनसी सूचनाओं को प्राथमिकता देना आदि बातों का पूरा ज्ञान हो सके ।

3. **तथ्य-सामग्री का संकलन -** तथ्य सामग्री के संकलन के लिए अध्ययनकर्ता या जाँचकर्ता को साक्षात्कार करने के लिए निश्चित स्थान पर पहुँचना पड़ता है । उत्तरदाताओं से सूचना प्राप्त करके उसे अनुसूची में भरना होता है, लेकिन इसके लिए एक क्रमिक प्रक्रिया अपनानी पड़ती है जो इस प्रकार है-

अ. सूचनादाताओं से सम्पर्क - साक्षात्कार द्वारा सूचना प्राप्त करने से पूर्व, सूचनादाताओं से सम्पर्क करना होता है । सम्पर्क स्थापित करने में क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं को कुशलता, चतुरता, धैर्य और शांति से काम लेना पड़ता है । यदि प्रारम्भ में ही कार्यकर्त्ता, सूचनादाता को प्रभावित नहीं कर पाया तो उससे सूचना प्राप्त करना मुश्किल हो जाता है । अत: कार्यकर्त्ता को चाहिए कि वह बड़े प्रभावशाली ढंग से अपना परिचय दें, अपनी मधुरवाणी और सौम्य स्वभाव से उसका हृदय जीत लें । उसे बड़े ही विनम्र ढंग से अभिवादन करके उसके स्वभाव, आदतों एवं व्यवहार के साथ तारतम्य स्थापित करना चाहिए । अत: उसे ऐसी स्थिति उत्पन्न करनी चाहिए कि सूचनादाता स्वयं उत्साहित होकर सूचना दे । इसलिए कार्यकर्त्ता को उसके बारे में संक्षिप्त जानकारी पहले ही कर लेनी चाहिए । कार्यकर्त्ता को यह ध्यान रखना चाहिए कि उससे प्रश्न कब पूछे जाएँ । यदि सूचनादाता किसी काम में व्यस्त हो गया हो तो उसके काम में विध्न नहीं पहुँचाना चाहिए । उसे धैर्य रखकर समयानुकूल परिस्थिति में ही प्रश्न पूछने चाहिये ।

ब. साक्षात्कार - सूचनादाता से सम्पर्क स्थापित करने के पश्चात् साक्षात्कार का कार्य शुरू किया जाता है । साक्षात्कार करना भी उतना ही कठिन है जितना कि सूचनादाताओं से सम्पर्क स्थापित करना । उसका उद्देश्य साक्षात्कारदाता से अधिक से अधिक विश्वसनीय जानकारी प्राप्त करना होता है, यह तभी संभव हो सकता है जब अनुसंधानकर्ता एक स्वाभाविक वातावरण में सूचनादाता के मनोभावों को ध्यान में रखते हुए, सूचना प्राप्त करता है । बीच में थोड़ा रूककर कुछ इधर-उधर की बातें करनी चाहिये ताकि सूचनादाता की अभिरूचि बनी रहे । साक्षात्कार को रोचक बनाने के लिए कुछ हँसी-मजाक की बात भी कर लेनी चाहिये या कोई उपयुक्त दृष्टान्त दे देना चाहिये, ताकि सूचनादाता, साक्षात्कार को कोई बोझ न समझ कर एक 'रूचिपूर्ण भेंट' समझें ।

स. सूचना प्राप्त करना - साक्षात्कार करते समय यह समस्या पैदा हो जाती है कि सूचनादाता से किस प्रकार संगतपूर्ण एवं विश्वसनीय सूचनाएँ प्राप्त की जायें । साक्षात्कारकर्त्ता को अनुसूची में से एक-एक करके प्रश्न कर सूचना प्राप्त करनी चाहिए । लेकिन साक्षात्कारदाता के दिमाग में यह आशंका पैदा न हो कि अनुसंधानकर्त्ता उससे कोई गुप्त जानकरी प्राप्त कर रहा है या उसे किसी उलझन में डाल रहा है । यदि उत्तरदाता सूचना देते समय मुख्य विषय से हट जाता है तो ऐसी स्थिति में बड़ी सावधानीपूर्वक उसका ध्यान मुख्य विषय की ओर केन्द्रित करना चाहिए या उसे साक्षात्कार के बीच में कुछ अन्य बातें करके, बंद कर देना चाहिए । यह भी संभव हो सकता है कि प्रश्नों के स्पष्ट न होने के कारण सूचनादाता उसका कुछ और ही अर्थ समझ बैठे जिसके फलस्वरूप वह मुख्य विषय से विचलित हो जाता हो ।

11.3.6 अनुसूचियों का सम्पादन - जब जाँचकर्ताओं से सब अनुसूचियाँ प्राप्त हो जाती हैं तो उनका सम्पादन किया जाता है जिसकी प्रक्रिया इस प्रकार है -

1. **अनुसूचियों की जाँच -** सर्वप्रथम कार्यकर्त्ताओं द्वारा भेजी हुई अनुसूचियों की जाँच की जाती है । वहाँ यह ध्यान रखा जाता है कि सभी अनुसूचियाँ प्राप्त हुई हैं अथवा नहीं । इसके पश्चात् सूचियों का वर्गीकरण किया जाता है । प्रत्येक जाँचकर्ता द्वारा भेजी गई अनुसूचियों की अलग-अलग फाइल तैयार की जाती है और उस फाइल पर चिट लगाकर कार्यकर्त्ता का नाम, क्षेत्र, सूचनादाताओं की संख्या आदि लिख दी जाती है ।

2. **प्रविष्टियों की जाँच -** अनुसंधानकर्त्ता समस्त प्रविष्टियों की जाँच करता है । यदि कोई खाना नहीं भरा गया हो या गलत खाने में उत्तर लिख दिया गया हो तो उनके कारण का पता लगाकर उस त्रुटि को दूर करने का प्रयत्न करता है । यदि वह स्वयं गलती को ठीक कर सकता है तो उसे उसी समय ठीक कर देता है, अन्यथा अनुसूची को कायकर्त्ता के पास लौटा दिया जाता है जिसमें या तो वह स्वयं ही संशोधन कर देता है या उत्तरदाता से पुन: मिलकर सही सूचना प्राप्त करता है ।

3. **गंदी अनुसूचियों -** अनुसंधानकर्ता, गंदी अनुसूचियों को अलग कर देता है जो पढ्ने योग्य न हों या फट गई हों या अन्य किसी कारण से सूचना देने योग्य न हों, उन्हें कार्यकर्त्ता के पास भेज दी जाती है ताकि यथार्थ सूचना प्राप्त हो सके ।

4. **संकेतन -** अनुसंधानकर्ता सारणीयन के कार्य में असुविधा दूर करने के लिए संकेतन का कार्य करता है । वह सभी उत्तरों का निश्चित भागों में वर्गीकरण कर देता है प्रत्येक वर्ग को संकेत संख्या प्रदान की जाती है । इसके बाद निष्कर्ष निकाला जाता है और अध्ययन का प्रतिवेदन तैयार किया जाता है ।

11.4 अनुसूची के गुण

अनुसूची तथा प्रश्नावली दोनों लिखित प्रश्न-उत्तर पर आधारित प्रश्न तालिकाएँ है । अत: कुछ सीमा तक दोनों के गुणों तथा अवगुणों में समानता है । किन्तु दोनों के प्रयोग की विधि में अंतर होने के कारण दोनों के अपने-अपने विशिष्ट दोष तथा उपयोगिताएँ भी हैं । अनुसूची के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं:

1. **सभी प्रकार के लोगों के लिए उपयुक्त -** प्रश्नावली विधि की भाँति इसका उपयोग साक्षर व्यक्तियों तक ही सीमित नहीं है । एक कुशल अन्वेषण अनुसूची का प्रयोग साक्षर-निरक्षर, बालक, युवा, वृद्ध, अन्धे सभी लोगों में समान रूप से कर सकता है ।

2. **व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा संकोचों का निवारण -** शोधकर्ता या क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं के व्यक्तिगत रूप में उपस्थित रहने के कारण कई समस्याओं का स्वत: समाधान हो जाता है सूचनादाता कई कारणों से प्रत्युत्तर देने में संकोच या हिचकिचाहट प्रकट कर सकता है । साक्षात्कारकर्ता के उपस्थित होने के कारण इन समस्याओं का निवारण तत्काल हो जाता है । व्यक्तिगत संपर्क के द्वारा जहाँ स्पष्ट एवं वास्तविक उत्तर पाने में आसनी रहती है, वही इसके

प्रत्युत्तर की दर में भी वृद्धि हो जाती है । सूचनादाता के व्यक्तित्व की विशेषताएँ उसे प्रत्युत्तर देने के लिए प्रेरित कर सकती है ।

3. **प्राप्त सूचनाओं का सत्यापन समय -** सामान्यत: अनुसूची का प्रयोग करते समय सभी साक्षात्कारकर्त्ताओं में आवश्यक समानता बनाये रखने के लिए वे ही प्रश्न पूछे जाते हैं जो अनुसूची में दिए होते हैं । किन्तु फिर भी उत्तरों की वास्तविकता का पता लगाने के लिए साक्षात्कारकर्ता कुछ अतिरिक्त प्रश्न कर सकता है । इन अतिरिक्त प्रश्नों से अतिरिक्त सूचनाएँ मिलने की भी संभावना रहती है जो शोध के लिए महत्त्वर्त्ते सिद्ध हो सकती हैं ।

4. **सूचनाओं का अवलोकन द्‌वारा प्रमाणीकरण -** अनुसूची की यह विशेषता होती है कि इसमें उत्तरदाता से सूचनाऐं एकत्रित करने के साथ-साथ अध्ययकर्त्ता घटनाओं का स्वयं भी अध्ययन कर सकता है । इससे कम समय में अधिक तथ्यों का संकलन विश्वसीय ढंग से हो जाता है क्योंकि कोई भी वैज्ञानिक ज्ञान अवलोकन के बिना संभव नहीं होता है ।

5. **अध्ययन-क्षेत्र का परिसीमन -** जिन साक्षात्कार में अनुसूचियों का प्रयोग नहीं किया जाता है, उनमें साक्षात्कारकर्त्ता के भटक जाने या विषय-क्षेत्र से बाहर जाने का खतरा रहता है। अनुसूची साक्षात्कार के मार्ग को प्रदर्शित कर सही एवं सार्थक तथ्यों के संकलन में साक्षात्कारकर्ता की मदद करती है । अनुसूची साक्षात्कारकर्त्ता के अनर्गल वार्तालाप पर भी अंकुश लगाती है ।

6. **परिमाणात्मक विश्लेषण में सहायक -** अनुसूची द्‌वारा प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण एवं सारणीयन करना आसान होता है क्योंकि प्रश्नों को पूछने के पूर्व उनका पर्याप्त मानकीकरण कर दिया जाता है । किसी प्रश्न के उत्तर में कितने लोगों ने पक्ष और कितने लोगों ने विपक्ष में अपनी राय जाहिर की है, इसका अनुमान अनुसूची के प्रश्नों के सांख्यिकीय विश्लेषण द्‌वारा किया जा सकता है ।

7. **स्मरण शक्ति की विकृतियों से सुरक्षा -** अनुसूची में सूचनाओं की तत्काल लेखनीबद्ध कर लिया जाता है । अनुसूची के स्थान पर जब स्मरण शक्ति का प्रयोग किया जाता है, तब किन्हीं सूचनाओं के भूल जाने और किन्हीं में विकृति उत्पन्न होने की आशंका रहती है ।

8. **मानवीय तत्व के लाभ -** अनुसूची में मानवीय तत्व प्रारम्भ से अंत तक उपस्थित रहता है, अत: सूचना संकलन की प्रक्रिया रोचक आकर्षक रक्ष सरस हो जाती है । व्यक्तिगत सम्पर्क के द्‌वारा जो पारस्परिक आदान-प्रदान में मधुरता उत्पन्न होती है, वह कार्य निर्जीव प्रश्नावली कठिनत: ही कर पाती है ।

11.5 अनुसूची के दोष

अनेक गुण होने के उपरान्त भी अनुसूची विधि की निम्नलिखित सीमाएँ हैं:

1. **मंहगा उपकरण -** विस्तृत क्षेत्र के सूचनादाताओं से अनुसूचियों द्‌वारा सूचनाएँ एकत्र करने में काफी साक्षात्कारकर्ताओं की आवश्यकता पड़ती है जिससे उनके वेतन, प्रशिक्षण, यात्रा-व्यय आदि पर काफी खर्चा आता है । अत: इस विधि का प्रयोग वही संभव होता है जहाँ पर्याप्त मात्रा में आर्थिक संसाधन उपलब्ध होते हैं ।

2. **सीमित क्षेत्र का अध्ययन -** प्रश्नावली की भांति अनुसूची का प्रयोग विस्तृत क्षेत्र में नहीं किया जा सकता । प्रत्येक सूचनादाता के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क में काफी समय लगता है । अत: यह विधि सीमित क्षेत्र के सीमित सूचनादाताओ के अध्ययन के लिए ही एक उपयुक्त विधि है ।

3. **अभिनति की समस्या -** व्यक्तिगत सम्पर्क से जहाँ साक्षात्कार प्रक्रिया सुगम हो जाती है, वहाँ 'साक्षात्कारकर्ता की अभिनति' की भारी समस्या का सामना करना पड़ता है । साक्षात्कारकर्त्ता के व्यक्तित्व का कुछ न कुछ प्रभाव सूचनादाता पर अवश्य पड़ता है, जिसके कारण उत्तरों में अभिनति के समावेश होने का भय बना रहता है । साक्षात्कारकर्त्ता प्रश्नों को पूछते समय कभी कभी अंजाने में सूचनादाता को उत्तर भी सुझा देता है, जिससे वास्तविक सूचनाएं प्राप्त नहीं हो पाती हैं । साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा उत्तरों को सुनने, समझने और लिखने की थोड़ी सी गलती सूचनाओं में अभिनति उत्पन्न कर सकती है ।

4. **अनुसूची के निर्माण की समस्या -** अनुसूची एवं प्रश्नावली दोनों शोध के उपकरणों से सभी वास्तविक यथार्थ एवं प्रमाणिक सूचनाओं के संकलन की आशा की जा सकती है जब ये उपकरण सही सम्प्रेषण करने में समर्थ हों । यदि प्रश्नों की बनावट या शैली में कोई भी ऐसा दोष रहा है जिसके कारण प्रत्येक सूचनादाता एक ही प्रश्न का अलग-अलग अर्थ लगाता हो, तो ऐसे प्रश्नों के द्वारा यथार्थ सूचनाएं कैसे प्राप्त की जा सकती हैं । सभी उत्तरदाताओं की शैक्षणिक, बौद्धिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि समान नहीं होती । इसलिये सभी से एक सी सूचनाऐं प्राप्त नहीं हो पाती । अत: सार्वभौमिक प्रश्नों की समस्या उत्पन्न होती है ।

5. **सम्पर्क की समस्या -** आज के अत्यधिक व्यस्त जीवन में सूचनादाताओं से सम्पर्क करना कठिन होता है । यह आवश्यक नहीं है कि सूचनादाता आपको साक्षात्कार के लिए आपकी सुविधानुसार समय दे ही दे । ऐसी दशा में कभी-कभी एक सूचनादाता से सम्पर्क स्थापित करने में काफी समय लग सकता है ।

11.6 प्रश्नावली और अनुसूची में भेद

प्रश्नावली और अनुसूची दोनों अनुसंधान कार्य में तथ्यों को एकत्र करने. के महत्त्वपूर्ण साधन हैं । दोनों का ही उद्देश्य विश्वसनीय, संगतपूर्ण और उपयोगी तथ्यों को एकत्र करना है । दोनों ही अनुसंधानकर्त्ता के कार्य को संचालित करने में सहायता प्रदान करते हैं । इन दोनों में अनेक भेद हैं, जो निम्न हैं -

	अनुसूची	**प्रश्नावली**
1. 2	**प्रस्तुतीकरण :** अनुसूचियों को डाक द्वारा प्रेषित नहीं किया जाता है । अनुसंधानकर्ता स्वयं अनुसूची मे उत्तरदाताओ से प्राप्त सूचना को एकत्र करता है । **भरना :** अनुसूचियांको शोध्कर्ता स्वयं भरता है ।वह उत्तरदाताओ से सूचना ग्रहण करके	प्रश्नावली के प्रस्तुतीकरण का तरीका भित्र है । यह डाक द्वारा उत्तरदाताओ के पास भेजी जाती है । अध्ययनकर्ता स्वयं को उस स्थान पर जाने की आवश्यकता नहीं है । चूंकि प्रश्नवाली को डाक द्वारा उत्तरदाता के पास भेजी जाती है,अत: उत्तरदाता स्वयं

	उसको अपनी अनुसूची मे भर देता है ।	उसको भरकर पुन: लौटाता है।
3	**क्षेत्र :** अनुसूची का प्रयोग विस्तृत मे न किया जाकर सीमित क्षेत्र मे ही किया जाता है ।	प्रश्नवाली द्वारा विस्तृत क्षेत्रों से सूचनाएँ आसानी से प्राप्त की जा सकती है । अत: अधिकांशत: इसका प्रयोग बड़े क्षेत्रों मे किया जाता है ।
4	**निरीक्षण :** अनुसूची प्रणाली मे निरीक्षण को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है । अनुसंधानकर्ता स्वयं उस स्थान पर उपस्थित होता है अत: उसे बड़े प्रश्नों का निर्माण करने की आवश्यकता नहीं होती है । तथ्यों को एकत्र करने के साथ-साथ वह तथ्यों का निरीक्षण भी करता जाता है । वह प्राप्त तथ्यों के निरीक्षण द्वारा पुष्टि भी कर सकता है । अत: तथ्यों की प्रमाणिकता का पता आसानी से लगाया जा सकता है	प्रश्नवाली मे निरीक्षण के लिए स्थान नहीं है चूंकि अनुसंधानकर्ता स्वयं उपस्थित नहीं होता है, अत: इस पद्धति द्वारा प्राप्त उत्तर संक्षिप्त होते हैं।
5	**प्रत्युत्तर :** जहाँ तक प्रत्युत्तर का प्रश्न है, अनुसंधानकर्ता स्वयं, स्थान पर उपस्थित होता है अत: उसे समस्त जानकारी प्राप्त हो जाती है । वह सूचनादाताओं से अधिक से अधिक सूचना प्राप्त कर अपने रिकार्ड में रखता है । प्रत्युत्तर की संभावना शत प्रतिशत रहती है ।	प्रश्नावली प्रणाली के अन्तर्गत सूचनादाताओ की ओर से प्रत्युत्तर, असंतोषजनक होता है जिन सूचनादाताओं के पास प्रश्नावलियों भेजा जाता है, उनमें अधिकांश: लौटकर. आती है । प्रश्नावलियों को अनुसंधानकर्ता पास लौटाना सूचनादाता स्वयं पर निर्भर करता है कुछ आलस्य एवं खर्च के कारण भी प्रश्नावलियों को नहीं लौटाया जाता है।
6	**स्पष्टता :** अनुसूचियों में प्रत्येक छोटी-छोटी बात को स्पष्ट रूप से लिखने की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि अनुसंधानकर्ता स्वयं, स्थान पर मौजूद होता है । संदेह या भ्रांति की स्थिति में वह सूचनादाता को प्रश्न की स्पष्ट व्याख्या वहीं कर सकता है ।	प्रश्नावली के निर्माण के समय प्रत्येक बात को स्पष्ट लिखा जाना जरूरी है । जहाँ कही व्याख्या की आवश्यकता होती है, वहाँ व्याख्या भी दी जाती है ताकि सूचनादाता को प्रश्न के सम्बन्ध में किसी प्रकार की भ्रांति न रहे ।
7	**सम्बन्ध.** अनुसूची प्रणाली में अनुसंधानकर्ता के सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से होते हैं । वह सीधा सम्पर्क कर वांछित सूचनाएँ प्राप्त कर सकता है ।	इस प्रणाली में अनुसंधानकर्ता के सम्बन्ध आमने सामने के नहीं होते हैं । सूचनादाता उसके व्यक्तित्व, व्यक्ति-गत जीवन, उसके दर्शन सिद्धान्तों से बिल्कुल ही अनभिज्ञ होता है ।

8	**उत्तरदाताओं का स्तर :** इस प्रणाली के अन्तर्गत विभित्र स्तर के उत्तरदाताओं से सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती है । अनुसंधानकर्ता उसके बौद्धिक स्तर को ध्यान में रखते हुए वार्तालाप करेगा । इसमें यह लाभ होता है कि अनुसंधान से सम्बन्धित वास्तविक जानकारी को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है ।	प्रश्नावली प्रणाली का उपयोग केवल शिक्षित व्यक्ति ही कर सकते हैं । इसमें भी कठिनाई यह है कि शिक्षित व्यक्तियों बौद्धिक स्तर अलग-अलग श्रेणी का है । कम पढ़े-लिखे लोग प्रश्नावली की शैली को समझ नहीं सकते
9	**अधिक महत्वपूर्ण एवं गहन सूचनाएँ :** अनुसूची प्रणाली द्वारा अधिक महत्चपूर्ण एवं गहन सूचनाएँ प्राप्त होती हैं । यदि अनुसंधानकर्ता स्वयं होशियर, अनुभवी एवं बुद्धिमान है तो वह सूचनादाताओं से अपने प्रभाव से गहनतम से गहनतम सूचनाएँ प्राप्त कर सकता है । अनुसंधानकर्ता का सम्बन्ध प्रत्यक्ष होने के कारण वह उसकी मनोदशा, प्रवृतियाँ, भावनाओं का अध्ययन करके उसके अनुरूप ही व्यवहार कर, महत्त्वपूर्ण और उपयोगी सूचनाएँ प्राप्त कर सकता है ।	प्रश्नवाली प्रणाली मे अनुसंधानकर्ता का सम्पर्क प्रत्यक्ष नहीं होता, अत: उसे उत्तरदाताओं द्वारा भेजी प्रश्नावलियों के उत्तर से संतुष्ट होना पड़ता है । कई सूचनादाता लापरवाही से प्रश्नावलियों को भरते हैं । उनकी विशेष दिलचस्पी नहीं होती, अत: उनके मस्तिष्क में जो बातें उस समय आ जाती हैं उन्हें लिख देता है । प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होने के कारण. उत्तरदाता कई बातों को छिपा देता है ।
10	**समय.** अनुसंधानकर्त्ता स्वयं को एक अनुसंधान क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाना होता है, इसमें काफी समय खर्च होता है । यदि अध्ययन क्षेत्र बहुंत विस्तृत है तो उसके सामने ओर ही अधिक कठिनाई उत्पन्न होती है ।	प्रश्नावली प्रणाली में समय अधिक खर्च नहीं होता चाहे अध्ययन क्षेत्र विस्तृत ही क्यों न हो । उसे डाक द्वारा विभिन्न स्थानों से सूचनाएँ सुविधा से प्राप्त हो जाती है । वह एक साथ ही प्रश्नावलियों को भेजता है और थोड़े दिनों के अंतर में विभिन्न क्षेत्रों से सूचनाएँ प्राप्त हो जाती हैं ।
11	**व्यय :** अनुसंधानकर्ता स्वयं को हर स्थान पर जाना पड़ता है, अत: काफी व्यय हो जाता है । इसलिए इस प्रणाली को कम अपनाया जाता है	इसमें थोड़े से व्यय से सूचनाएँ प्राप्त हो जाती हैं । अत: यह अधिक लोकप्रिय है ।

11.7 सारांश

अनुसूची शोधकर्ताओं के अनुसंधान कार्य का प्रमुख सहारा बन गई है । इसके द्वारा शोधकर्त्ता को वास्तविक तथा ठोस तथ्यों की प्राप्ति होती है । अनुसूची का प्रयोग करते समय प्रश्न पूछने के साथ-साथ उत्तरदाता के परिवेश का अवलोकन करने का अवसर भी मिलता है ।

प्रश्न निश्चित एवं विशिष्ट होने से उत्तर भी स्पष्ट तथा अध्ययन विषय से सम्बद्ध एवं यथार्थ ही मिलते हैं । अनुसूची प्रक्रिया में शोधकर्त्ता या साक्षात्कारकर्त्ता अपने व्यक्तित्व एवं कौशल का पूरा प्रभाव डाल कर अनेक महत्त्वपूर्ण बातों को निकलवा लेता है । अनुसूची के सहारे प्रश्नकर्त्ता की अवलोकन शक्ति, आत्मविश्वास तथा साक्षात्कार कौशल में वृद्धि होती है । इससे तथ्य संग्रह की प्रक्रिया संक्षिप्त, सुनिश्चित और लेखबद्ध हो जाती है, किन्तु इस प्रविधि की अपनी कुछ सीमाऐं भी हैं । ऐसे सार्वभौमिक प्रश्न बनाना अत्यन्त कठिन होता है, जिनके शब्दों के अर्थ सभी सूचनादाता एक ही तरह के लगाये । भाषा बोली, स्थानीय विशेषताओं तथा काम आदि की विभिन्नताएँ उनकी समझ एवं उत्तर सामग्री को प्रभावित करती है । अनुसूची का प्रयोग सीमित रूप से ही किया जा सकता है । व्यापक या बड़े क्षेत्र में घर-घर जाकर साक्षात्कार करना तथा अनुसूचियों को भरना संभव नहीं है । अनुसूची प्रणाली की एक बड़ी विशेषता यह है कि इसमें मानवीय तत्व अर्थात् मनुष्य तथा मनुष्य के मध्य सम्बन्ध प्रारम्भ से अन्त तक बना रहता है ।

11.8 शब्दावली

अनुसूची : एक फार्म, तालिका, केटलॉग अथवा कार्ड, जिसका निर्माण तथा प्रयोग शोध तथ्यों के संकलन हेतु किया जाता है ।

प्रलेखीय अनुसूची : लिखित स्त्रोतों से प्राप्त मूक तथ्यों के संकलन हेतु जिस तालिका या सूची का प्रयोग किया जाता है ।

संस्थात्मक अनुसूची : संस्थाओं के आंतरिक एवं बाह्य कार्यकलापों अथवा समस्याओं के. अध्ययन में प्रयोग की जाने वाली तालिका ।

अवलोकन अनुसूची : जिस अनुसूची का प्रयोग अवलोकन के द्वारा प्राप्त तथ्यों के संकलन के लिये किये जाता है ।

11.9 अभ्यास प्रश्न

प्र.1 अनुसूची क्या है? अनुसूची के उद्देश्यों एवं प्रकारों का वर्णन कीजिये ।

उत्तर अनुसूची की परिभाषा
अनुसूची के प्रकार

प्र.2 तथ्य संग्रह विधि के रूप में अनुसूची के लाभ एवं सीमाओं की विवेचना कीजिये ।

उत्तर अनुसूची के लाभ या गुण
अनुसूची की सीमायें या दोष

प्र.3 एक अनुसूची की रचना करते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ।

उत्तर अनुसूची निर्माण प्रक्रिया
प्रश्नों का निर्माण

प्र.4 अनुसूची व प्रश्नावली में अंतर बताइये ।

उत्तर प्रश्नावली व अनुसूची में अंतर 1

11.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

गुडे एण्ड हाट्ट	: मैथड्स इन सोशियल रिसर्च
पी.वी. यंग	: साइंटिफिक सोशियल सर्वे एण्ड रिसर्च.
के.डी बैली	: मैथड्स ऑफ सोशियल रिसर्च
एच. के. रावत	:सामाजिक अन्वेषण की सर्वेक्षण पद्धतियाँ

इकाई-12

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति इकाई की रूपरेखा

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की परिभाषा

12.3 व्यक्तिक अध्ययन पद्धति की विशेषताएँ

12.4 वैयक्तिक अध्ययन विधि के प्रकार

12.5 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की कार्य-विधि

12.6 वैयक्तिक अध्ययन की प्रविधियाँ व तथ्यों के स्त्रोत

12.7 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का महत्व

12.8 सारांश

12.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.10 सदर्भ ग्रन्थ सूची

" Case Study is a Method of exploring and analyzing the life of a social unit be that a person, a family, institution, culture, group or even entire community"

-Smt. P.V.Young

12.1 प्रस्तावना

सामाजिक अनुसन्धान के क्षेत्र में जिन विधियों द्वारा अध्ययन कार्य किया जाता है उन्हें मोटे तौर पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है प्रथम परिमाणात्मक (Quantitative) विधि व द्वितीय गुणात्मक (Qualitative) एक गुणात्मक विधि है । वैयक्तिक अध्ययन पद्धति एक गहन अध्ययन विधि है और इस अर्थ में इस विधि के अन्तर्गत 'अनेक'' विषयों के बारे में जानने की इच्छा को त्याग कर 'एक' के ही विषय में सबसे अधिक जानने का प्रयास किया जाता है इसलिए उसे वैयक्तिक अध्ययन कहा जाता है ।

वैयक्तिक अध्ययन विधि सामाजिक अनुसन्धान की महत्वपूर्ण व प्राचीन विधि है जिसके माध्यम से किसी भी सामाजिक इकाई को अध्ययन का मुख्य बिन्दु मानते हुए उसका गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन करने के लिए तथ्यों को संग्रहित करके अध्ययन किया जाता है । अध्ययन की इकाई परिवार, व्यक्ति, संस्था या सामाजिक समुदाय भी हो सकता है सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में इस पद्धति का सर्वप्रथम उपयोग फेड्रिक लीप्ले ने अपने अध्ययन '**श्रमिक की आर्थिक दशाओं का अध्ययन**' में किया था । इसके बाद हर्बट स्पेन्सर ने विभिन्न संस्कृतियों का तुल्नात्मक अध्ययन, विलियम हीले ने बाल अपराधियों, राबर्ट रेडफिल्ड ने कृषक समाज के अध्ययन में इस विधि का उपयोग किया ।

12.2 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की परिभाषा

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति को विभिन्न विद्वानों ने परिभाषित किया है जो निम्नलिखित है:-

गुडे ओर हॉट (Methods of social Research) - यह सामाजिक तथ्यों को संगठित करने की ऐसी विधि है जिससे अध्ययन किये जाने वाले सामाजिक विषय की एकात्मक प्रकृति की पूर्णतया रक्षा हो सके ।

बीसन्ज और बीसन्ज (Modern Society) - "वैयक्तिक अध्ययन गुणात्मक विश्लेषण का एक स्वरूप है जिससे किसी एक व्यक्ति, परिस्थिति अथवा एक संस्था का अत्यन्त सावधानी पूर्वक एव सम्पूर्ण निरीक्षण किया जाता है ।

गिडिंग्स - अध्ययान किया जाने वाला वैयक्तिक विषय केवल एक व्यक्ति अथवा उसके जीवन की एक घटना अथवा विचार पूर्ण दृष्टि से एक राष्ट्र या इतिहास का एक युग भी हो सकता है ।

पी.वी. यंग (Scientific social survey and research) - "वैयक्तिक अध्ययन किसी सामाजिक इकाई चाहे वह एक व्यक्ति परिवार, संस्था, सांस्कृतिक वर्ग अथवा समस्त जातियों के जीवन का अनुसंधान एव उसकी विवेचना करने की पद्धति को कहते है ।

उपरोक्त परिभाषाओ के अवलोकन से पता चलता है कि वैयक्तिक अध्ययन पद्धति सामाजिक अनुसन्धान की एक महत्वपूर्ण पद्धति है । जिसके अन्तर्गत किसी व्यक्ति, घटना, संस्था, समिति का सम्पूर्ण व गहन अध्ययन किया जाता है । इनमें अध्ययन की इकाई के सम्पूर्ण पक्षो का अध्ययन किया जाता है । तथा अध्ययन की इकाई के विभिन्न कारको के पारस्परिक अन्त: सम्बधो को स्पष्ट करने के लिए इस पद्धति का उपयोग किया जाता है ।

मुख्य बिन्दु-

1. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की विशेषताएं
2. वैयक्तिक अध्ययन विधि के प्रकार
3. वैयक्तिक अध्ययान की कार्य विधि
4. वैयक्तिक अध्ययन विधि के स्त्रोत
5. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का महत्व
6. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की सीमाएं / दोष
7. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की सावधानियाँ
8. निष्कर्ष

12.3 व्यक्तिक अध्ययन पद्धति की विशेषताएँ (Characteristics of case study method)

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर हम व्यक्तिक अध्ययन की कुछ प्रमुख विशेषताएँ है जो कि इस प्रकार हे

1. **अध्ययन की विशिष्ट इकाई (Study of specific unit) -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में एक साथ अनेक सामाजिक इकाईयो का अध्ययन नही किया जाता वरन् अध्ययन की

विशिष्ट इकाई का अध्ययन किया जाता है । यह विशिष्ट इकाई परिवार, संस्था समूह या जाति हो सकती है ताकि अध्ययन गहन तथा सूक्ष्म हो सके । यह इकाई मूर्त व अर्मूत दोनो हो सकती है । गिडिंग्स के अनुसार " वह कोई व्यक्ति हो सकता है या उसके जीवन की एक घटना अथवा एक समस्त राष्ट्र साम्राज्य अथवा ऐतहासिक युग ।

2. **व्यक्तिगत अध्ययन (Endividual study) -** व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति में अध्ययन की इकाई का पूर्णतया व्यक्तिगत अध्ययन होता है इसमे अध्ययन पद्धति द्वारा यह भी निर्धारित किया जाता है कि उस विशेष इकाई के बारे में "क्या " व "कितना" अध्ययन किया जाता है ।

3. **गहन व सूक्षम अध्ययन (Entensive studys) -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में घटना का गहन व सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है । इसमे अध्ययन कर्ता समय की परवाह किये बिना लम्बे समय तक अध्ययन करता है ताकि तथ्यों की गहराई से जांच की जा सके । इस प्रकार वैयक्तिक अध्ययन प्राय: ऐतिहासिक अथवा समय के आधार पर किया जाता है । तथा समय इतना विस्तृत होता है कि उचित तथा शुद्ध निषकर्ष निकालने हेतु सूचना प्रदान कर सके।

4. **वर्तमान व अतीत का अध्ययन (Study of Present and past) -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में किसी भी घटना के वर्तमान व अतीत दोनो का अध्ययन किया जाता है । इस कारण इस पद्धति को वर्तमान व अतीत दोनो का समन्वय भी कहा जा सकता है । इसमें अध्ययन कर्ता किसी इकाई से सम्बधित अतीत के तथ्यो के साथ-साथ उसके वर्तमान स्थिति में भी सहसम्बन्धों को जानने का प्रयास करता है ।

5. **संख्यात्मक अध्ययन की अपेक्षा गुणात्मक अध्ययन (Quantitative study are not quantitative) -** व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति में अध्ययन की इकाई के गुणो पर अधिक महत्व दिया जाता है । इस पद्धति में इकाईयों का अध्ययन ही गुणात्मक होता है । साथ ही तथ्यों का विश्लेषण भी सांख्यिकीय (धप्त१1ं3१1ं0भ्र1) आधार पर नही किया जाता और न ही निष्कर्ष निकालने में या कुछ व्यक्त करने में संख्याओं का सहारा लिया जाता है । उदाहरण के लिए कोई बालक विद्यालय में गलत व्यवहार कितनी बार करता है इसके अध्ययन पर बल नहीं दिया जाता अपितु वह गलत व्यवहार किन कारणों से कर रहा है इसके अध्ययन पर बल दिया जाता है ।

6. **कार्यकारण का अध्ययन (Cause effect study) -** व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति किसी घटना के कार्य कारण सम्बन्धों का अध्ययन करती है । इसके द्वारा किसी इकाई की विभिन्न परिस्थितियों के बीच कार्य कारण सम्बन्धो को ज्ञात करती है ।

7. **सम्पूर्ण अध्ययन (Wholistic study) -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति किसी भी इकाई का उसकी सम्पूर्णता में अध्ययन करती है । सम्पूर्णता से तात्पर्य अध्ययन को मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक, धार्मिक, प्राणीशास्त्रीय आदि सभी दृष्टियों से सम्पन्न करना है । व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति एक ऐसी प्रविधि है जो किसी सामाजिक इकाई को एक समग्रता के रूप में अध्ययन करती है । दूसरे शब्दो में, यह प्रविधि उस विशेष इकाई, जिसका कि

अध्ययन करना है के किसी विशेष पक्ष या पहलू को न लेकर सम्पूर्ण को ही अध्ययन का केन्द्र बनाती है ।

8. **ऐतिहासिक अध्ययन (Historical Study) -** व्यक्तिगत अध्ययन में इकाई का अध्ययन न केवल एक लम्बे समय तक चलता है अपितु भूतकाल में इस इकाई की उत्पति व भविष्य में उसकी संभावनाओ का भी विवेचना किया जाता है । अर्थात इकाई का ऐतहासिक अध्ययन समय के कम में पीछे हटकर अथवा वर्तमान से व्यवस्थित करते हुए किया जाता है ।

9. **तुलनात्मक अध्ययन (Compartive Study) -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में अध्ययन की इकाई की सम्पूर्णता का अध्ययन करते हुए उसकी समकालीन घटनाओ से तुलनात्मक अध्ययन करते हुए सहसम्बधों का भी अध्ययन किया जाता है ताकि घटनाओं का गहन व सूक्ष्म अध्ययन सम्भव हो सके और सामाजिक. अनुसन्धान में निष्कर्ष निकालने में सुविधा हो सके ।

उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर हम कह सकते है कि वैव्यक्तिक अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत व्यक्ति संस्था, समूह समूदाय अथवा किसी इकाई के विषय में प्रत्येक प्रकार से सूक्ष्म व सम्पूर्ण अध्ययन किया जाता है । यह अध्ययन गुणात्मक होता है न कि भावात्मक । सूचनाए विशेषत: गुणात्मक रूप में प्रस्तुत की जाती है । अनुसन्धान कर्ता लम्बे समय तक अनुसन्धान करता है तथा प्रत्येक प्रकार की सम्बन्धित जानकारी एकत्रित की जाती है इस कारण यह किसी घटना का अध्ययन सम्पूर्णता से करती है ताकि अध्ययन के निषकर्ष सही और सटीक प्राप्त हो सके । सा. अनुसंधान में यह एक महत्वपूर्ण व उपयोगी विधि है ।

12.4 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के प्रकार (Types of case-study method)

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति को दो भागो में विभक्त किया जाता है ये निम्नवत् है-

1. **व्यक्ति का वैयक्तिक अध्ययन -** इस प्रकार के अध्ययन में किसी व्यक्ति के जीवन की विशेष घटना उसके जीवन चरित्र का अध्ययन किया जाता है । इस अध्ययन के लिए सम्बधित व्यक्ति के पारिवारिक सदस्यो, मित्रों, व जानकारो से उस व्यक्ति के बारे में सूचनाऐं संकलित की जा सकती है । इसके साथ ही उससे सम्बधित साधन जैसे डायरी, पुस्तक, आत्मलेख जीवन इतिहास पत्र व कविताओं के माध्यम से सूचनाए प्राप्त की जा सकती है उदाहरण के लिए सम्राट अशोक के वैयक्तिक अध्ययन हेतु हम उसके शिलालेख, जीवन इतिहास, उस समय की मुद्राऐं, स्तम्भ लेख व पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से जानकारी प्राप्त कर अध्ययन किया जा सकता है ।

2. **संस्था या समुदाय का वैयक्तिक अध्ययन -** इसमें अध्ययन की इकाई एक वर्ग, जाति, समुदाय, समूह या संस्था, का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है । इस प्रकार के अध्ययन में अनुसंधान कर्त्ता को अत्यन्त सावधानी, कौशल व अनुभव की आवश्यकता होती है । इसमे अनुसन्धानकर्ता अध्ययन की सम्बधित इकाई के साथ पूर्ण सांमजस्यता बैठाएं रखनी होती है । तथा भीतरी स्थिति की जानकारी के अध्ययन हेतु सामग्री संकलन की एक महत्वपूर्ण विधि है

जैसे राजस्थान की आदिवासी जनजाति की सामाजिक स्थिति के अध्ययन हेतु उनके समाज में होने वाले रितीरिवाज वैवाहिक स्थिति, पारिवारिक स्थिति सभी की सामग्री संकलित करते हुए उक्त जनजाति का सम्पूर्ण और गहन अध्ययन संभव हो सकेगा ।

12.5 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की कार्य-विधि (Procedure of case study method)

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का सम्बन्ध व्यक्ति के भूतकाल व वर्तमान से सम्बधित उपलब्ध सूचनाओ या तथ्यो से होता है । यह किसी व्यक्ति अथवा समूह के जीवन में सम्बधित घटनाओ या तथ्यो का केवल संकलन मात्र ही नही करता बल्कि इसका सम्बन्ध व्यक्तिगत विशेषताओ का सैद्वान्तिक एवं व्यवहारिक परिवेश में इस प्रकार अध्ययन करना है जिससे सम्पूर्ण समूह की मौलिक विशेषताओ की जानकारी प्राप्त हो सके व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति में अनुसंधानकर्ता को बहुत सोच समझ कर व नियोजित व व्यवस्थित ढंग से अपने कार्य को करना होता है ताकि उसे निषकर्ष में "पूर्णता" की प्राप्ति हो सके । "पूर्णता" से तात्पर्य है पूर्ण अध्ययन के द्वारा अध्ययन इकाई से सम्बन्ध में समग्र इप्रन की प्राप्ति । ताकि अध्ययन पूर्ण व्यवस्थित व गहन हो सके । और इसी व्यवस्थित और गहन अध्ययन की प्राप्ति के लिए व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति में निम्न कार्यविधि अपनाई जाती है-

1. **समस्या का विस्तृत विवेचन -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में समस्या का विस्तृत विवेचन अति आवश्यक है । साथ ही, यह भी आवश्यक है कि उस समस्या के समस्त पहलुओं की स्पष्ट व्याख्या भी कर ली जाए । जितना अधिक अध्ययन व्यवस्थित और नियोजित होगा । अध्ययन की सफलता की सम्भावना भी उतनी ही अधिक होगी ।

2. **समस्या का चुनाव-** अध्ययन कर्ता को अध्ययन समस्या का चुनाव सही ढंग से करना अति आवश्यक है । अध्ययन की इकाई व्यक्ति समूह संस्था, जाति या वर्ग किस रूप में किया जाना है इसका निर्धारण करना आवश्यक है यह इकाईयां साधारण, असाधारण व विशिष्ट भी हो सकती है यदि वह समस्या के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण है ।

इकाईयों का निर्धारण (Determination of case) -

समस्या के चुनाव के पश्चात् अध्ययन कर्ता के लिए आवश्यक हो जाता है कि अध्ययन से सम्बधित इकाईयां कौन कौन सी है और उनकी संख्या कितनी है अध्ययन कर्ता को बहुत अधिक इकाईयो का चयन न करतें हुए समस्या से सम्बधित सीमित इकाईयों को ही चुनना चाहिए ताकि अध्ययन विशेषीकृत और नियोजित तरीके से संभव हो सके ।

अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण (Determination of study area) -

इकाईयो की संख्या के निर्धारण के बाद अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण करना अतिआवश्यक है । यदि अध्ययन की इकाई व्यक्ति है तो उस व्यक्ति से सम्बधित दस्तावेज, जीवन इतिहास, आत्मकथा, डायरी, व्यक्ति के भूत व वर्तमान से सम्बधित क्षेत्रो का निर्धारण किया जाना महत्वपूर्ण है । अध्ययन क्षेत्र के निर्धारण से अध्ययन में पूर्णता आने की सम्भावना अधिक रहती है ।

घटनाओं का कम विन्यास (Description of Events) -

अध्ययन क्षेत्र के निर्धारण करने के पश्चात् उसको समय या कालू के सन्दर्भ में समस्या को समझना अति आवश्यक है समस्या के स्वरूप में एक निश्चित अवधि में क्या-क्या परिवर्तन हुए और क्या-क्या होने संभव है इनका विस्तार से व्यवस्थित करना आवश्यक है इस तरह अध्ययन से सम्बधित घटनाओ को कम से व्यवस्थित करना अति आवश्यक है ।

प्रेरक व निर्धारक कारण (Determinat factors) -

निर्धारक व प्रेरक कारक वे कारक होते है जिनके कारण कोई समस्या उत्पन्न होती है । वैयक्तिगत अध्ययन पद्धति में इन कारको का अध्ययन करना आवश्यक है । इसके अन्तर्गत उन कारको का अध्ययन किया जाता है जिसके कारण घटना घटी थी या उस वैयक्तिक स्थिति की वर्तमान दशा पैदा हुई । उदाहरण के लिए, एक अपराधी व्यक्ति के अध्ययन में हम उन कारको को अध्ययन करेगें जिनके कारण वह व्यक्ति अपराधी बना । न कि उसके अपराध की प्रकृति ।

विश्लेषण व निष्कर्ष (Analysis and conclusions) - वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की कार्यप्रणाली में प्राप्त तथ्यो व सूचनाओ का विश्लेषण करके कुछ सामान्य निष्कर्ष निकाले जाते है किन-किन कारको से वैयक्तिक स्थिति में क्या-क्या परिवर्तन हुए एवं किन-किन परिवर्तनो की संभावना है- इन सबका विश्लेषण इस स्तर पर किया जाता है साथ ही इन आधारो पर कुछ निषकर्ष भी निकाले जाते है ।

12.6 वैयक्तिक अध्ययन की प्रविधियॉ व तथ्यों के स्त्रोत(Tools and Techniques of case study methods)

वैयक्तिक अध्ययन के अन्तर्गत कुछ ऐसी प्रविधियाँ व स्त्रोत होते हे जिनके आधार पर अध्ययन की जाने वाली इकाई के बारे में अधिक से अधिक तथ्य एकत्रित किये जा सकते है । वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में साक्षात्कार तथा निरिक्षण प्रविधि का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है । वैयक्तिक अध्ययन में दो प्रविधियां एवं स्त्रोत हो सकते है:

(1) प्राथमिक स्त्रोत (Primary sources)

(2) द्वैतीयक स्त्रोत (Secondary sources)

(1) **प्राथमिक स्त्रोत -** प्राथमिक स्त्रोत में सूचनाओ का संकलन प्राथमिक आधार पर होता है इनके माध्यम से अनुसन्धानकर्ता अपने अध्ययन विषय से सम्बधित तथ्यों व सूचनाओ को स्वयं एकत्रित या संकलित करता है । चूकि इसमे व्यक्तिगत रूप से प्राथमिक स्त्रोतों पर सूचनाएँ एकत्रित की जाती है । इसलिए इस स्त्रोत से प्राप्त सूचनाएं अत्यधिक गहन, सूक्ष्म व व्यवस्थित होती है । साथ ही अनौपचारिकता भी पाई जाती है ।

(2) **द्वैतीयक स्त्रोत -** द्वैतीयक स्त्रोत वे स्त्रोत होते है जिसमे अनुसन्धान कर्ता व्यक्तिगत स्तर पर प्रत्यक्ष रूप से अध्ययन की सूचनाओं का संकलन नही करता है अपितु सम्बधित अध्ययन की इकाई के व्यक्तिगत प्रलेखो जैसे- पुस्तक, पत्र, डायरी एवं सरकारी रिकार्ड आदि के माध्यम से सूचनाओ का संकलन करता है । इनके सम्बध में श्रीमती पी.वी.यंग का कथन है- "व्यक्तिगत प्रपत्र अनुभव की क्रमबद्धता प्रकट करते है जिनसे लेखक के व्यक्तित्व, सामाजिक

सम्बंधो तथा जीवन दर्शन पर, जो वैषविक वास्तविकता अथवा व्यक्ति प्रधान प्रशंसा के रूप में होती है- पर्याप्त प्रकाश पड़ता है ।

सेल्टिस एवं अन्य (Seltiz and others) ने Research Methods in social Relations' में व्यक्तिगत प्रलेखो का समावेश किया है वे है -

(अ) लिखित प्रलेख ।

(ब) ऐसे प्रलेख जो लेखक के निर्देशन में लिखे गये है ।

(स) वे प्रलेख जो किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत अनुभवो पर प्रकाश डालते हो ।

ये व्यक्तिक प्रलेख सूचनाओ के महत्वपूर्ण स्त्रोत है । कुछ महत्वपूर्ण स्त्रोत निम्नलिखित है:-

डायरियाँ (Diaries)

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के अध्ययन में लिखित प्रलेख में डायरी महत्वपूर्ण स्त्रोत है । डायरियाँ व्यक्तियों द्‌वारा स्वयं लिखी जाती है । डायरी में व्यक्ति अपने जीवन के सुखद व बुरे संस्मरणो को लिखता है साथ ही व्यक्ति की व्यक्तिगत तथा गुप्त बातें लिखता है । यदि हमें व्यक्ति के वास्तविक तथ्य खोजना है तो हमें उस व्यक्ति की डायरी से ही वह सूचना प्राप्त हो सकेगी । क्योंकि ऐसी बहु त सी बातें, जो कि प्रत्यक्ष साक्षात्कार द्‌वारा नही पूछी जा सकती, हमें आसानी से डायरी द्‌वारा वास्तविक व सम्पूर्ण सूचनाएँ मिल सकती है ।

पत्र (Letters)

वैयक्तिक अध्ययन में पत्रो का भी महत्व होता है । यह ठीक है कि पत्रो के द्‌वारा हमें सामग्री व्यवस्थित या क्रमबद्ध रूप में प्राप्त नहीं हो पाती परन्तु फिर भी पत्रो से हमें काफी सामग्री प्राप्त हो सकती है पत्रों द्‌वारा व्यक्ति अपनी भावनाओं व विचारो का आदान-प्रदान करता है कभी-कभी जीवन के गोपनीय तथ्यो को भी इनके द्‌वारा उजागर किया जाता है जवाहरलाल नेहरू द्‌वारा इंदिरा गांधी को लिखे पत्र उनके जीवन के दर्शन कराते है । इसी प्रकार महात्मा गांधी व अन्य महापुरूषों द्‌वारा लिखे पत्र आज भी सुरक्षित है । इस प्रकार यह पता चलता है कि व्यक्तिगत पत्र व्यक्ति विशेष के जीवन के अनेक तथ्यों को स्पष्ट करने में सहायक हे ।

जीवन इतिहास (Life History)-

जीवन इतिहास जीवन का मूर्तिमान स्वरूप है । इसमें जीवन का सार निहित होता है । अधिकतर जीवन इतिहास में त्यक्ति विशेष की पारीवारिक पृष्टभूमि, व्यक्ति के जीवन में घटित घटनाएं, परिस्थिति आदि का विवरण होता है । यह जीवन इतिहास व्यक्ति विशेष के प्रति व्यक्ति की धारणा आदि का विवरण होता है । यह जीवन इतिहास व्यक्ति विशेष द्‌वारा अन्य व्यक्तियों द्‌वारा भी लिखा जाता है अथवा अनुसन्धानकर्ता को कभी-कभी संबधित व्यक्ति द्‌वारा अपनी स्वेच्छा से लिखा जाता है । इस सम्बध में पी.वी.यंग ने (Scientific social survey and research) में लिखा है कि व्यक्तिगत प्रपत्र व्यक्ति के अनुभव की कमबद्धता को प्रकट करते है जिनमें व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं सामाजिक संबधो आदि के बारे में ज्ञान प्राप्त करना

सरल होता है । इसी प्रकार फोटो एलबम, स्कूल, जेल, पुलिस, कोर्ट एवं दफ्तर आदि के रिकार्ड से भी महत्वपूर्ण सूचनाएं प्राप्त हो सकती है ।

प्राथमिक स्त्रोत-

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के प्राथमिक स्त्रोत में साक्षात्कार व अवलोकन दो विधियां ऐसी है जिनमें व्यक्ति स्वयं तथ्यों का संकलन करता हैं । साक्षात्कार अथवा अवलोकन के द्वारा व्यक्ति सम्बधित प्रमुख घटनाओ, विशिष्ट परिस्थितियों के प्रति व्यक्ति की प्रतिकियाए, ऐसी घटनाऐं है जो उस व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करती है और उसके जीवन को नया मोड़ देती है । साक्षात्कार और निरिक्षण के अतिरिक्त व्यक्ति की सामायिक अभिव्यक्तियां, व्यक्ति के मित्रो, नाते-रिशतेदारो व जानकारों द्वारा दी गई सूचनाओ व उनके सम्बंध में व्यक्त किये गये विचार भी वैयक्तिक व गहन अध्ययन में सहायक सिद्ध हो सकते है।

सामाजिक मेल मिलापो वार्तालापो भावात्मक अध्ययनों, मनोवैज्ञानिक परीक्षणों आदि के माध्यम से भी अध्ययन इकाई के सम्बध में प्राथमिक व मौखिक सूचनाएं एकत्रित की जा सकती है ।

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में अध्ययन के स्वरूप के आधार पर सूचनाओं के प्राथमिक और द्वैतियक स्त्रोतों का चयन किया जाता है ।

12.7 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का महत्व (Emportance of case study)

"वैयक्तिक जीवन अध्ययन पद्धति के विरोध में चाहे कुछ भी कहा गया हो, परन्तु यह सत्य है कि सामाजिक इकाईयों के अध्ययन में यह पद्धति आधारभूत रहेगी ।"

"किसी भी सामाजिक अनुसंधान में सूक्ष्म अध्ययन की आवश्यकता हेतु वैयक्तिक अध्ययन की पद्धति महत्वपूर्ण है । इसका अध्ययन सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के साथ-साथ मानसिक समस्याओं के अध्ययन के लिये भी किया जाता है । कूले के अनुसार वैयक्तिक अध्ययन विधि हमारे बोध ज्ञान को विकसित करती है और जीवन पर स्पष्ट प्रभाव डालती है वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का महत्व हम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर स्पष्ट कर सकते है:-

1. **महत्वपूर्ण प्राकल्पनाओ का साधन (Source of important Hypotheses)** - वैयक्तिक अध्ययन विधि अनेक महत्वपूर्ण प्राकल्पनाओं का निर्माण करने में एक साधन के रूप में कार्य करती है इसमें अनेक इकाईयों का विस्तृत एवं सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है । और निष्कर्षो पर पहुँचा जाता है । वास्तव में सम्बंधित साहित्य का अध्ययन एव व्यक्तिक अध्ययन दो ही तो महत्वपूर्ण स्त्रोत है ।

2. **अतिगहन अध्ययन (Most entersive study) -** व्यक्तिक अध्ययन विधि के अर्न्तगत व्यक्तिगत इकाईयों का, जो कि सामाजिक अनुसंधान का आधार है । अतिगहन अध्ययन किया जाता है । इस प्रविधि के अर्न्तगत इकाईयों के केवल समस्या से सम्बधित विशिष्ट पहलुओ का ही अध्ययन नहीं वरन् इकाईयो के सभी पहलुओ का हर दृष्टि से अध्ययन किया जाता है और इस रूप में यह अतिगहन अध्ययन होता है ।

3. **इकाईयों का वर्गीकरण व विभाजन (Classifaction and Distribution of Units) -** व्यक्तिक अध्ययन पद्धति के अध्ययन में इकाईयों का वर्गीकरण व विभात्न किया जाता है वैयक्तिक अध्ययन विभिन्न इकाईयो को विभिन्न समूहो में विभाजित एवं वर्गीकृत करने में सहायक होता है । यह विधि वयक्तिगत अध्ययन में सुक्ष्मता प्राप्त करके इकाईयो के विभिन्न गुणो से परिचित कराने में सहायक होती है । इसमें निदर्शन निकालने में भी आसानी हो जाती है ।

4. **व्यक्तिगत अनुभवों का स्त्रोत (Source of Personal Experiences) -** व्यक्तिगत अध्ययन विधि अनुभवो को प्राप्त करने का एक विस्तृत स्त्रोत है । वास्तव में इस विधि में अन्य विधियो से कहीं अधिक अनुभव अनुसंधानकर्ता को प्राप्त हो जाते है । वैयक्तिक अध्ययन विधि में जीवन के (इकाई से सम्बंधित) प्राय: सूक्ष्म पहलु का अध्ययन किया जाता है और इस रूप में स्वत: ही अनुसंधानकर्ता को अनेक प्रकार के अनुभव होते है ।

5. **मनोवैज्ञानिक अध्ययनो में सहायक (Helpful in the study of thitudes) -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में सर्वाधिक उपयोगी होता है । चूंकि व्यक्ति की अधिकांश कियाएं एवं व्यवहार उसकी मानसिक दशाओं के परिणाम होते है और ये मानसिक दशाए इनकी सूक्ष्म एवं जटिल प्रकृति की होती है कि केवल प्राथमिक एवं द्वितियक स्त्रोतो से उनका अध्ययन नहीं किया जा सकता है मनोवैज्ञानिक प्रकियाऐ जिन परिस्थतियों से उत्पन्न होती है उन्हें केवल व्यक्तिक अध्ययन के द्वारा ही समझा जा सकता है ।

6. **प्रारम्भिक अध्ययन में सहायक (Helpful in preliminary study) -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति प्रारंभिक अध्ययन में सहायक होती है किसी बड़े अध्ययन को प्रारम्भ करने के लिए यह आवश्यक होता है कि प्रारम्भिक स्तर पर ही विषय से सम्बंधित कुछ इकाईयो की जानकारी प्राप्त कर ली जाए । इससे उपकरणो के निमार्ण व निर्देशन की प्राप्ति आदि में सुविधा होती है ।

7. **मनोवृतियों के अध्ययन में सहायक (Helpful in the study of allitudes) -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति मनोवृतियो के अध्ययन में सहायक है । इसके अर्न्तगत व्यक्तिगत रूचियों, मनोवृतियों एवं सामाजिक मूल्यो का अध्ययन किया जाता है । अध्ययनकर्ता जब तक व्यक्तियों की रूचियों, मनोवृतियों एवं सामाजिक मूल्यो एवं विशेष परिस्थितियो मे उनकी प्रतिकियाओ को नही समझ लेता । तब तक अध्ययन में वैज्ञानिकता नही आ पाती है । इस तरह यह पता चलता है कि मनोवृतियो से सम्बधित अध्ययनों को वैयक्तिक अध्ययन द्वारा भली भांति समझा जा सकता है जो इसका एक महत्व है ।

8. **अनुसन्धानकर्त्ता के ज्ञान का विस्तार (Development of Resllarcher's konwlage) -** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का आठवां महत्व यह है कि इसके द्वारा अनुसंधान कर्ता के ज्ञान का विस्तार होता है । इस अध्ययन विधि के द्वारा किसी सामाजिक इकाई से सम्बंधित वैयक्तिक प्रलेखो का अध्ययन करते समय अध्ययन कर्ता अध्ययन के विभिन्न पक्षो का विशलेषण करता है । इससे उनके ज्ञान का विस्तार होता है । एवं उसे स्वयं ही एक अन्तदृष्टि प्राप्त हो जाती है जो अध्ययन की सफलता में सहायक होती है ।

उपर्युक्त विवरण से ये ज्ञात होता है कि वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के अनेक महत्व या गुण है जो इसे उपयोगी बनाते है । प्रो. सी.एच.कूले ने इस प्रविधि का महत्व बताते हुए लिखा है कि ' व्यक्तिक अध्ययन विधि हमारे बोधज्ञान को विकसित करती है एवं जीवन को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करती है यह प्रत्यक्षरूप से व्यवहारो का अध्ययन करती है, न कि अप्रत्यक्ष व अमूर्त साधनो द्वारा ।

"वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की सीमाएं ' दोष (Limitations of case study method) - यद्यपि ये सत्य है कि वैयक्तिक अध्ययन विधि का सामाजिक अनुसन्धान के क्षेत्र में अत्यधिक महत्व है फिर भी इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि इस विधि की अपनी कुछ सीमाएं भी है जो कि निम्नलिखित है-

1. **अप्रमाणिक तथ्य (Unverified facts) -** व्यक्तिगत तथ्यों में कई बार अप्रमाणिक तथ्य एकत्र होते है इनके द्वारा जिन तथ्यों का संग्रह किया जाता है उन्हे प्रमाणित नही किया जा सकता । तथ्यो का सत्यापन नही होने से अध्ययन के निष्कर्ष गलत हो सकते है अत: अप्रमाणिक तथ्य इस पद्धति की एक सीमा है ।

2. **केवल कुछ इकाईयों के आधार पर निष्कर्ष (Conclusions on the basis of few units) -** वैयक्तिक अध्ययन विधि की सबसे मुख्य सीमा यह है कि इसके अन्तर्गत केवल कुछ थोड़ी सी इकाईयों के आधार पर ही निषकर्ष निकाल दिये जाते है और इसी कारण यदि उन विशेष परिस्थितियों अथवा विशेष गुणो को जिनकी उपस्थिति के कारण निष्कर्ष निकाले गये है । ध्यान में न रखा जाए तथा निषकर्षो को समान्य रूप में सभी इकाईयों पर लागू किया जाए तो निशचय ही धोखा खाने की संभावना बनी रहती है ।

3. **अत्यधिक खर्चीली विधि (Most expensive method) -** वैयक्तिक अध्ययन विधि अत्यधिक खर्चीली विधि है साथ ही अत्यधिक समय साध्य है । इसका कारण यह है कि किसी व्यक्ति के सम्बध में तथ्य संकलन करने के लिए उसका जीवन इतिहास, डायरी एवं वातावरण आदि का पूर्ण अध्ययन करना पड़ता है । जिसमें समय अधिक लगता है । साथ ही खर्च भी अधिक होता है ।

4. **निदेशन प्रणाली का अभाव (Lack of sample method) -** वैयक्तिक अध्ययन विधि में निदर्शन का अभाव पाया जाता है । और साथ ही इसमें सही प्रतिनिधि इकाईयों का अध्ययन नहीं हो पाता है । केवल मनमाने ढंग से चुनी हुई कुछ इकाईयों के आधार पर ही अध्ययन करके निष्कर्ष निकाले जाते है जो कि सही नहीं होते है और न ही विश्वसनीय होते है ।

5. **अवैज्ञानिक विधि (unscientific method) -** वैयक्तिगत अध्ययन पद्धति में कुछ हद तक अवैज्ञानिक अध्ययन होता है । इसमे न तो इकाईयो के चुनाव पर किसी प्रकार का नियन्त्रण रहता है और न ही सूचना संकलन करने पर किसी प्रकार का नियन्त्रण रहता है । इसके लिए किसी भी प्रकार के वैज्ञानिक एवं संग्रहित प्रविधि का भी सहारा नहीं लिया जाता है । इस तरह यह पद्धति अवैज्ञानिक है ।

6. **पक्षपात की समस्या (problem of Bais) -** वैयक्तिक अध्ययन विधि में सदैव ही पक्षपात आने की पूर्ण संभावना रहती है । अनुसंधानकर्ता एक व्यक्ति से सम्बधित प्राय: उन सभी घटनाओं एव तथ्यो का अध्ययन कुरता है, जो कि उसके स्वयं के जीवन में भी घटित होते है । इस प्रकार अनुसन्धानकर्त्ता का अपना व्यक्तिगत पक्षपात समाविष्ट हो जाता है और अध्ययन अव्यक्तिक पक्षपात पूर्ण हो जाता है ।

7. **अत्यधिक सीमित अध्ययन (Very limited study) -** व्यक्तिगत अध्ययन विधि में अत्यधिक सीमित अध्ययन. है । इसके द्वारा थोड़ी सी इकाईया के अध्ययन के आधार पर ही समान्य निष्कर्ष प्रस्तुत कर दिये जाते है । ये इकाईया सम्पूर्ण एवं समग्र का प्रतिनिधित्व नहीं कर पाती है । यही कारण है कि अन्य पद्धतियों की तुलना में इस पद्धति से सुचनाए कभी-कभी अपूर्ण एवं अव्यवहारिक होती है इस तरह यह पता चलता है कि अत्यधिक सीमित अध्ययन इस पद्धति का एक दोष या सीमा है ।

व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति की उपयुक्त सीमाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह पद्धति पुर्णतया दोष मुक्त नहीं है । हालांकि सी रोजर्स, एल्टनमयो, आल्फ्रेड किन्से तथा जॉन डोलार्ड आदि ने इस विधि के अन्तर्गत तथ्य संकलन, लेखन एवं सम्पादन के स्तर पर अनेक सुधार किये है । इस तरह यह आशा कि जाती है कि यह पद्धति दोष मुक्त होकर घटनाओं का सूक्ष्म एवं गहन अध्ययन करने में सक्षम सिद्ध होगी ।

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में सावधानियां (Precautions in case sftudy method) - वैयक्तिक अध्ययन पद्धति स्वयं एक वैज्ञानिक पद्धति है इसमें उन सभी चरणों का उपयोग किया जाता है जो वैज्ञानिक पद्धति से सम्बधित होती है इस कारण इसके अध्ययन में कई सावधानियाँ रखनी पड़ती है जॉन डोलार्ड के अनुसार वे निम्न लिखित है:-

1. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में जिस इकाई व व्यक्ति का अध्ययन किया जाना है, उसकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि (Culture Background) को ध्यान में रखना आवश्यक है ।
2. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में इकाई के जीवन पर प्रभाव का भी अध्ययन करना पड़ता है । अर्थात वैयक्तिक अध्ययन के लिए किसी व्यक्ति या इकाई से सम्बंधित घटनाओं को जान लेना ही प्रर्याप्त नहीं होता बल्कि सम्पूर्ण व्यवहारिक घटनाओं का अध्ययन भी आवश्यक है ।
3. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में घटनाओं को व्यक्ति या अध्ययन की इकाई की पारिवारिक व व्यवहारिक पृष्ठभूमि में देखा जाना चाहिए ।
4. वैयक्तिगत अध्ययन पद्धति में अध्ययन की इकाई से सम्बंधित एकत्रित तथ्यों के बारे में यह देखना भी आवश्यक है कि वे उस इकाई को सामाजिक रूप देने में सहयोगी है या बाधक ।
5. इस अध्ययन पद्धति में अध्ययन से प्राप्त सामग्री का विवेचन पूर्व-स्थापित सैद्धान्तिकमान्यताओ के सन्दर्भ में की जानी चाहिए जिससे निष्कर्ष अधिक व्यवस्थित बन सके ।

12.8 सारांश

वैयक्तिक अध्ययन विधि की अपनी कुछ कमियों या सीमाओं के अन्दर ही सम्भवत: अनुसन्धानकर्ता इस प्रविधि का अपने अध्ययन में कम ही उपयोग करते है । इसके लिए थर्स्टन (Thurston), जॉन डोलार्ड (John Dollard) कैली (Kelly) ए किन्से (Kinsey) आदि ने इस विधि के अन्तर्गत आकड़ो के संलकन, लेखन तथा सम्पादन की विधियों में अनेक महत्वपूर्ण सुधार किये है । इस दिशा में जैसे-जैसे प्रगति होती जाएगी वैसे-वैसे व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति में और भी सुधार आता है । इसकी सहायता से हम विभिन्न सामाजिक इकाईयो व घटनाओं का गहन व सूक्ष्म अध्ययन करने में अपनी योग्यता को सिद्ध कर सकेंगें । तब 'एक' के ही अध्ययन से 'अनेक' के विषय में हमारा ज्ञान सार्थक हो सकेगा । इस प्रकार व्यक्तिगत अध्ययन प्रणाली सामाजिक इकाईयों का अध्ययन करने में एवं वैज्ञानिक निष्कर्षो तक पहुँचने में बहु त बड़ा योगदान है ।

12.9 अभ्यास प्रश्न

अतिलघुरात्मक प्रश्न

1. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की परिभाषा लिखिए?
2. वैयक्तिगत अध्ययन पद्धति का प्रयोग सर्वप्रथम किसने किया?
3. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के कोई चार प्राथमिक स्त्रोत बताईये?
4. पत्र व डायरी वैयक्तिक अध्ययन में किस प्रकार सहायक होते है?
5. गुडे व हाट्ट के अनुसार वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली क्या है?

लघुरात्मक प्रश्न शब्द सीमा (150) शब्द

1. वैयक्तिगत अध्ययन पद्धति की कोई चार विशेषताए बताईए?
2. वैयक्तिगत अध्ययन व संख्यात्मक पद्धति में क्या अन्तर है?
3. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के क्या लाभ है?
4. वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली को अपनाने में कौन-कौन सी सावधनियां रखनी चाहिए?

निबन्धात्मक प्रश्न शब्द सीमा (500) शब्द

1. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का सामाजिक अनुसंधान में क्या महत्व है?
2. सामाजिक अनुसन्धान में व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति के गुण व दोषों का विस्तृत वर्णन किजिए?
3. सर्वेक्षण पद्धति तथा व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति में तुलनात्मक अन्तर स्पष्ट करें सामाजिक अनुसंधान में इनकी उपयोगिता का तुलनात्मक मूल्यांकन कीजिए?
4. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति को परिभाषित करते हुए इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालिए?
5. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति क्या है इसके प्राथमिक व द्वैतियक स्त्रोतों का वर्णन करो ।

12.10 सदर्भ ग्रंथ सूची

1	सामाजिक अनुसंधान तथा सर्वेक्षण	:	डा, एस. आर वाजपेयी किताब घर, कानपुर
2	सामाजिक शोध व सांख्यिकी	:	डा. रविन्द्र नाथ मुकर्जी विवक प्रकाशन, दिल्ली
3	सामाजिक अनुसंधान, सर्वेक्षण व सांख्यिकी	:	डा. गणेश पांडेय राधा पब्लिएकशन्स, दिल्ली
4	अनुसंधान-परिचय	:	पारस नाथ राय लक्ष्मीनारायण
5	Research Methodology	:	Dr. Kumar, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल,

इकाई-13

निदर्शन

इकाई की रूपरेखा

13.1 उद्देश्य
13.2 प्रस्तावना
13.3 निदर्शन का अर्थ
13.3.1 निदर्शन के उद्देश्य
13.3.2 निदर्शन के आधार
13.3.3 निदर्शन की शब्दावली
13.4 निदर्शन के प्रकार
13.4.1 संभावना निदर्शन
13.4.1.1 सरल दैव निदर्शन
13.4.1.2 स्वतरीकृत दैव निदर्शन
13.4.1.3 बहुस्तरीय दैव निदर्शन
13.4.1.4 अन्य दैव निदर्शन
13.4.2 गैर संभावना निदर्शन
13.4.2.1 सौद्देश्य निदर्शन
13.4.2.2 स्वयं निर्वाचित निदर्शन
13.4.2.3 अभ्यंश निदर्शन
13.4.2.4 सुबिधात्मक निदर्शन
13.4.2.5 कोटा निदर्शन
13.4.2.6 विस्तृत निदर्शन
13.5 गैर संभावना निदर्शन में पूर्वाग्रह
13.6 निदर्शन की समस्याएँ
13.6.1 निदर्शन का उचित आकार
13.6.2 वैध अथवा प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन
13.6.3 निदर्शन की विश्वसनीयता
13.7 सारांश
13.8 अभ्यास प्रश्न
13.9 कठिन शब्द
13.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

13.1 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप जान सकेंगे कि -

(1) निदर्शन का अभिप्राय क्या है?

(2) निदर्शन के प्रमुख प्रकारों को समझ सकेंगे ।

(3) सरल दैव निदर्शन के चुनाव की विधियों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

(4) सम्भावना और गैर संभावना निदर्शन के गुण और दोषों को समझ सकेंगे ।

(5) निदर्शन की विश्वसनीयता और प्रतिनिधित्वपुर्ता को समझ सकेंगे ।

13.2 प्रस्तावना

वृहद आकार, अधिक समय, व्यय या दुर्गमता के कारण एक बड़े समग्र का पूर्ण रूप से अध्ययन नहीं किया जा सकता अत: ऐसी स्थिति में लक्षित समग्रजन में से कुछ इकाईयों के अध्ययन से सम्पूर्ण समूह की जानकारी प्राप्त की जाती है, इन्हीं चुनी हुई इकाईयों को निदर्शन कहा जाता है । सामामजिक अनुसंधान में निदर्शन के चुनाव अथवा निर्धारण की विधियों या पद्धति के आधार पर इसे दो भागों में बांटा गया है । किसी सर्वेक्षण में वह निदर्शन उत्त माना जाता है जिसमें प्रतिनिधित्व, विश्वसनीयता और लोच का गुण होता है । अत: प्रस्तुत अध्याय में आप निदर्शन के प्रमुख प्रकारों, निदर्शन चुनाव की प्रमुख विधियों और उसके गुण दोषों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

13.3 निर्देशन का अर्थ

सामाजिक अध्ययन की दो विधियाँ हैं -

(i) संगणना (Census) विधि :- अर्थात समस्त इकाईयाँ का अध्ययन तथा

(ii) निदर्शन विधि (Sampling) अर्थात नमूने (प्रतिदर्श) के रूप में चुनी हुई कुछ इकाईयों का अध्ययन ।

अत: प्रत्येक शोधकर्ता, शोध कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व अध्ययन की इकाइयों का आकार देखता है । अगर समग्र का आकार विस्तृत हो या इकाईयों की संख्या अधिक हो और ऐसी स्थिति मे समय, धन तथा कार्यकताओं की कमी हो तो सभी इकाईयों का अध्ययन सम्भव नहीं हो पाता हैं । ऐसी दशा में कुछ इकाईयों के अध्ययन से सम्पूर्ण समूह की जानकारी प्राप्त की जाती है । इन चुनी हुई इकाईयों को निदर्शन कहा जाता है । इस प्रकार निदर्शन विशाल समग्र का एक अंश होता है । निदर्शन को समग्र का प्रतिनिधि तभी कहा जाएगा । जब इसमें समग्र की सभी विशेषताएं मौजूद हो जिसमें से इसे लिया गया हो । जैसे रक्त की एक बूँद की जांच शरीर में रोग को बता देती है, बोरी में से निकाला गया एक मुट्ठी अनाज उसकी गुणवत्ता को बता देता है उसी प्रकार निदर्शन भी समग्र का ही प्रतिनिधित्व करता है । सामाजिक अनुसंधान में निदर्शन के चुनाव के दो कारण हैं :-

(1) समग्र के अध्ययन की तुलना में कम समय, धन और श्रम की आवश्यकता होती है ।

(2) निदर्शन के अध्ययन से भी लगभग वही परिणाम प्राप्त होते हैं जो कि समग्र के अध्ययन से प्राप्त होते है ।

निदर्शन चुनने का यह दूसरा कारण अधिक महत्वपूर्ण है ।

गुडे और हाट्ट :- "एक निदर्शन, जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, किसी विशाल सम्पूर्ण का छोटा प्रतिनिधि है ।

पी. वी. यंग :- निदर्शन उस सम्पूर्ण समूह अथवा योग का एक लघुचित्र है जिसमें से निदर्शन लिया गया है ।

किसी जनसंख्या अथवा समग्र में से चुनी हुई कुछ इकाईयों अथवा 'अंशों को जो सम्पूर्ण समग्र का उचित प्रतिनिधित्व कर सके निदर्शन कहते है । यह विशाल समग्र से लिए गए लोगों का एक अंश है ।

13.3.1 निदर्शन के उद्देश्य (Purpose of sampling) - वृहद आकार, अधिक समय, अधिक व्यय या दुर्गमता के कारण एक बड़े समग्र का पूर्ण रूप से अध्ययन नहीं किया जा सकता । अत: सीमित और विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र में फैली जनसंख्या निदर्शन अध्ययन को आवश्यक बना देते हैं । इसी सम्बन्ध में सारान्ताकोस ने निदर्शन के कुछ उद्देश्यों का उल्लेख किया है-

(1) जब समग्रजन अधिक विस्तृत और विशाल क्षेत्र में फैला हो तब ऐसी स्थिति में समग्रजन का अध्ययन संभव नहीं होता और निदर्शन से जानकारी प्राप्त की जाती है।

(2) समग्र जन की तुलना में यदि प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चुनाव किया जाए जो उच्चतम शुद्धता वाले आकेड़े प्राप्त होते है ।

(3) निदर्शन के अध्ययन से वैध और तुलनात्मक परिणाम प्राप्त होते हैं अर्थात कई बार समग्र के अध्ययन से आधार सामग्री के संकलन में लगने वाला लम्बा समय विलम्ब हो जाने के कारण सामग्री को व्यर्थ या अप्रचलित कर देता है ।

(4) निदर्शन से आँकड़े का संकलन करना अध्ययनकर्ता के लिए अधिक आसान होता है ।

(5) व्यय की दृष्टि से भी यह कम खर्चीला है क्योंकि इसमें अधिक सर्वेक्षणकर्ताओ की आवश्यकता नहीं होती ।

(6) अनेक अनुसंधान जो कि गुणवत्ता नियंत्रण परीक्षण से सम्बन्धित होते हैं में भी निदर्शन सहायक होता है ।

(7) निदर्शन का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य समष्टि (समग्र) के बारे में अनुमान लगाना भी है । यह अनुमान आगमित या निगमित हो सकते हैं आगमन में एक व्यक्ति से सामान्यीकरण या सामान्य सिद्धान्त बनाया जाता है ।

13.3.2 निदर्शन के आधार (Bases of Sampling)

निदर्शन के पीछे महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह है कि इकाईयों के अध्ययन के द्वारा समग्र के विषय में ज्ञान प्राप्त करना तथा निदर्शन से प्राप्त निष्कर्षो को समग्रंजन पर लागू करना है, लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि निदर्शन का अध्ययन सदैव समग्रजन का सही चित्र प्रस्तुत करेगा । अर्थात निदर्शन पद्धति केवल कुछ दशाओं में ही प्रयोग मे ली जा सकती है । यह कुछ

सामान्य तत्वों पर आधारित होता है । प्रत्येक अध्ययन में निदर्शन संभव भी नहीं होता और व्यावाहारिक भी नहीं । निदर्शन चुनाव की तीन प्रमुख मान्यताएं या आधार हैं :-

(i) **जनसंख्या की सजातीयता (Homongengncigy of Population) -** जनसंख्या की सजातीयता का अभिप्राय अध्ययन विषय से संबंधित इकाईयों में एकरूपता और अनेक अधिकांश गुणालक्षण में समानता से है । ऐसे निदर्शन के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष ही समग्रजन पर लागू किए जा सकते हैं ।

(ii) **प्रतिनिधित्वपूर्ण चुनाव (Representative Selection) -** निदर्शन में उचित प्रतिनिधित्व बनाए रखने के लिए समग्र समूह की प्रकृति तथा आकार के अनुसार उसे कुछ वर्गो में विभाजित करना आवश्यक है । यदि निदर्शन सम्पूर्ण जनसंख्या के अधिकांश गुणों का प्रतिनिधित्व नहीं करता तो निदर्शन का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

(iii) **उचित परिशुद्धता (Enogugh Acciracy) -** समस्त जनसमूह की इकाईयों की प्रकृति में विभिन्नता होने पर विभिन्न भागों में से निकाले गये निदर्शन अधिक परिशुद्ध होते हैं । अर्थात विभिन्न निदर्शन के आधार पर निकाले गये निदर्शन शतप्रतिशत परिशुद्धता ना भी हो फिर भी पर्याप्त मात्रा में परिशुद्धता होनी चाहिए ।

13.3.3 निर्देशन की महत्वपूर्ण शब्दावली (Terms in sampling)

निदर्शन में कुछ मूल अवधारणाओं को एक अनुसंधान प्रयोजना से पूर्व समझना अनिवार्य है ।

(i) **समष्टि या समग्रजन (Universe of Population) -** समस्त इकाईयो / मामलों का योग जो विनिदेशनो के अभिकल्पित (Deslgnated) समूह की पुष्टि (Conform) करते हैं, समग्र कहलाते हैं । समग्रजंन लोगों, चरों, श्रमिकों, छात्रों ग्राहकों, कृषकों, पंजीकृत मतदाताओं, विधायकों आदि का समूह हो सकता है । समग्रजन का विशेष प्रकार अनुसंधान के उद्देश्य पर निर्भर करता है ।

(ii) **निदर्शन के घटक (Sampling elements) -** समग्रजन की प्रत्येक इकाई (व्यक्ति, परिवार, समूह, संगठन) जिसके विषय में जानकारी एकत्र की जाती है निदर्शन का घटक कहलाता है ।

(iii) **निदर्शन इकाई (Sampling Unit) -** निदर्शन में आधार सामग्री के विश्लेषण या चुनाव के लिए एकाकी सदस्य या सदस्यों का समूह घटक हो सकता है । यह आवश्यक नहीं है कि निदर्शन की इकाई एक व्यक्ति हो अपितु यह एक घटना, एक शहर, एक गाँव या एक राष्ट्र भी हो सकते है ।

(iv) **निदर्शन का ढांचा (Sampling Frame) -** निदर्शन के ढाँचे को कार्यकारी समग्रजन भी कहते हैं । क्योंकि यह वह सूची प्रदान करता है जिस पर कार्य किया जा सकता है । इस प्रकार यह सभी इकाईयो / घटकों की पूर्ण सूची होती है जिसमें से निदर्शन चुना जाता है ।

(v) **लक्ष्यित समग्रजन (Target Population) -**लक्ष्यित समग्रजन वह है जिस पर अनुसंधान सामान्यीकरण करना चाहता है । इस प्राकर लक्षित समग्रजन का अभिप्राय उन आधारों से है जिनमें यह निर्धारित किया जाता है । कि कौनसे मामले समग्रजन में शामिल है

और कौनसे नहीं । लक्ष्यित समग्राजन को सुस्पष्ट रूप से परिभाषित करने वाली दो विशेषताऐ हैं :- भौगोलिक सीमा व स्पष्ट समय सीमा ।

(vi) **निदर्शन विशेषक (Trait) -** निदर्शन विशेष वह घटक हैं जिसके आधार पर समष्टि में से निदर्शन लिया जाता है । यह गुणात्मक (लक्षणिक) या मात्रात्मक (चर) घटक हो सकता है, जैसे लिंग, आयु, गाँव आदि । (vii) निदर्शन अंश (Fraction) - यह निदर्शन में शर्तमेल किया जाने वाला समग्रजन का एक अनुपत है । निदर्शन अंश ज्ञात करने का सूत्र निदर्शन का आकार समग्रजन अथवा छत है ।

(vii) **निदर्शन अनुमान (Estimate) -** किसी समग्रजन में से चुने गए निदर्शन के आधार पर जो परिणाम ज्ञात होता है उसके आधार पर समग्रजन के बारे में प्राप्त औसत ज्ञान निदर्शन अनुमान कहलाता है ।

(viii) **पक्षपाती निदर्शन (Biased sample) -** जब निदर्शन का चुनाव इस प्रकार से किया जाए कि उसमें कुछ तत्वों के प्रतिनिधित्वपूर्ण की सम्भावना अन्य तत्वों से अधिक हो तब इसे पक्षपाती निदर्शन कहा जाता हैं । अर्थात एक वर्ग का प्रतिनिधित्व हो और समग्रजन के दूसरे वर्ग का बिल्कुल प्रतिनिधित्व नहीं हो तो वह पक्षपातपूर्ण निदर्शन कहलाता है ।

(ix) **पैरामीटर (Parameters) -** समग्रजन की विशेषताओं को पैरामीटर कहा जता है । साण्डर्स और पिन्हे (1983-99) के अनुसार पैरामीटर एक समग्रजन के लिए चर का संक्षिप्त वर्णन है ।

(x) **निदर्शन त्रुटि (Sampling Errors) -** निदर्शन त्रुटि कुल समग्रजन मूल्य और निदर्शन मूल्य का अन्तर होता है । निदर्शन का आकार जितना अधिक छोटा होता है निदर्शन त्रुटि का आकार उतना ही बड़ा होता है और निदर्शन बड़ा होने पर यह त्रुटि कम होती जाती है । यह त्रुटि निदर्शन की प्रतिनिधित्वता पर निर्भर करती है । किसी भी शोधकार्य में निदर्शन त्रुटि जितनी कम होगी निदर्शन परिशुद्धता उतनी ही अधिक होगी ।

जब शोधकार्य बड़े पैमाने पर किया जाए और अध्ययन का क्षेत्र काफी विस्तृत हो, समग्र धन और कार्यकर्ताओं की कमी हो तो ऐसी स्थिति में निदर्शन विधि उपयोगी होती है । यदि निदर्शन का चुनाव सावधानी पूर्वक किया जाए तो श्रेष्ट परिणाम प्रदान करता है । इकाईयों की संख्या सीमित होने पर निदर्शन विधि में गहन अध्ययन भी संभव हैं । किसी सामाजिक अनुसंधान में जब इकाईयाँ भौगोलिक रूप से बहुत दूर-दूर तक फैली हो तो ऐसी स्थिति में निदर्शन के द्वारा आँकडो का संकलन सर्वेक्षण आयोजन एवं संगठन को न केवल सरल बनाता है बल्कि वास्तविक परिस्थितियों को सही रूप में चित्रण प्रस्तुत करते हुए परिशुद्ध परिणाम भी प्रदान करता है।

सामाजिक अनुसंधान में निदर्शन के समय, धन, श्रम और गहन अध्ययन की दृष्टि से उपयोगी होते हुए भी कुछ दोष दिखाई देते है । निदर्शन के चुनाव में सबसे बड़ी आवश्यकता विशेष इतन की है पूर्ण ज्ञान के अभाव में विभिन्न चरों, घटकों को ध्यान में रखते हुए प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन चुन पाना सम्भव नहीं हैं किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए यदि अभिनतिपूर्ण निदर्शन का चुनाव कर लिया जाए तो अध्ययन के निष्कर्ष भ्रान्तिपूर्ण हो सकते हैं

। अत: जहाँ इकाईयों में सजातीयता न हो, उनमें परिवर्तनशीलता हो, संख्या घटती बढ़ती हो. उनमें परस्पर कोई स्थायी संबंध न हो तो ऐसी स्थिति में निदर्शन उपयोगी नहीं है ।

निदर्शन की सफलता के लिए निदर्शन का चुनाव भली-भांति और सावधनीपूर्वक किया जाना चाहिये । इस संबंध में पी. वी. यंग के अनुसार त्रुटिपूर्ण बड़े निदर्शन की तुलना में सावधानीपूर्वक होने के साथ-साथ पर्याप्त आकार, और निष्पक्षता पर निर्भर करती है । अत: निदर्शन चुनाव की आवश्यकता है कि 'उसमें अध्ययनकर्ता की अभिनति नहीं होना चाहिये अपितु अन्या शोधकर्ताओं के अनुभवों एवं तार्किक ज्ञान पर आधारित होने चाहिये ।

निदर्शन का चुनाव एक तकनीकी प्रक्रिया है अत: इसका चुनाव करने वाले व्यक्ति को चुनाव की पूरी प्रक्रिया की पूरी जानकारी होनी चाहिये । निदर्शन चुनाव की प्रक्रिया का पहला चरण समूह का उचित निर्धारण है अर्थात भौगोलिक, सामुदायिक, घटनात्मक या गुणात्मक आधार पर निश्चित या अनिश्चित भाग में बांटी जाना चाहिये । दूसरे चरण में शोधकर्ता निदर्शन हेतु इकाईयों को निश्चित किया जाता है । यह इकाई शक्ति, परिवार, व्यवसाय, निवास क्षेत्र आदि हो सकती है । इकाईयों का विषय के अनुरूप होना चाहिये । तीसरे चरण में समग्रजन की सूचियाँ तैयार की जाती है, जो की कई बार तैयार मिल जाती हैं और कभी-कभी अध्ययनकर्ता को तैयार करनी पड़ती है । सूची के स्त्रोत में जनगणना रिपोर्ट, करदाता, विद्यार्थी, अध्यापक सूचियाँ आदि हैं । एक श्रेष्ठ सूची का पूर्ण, नवीन, वैघ और विषयानुरूप होना आवश्यक है ।

चौथे चरण में शोधकर्ता निदर्शन का आकार तय करता है । निदर्शन के रूप में होता है । यदि निदर्शन का आकार बड़ा हो तो उप निदर्शन निकाले जाते हैं । निदर्शन के आकार का छोटा या बड़ा होना समग्र इकाईयों की संख्या, प्रकृति एवं विशेषता पर निर्भर करता है ।

निदर्शन का अन्तिम चरण समग्रजन में से अध्ययन समस्या, समग्र की प्रकृति, साधन तथा कार्यकर्ताओं की संख्या के अनुरूप इकाईयों का चुनाव करना है ।

13.4 निदर्शन के प्रकार (Types of Sampling)

निदर्शन के चुनाव अथवा निर्धारण की विधियों या पद्धति के आधार पर इसे दो भागों में बांटा गया है, क्योंकि विभिन्न प्रकार की अध्ययन समस्याओं में किसी एक ही पद्धति का प्रयोग संभव भी नहीं है और अनुचित भी है । सामान्यतया निदर्शन पद्धति को संभावना सिद्धान्त (Probability theory) के आधार पर दो भागो में बांटा गया है । (1) सम्भावना निदर्शन (11) गैरसंभावना निदर्शन ।

13.4.1 संभावना निदर्शन (Probability Sampling)

सम्भावना निदर्शन वह निदर्शन है जिसमें समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में चुने जाने की समान सम्भावना होती है । निदर्शन की यह विधि अत्यधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण होती है लेकिन यह अधिक खर्चीली, अधिक समय और अपेक्षाकृत अधिक जटिल भी होती है । फिर भी आज शोधकार्य हेतु बड़े और प्रतिनिधि निदर्शन के चयन का प्रमुख आधार बनी हुई हैं।

ब्लेक और चैम्पियन के अनुसार (1976268) सम्भावना निदर्शन के लिए निम्नलिखित बातों का होना अनिवार्य है-

(i) अध्यन के समग्रजन की पूर्ण सूची उपलब्ध हो ।

(ii) समग्रजन का आकार ज्ञात होना चाहिये ।

(iii) वांछित निदर्शन का आकार स्पस्टरूप से ज्ञात होना चाहिये ।

(iv) प्रत्येक इकाई को निदर्शन में चुने जाने का समान अवसर प्राप्त हो ।

संभावना निदर्शन को प्रमुख तीन भागों में बांटा गया है-

(i) सरल दैव निदर्शन ।

(ii) स्तरीकृत दैव निदर्शन ।

(iii) बहु स्तरीय दैव निदर्शन ।

13.4.1.1 सरल दैवनिदर्शन (sample Random Sampling) : शोधकार्य के दौरान किसी भी पक्षपात से बचने के लिए अध्ययनकर्ता के द्वारा संयोग के आधार पर निदर्शन का चुनाव किया जाता है, परिणामस्वरूप यह अधिक विश्वसनीय और प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है ।

गुडे और हैट्ट : दैव निदर्शन में समग्र की इकाईयों को इस प्रकार क्रतबद्ध किया जाता है कि चयन प्रक्रिया उस समग्र की प्रत्येक इकाई को चुनाव की समान सम्भावना प्रदान करती है ।

सरल दैव निदर्शन विधि को स्पष्ट करते हुए पॉर्टेन लिखते हैं कि इस पद्धति से निदर्शन के चुनाव हेतु निम्न बातें होना अनिवार्य है

(1) समग्र की इकाइयां हो ।

(2) उनका आकार लगभग एक समान हो ।

(3) प्रत्येक इकाई एक-दूसरे से स्वतंत्र होनी चाहिये ।

(4) प्रत्येक इकाई को समग्र में से चुनाव का समान अवसर मिलना चाहिये ।

(5) निदर्शन चुनाव की विधि भी स्वतंत्र हो ।

(6) प्रत्येक इकाई तक अध्ययनकर्ता की पहुँच भी सुलभ होनी चाहिये ।

(7) एक बार चुनी हुई इकाईयों को निदर्शन में बदलना नहीं चाहिये ।

13.4.1 सरल दैव निदर्शन चुनाव की प्रविधियाँ

सरल दैव निदर्शन के चुनाव की कई विधियाँ प्रचलित हैं जिनमें प्रमुख तीन (i) लॉटरी विधि, (ii) कार्ड विधि (iii) टिपेट विधि है ।

लॉटरी विधि (Lottery method)

इस विधि को आकस्मिक विधि भी कहते हैं । लॉटरी विधि में निदर्शन का चुनाव तीन चरणों में किया जाता है । प्रथम चरण में निदर्शन का ढांचा तैयार करते हुए समग्रजन की इकाईयों की सूची वर्णमाला क्रम संख्या के रूप में व्यवस्थित की जाती है । दूसरे चरण में निदर्शन के ढाँचे की सूची के क्रमांक कागज के छोटे टुकड़ों पर लिखकर कागजों को भली भांति किसी मटके या ड्रम में रखा जाता है और तीसरे चरण में सभी कागजों को अच्छी तरह से

मिलाकर एक-एक कागज को ड्रम से निकाला जाता है और यह प्रक्रिया तब तक चलती है जब तक कि उत्तदाताओं की वांछित संख्या प्राप्त न हो जाए ।

कार्ड विधि

इस विधि में रंगीन कार्डो अथवा छोटे-छोटे टिकटों पर लॉटरी विधि के समान समग्र की इकाईयों की संख्या लिखकर उन्हें किसी ड्रम में भर दिया जाता है । अनेक बार ड्रम को हिला कर एक-एक कार्ड निकाले जाते हैं । यह कार्य भी उतनी बार किया जाता है, जितनी इकाईयों को निदर्शन में चुनना होता है ।

टिपेट विधि

टिपेट के द्वारा रेण्डम संख्याओं की चार-चार अंकों वाली 10400 संख्याओं की एकतालिका बनाई गई । जिसमें संख्याओं का कोई क्रम नहीं हैं । इस विधि में जितनी इकाईयों वाले समग्र का निदर्शन चुनना हो उसे सूची के किसी भी पृष्ठ से रेण्डम रूप से चुन लिया जाता है । यदि समग्र की संख्याए केवल दो या तीन अंको वाली हो तो सूची की संख्याओं में बायीं ओर से प्रथम तीन या दो अंक मान लिये जाते है । जैसे शहर के सात अंग्रेजी माध्यम के पूर्व प्राथमिक स्कूलों में सेवारत 200 अध्यापक एक दो दिवसीय संगोष्ठी में भाग लेने के लिए आवेदन करते है । आयोजकों के पास केवल 30 सहभागियों को खर्चा देने की व्यवस्था है तो निदेशक प्रत्येक आवेदक को 001 से 200 तक की संख्याएं प्रदान कर टिपेट तालिका के किसी भी पृष्ठ से 00 व से 200 के भीतर की 30 संख्याओं को चुन लेगा । यह विधि अधिक सरल मानी जाती है ।

सरल दैव निदर्शन के लाभ :-

(1) सरल दैव निदर्शन में सभी इकाईयों के चयन के समान अवसर होते है ।

(2) निदर्शन चुनाव की यह विधि सबसे सरल और संचालन में सबसे आसान हैं ।

(3) इस विधि का प्रयोग सम्भावना निदर्शन की अन्य विधियों के साथ भी किया जा सकता है ।

(4) इस निदर्शन के चुनाव में त्रुटियों की सम्भावना कम रहती है ।

(5) निदर्शन में चुनी हुई इकाईयों में समग्र के अधिकांश गुण होने के कारण प्रतिनिधित्व का गुण पाया जाता है।

सरल दैव निदर्शन की हानियाँ :-

(1) समग्रजन के बड़े पैमाने पर होने से इकाईयों का सूचीकरण कठिन होता है ।

(2) निदर्शन में चुनी हुई ईकाईयों का विस्तृत फैलाव होने के कारण उनसे सम्पर्क कठिन होता है ।

(3) यदि तुलना के उद्देश्य से अनुसंधानकर्ता उत्तरदाताओं को उप समूहों या स्तरों में तोड़ना चाहे तब इसका प्रयोग नहीं कर सकता ।

13.4.2 स्तरीकृत दैव निदर्शन

स्तरीकृत दैव निदर्शन के इस स्वरूप में समग्रजन को उप समूहों या स्तरों में बांटा जाता है । और प्रत्येक स्तर से एक निदर्शन लिया जाता है । इन्हीं उप-प्रतिदर्शो से अध्ययन का अन्तिम निदर्शन बनता है । इस विधि में समग्रजन को समजातीय स्तरों में बांट लिया जाता है फिर प्रत्येक स्तर से सरल दैव प्रतिदर्श चुना जाता है । समग्रजन को समजातीय स्तरों में विभाजन एक या अधिक कसौटियों पर आधारित है जैसे लिंग, आयु, वर्ग, शैक्षिक, स्तर आवासीय पृष्ठभूमि, परिवार का प्रकार, धर्म, व्यवसाय आदि ।

स्तरीकृत निदर्शन के दो प्रकार हैं- (1) अनुपातीय (2) गैर-अनुपातीय निदर्शन । प्रथम प्रकार में प्रतिदर्श इकाई के आकार के अनुपात में होती है जबकि दूसरे में प्रतिदर्श इकाई का लक्ष्यित समग्रजन की इकाई से कोई संबंध नहीं होता । यहाँ एक उदाहरण दिया जा रहा है । मान लें कि 1000 व्यक्तियों के समग्रजन को धर्म के आधार पर पाँच समूहों में विभक्त कर स्तरीकृत किया जाता है और प्रत्येक समूह में निम्नलिखित संख्या में व्यक्ति हैं- हिन्दु-500, जैन-200, सिख- 150, मुस्लिम- 100 और अन्य-50 अनुपातीय प्रतिदर्श इस प्रकार होगा ।

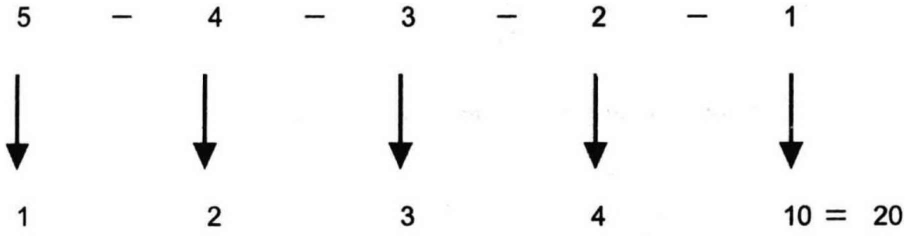

गैर–अनुपातीय प्रतिदर्श

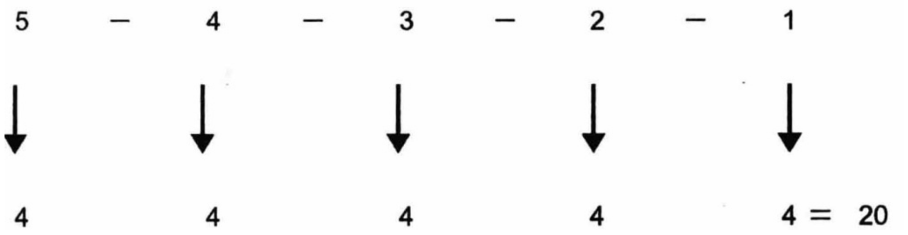

स्तरीकृत दैव निदर्शन के लाभ :-

1. चयनित निदर्शन विभिन्न समूहों और विशेषताओं के प्रतिमानों को वांछित अनुपात में प्रतिनिधित्व कर सकता है।
2. इस निर्देशन का उप-श्रेणियों की तुलना करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है ।
3. यह सरल देव. निदर्शन से अधिक सूक्ष्म हो सकता है ।

स्तरीकृत दैव निदर्शन की हानियाँ :-

इसमें सरल दैव निदर्शन की अपेक्षा अधिक प्रयास की आवश्यकता होती है । इसमें सांख्यिकीय दृष्टि से सार्थक परिणाम उत्पन्न करने के लिए सरल दैव निदर्शन की अपेक्षा

अधिक बड़े आकार के निदर्शन की आवश्यकता होती है क्योंकि प्रत्येक स्तर से कम से कम 20 व्यक्ति सार्थक तुलना करने के लिए आवश्यक होते है।

नियमित अंक विधि (व्यवस्थित या अन्तराल)

सरल शब्दों में, इसमें प्रथम उत्तरदाता को दैव रूप से चुना जाता है और फिर प्रत्येक वे व्यक्ति को चुना जाता है । n एक संख्या है जिसे निदर्शन अन्तराल कहा गया है ।

मोजर ने इसे अर्ध-दैव निदर्शन बताया है । इसके अन्तर्गत, किसी पूर्व-निर्धारित व्यवस्था अथवा क्रम के अनुसार समस्त इकाईयों को लिखकर, उनमें निदर्शन चुन लिया जाता है । इसलिए श्रीमती यंग के अनुसार, यह नियमित-अन्तराल निदर्शन है । उदारण के लिए, किसी विद्यालय के 500 विद्यार्थियों में से केवल 25 का निदर्शन लेना है तो प्रत्येक 20 के पश्चात आने वाली इकाईयों को क्रमानुसार छाँट लेंगे । पहली इकाई 120 तक समूह में कहीं से भी ले सकते हैं, इस प्रकार निदर्शन 2, 22, 42, .62 अथवा 8, 24, 48.. इत्यादि होंगे । इसमें प्रारम्भिक सूची में पक्षपात हो सकता है फिर भी सभी इकाईयों को सम्मिलित होने का समान अवसर मिल जाता है । प्राय: इसे (1) संख्यात्मक अथवा क्रमानुसार अंकन, (2) भौगोलिक अंकन, या (2) वर्णानुसार अंकन पर आधारित किया जा सकता है । यह साधारण निदर्शन में एक सुधार है ।

व्यवस्थित निदर्शन सरल दैव निदर्शन से इस अर्थ में भिन्न होता है कि सरल दैव निदर्शन में चयन परस्पर स्वतंत्र होते हैं जब कि व्यवस्थित निदर्शत्त में निदर्शन इकाईयों का चयन पूर्ववर्ती इकाई के चयन पर निर्भर होता

व्यवस्थित निदर्शन के लाभ :-

(1) यह निदर्शन प्रयोग करने में आसान और सरल होता है

(2) यह निदर्शन तीव्र होता है तथा अनेक चरणों को समाप्त करता है जो कि सम्भावना निदर्शन में प्रयोग किये जाते है ।

(3) घटकों को निकालने में हुई त्रुटियां अपेक्षाकृत कम महत्व की होती है ।

व्यवस्थित निदर्शन की हानियाँ :-

(1) यह दो चुनी हुई संख्याओं के बीच के सभी व्यक्तियों की उपेक्षा कर देता है, फलस्वरूप अनेक समूहों के अत्यधिक व निम्नतम प्रतिनिधित्व की सम्भावना अधिक हो जाती है।

(2) चूंकि प्रत्येक घटक को चयन करने का अवसर नहीं होता इसलिए यह सम्भावना दैव निदर्शन नहीं है । (ब्लैक एण्ड चैम्पियन, 1976:301)

13.4.1.3 बहु स्तरीय दैव निदर्शन

इस निदर्शन में समग्र की सभी संख्याओं को पहले सजातीय श्रेणियों अथवा वर्गो में विभाजित करके, उनमें से दैव-निदर्शन निकाला जाता है । पॉर्टन के अनुसार, इसमें प्रत्येक श्रेणी के अन्तर्गत मामलों का अन्तिम चुनाव तो संयोग द्वारा ही होता है।

दैव-निदर्शन के गुण :-

(1) किसी महत्वपूर्ण भाग की उपेक्षा नहीं होती है ।

(2) चुनाव अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है ।

(3) इसमें लोच होने के कारण, निदर्शन इकाईयों में आवश्यक परिवर्तन संभव है ।,

(4) दैव-निदर्शन भी होने के कारण, इसमें निष्पक्षता भी होती है ।

(5) समय तथा धन की बचत होती है तथा सम्पर्क सुविधापूर्ण हों जाता है ।

दैव-निदर्शन के दोष -

(1) न्यायोचित वर्गीकरण के अभाव में निदर्शन पक्षपातपूर्ण हो सकता है ।

(2) अधिक या बहुत क्रम इकाईयों की दशा होने पर निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं रहता ।

(3) वर्गो में अधिक अन्तर होने पर इकाईयाँ चुनना कठिन होता है ।

(4) मिश्रित गुणों वाली इकाईयों का वर्गीकरण कठिन होता है ।

13.4.1.4 अन्य दैव निदर्शन

13.41.4.1 समूह / क्षेत्रीय निदर्शन

बड़े सर्वेक्षणों में, जहाँ समग्र अधिक जटिल होता है, श्रेणियाँ बनाने से पूर्व, उसे प्रमुख समूहों अथवा भौगोलिक क्षेत्रों में विभाजित कर दिया जाता है । और फिर या तो सभी समूहों या चयनित समूहो मे से प्रतिदर्श निकाल लिये जाते है । यदि विधि तब अपनाई जाती है जब (अ) अध्ययन के लिए समूह कसौटी महत्वपूर्ण हो, (ब) आर्थिक दृष्टि से विचार करना महत्वपूर्ण हो ।

प्रारम्भिक समूहों को प्राथमिक निदर्शन इकाईयाँ कहा जाता है, प्राथमिक समूहों के भीतर के समूहो को गौण निदर्शन इकाईयाँ कहा जाता है गौण समूहों के भीतर के समूहों के बहु अवस्था समूह कहा जाता है । जब समूह भौगोलिक इकाईयाँ होते है, इसे क्षेत्र निदर्शन कहां जाता है । उदारणार्थ :- एक शहर को अनेक वार्डो में, प्रत्येक वार्ड को क्षेत्रों में, प्रत्येक क्षेत्र को मोहल्ले में और मोहल्ले को लाईनों में विभक्त कर दिया जाना ।

समूह निदर्शन के लाभ -

(1) इस प्रतिदर्श को लाग करना बहुत आसान होता है जब कि बड़ी संख्या मे समग्रजन का अध्ययन करना हो या बड़े भौगोलिक क्षेत्र का अध्ययन करना हो।

(2) इस विधि में निदर्शन की अन्य विधियों की अपेक्षा व्यय काफी कम आता है ।

(3) उत्तरदाताओं को आसानी से प्रतिस्थापित किया जा सकता है ।

(4) इसमें लचीलापन संभव है ।

(5) समूहों की विशेषताओं का अनुमान लगाया जा सकता है ।

(6) यह प्रशासनिक दृष्टि से सरल होता है क्योंकि इसमें व्यक्तियों की पहचान करने की कोई आवश्यकता नहीं होती ।

(7) इसका उपयोग तब हो सकता है जब व्यक्तियों को दैवी रूप से चयनित करना असुविधाजनक या अनैतिक हो ।

समूह निदर्शन की हानियाँ :-

(1) एक राज्य से एक जिले या एक ब्लाक से एक गाँव का चयन करने में प्रत्येक समूह का आकार समान नहीं होता ।

(2) जिला या गाँव या तो छोटे मध्यम या बड़े आकार के हो सकते है । समूह निदर्शन और स्तरीकृत निदर्शन में अन्तर यह है कि समूह निदर्शन में तो समजातीय समूहों का वर्गीकरण विषमजातीय समूहों में किया जाता है जब कि स्तरीकृत निदर्शन में विषमजातीय समूह समजातीय इकाईयों में स्तरीकृत किए जाते है ।

13.4.1.4.2 बहु-चरणी निदर्शन

इस निदर्शन में निदर्शन विभिन्न अवस्थाओं में चुना जाता है लेकिन समग्रजन के अन्तिम प्रतिदर्श का ही अध्ययन किया जाता है । उदारण के लिए गाँवों में पंचायत व्यवस्था के अध्ययन के लिए, भारत को चार क्षेत्रों में बांटा जाता है (जैसे-उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम) प्रत्येक क्षेत्र से एक राज्य चुना जाता है (जैसे-पंजाब, राजस्थान, असम और आन्धप्रदेश) प्रत्येक राज्य से एक जिला, प्रत्येक जिले से एक विकास खण्ड और प्रत्येक विकास खण्ड से 3 गाँव चुने जाते हैं । इससे हमें भारत के विभिन्न भागों में पंचायतों की कार्य प्रणाली की तुलना करने में मदद मिलेगी । प्रत्येक अवस्था में निदर्शन दैव ही होगा लेकिन यह सुविचारित या सोद्देश्य भी हो सकता है ।

13.4.1.4.3 दोहरा या पुनरावृत निदर्शन

जब पहली बार निकाले गये निदर्शन आवश्यक परिणाम नहीं दे पाते हैं तो थोड़े से निदर्शन मिलाने पड़ते हैं, इसे ही बहु निदर्शन कहते है । इनमें दोहराए जाने या अधिक आवृतियों का प्रयोग किया जाता है तथा कई-कई बार निकाले गये निदर्शनों को मिला-मिला कर उनका एक मिला-जुला सा रूप बना लिया जाता है ।

13.4.2 गैर-संभावना निदर्शन

इन निदर्शनों में संभावना अथवा संयोग का महत्व नहीं होता है । यह प्रतिनिधित्व का दावा नहीं करता और इसका प्रयोग गुणात्मक अन्वेषणात्मक विश्लेषण में होता है । इसके प्रकार हैं- सुविधाजनक, सोद्देश्य, कोटा, स्पे बॉल और स्वेच्छा निदर्शन है । इन्हें निम्नांकित प्रकार से समझा जा सकता है ।

13.4.2.1 सोद्देश्य निदर्शन

इसमें निदर्शन का चुनाव किसी विशेष उद्देश्य से होता है, इसलिए इसे उद्देश्यपूर्ण, निर्णय-संबंधी अथवा सविचार निदर्शन कहते है ।

इस निदर्शन में जिसे निर्णायात्मक निदर्शन भी कहते हैं, अनुसंधानकर्ता उद्देश्यपूर्वक उन व्यक्तियों को चुनता है जो उसकी दृष्टि से प्रतिदर्श सदस्यों के लिए कुछ उपयुका वांछित विशेषताओं के साथ अनुसंधान के विषय के लिए सार्थक समझे जाते है और उसको आसानी से उपलब्ध हो जाते है । जहोदा तथा कुक के अनुसार, उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के पीछे यह आधारभूत

मान्यता होती है कि उचित निर्णय तथा उपर्युक्त कुशलता के साथ व्यक्ति (अध्ययन-कर्ता) निदर्शन में सम्मिलित करने हेतु उन मामलों को चुन सकता है तथा इस प्रकार ऐसे निदर्शनों का विकास कर सकता है जो उसकी आवश्यकताओं के अनुसार सन्तोषजनक हैं । राजनीतिज्ञों / राजनैतिक दलों की लोकप्रियता जाननके के लिए या चुनावी नतीजों को पूर्वानुमान बनाने के लिए लोकप्रिय पत्रिकाएँ चुनिन्दा महानगरों में सर्वेक्षण करती हैं । इस प्रकार इस विधि में कुछ चरों को महत्व दिया जाता है और यह समष्टि का प्रतिनिधित्व करता है लेकिन इकाईयों के चयन विचार के बाद किया जाता है और पूर्व निर्णय पर आधारित है ।

मुख्य लक्षण -

(1) समग्र-इकाईयों के गुण से पूर्व परिचय होता है ।

(2) उद्देश्यों की निदर्शनों द्वारा अधिकतम पूर्ति की जाती है ।

(3) पक्षपात की संभावना होती है ।

गुण -

(1) धन कम व्यय होता है ।

(2) निदर्शन छोटे होते है ।

(3) अधिक प्रति-निधित्व भी सम्भव होता है ।

(4) कम इकाईयों की दशा में ये निदर्शन अधिक उपयोगी होते हैं ।

(5) पूर्वगामी अध्ययनों में विशेषकर लाभकारी होते है ।

दोष -

(1) अध्ययनकर्ता अपने समग्र को नही समझ पाता है ।

(2) स्वतंत्र चयन के कारण निदर्शन पक्षपातपूर्ण होता है ।

(3) निदर्शन की अशुद्धियाँ ज्ञात नहीं हो पाती है ।

(4) प्राय: निष्कर्षो में बहुत कम परिशुद्धता होती है ।

13.4.2.2 स्वयं-निर्वाचित निदर्शन

जब व्यक्ति स्वयं निदर्शन मे सम्मिलित होने का प्रस्ताव करते हैं, ऐसा निदर्शन अनायासी या स्वयं निर्वाचित होते हैं । अध्ययनकर्ता निदर्शन को नहीं चुनते हैं । कोई विचार या राय ज्ञान करने लिए रेडियो पर यदि कोई उपहार या पुरस्कार घोषित कर दिया जाय तो श्रोता स्वयं ही राय भेजेंगे तथा निदर्शन पूर्व निश्चित नहीं, बल्कि स्वयं निर्वाचित होगा ।

13.4.2.3 अभ्यंश निदर्शन

इसे ही प्राय: प्रतिनिधि निदर्शन भी कहते हैं । जहोदा तथा कुक के अनुसार, अभ्यंश निदर्शन का प्राथमिक लक्ष्य ऐसे निदर्शन का चयन करना है जो ऐसी जनसंख्या का लघुरूप है जिसका सामान्यीकरण किया जाना है, अतएव इसे जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाला कहा गया है । इससे समय तथा धन की बचत होती है । सामान्यत: जनमत सर्वेक्षणों में इसे प्रयोग किया जाता हैं । विभिन्न इकाईयों से साक्षात्कार द्वारा जानकारी प्राप्त करने के लिए उनका

एक अभ्यंश निश्चित कर दिया जाता है । इस प्रकार समस्त वर्गों की इकाईयों में उचित अनुपात में सूचनाएँ हो जाती है ।

13.4.2.4 सुविधात्मक निदर्शन

इस विधि में अध्ययनकर्ता अपनी सुविधानुसार निदर्शन का चयन करता है तथा इसके प्रमुख आधार धन, समय, कार्यकर्ता तथा योग्यता इत्यादि होते है । सुविधात्मक् निदर्शन को दुर्घटनात्मक या अव्यवस्थित निदर्शन भी कहा जाता है । इस निदर्शन में अनुसंधानकर्ता उन सभी व्यक्तियों का अध्ययन करता है जो उसे अत्यन्त सुविधा से उपलब्ध हो जाते हैं या जो अनुसंधान के दौरान अचानक उसके सम्पर्क में आ जाते हैं । उदारणार्थ-विश्वविद्यालय के छात्रों के अध्ययन में लगा हु आ अनुसंधानकर्ता विश्वविद्यालय केन्टीन, पुस्तकातय कुछ विभागों, खेल के मैदानों, वराण्डों में छात्रों से मि सकता हैं और कुछ छात्रों का साक्षात्कार ले सकता है । इसे ही अनियमित अथवा अवसरवादी निदर्शन विधि कहते है । यह विधि बिल्कुल अवैज्ञानिक होती है तथा इसमें अध्ययनकर्ता पर कोई नियंत्रण न होन के परिणामस्वरूप, इसमें अत्यधिक पक्षपात एवं अभिनति की संभावना होती हैं । इसमें विश्वसनीयता का अभाव बना रहता है । यह विधि ऐसे सर्वेक्षणों के निदर्शन-निर्धारण में उपयोगी सिद्ध होती है जहाँ समग्र का स्पष्ट ज्ञान न हो, निदर्शन की इकाइयाँ स्पष्ट न हों, तथा पूर्ण स्त्रोत-सूची उपलब्ध न हो ।

सुविधाजनक निदर्शन का सबसे स्पष्ट लाभ यह है कि यह त्वरित और कम खर्चीला होता है । लेकिन यह अत्यधिक पूर्वागह ग्रसित प्रतिदर्श हो सकता है । पूर्वाग्रह के सम्भावित स्त्रोत इस प्रकार हो सकते है । (1) साक्षात्कारकर्ता के साथ सहयोग करने में उत्तरदाता के अपने हित हो सकते है, (2) उत्तरदाता ऐसे लोग हो सकते हैं जो मुखर या डींग मारने वाले हों । सुविधात्मक निदर्शन का अन्वेषण अनुसंधान में तब अच्छा उपयोग हो सकता है जब सम्भावना प्रतिदर्श के साथ अतिरिक्त अनुसंधान किया जाये ।

13.4.2.5 कोटा निदर्शन

यह स्तरीकृत निदर्शन का ही एक रूप है अन्तर केवल यह है कि समग्रजन को स्तरों में बाँटने और उत्तरदाताओं को दैव रूप चयन करने के बजाय यह अनुसंधानकर्ता द्वारा निश्चित किए गए कोटे पर कार्य करता है । पाँच संस्थानों के 150 छात्रों मे से 50 एम.बी.ए. के छात्रो के अध्ययन वाले उदाहरण में अन्संधानकर्ता प्रत्येक संस्था से 10 छात्रों को निश्चित कर देता है जिनमें से 5 लड़के और 5 लड़कियाँ होंगी । उत्तरदाताओं का चयन। साक्षात्कारकर्ता पर छोड़ दिया जाता है । कोटे का निर्धारण अनुसंधान के प्राकर और स्वभव से सम्बद्ध कई कारकों पर निर्भर करता है । उदाहरणार्थ, अनुसंधानकर्ता एक एम.बी.ए. संस्था से 5 में से 3 लड़कों का साक्षात्कार अन्तिम वर्ष के छात्रों में से और 2 प्रथम वर्ष से या 2 प्रात: कालीन सत्र (2 वर्ष के) में पढ्ने वाले छात्रों में से और 3 सान्ध्यकालीन सत्र में पढ्ने वाले छात्रों में से साक्षात्कार करने का निश्चय करता है ।

समग्रजन में से उनके अनुपात के अनुसार भी कोटा निश्चित किया जा सकता है । उदाहरणा के लिए, भिन्न धर्मो के 100 पुरूष व 50 महिलाओं वाली एक शैक्षिक संस्था में

धार्मिक स्थलों पर लाउड स्पीकर के प्रयोग के प्रति लोगों के रूख के अध्ययन करने के लिए कोटा दो पुरूषों व एक महिला के अनुपात में निर्धारित किया जा सकता है ।

इसके बाद भी कोटा प्रत्येक धार्मिक समूहों में से व्यक्तियों की संख्या के आधार पर निश्चित किया जा सकता है ।

कोटा निदर्शन के लाभ - (1) यह अन्य विधियों से कम खर्चीला हैं । (2) इसमें निदर्शन ढाँचे की आवश्यता नहीं होती । (3) यह अपेक्षाकृत प्रभावी होता है । (4) यह बहुत कम समयावधि में पूर्ण किया जा सकता है ।

सीमाएँ - (मोजर एण्ड मोजर एण्ड काल्टन, 1980- 127)- (1) यह प्रतिनिधिक नहीं होता । (2) इसमें चयन में साक्षात्कारकर्ता का पूर्वाग्रह हो सकता है । (3) निदर्शन की त्रुटियों का अनुमान लगाना संभव नहीं होता । (4) क्षेत्र कार्य का सख्त नियंत्रण कठिन होता है ।

13.4.2.6 विस्तृत निदर्शन

इस विधि में अधिकतम इकाईयों को निदर्शन में सम्मिलित किया जाता है । जिन इकाईयों के सम्बन्ध में आँकड़े एकत्रित करने में कठिनाई होती हो, उन्हें छोड़ दिया जाता है । यह प्रणाली एक विशेष प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए वृहत आकार के समग्र के किसी विशाल भाग का अध्ययन करने में लाभकारी होती हैं । यदि छोड़ दी गई इकाईयाँ अधिक महत्वपूर्ण होगी तो उस अध्ययन से प्राप्त होने वाले निष्कर्ष भ्रान्तिपूर्ण अथवा सन्देहास्पद होंगे ।

आजकल दोनों ही प्रकार के अर्थात संभावना निदर्शन तथा गैर सम्भवंना निदर्शन को परिस्थितियों, सुविधाओं तथा आवश्यकता के अनुसार प्रयोग किया जाता है । दोनों के अपने-अपने लक्षण तथा गुण-दोष पृथक हैं । अतएव अधिकांशत: दोनों निदर्शन-विधियों का मिला-जुला रूप सामान्य प्रयोग में लाया जाता हैं । इसी को मिश्रित निदर्शन कहा जाता है जिसमें दोनों प्रणालियों का समन्वय होता हैं ।

13.5 गैर सम्भावना निदर्शनों में सूचनादाताओं के चयन में पूर्वाग्रह

अनुसंधान की सफलता उत्तरदाताओं द्वारा प्रदत्त चयन उपयोगी जानकारी पर निर्भर करती है । कई बार, अनुसंधानकर्ता द्वारा चयनित अगणीय सूचनादाता वे होते हैं जिनके पास अध्ययन के अन्तर्गत विषय पर पर्याप्त जानकारी नहीं होती और जो सहयोग करने में तथा उत्तर देने में अनिच्छा दर्शाते हैं । निम्नलिखित प्रकरणों में प्रमुख व्यक्तियों (उत्तरदाताओं) का चयन करने में अनुसंधानकर्ता का पूर्वाग्रह स्पष्ट होता है-

1. अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान के सामाजिक परिवेश का ज्ञान या तो नहीं होता या कम होता है ।
2. सूचनादाता समग्रजन का प्रतिनिधित्व नहीं करते अर्थात समग्रजन के समस्त गुण उनमें नहीं होते ।
3. वे इस अर्थ में प्रतिनिधिक नहीं होते कि उनकी राय भ्रांतिपूर्ण हो सकती है ।
4. वे सहयोग व सहायता देने के लिए अनिच्छुक होते हैं ।

5. वे किसी विशेष समूह में क्रियावादी होते है । जिसके कारण वे अन्य समूहों के विचारों को प्रस्तुत नहीं करते ।
6. अन्वेषण के अन्तर्गत समुदाय से वे सीमान्त रूप से सम्बद्ध होते हैं और इस कारण उनमें पूर्वाग्रह अवश्य आ जाता है ।
7. सूचनादाताओं का चयन जो अध्ययन के सुविधाजनक है ।
8. कुछ प्रकार के लोगों के प्रति जैसे अस्पृश्य, गैर हिन्दु, गन्दे कपड़े पहनने वाले, अत्यधिक फैशन करने वाली महिलाएँ आदि के प्रति अनुसंधानकर्ता के व्यक्तिगत झुकाव के कारण अनुसंधान पूर्वाग्रह ग्रसित हो सकता है

13.6 निदर्शन की समस्याएँ

उपयुक्त निदर्शन के चयन में सामान्यत: निम्नांकित समस्याएँ सर्वेक्षणकर्ता के समक्ष उत्पन्न होती है: - (1) निदर्शन का आकार अथवा पर्याप्तता, (2) निदर्शन के वैद्‌यता अथवा प्रतिनिधित्व, तथा (3) निदर्शन की विश्वसनीयता अथवा परिशुद्धता ।

13.6.1 निदर्शन का उचित आकार

गुडे तथा हाट्ट के अनुसार एक निदर्शन को केवल प्रतिनिधि होना ही पर्याप्त नही है बल्कि इसमें पर्याप्तता भी होना आवश्यक है । एक निदर्शन उस समय पर्याप्त होता है जिसका आकार उसके लक्षणों की स्थिरता में विश्वास स्थापित करने के लिए पर्याप्त हो । अपने कथन के समथ्रन में निदर्शन के पर्याप्त आकार हेतु निदर्शन त्रुटियों के कम से कम होने पर गुडे तथा हॉट्ट ने अधिक बल दिया है । आपके विचार में गणितीय माध्यम तथा प्रमाप विलचन के आधार प्रमाप-त्रुटि भी निकालकर निदर्शन की पर्याप्तता स्थापित की जानी चाहिए । निदर्शन आकार विषयक विचार-एक प्रश्न प्राय: पूछा जाता है कि एक प्रतिदर्श में कितने व्यक्ति रखा जाने चाहिए अर्थात प्रतिनिधिक होने के लिए प्रतिदर्श कितना बड़ा या कितना छोटा हो?

निदर्शन का आकार बड़ा हो अथवा छोटा, यह निर्धारित करना कठिन कार्य है । यदि आकार छोटा हो जाता है तो विश्वसनीयता तथा प्रतिनिधित्व कम हो जाता है । यदि आकार बड़ा हो जाता है तो अधिक परिश्रम, समय तथा धन की आवश्यकता पड़ती है । यद्‌यपि इसका आकार बहुत कुछ तो अध्ययन समस्या तथा समग्र की प्रकृति इत्यादि पर निर्भर होता है, प्राय: बड़े निदर्शनों को ही अच्छा समझा जाता है । इनमें प्रतिनिधित्व में वास्तविकता अथवा यथार्थता आ जाती है ।

सामान्यत: अत्यन्त विशाल समग्र की दशा में निदर्शनों का आकार छोटा या कुछ कम प्रतिशत हो सकता. है तथा बहुत छोटे समग्र में कुछ बड़ा निदर्शन अथवा अधिक प्रतिशत मानना पर्याप्त होता है । उदाहरणार्थ, 50 हजार सजातीय इकाईयों के समय में 5 प्रतिशत (अर्थात 2500) अथवा 2 प्रतिशत (1, 000) इकाईयों का निदर्शन पर्याप्त हो सकता है, जबकि 5 हजार सजातीय इकाईयों के समग्र में 10 प्रतिशत (अर्थात 500), अथवा 2 हजार इकाईयों के समग्र में 15 प्रतिशत (अर्थात 300) इकाईयों का निदर्शन अधिक उपयुक्त होगा ।

13.6.2 आकार-निर्धारण की आवश्यकताएँ

निदर्शन का आकर निर्धारित करने में प्राय: निम्नांकित तत्वों का विशेष रूप से प्रभाव पड़ता है ।

(1) **समग्र की प्रकृति -** सजातीय इकाईयों वाले समग्र में छोटे तथा विभिन्न इकाईयों वाले समग्र में अपेक्षाकृत बडा निदर्शन ही उपयुक्ता माना जा कसता है ।

(2) **वर्गो की संख्या-**केवल थोड़े से या कम वर्गो वाले समग्र में छोटा निदर्शन पर्याप्त हो सकता है । परन्तु विभिन्न प्रकृति के तथा अधिक संख्या वाले वर्गो के समग्र में अपेक्षाकृत बड़ा ही निदर्शन आवश्यक होता है ।

(3) **अध्ययन की प्रकृति-** यदि अधिक समय तक इकाईयों के गहन अध्ययन की आवश्यकता हो तो छोटे निदर्शन को अपनाना ठीक होगा परन्तु विस्तृत प्रकृति के अध्ययन में बड़ा निदर्शन आवश्यक होता है ।

(4) **उपलब्ध साधन**-अधिक मात्रा में धन, समय तथा प्रशिक्षित कार्यकर्ता उपलब्ध होने पर बड़ा निदर्शन ही पर्याप्त होता है परन्तु साधनों की मात्रा कम होने पर छोटा निदर्शन उपयुक्त होगा ।

(5) **परिशुद्धता की मात्रा-** यद्यपि छोटे आकार के निदर्शन भी अधिक शुद्ध, विश्वसनीय तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सकते है, किन्तु सामान्यत: बड़े निदर्शनों में परिशुद्धता की मात्रा अधिक होती हे ।

(6) अध्ययन की प्रविधि- क्यौंकि प्रत्यक्ष अवलोकन निजी साक्षात्कार अथवा वैयक्तिक अध्ययनों में अधिक समय तक परिश्रम आवश्यक होता है परन्तु अध्ययनकर्ता की क्षमता सीमित होती है, इनमें छोटे आकार के निदर्शन ही पर्याप्त होती है ।

(7) अध्ययन के उपकरण- यदि गुणकों को 'स्वयं ही घर-घर जाकर अधिक अनुसूचियाँ भरना आवश्यक हो तो छोटा निदर्शन चुना जाना चाहिए, यदि डाक द्वारा प्रश्नावलियों को बाहर भेजना है तो बड़ा निदर्शन भी उपयुक्त होता है । प्रश्नों की अधिक संख्या, लम्बे आकार तथा जटिल प्रकृति की दशा में छोटा ही निदर्शन पर्याप्त होता है, परन्तु प्रश्नों की कम संख्या छोटे आकार तथा साधारण प्रकृति के होने पर बड़ा निदर्शन चल सकता है ।

(8) निदर्शन पद्धति- दैव विधि से इकाईयों को चुनाव करने में निदर्शन का आकार अपेक्षाकृत बड़ा ही रखना चाहिए ताकि अधिक संख्या में विभिन्न गुणों वाली इकाईयों को चुनाव का अवसर मिल सकें । वर्गीय तथा उद्देश्यपूर्ण निदर्शन में कम इकाईयों का चुनाव भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व कर सकता है ।

(9) निदर्शन-इकाईयों की प्रकृति- चुनी जाने वाली इकाईयों की विशेषताओं, उनसे सम्पर्क की सुविधओं तथा प्राप्त होने वाले सहयोग पर भी निदर्शन का आकार निर्भर होता है । विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र में फैली हुई इकाईयों से सम्पर्क स्थापित करने में अधिक व्यय तथा कठिनाई के कारण, छोटा ही निदर्शन पर्याप्त हो सकता है परन्तु उनसे निकट एवं सरल सम्पर्क की सुविधा तथा उनमें स्पष्ट एवं विश्वसनीय सूचनादाता-स्वभाव की दशा में बड़ा निदर्शन लेना उपयुक्त होता है ।

वास्तव में निदर्शन के आकार हेतु न तो कोई संख्या निश्चित है, न कोई प्रतिशत: इसके लिए कोई निश्चित नियम अथवा सिद्वान्त भी नहीं हैं, परिस्थितियाँ ही निदर्शन के आकार के प्रमुख निर्धारक माने जा सकते हैं । निदर्शन शब्द एक सोपक्षिक अवधारणा होने के कारण किसी एक सर्वेक्षण में कोई संख्या अथवा आकार बड़ा माना जा सकता है तथा किसी दूसरे अध्ययन में वहीं संख्या अथवा निदर्शन-आकार छोटी प्रतीत हो सकती है, अतएव इसका आकार बड़ी सावधानीपूर्वक निश्चित किया जाना चाहिए ।

13.6.2 वैध अथवा प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन -

निदर्शन के चुनाव में उसकी वैधता अर्थात अधिकतम प्रतिनिघित्व तथा प्रमाणिकता अत्यन्त महत्वपूर्ण गुण माना गया है । इसे यथासम्भव निष्पक्ष बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए क्योंकि अध्ययनकर्ता के पक्षपात अथवा मिथ्या झुकाव के परिणामस्वरूप निकलने वाले निष्कर्ष विश्वसनीय नहीं होंगे । इसी के द्वारा समग्र की प्रकृति का भी अनुमान लगाया जा सकता है । इसी के द्वारा समग्र की प्रकृति का भी अनुपात में होना चाहिए, निदर्शक तथा समग्र में आवृतियों का क्रम एवं विभाजन भी एक समान होना चाहिए, दोनों के गणितीय माध्य तथा विचलन भी लगभग मिलते-जुलते हुए हाने चाहिए ।

पार्टेन के अनुसार, यद्यपि एक निश्चित निम्नतम निदर्शन-आकार के बिना प्रतिनिधित्व अथवा निष्पक्षता असंभव है, प्रमुख रूप से इसका प्रतिनिधित्व, निदर्शनों के निर्धारण एवं संकलन हेतु प्रयुक्त उचित प्रणाली पर निर्भर है । यदि निदर्शन में प्रतिनिधित्व अथवा वैधता नहीं पायी जाती है तो इसे पक्षपातपूर्ण अथवा अभिनतियुक्त निदर्शन माना जायेगा । यह समस्या निम्नांकित परिस्थितियों में उत्पन्न हो सकती है ।

(1) **प्रघटनाओं की प्रकृति-** जटिल एंव नवीन विषयों, असमान, फैली, हुई तथा सजातीयता के अभाव वाली घटनाओं अथवा निरन्तर परिवर्तनशील घटना-क्रमों में इकाईयों का चुनाव कठिन होने के कारण निदर्शन में प्रमाणिकता नहीं आ पाती है ।

(2) **छोटा निदर्शन-** आकार-समग्र में कम संख्या वाली इकाईयाँ प्राय: निदर्शन में नहीं आ पाती हैं । यदि दैव विधि के अन्तर्गत चुने गये निदर्शन का भी आकार छोटा होता है तो प्रत्येक इकाई को चयन का अवसर नहीं मिल पाता है तथा निदर्शन में प्रमाणिकता कम होती है ।

(3) **अपूर्ण स्त्रोत-सूची-** अपूर्ण, अनुपयुक्त तथा पुरानी स्त्रोत-सूची से प्राप्त की गयी समग्र-इकाईयों के आधार पर चुनाव किया गया निदर्शन प्राय: दोषपूर्ण अथवा अभिनतिपूर्ण हो जाता है ।

(4) **कार्यकर्ताओं द्वारा चुनाव-** यदि समग्र की समस्त इकाईयों में समानता नहीं होती है, तब क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं के द्वारा अपनी सुविधा एवं स्वेच्छा के अनुसार चुनी गयी निदर्शन-इकाईयाँ महत्वहीन तथा केवल कुछ विशेष वर्गों की ही प्रतिनिधि हो सकती है।

(5) **निदर्शन इकाईयों मे परिवर्तन-** निदर्शन हेतु चुनी गयी इकाईयों में, उनके उपलब्ध होने की कठिनाई, सम्पर्क की असुविधा अथवा उनके द्वारा सूचना देने में विरोध एवं

असमर्थता के कारण उन्हें त्यागने अथवा उनके प्रतिस्थापन की दशा अभिनति को प्रोत्साहन मिलता है ।

(6) **दोषपूर्ण दैव-निदर्शन-** दैव-निदर्शन में प्राय: स्वयं ही अभिनति इस प्रकार उत्पन्न हो जाती है कि स्वाभाविक रूप से ही कागज की बड़ी गोलियाँ, अथवा कार्ड या टिकट पहले ही हाथ में आ जाते है । प्राय: इन गोलियों, कार्डो अथवा टिकटों को भली प्रकार मिलाकर नहीं हिलाया जाता है तथा ऊपर वाले कार्ड या टिकट ही पहले निकल आने पर महत्वपूर्ण इकाईयों के चयन अवसर भी कुछ कम हो जाते है ।

(7) **दोषपूर्ण वर्गीकरण-** वर्गीय निदर्शन पद्धति में त्रुटिपूर्ण अथवा अनुपयुक्त, अस्पष्ट तथा असमान वर्गो के विभाजन, समग्र, इकाईयों को उचित वर्गो में न रखने, उन्हें उचित भार प्रदान करके अथवा असमानुपातिक चुनाव से हुए वर्गीकरण के आधार पर निर्धारित निदर्शन अवैध हो जाते है ।

(8) **सविचार निदर्शन-** सविचार अथवा उद्देश्यपूर्ण निदर्शन-विधि में प्राय: ऐसी इकाईयों को चुन लिया जाता है जो अध्ययन-कर्ता की रूचि के अनुकूल हों तथा जिनका अध्ययन सरल एवं सुविधापूर्ण हो । ऐसी इकाईयों में प्रतिनिधित्व की संभावना नहीं रहती है ।

(9) **सुविधानुसार निदर्शन-** इसमें सविचार अथवा उद्देश्यपूर्ण विधि से भी अधिक स्वतंत्रता होने के परिणामस्वरूप सभी प्रकार से अध्ययनकर्ता अपनी इच्छा तथा सुविधानुसार निदर्शन का चुनाव करता है । अतएव इस विधि के अन्तर्गत तो कोई भी प्रतिबन्ध न होने के कारण, निदर्शन में अत्यधिक पक्षपात संभव होता है ।

उपर्युक्त कारणों से होने वाली अवैधता को दूर करने के लिए निम्नांकित उपाय किये जा सकते है

(1) अध्ययनकर्ता को अपने कार्य में पूर्ण योग्यता, कुशलता तथा अनुभव प्राप्त होना चाहिए।

(2) उसे अपनी अध्ययन-समस्या का अधिक ज्ञान होना चाहिए ।

(3) उसके द्वारा चुनी गयी निदर्शन-विधि अध्ययन-समस्या की प्रकृति के अनुकूल तथा विषम के उपयुक्त होनी चाहिए ।

(4) अध्ययन वैज्ञानिक दृष्टि से. किया जाना चाहिए तथा वैयक्तिकता पर अधिक ध्यान दिया जाए ।

(5) निदर्शन का आकार भी पर्याप्त एवं उपयुक्त होना चाहिए ।

13.8.3 निदर्शन की विश्वसनीयता

सम्पूर्ण अध्ययन की प्रमाणिकता निदर्शन की विश्वसनीयता पर आधारित है, इसके अभाव में समस्त अध्ययन प्रक्रिया दोषपूर्ण तथा व्यर्थ रहती हैं निदर्शन-विश्वसनीयता के निम्नांकित प्रमुख आधार है ।

(1) **पर्याप्त आकार -**अधिक बड़े निदर्शन में विश्वसनीयता कम होगी, छोटे निदर्शन में समग्र के अधिकांश गुणों का सम्मिलित किये जाने का अवसर न मिलने से अविश्वसनीयता रहेगी, उसमें परिशुद्धता की मात्रा भी कम होगी ।

(2) **निदर्शन का चुनाव -** निष्पक्ष तथा उपयुक्त विधि, जैसे द्रेव. (संयोग) निदर्शन के अंतर्गत चुनी गयी इकाईयों में अधिक विश्वसनीयता इसलिए होती है--किं उसमे व्यक्तिगत पक्षपात संभव नहीं है उद्देश्यपूर्ण अथवा वर्गीकृत, सुविधापूर्ण इत्यादि विधियों में निजी पक्षपात को अधिक संभावना के कारण विश्वसनीयता कम होती है ।

(3) **समग्र की एकरूपता-** समग्र इकाईयों अथवा वर्गानुसार विभाजित इकाईयों में समानता एवं सजातीयता होने पर निदर्शन में अधिक विश्वसनीयता होती है परन्तु इकाईयों में असमानता अथवा विभिन्नता अधिक होने पर विश्वसनीयता या परिशुद्धता कम हो सकती है ।

(4) **प्रमाप त्रुटि -** निदर्शन में सम्भावित त्रुटियों के आधार पर निकाला गया प्रमाप त्रुटि का सामान्य माप निम्नतम तथा निरन्तर लगभग समान रहने से निदर्शन अधिक विश्वसनीय माना जाता है क्योंकि ऐसी दशा में, उसमें परिशुद्धता की सीमा अधिक होती है ।

विश्वसनीयता परखने के उपाय :-

निदर्शन की विश्वसनीयता की जांच करने तथा उसकी उपयुक्ता ज्ञान करने के लिए निम्नांकित उपायों का प्रयोग किया जा सकता है ।

(1) **अध्ययन परिणामों की तुलना-** यदि किसी एक प्रणाली द्वारा निर्धारित निदर्शन से परिणाम निकाल गये हों, उनकी किसी दूसरी प्रणाली पर आधारित निदर्शन के परिणामों से तुलना कर लेनी चाहिए ।

(2) **समग्र से तुलना-** निदर्शन में सम्मिलित तथ्यों की समस्त अथवा जनसंख्या के तथ्यों से तुलना करके दोनों में समान्ता निर्धारित की जा सकती है ।

(3) **महत्व परीक्षण-** मोजर ने प्रमाप त्रुटि पर आधारित करते हुए निदर्शनों का महत्व परीक्षण करने पर विशेष बल दिया है ।

(4) **समान्तर निदर्शन-** विभिन्न आकारों के लगभग मिलते-जुलते तथा एक ही विधि द्वारा निकाले गये समान्तर निदर्शनों द्वारा विश्वसनीयता की परख हो सकती है । जैसे टिपेट प्रणाली के ही अन्तर्गत किन्हीं 15 संख्याओं को पृथक-पृथक निकालकर दैव-निदर्शन किया जा सकता है ।

(5) **उप-निदर्शन-** बड़े आकार का कोई निदर्शन लेकर पुन: उसको स्वयं ही समग्र मानकर उसमें से भी छोटा निदर्शन निकालकर दोनों बड़े तथा छोटे निदर्शनों में परिशुद्धता की जाँच की जा सकती है । जैसे एक लाख इकाईयों में 2 प्रतिशत (दो हजार) इकाईयों का निदर्शन तथा उन दो हजार में से पुन: 5 प्रतिशत (100) इकाईयों का निदर्शन: दोनो के परिणाम लगभग एक से ही निकालने पर अधिक विश्वसनीयता होगी ।

(6) **सर्वेक्षण की पुनरावृत्ति-** यद्यपि अव्यावहारिकता के कारण ऐसा कठिन तथा प्राय: असंभव होता है, यदि उसी या लगभग मिलती-जुलती प्रकृति के सर्वेक्षणों की पुरावृत्ति की जा

सकती हो, तो उनमें प्रयोग किये गये निदर्शनों की परिशुद्धता तथा विश्वसनीयता की जाँच संभव हो सकती है ।

13.7 सारांश

जब समग्र का आकार विस्तृत हो या इकाईयों की संख्या अधिक हो ऐसी स्थिति में समय धन तथा कार्यकर्ताओं की कमी के कारण विशाल समग्र में से चुनी हुई इकाईयों को निदर्शन कहा जाता है । निदर्शन विशाल समूह का छोटा प्रतिनिधि है । निदर्शन चुनाव की तीन प्रमुख मान्यताऐं है -

जनसंख्या की सजातीयता, प्रतिनिधित्वता और उचित परिशुद्धता । इस पद्धति को सम्भावना सिद्धान्त के आधार पर दो भागो में बांटा गया है । संभावना निदर्शन और गैरसभावना निदर्शन । संभावना निदर्शन की विधियों में समग्र की इकाईयों को निदर्शन में चूने जाने के समग्र अवसर मिलते है तथा यह निदर्शन अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण और कम त्रुटियों वाला है जबकि गैर सम्भावना निदर्शन में निजी पक्षपात और कम विश्वसनीयता की संभावना बनी रहती है । अत: यह कहा जा सकता है कि निदर्शन विधियाँ सम्पूर्ण अथवा वृहतस्तरीय अध्ययनों को सम्पन्न करने में उपयोगी तथा अत्यन्त आवश्यक मानी जाती है, इनका बड़ी सावधानी से निर्धारण करना चाहिए तथा निदर्शन की पर्याप्तता, प्रतिनिधित्व तथा विश्वसनीयता की समस्याओं पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए तथा इनके प्रति सर्वेक्षणकर्ता को आवश्यक दूरदर्शिता एवं अनुभव का प्रयोग करना चाहिए ।

13.8 अभ्यास प्रश्न

1. निदर्शन विधि से आपका क्या अभिप्राय है? सरल दैव निदर्शन के की विधियों का उल्लेख कीजिये ।
2. निदर्शन के प्रकारो को संक्षेप में समझाइये ।
3. निदर्शन विधि के गुण-दोषो को स्पष्ट कीजिए ।

कठिन शब्द :-

प्रतिदर्शन-निदर्शन (Sampling) किसी विशाल सम्पूर्ण का छोटा प्रतिनिधि है ।"

यद्दच्छ -दैव (Random)

इकाई - 14

केन्द्रीय प्रवृति की माप : माध्य, माध्यिका बहुलक

इकाई की रूपरेखा

14.1 उद्देश्य
14.2 प्रस्तवाना
14.3 केन्द्रीय प्रवृति का अर्थ एवं परिभषा
14.4 केन्द्रीय प्रवृति के आदर्श माप की विशेषताएँ
14.5 केन्द्रीय प्रवृति के माप
(i) मध्यमान का स्तर (ii) मध्यांक (iii) बहुलक
14.6 केन्द्रीय प्रवृति के माप के चयन के आधार
(i) मापन का स्तर (ii) वितरण की बनावट (iii) अनुसंधान उद्देश्य
14.7 सारांश
14.8 परिकलन सूत्र सारिणी
14.9 शब्दावली
14.10 अभ्यास प्रश्न
14.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

14.1 उद्देश्य (Objectives)

इस पाठ के प्रमुख उद्देश्य हैं :

1. समाजशास्त्रीय अनुसन्धान के सांख्यिकी मापों की आवश्कता को समझ पाना,
2. केन्द्री प्रवृति के अर्थ की जानकारी
3. केन्द्रीय प्रवृति के प्रमुख मापों से परिचितता
4. मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलक के मूल्यों का परिकलन कर पाना,
5. किसी दी गयी सामाजिक अनुसन्धान की परिस्थिति के केन्द्रीय प्रवृति के माप का निर्धारण कर पाना ।

14.2 प्रस्तावना (Objectives)

केन्द्रीय प्रवृति एक सांख्यिकीय अवधारणा है । तथ्य संकलन के उपरान्त अनुसंधानकर्ता को तथ्य विश्लेषण का कार्य करना होता है ताकि वह अध्ययन विषय से सम्बन्धित कुछ प्रमुख निष्कर्ष निकाल सकें । तथ्य विश्लेषण में अन्वेषणकर्ता को दो कार्यो को करना होता है । ये दो कार्य क्रमश: तथ्य संसाधन (Data Processing) तथा सांख्यिकीय मूल्यों का परिकलन हैं । तथ्य संसाधन के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता संकलित तथ्यों का सम्पादन (Editing) वर्गीकरण (Classification), संकेतीकरण (Coding) तथा सारिणीकरण (Tabulation) करता है ताकि

यह स्पष्ट हो सके कि अध्ययन सम्बन्धी निष्कर्ष निकालने के लिए किन सांख्यिकीय मापों का उपयोग करना है ।

सांख्यिकीय मापों को अनुसंधान में उनके प्रकार्यो (Function) के आधार पर तीन भागों में वर्गीकृत किया गया है । ये तीन भाग है :-

1. गणनात्मक सांख्यिकीय माप (Discriptive Statistical Measures)
2. सहसम्बन्धात्मक / साहचर्यात्मक सांख्यिकीय माप (Correlational / Associational Measures)
3. आगमनात्मक / निष्कर्षात्मक सांख्यिकीय माप (Inductive / Inferential Statistical Measures)

वर्णनात्मक सांख्यिकीय मापों का उपयोग एक चर समंकों (univarite data) के संक्षिप्तीकरण तथा विभिन्न संवर्गो के मध्य तुलना करने हेतु किया जाता है । सहसम्बन्धात्मक / साहचर्यात्म सांख्यिकीय मापों का उपयोग दो या दो से अधिक चरों के बीच सम्बन्ध की विद्‌यमानता (existence), मात्रा (magnitude), दिशा (direction)तथा प्रकृति (nature) को जानने के लिए किया जाता है । आगमनात्मक / निष्कर्षात्मक सांख्यिकीय मापों की उपयोग निदर्शन (sample) आधार पर समग्र (universe) सम्बन्धी प्राचलों (parameters) का आकलन (estimation) तथा प्राक्कल्पाओं के सार्थकता परीक्षण (significance test) करने के लिए किया जाता है ।

केन्द्रीय प्रवृति वर्णनात्मक सांख्यिकी की एक माप है । केन्द्रीय प्रवृति के मापों को स्थान सम्बन्धी माप कहा जाता है । सांख्यिकीय विश्लेषण में केन्द्रीय प्रवृति के माप सांख्यिकीय परिकलन की चूंकि प्रथम सीढ़ी या सोपान है । इसलिए इसे प्रथम स्तर के माप कहा जाता है । केन्द्रीय प्रवृति को औसत शब्द से इसलिए जाना जाता है । क्योंकि यह एक वितरण के प्रतिनिधि मूल्य को दर्शाती है ।

14.3 केन्द्रीय प्रवृति का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definatio of Central Tendency)

अनेक समाजशास्त्रियों जिनका सामाजिक सांख्यिकीय क्षेत्र में दखल रहा है, केन्द्रीय प्रवृति की अवधारणा को स्पष्ट किया है । जेक लेविन के अनुसार वह मूल्य जो वितरण के मध्य या केन्द्र में स्थिति होता है, केन्द्रीय प्रवृति कहलाता है । यह मूल्य वितरण के समंकों का प्रतिनिधिक होता है । हरमन लाईथर तथा डोनाल्ड मक्टाविश जिन्होंने विशेष रूप से समाजशास्त्रियों के लिए सांख्यिकी विषय पर पुस्तक लिखी है, केन्द्रीय प्रवृति की अवधारणा को परिभाषित करते हुए लिखा है कि केन्द्रीय प्रवृति संख्यात्मक मूल्यों के स्केल पर वह स्थान है जहाँ दिया गया वितरण केन्द्रीयकृत होता है । उन्होंनें इस अर्थ को समझाने हेतु उदारण देते हुए लिखा है कि मान लिजिये कि व्यक्तियों के कद (फुट में) से सम्बन्धित निम्नलिखित पाँच वितरण है

समूह अ	2	3	4	5	6	N = 5

समूह ब	2	4	4	4	6	N = 5
समूह स	2	2	2	4	6	N = 5
समूह द	2	4	6	6	6	N = 5
समूह इ	5	6	7	8	9	N = 5

(यहाँ N का अर्थ समूह में इकाईयों की संख्या से है ।)

समूह (स) में व्यक्तियों का कद समूह (अ) और (ब) के व्यक्तियों की तुलना में सामान्यत: छोटा है जबकि समूह (द) और (इ) में व्यक्तियों का कद सामान्यत: लम्बा है । ध्यान दे कि यह अवलोकन सामान्य रूप से सही है । यद्यपि लम्बे कद वाले व्यक्तियों के समूह इ में ऐसा भी व्यक्ति है जिसका कद समूह (स) में सबसे लम्बे व्यक्ति के कद से छोटा है । अत: केन्द्रीय प्रवृति के माप वितरण उस स्थान या मूल्य से होता है जिसके इर्द-गिर्द वितरण के अधिकाधिक मूल्य परिभाषिक रूप से केन्द्रीयकृत या गुच्छित होते है ।

14.4 केन्द्रीय प्रवृति के आदर्श माप की विशेषताएँ (Characterstics of an ideal Measuresof Central Tendency)

केन्द्रीय प्रवृति के अनेक माप है । इस अनेकता के कारण प्राय: यह दुविधा उत्पन्न होती है कि इन अनेक मापों में सर्वेश्रेष्ठ माप कौनसा है जिसका कि सामाजिक अनुसन्धान में बहुत उपयोग किया जाता हो । यद्यपि केन्द्रीय प्रवृति के किसी विशिष्ट माप का उपयोग अनेक आधारों पर आश्रित होता है तथापि सामान्यत: उस माप को आदर्श माप माना जाता है जिसमें आधिकाधि रूप से निम्नलिखित विशेषताएँ मौजूद हो :

1. माप सरलतापूर्वक समझा जा सकता हो ।
2. माप का परिकलन सरल हो ।
3. माप का वितरण समस्त मूल्यों पर आधारित हो ।
4. माप चरम मूल्यों से प्रभावित न होता हो ।
5. माप निदर्शन के आकार से प्रभावित न होता हो ।
6. माप जिसका उच्चतर सांख्यिकीय पद्धतियों (निष्कर्षात्मक सांख्यिकीय) में भी उपयोग हो ।

14.5 केन्द्रीय प्रवृति के माप (Measure of Central Tendency)

केन्द्रीय प्रवृति के माप जिनका कि समाजशास्त्रीय अनुसन्धान में उपयोग होता है निम्नलिखित हैं -

1. मध्यमान (Mean)
2. मध्यांक (Median)
3. बहुलक (Mode)

इस बात का सदैव ध्यान रखे कि इन तीन मापों का सम्बन्धात्मक क्रम मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलक या बहुलक, मध्यांक तथा मध्यमान होता है । मध्यांक सदैव अन्य दो

मापों के मध्य स्थिति होता है । इससे पहले कि हम इन तीन मापों के अर्थ तथा परिकलन प्रक्रिया को समझें, इन मापों से सम्बन्धित संकेताक्षरों के बारे में जानकारी आवश्यक है । परिकलितू मूल्य या तो जनसंख्या समग्र की विशेषताओं को बतलाते हैं या फिर निदर्शन की विशेषता को । वे मूल्य जो जनसंख्या की विशेषता को बतलाते हैं, उन्हें सांख्यिकी में प्राचन (parameters) कहा जाता है, जबकि निदर्शन की विशेषता को वर्णित करने वाले मूल्यों को सांख्यिकी (statistics) कहा जाता है । प्राचलों के लिये ग्रीक भाषा के संकेताक्षरों का उपयोग किया जाता है जबकि सांख्यिकी के लिए रोमन भाषा के संकेताक्षरों का । कुछ स्थितियों में दोनों में अन्तरता का आधार आंग्लभाषा के बड़े अक्षरों (capital Letters) तथा छोटे अक्षरों (small letters) का होता है । डोनल्ड सेन्डर्स ने अपनी पुस्तक में इनके कुछ उदाहरण निम्न प्रकार दिये है ।

सांख्यिकीय माप	प्राचल	सांख्यिकी
मध्यमान	u (म्यू पढ़े)	x (एक्स बार पढ़े)
प्रमाप विचलन	q (सिग्मा पढ़े)	s
जनसंख्या आकार	N	n
प्रतिशत	II (पाई पढ़े)	p

इन संकेताक्षरों के सन्दर्भ में यह ध्यान रहे कि विभिन्न पुस्तकों में इनकी विविधता देखने को मिल सकती है इसलिए जो संकेताक्षर अधिक प्रचलित, सुग्राहय तथा अर्थपूर्ण हों उनका उपयोग किया जाना चाहिये ।

मध्यमान (Mean)

मध्यमान वह सांख्यिकीय मूल्य है जिसका परिकलन वितरण में दिय गये सभी समंको का योग कर समंको की संख्या से भाग देकर किया जाता है । उदाहरण के लिए यदि किसी कारखाने के 5 मजदूरों के वर्ष भर में अवकाश के दिनों की संख्या क्रमश: 35, 20, 50, 55 तथा 75 हैं तो उनके द्वारा अवकाश दिनों के उपभोग का मध्यमान होगा-

सूत्र $X = \frac{\sum X}{N} = \frac{\text{संमको का प्रयोग}}{\text{संमको की संख्या}}$

जहाँ (संकेताक्षरों का अर्थ)

x = मध्यमान

X = वितरण मे दिया गया समंको

$\sum$ = योग का चिन्ह

N = वितरण मे समंको की संख्या

अत: $X = \frac{35 + 20 + 50 + 55 + 75}{5} = \frac{235}{5} = 47$

X = 47

यह उदाहरण वैयक्तिक श्रेणी (individual series) में मध्यमान ज्ञात करने का है। वैयक्तिक श्रेणी का अर्थ ऐसी श्रेणी सेहै जिसमें प्रत्येक इकाई (उत्तदाता) से सम्बन्धित अवलोकित मूल्य (समंक) को पृथम स्वतंत्र रूप से लिखा जाता है। इसमें समंको को समूहाकृत नहीं किया जाता क्योंकि निदर्शन का आकार बहुत छोटा होने के कारण वितरण में समंको की पुनरावृति प्राय: नहीं होती है। किन्तु यदि निदर्शन का आकार कुछ बड़ा होता है और समंको की पुनरावृति होती है तो वितरण के विस्तार को ध्यान में रखते हुये हमें या तो खडित श्रेणी (discrete Series) या अखडित श्रेणी (continous) बनाकर मध्यमान ज्ञात करना होता है।

उदाहरण मान लिजिये हमने एक अध्ययन में किसी कारखाने में इस बार 10 मजदूरों से उनके द्वारा वर्ष भर में लिये गये अवकाश दिनों की संख्या पूछी। प्राप्त समंकों के आधर पर हमें जो खण्डित श्रेणी प्राप्त हुई, वह इस प्रकार है :-

अवकाश दिन x	मजदूरों की संख्या f	fx
5	3	15
10	2	20
15	1	15
20	2	40
25	2	50
	$\sum f = N = 10$	$\sum fX = 140$

मध्यमान ज्ञात करने का सूत्र

$$X = \frac{\sum fx}{N}$$

$$X = \frac{140}{10} = 14.0$$

जहाँ :

x = मध्यमान

$\sum$ = योग का चिन्ह

x = वितरक संमक, f = आवृति

N = वितरक मे संमको की संख्या

अत: मध्यान 14.0 है।

उपरोक्त खण्डित श्रेणी में मध्यमान ज्ञात करने के लिए जो प्रक्रिया अपनायी गयी, वह निम्न प्रकार है--

प्रथम चरण : x (चर मूल्य) f तथा (आवृति) कॉलम दिये गये है। सूत्रानुसार हमें कॉलम fx की आवश्यकता हैं अत: हमने fx कॉलम बनाया।

दूसरा चरण : fx कॉलम के मूल्यों को ज्ञात करने हेतु प्रत्येक x के मूल्य को उससे सम्बन्धित f के मूल्य से गुणा करके मूल्य fx कॉलम में लिखते है।

तीसरा चरण : कॉलम fx का योग $\sum fx$ ज्ञात करते हैं।

चौथा चरण : कॉलम f का योग $\sum fx$ ज्ञात करते हैं । यहाँ यह याद रखें कि $\sum f = N$ होता है ।

पाँचवा चरण : कॉलम fx के योग में कॉलम f के योग का सूत्रानुसार भाग देकर मध्यमान न ज्ञात कर लेते है ।

अखण्डित श्रेणी (Continous Series)

अखण्डित श्रेणी एक ऐसी होती है जिसमें चर मूल्य (variate values) वर्गान्तरों में होते है, न कि एकल मूल्यों (single values) में । इस श्रेणी में मध्यमान ज्ञात करने के लिए हम उसी सूत्र को काम में लेते हैं जिसका उपयोग हमने खण्डित श्रेणी में किया था यहाँ अन्तर केवल इतना होता है कि हम यहाँ मध्य बिन्दु को उपयोग करते है । जिसमें 'm' संकेताक्षर भी लिखा जाता है ।

उदाहरण

अवकाश दिनों की संख्या X	मजदूरों की संख्या f	मध्य बिन्दु m	fx_m
0-5	2	2.5	5.0
5-10	3	7.5	22.5
10-15	5	12.5	62.5
15-20	4	17.5	70.0
	1		22.5
	$N = \sum f = 15$		$\sum fx_m = 182.5$

सूत्र $x = \frac{\sum fx_m}{N}$

यहाँ सूत्र मे m का तात्पर्य मध्य बिन्दु से है । आवृति वितरण में दिये गये वर्गान्तर का मध्य बिन्दु ज्ञात करने के लिए हमें वर्गान्तर की निम्न सीमा (lower limit) तथा ऊपरी सीमा (upper limit) जोड़कर 2 से भाग देना होता हैं । वास्तव में मध्य बिन्दु किसी दिये गये वर्गान्तर का प्रतिनिधि मूल्य होता है ।

मध्य बिन्दु (m)= $\frac{LL + UL}{2}$

जहाँ सकेतोक्षरों का अर्थ है :

LL = वर्गान्तर की निम्न सीमा

UL = वर्गान्तर की ऊपरी सीमा

सूत्र में सम्बन्धित मूल्यों को रखने पर जो मध्यमान प्राप्त होगा, वह है-

X = $\frac{182.5}{15}$

X = 12.16

इस श्रेणी में मध्यमान ज्ञात करने के लिए हमने जो प्रक्रिया अपनायी वह निम्न प्रकार है-

प्रथम चरण : एक कॉलम m (मध्य बिन्दु)बनाते है और प्रत्येक वर्गान्तर मा मध्य बिन्दु निकालते

दूसरा चरण : एक अन्य कॉलम fx_m बनाते हैं तथा प्रत्येक वर्गान्तर के मध्य बिन्दु को उससे सम्बन्धित आवृति से गुणा करके fx_m कॉलम में लिखते हैं।

तीसरा चरण : fx_m कॉलम का योग करते हैं ।

चौथा चरण : f कॉलम का योग करते हैं ।

पाँचवा चरण : मध्यमान के सूत्र में सम्बन्धित मूल्यों को रखकर मध्यमान की परिगणना करते है ।

विभिन्न श्रेणियों में मध्यमान ज्ञात करने के लिए उपयोग में ली गयी विधि प्रत्यक्ष विधि (direct method) कहलाती है । प्रत्यक्ष विधि वास्तम में उस समय तक उपयोगी होती है जब तक कि चर मूल्यों तथा आवृतियों की संख्याओं का आकार छोटा होता है तथा समंक पूर्ण संख्यात्मक (Whole number) होते हैं । समंक दशमलव संख्याएँ न हों । यदि बड़ी संख्याएँ और दशमलव में है तो ऐसी स्थिति में अंकगणितीय परिकलन अर्थात् जोड़, बाकी, गुणा तथा भाग इत्यादि करने में त्रुटि होने की पूरी संभावना बनी रहती है । ऐसी स्थिति में हम प्रत्यक्ष विधि को काम में न लेकर किसी लघु विधि (short cut method) को काम में लेते हैं । लघु विधियाँ अनेक हैं । लेकिन हम जिस लघु विधि को यहाँ काम में लेंगे वह 'कोडिंग' (coding) विधि कहलाती है । इस विधि को सीखने के लिए हम प्रत्यक्ष से हल किये गये सवाल को इस विधि से हल करेंगे ।

उदाहरण.

X	f	c	fc
0-5	2	-2	−4
5-10	3	-1	−3 (−7)
10-15	5	0	0
15-20	4	+1	+4
20-25	1	+2	+2 (+6)
	$N=\sum f=15$		$\sum fx=-1$

सूत्र

$$X = x_0 + \sum \frac{fx}{N} \text{ xi}$$

जहाँ :

X = मध्यमान

X_0 = उस वर्गान्तर का मध्य बिन्दु जिसे कोड संख्या '0' (शून्य) दी गयी है ।

c = कोड संख्या

f = आवृति

N = समंको की संख्या

i = वर्गान्तर

$x = 12.5 + \frac{-1}{15} \times 15$

X =12.5 - .34

X = 12.16

यहाँ यह ध्यान रखने योग्य बात है कि हम चाहे प्रत्यक्ष विधि का उपयोग करें या लघु विधि का, दोनों परिकलन प्रक्रियाओं का परिकलित मूल्य अर्थात् उत्तर एक ही होगा ।

कोडिंग विधि प्रक्रिया के चरण निम्न प्रकार है.

पहला चरण : (i) एक कॉलम c (कोडिंग) बनाते हैं इस कॉलम में हम वर्गान्तरों (x) को कोड संख्या शून्य से प्रारम्भ कर 1, 2,3............ इत्यादि कोड संख्याएँ प्रदान करते हैं । ध्यान रहे कि कोड संख्या '0' (शून्य) हम किसी मध्य वाले वर्गान्तर को देते हैं न कि किसी शुरू वाले ता अन्त वाले वर्गान्तर को ।

(ii)जिस वर्गान्तर को हमने शून्य कोड दिया है, उस वर्गान्तर से कम आकार वाले (अर्थात छोटे) वर्गानतरो को हम - (त्रणात्मक) कोड संख्याएँ देते हैं जबकि बड़े आकार वाले वर्गान्तरों को हम + (धनात्मक) कोड संख्याएँ देते है ।

दुसरा चरण : एक अन्य कॉलम fc बनाते हैं । c कॉलम की कोड संख्या को सम्बन्धित आवृति (f) से गुणा कर fc कॉलम में लिख देते है ।

तीसरा चरण : कॉलम fc का योग करते है ।

चौथा चरण : कॉलम f का योग करते हैं ।

पाँचवा चरण : वर्गान्तर (i) ज्ञात करते हैं, जिसका सूत्र $i = L_2 - L_1$ हैं अर्थात दूसरे वर्गान्तर की निम्न सीमा तथा पहले वर्गान्तर की निम्न सीमा का अन्तर ज्ञात कर लेते हैं ।

छठा चरण : सूत्र में सम्बन्धित मूल्यों को रखकर मध्यमान का परिकलन कर लेते हैं।

भारित मध्यमान (Weighted Mean)

अनेक परिस्थितियों में उत्तरदाताओं से सम्बन्धित वैयक्तिक सूचनायें उपलब्ध नहीं हो पाती हैं । ऐसी स्थिति में यदि कुछ इस प्रकार की सांख्यिकीय सूचनायें उपलब्ध हो जाये जो उत्तरदाताओं के समूहों से सम्बन्धित हो, तो भी प्राप्त समंको के आधार पर मध्यमान ज्ञात किया जा सकता है । किन्तु ऐसे मध्यमान को भारित मध्यमान कहा जायेगा ।

भारित मध्यमान में हमें एक से अधिक समूहों से सम्बन्धित समूहों के मध्यमान तथा समूहों की सदस्य संख्या ज्ञात होती है इन दों सूचनाओं के आधार पर हम उनका एक संयुक्त या भारित मध्यमान ज्ञात करते है । भारित माध्यमान से ज्ञात करने के लिए हम पहले प्रत्येक

समूह के मध्यमान को समूह की सदस्य संख्या से गुणा करते हैं और उसके अपरान्त सभी गुणनफलों को जोड़कर उसमें विभिन्न समूहों की सदस्य संख्याओं के योग से भाग दे देते है । प्राप्त मूल्य भारित मध्यमान का मूल्य होता हैं । भारित मध्यमान ज्ञात करने का सूत्र है ।

$$x = \frac{\sum(w \cdot x)}{\sum w}$$

जहाँ :

X_w = भारित मध्यमान का संकेताक्षर

$\sum$ = योग का चिन्ह

W = समूह में सदस्यों की संख्या

X = समूह का मध्यमान

उदाहरण : (ऐलिसन, रनयोन एवं हेबर की पुस्तक से): मान लिजिए कि समाजशास्त्र की वार्षिक परीक्षा में विभिन्न चार कक्षाओं के छात्रों का मध्यमान क्रमश: 75, 78 , 72 और 80 है तथा इनचार कक्षाओं में छात्रों की संख्या क्रमश: 30, 40, 25 और 50 है, तो सभी कक्षाओं के विद्यार्थियों का भारित मध्यमान क्या होगा ।

हल -

$$X = \frac{30(75) + 40(78) + 25(72) + 50(80)}{30 + 40 + 25 + 50}$$

$$X = \frac{11170}{145} = 77.03$$

अत: भारित मध्यमान 77.03 होगा ।

मध्यमान की गणितीय विशेषतायें (Mathematical Characterstics of Mean)

मध्यमान की कुछ गणितीय विशेषतायें हैं । दो गणितीय विशेषताओं को सांख्यिकी के आग्र आने वाले पाठों को समझने के लिए समझना आवश्यक है ।

प्रथम मध्यमान से लिये गये विचलनों का योग सदैव शून्य होता है ।

{(x - x) = 0

उदाहरण के लिए मान लिजिये वितरण में 5 परिवारों में बच्चों की संख्या क्रमश: 2, 5, 3, 1 तथा 4 है । यदि हम इन समंको का मध्यमान ज्ञात करें तो मध्यमान होगा-

$$X = \frac{2+5+3+1+4}{5} = \frac{15}{5} = 3$$

अब यदि प्रत्येक समंक का मध्यमान से विचलन ले और विचलनों का योग करें तो यह शून्य होगा । विचलन का संकेताक्षर 'd' या 'x' होता है ।

X	$d:(X-X)$	d^2
2	$2-3=-1$	$+1$
5	$5-3=+2$	$+4$
3	$3-3=0$	0
1	$1-3=-2$	$+4$
4	$4-3=+1$	$+1$

$$\overline{\sum D = 0} \qquad \overline{\sum D^2 = 0}$$

द्वितीय, मध्यमान से लिये गये विचलनों के वर्ग का योग सबसे न्यूतम संख्या होगी । (d^2 = $((x - x)^2$ = न्यूनतम मूल्य

ऊपर दिये गये उदाहरण में यदि हम विचलन (d) के वर्ग (d^2) के योग को देखे तो यह सख्या न्यूनतम होगी । यदि आप समंक 3 को जोड़कर जो कि वितरण का मध्यमान हैं बाकी चार संख्याओं 2 ,5, 1 या4 में से कोई भी संख्या ले और उनका (d^2) ज्ञात करें तो प्राप्त होने वाली संख्या 10 से अधिक होगी ।

मध्यांक (Median) :

मध्यांक, केन्द्रीय प्रवृति का ऐसा माप है जो किसी समंक वितरण को दो बराबर भागों में बाँटता हैं यहाँ बराबर भाग से अर्थ मध्यांक मूल्य के बायीं तथा दायीं ओर समंको की समान संख्या से है । यदि मध्यांक मूल्य के बायीं और चार इकाईयाँ या संख्याएँ है तो दायीं ओर भी चार संख्याएँ होंगी । किन्तु जहाँ एक ओर की संख्याएँ मध्यांक मूल्ये से घटती हुई संख्याएँ होगी तो दूसरी ओर मध्यांक मूल्य से बढ़ती हुई संख्याएँ ।

उदाहरण के लिए मान लीजिये 7 परिवारों में सदस्यों की संख्या क्रमश: 6,2,4,7,3, 5, तथा 8 हैं । इस वितरण का मध्यांक ज्ञात करने के लिए सवप्रथम हमें आरोही या अवरोही क्रम में व्यस्थित करना होगा । अध्ययन रहे कि मध्यांक ज्ञात करने के लिए यह एक आवश्यक दशा है जो कि मध्यमान को ज्ञात करने के लिए जरूरी नहीं होती हैं । समंकों को बढ़ते हुए क्रम में व्यवस्थित करने पर यह वितरण होगा ।

2, 3, 4, 5, 6, 7, 8

पारिभाषिक रूप से वितरण में सबसे मध्य में स्थित मूल्य मध्यांक होता है । अत: वितरण में 5 की संख्या ऐसी है जो सभी समंको के मध्य में है । इसलिए 5 इस वितरण का मध्यांक मूल्य है । यहाँ हम देख सकते है कि इस मध्यांक मूल्य के दोनों ओर तीन-तीन संख्याएँ है तथा एक ओर जहाँ घटती हुई संख्याएँ हैं वही दूसरी ओर बढ़ती हुई संख्याऐं हैं ।

वितरण में यदि समंकों की संख्या विषम (odd) हो उस स्थिति में मध्यतम मूल्य को पहचान लेना आसान है किन्तु यदि समंको की संख्या सम हो, तो ऐसी स्थिति में दिये गये वितरण में मध्यांक मूल्य कैसे ज्ञात करें, यह थोड़ा सा मुश्किल होता है । इसलिए वैयक्तिक श्रेणी में समंको की संख्या विषम हो या सम, सामाजिक सांख्यिकी में एक सूत्र दिया गया है, जिसका उपयोग कर मध्यांक मूल्य ज्ञात किया जा सकता है । यह सूत्र निम्न प्रकार है-

मध्यांक स्थान = $\frac{N+1}{2} = \frac{7+1}{2} = 4$

यही यह ध्यान रखें कि इस सूत्र द्वारा परिकलित मूल्य हमें व्यवस्थिति विवरण में मध्यांक मूल्य के स्थान को बतलाता है, न कि मध्यांक मूल्य को । यहाँ 4 की संख्या वह बतलाती है कि व्यस्थित वितरण में चौथे स्थान पर जो संख्या है वह वितरण का मध्यांक मूल्य होगा अर्थात 5 दिये गयें सात परिवारों के सदस्यों के वितरण का मध्यांक है । मध्यांक का

संकेताक्षर Md या Mdn होता है । सम संख्या की स्थिति में वितरण के मध्य में स्थित दो मूल्यों का मध्यमान, वितरण का मध्ययांक होगा । उदाहरण के लिए यदि उपरोक्त उदाहरण में हम 10 की संख्या और लिख दें तो स्थिति मे मध्यांक के दो मूल्यों 5 और 6 का मध्मान 5.5 वितरण का मध्यांक होगा ।

खण्डित तथा अखण्डित श्रेणियों में मध्यांक का परिकलन

(Calculation o Median In Discrete and Continuous Series)

खण्डित श्रेणी में मध्यांक मूल्य के परिकलन हेतु हम उसी सूत्र का उपयोग करते हैं । जिसका उपयोग हमने वैयक्तिक श्रेणी में किया । उदाहरण के लिए हम निम्नलिखित आवृति वितरण के लिए मध्यांक ज्ञात करने की प्रक्रिया समझते है ।

	परिवार मे बच्चों की संख्या (X)	परिवार की संख्या (f)	संख्या आवृति (cf)
	1	5	5
	2	12	17
	3	6	23
Mdn	4 ←————	20 ←———	43 मध्यांक स्थान
	5	7	50
		$\sum f = 50$	

मध्यांक स्थान = $Mdn = \quad 4\frac{N+1}{2} = \frac{50+1}{2} = 25.5$

पहला चरण : मध्यांक ज्ञात करने के लिए हमें सबसे पहले एक कॉलम संचयी आवृति जिसका संकेताक्षर (cf) है, बनाते हैं ।

दूसरा चरण : अब हमें आवृतियों का सवय करना अर्थात जोड़ना होता हैं । यह कार्य ‘f‘ कॉलम में सबसे ऊपर लिखी आवृति से प्रारम्भ किया जाये या सबसे निचे लिखी आवृति से, यह एक प्रमुख प्रश्न होता है । ध्यान रहे कि यह निर्णय चर मूल्य (x) कॉलम पर आश्रित होता है । यदि 'x' कॉलम का सबसे कम चर मूल्य ऊपर की ओर प्रारम्भ में है तो आरतियों का योग हम ऊपर से नीचे की ओर यदि सबसे अन्तिम वर्ग में है तो आवृतियों का योग नीचे से ऊपर की ओर करेंगे । इस उदाहरण में सबसे कम मूल्य ऊपर पहले वर्ग में है इसलिए हमने जोड़ ऊपर से शुरू किया है । यह ध्यान रहे कि जहाँ से भी हम जोड़ शुरू करें पहले वर्ग की आवृति की संख्या तथ संचयी आवृति की संख्या एक ही होती है । इस उदाहरण में आवृति तथा संचयी आवृति 5 है ।

तीसरा चरण : अब हम प्रत्येक चर मूल्य से सम्बन्धित 'आवृति तथा इसे पूर्व वाले चर मूल्यों की आवृतियों को जोड़कर क्रमिक रूप से संचयी आवृति के कॉलम में लिखते

जाते है । यहाँ ध्यान रहे कि अन्तिम चर मूल्य वाले वर्ग की संचयी आवृति तथा आवृति कॉलम का योग दोनों समान संख्याएँ होगी । यदि संख्याओं में अन्तर है तो इसका अर्थ यह है कि या तो हमारे आवृति कॉलम के योग में गलती है या फिर कहीं संचयी आवृति के कॉलम में यहाँ इस उदाहरण में दोनों कॉलम में योग 50 है ।

चौथा चरण : सूत्र (N + 1)/ 72 का उपयोग करते हुए हम मध्यांक स्थान ज्ञात करते है । यहाँ सूत्र परिकलन से मध्यांक स्थान 25.5 है । इस स्थान मूल्य को हम 'cf' कॉलम में देखते हैं जो कि 43 वाले स्थान में सम्मिलित है ।

पाँचवा चरण : इस मध्यांक स्थान से सम्बन्धित चर मूल्य (x) का मान ही वितरण का मध्यांक मूल्य हैं । अत: इस उदाहरण में मध्यांक 4 है ।

अखण्डित श्रेणी में मध्यांक ज्ञात करने के विविध सूत्र आपको पुस्तकों में देखने को मिलेंगे, किन्तु जिसे सूत्र को हम यही काम में ले रहे हैं वह निम्न प्रकार है-

$$Mdn = LL + \frac{N/2 - cf}{f} \ xi$$

जहाँ :

Mdn = मध्यांक

LL = उस वर्ग की निम्न सीमा जहाँ मध्यांक स्थित है ।

N/2 = मध्यांक स्थान

cf = जिस वर्ग में मध्यांक स्थित है, उससे पहले वाले वर्ग की संचयी आवृति

f = मध्यांक वाले वर्ग की आवृति

i = वर्गान्तर

उदाहरण

कारखाने में मजदूरों की संख्या (x)	कारखानों की संख्या (f)	संचयी आवृति (cf)
20 – 24	2	19
15 – 19	4	17
Mdn 10 – 14	8	13
5 – 9	5	5
	$N = \sum f = 19$	

(आवृतियों को नीचे से ऊपर की ओर जोड़ा गया है क्योंकि सबसे छोटा वर्गान्तर नीचे है ।)

सबसे पहले N/2 ज्ञात करें जो कि संचयी आवृति (cf) कॉलम में मध्यांक स्थल को इंगित करेगा ।

यहाँ N/2 = $\frac{19}{2}$= 9.5(मध्यांक स्थल)

मध्यांक स्थल को आवृति वितरण क संचयी कॉलम में देखने से ज्ञात होता है कि मध्यांक 10-14 वाले वर्ग में हैं । अब हम मध्यांक सूत्र में सम्बन्धित मूल्यों को रखते हुए मध्यांक ज्ञात करते हैं-

सूत्र

	संकेताक्षरों के संबन्धित मूल्य
$Mdn = LL + \frac{N/2 - cf}{f} xi$	
$= 9.5 + \frac{9.5 - 5}{8} x5$	$LL = 9.5$
	$N/2 = 9.5$ (वास्तविक सीमाये)
$= 9.5 + \frac{4.5}{8} x5$	$cf = 5$
	$f = 8$
$= 9.5 + \frac{22.5}{8}$	$i = 5$
$= 9.5 + 2.81$	
$Mdn = 12.31$	

अत: दिये गये वितरण का मध्यांक 12.31 है ।

उपरोक्त मध्यांक के सूत्र में निम्न सीमा के स्थान पर हम ऊपरी सीमा (UL) को भी काम में ले सकते हैं किन्तु उस स्थिति में हमारा सूत्र निम्नलिखित होगा-

Mdn = UL - $\frac{N/2-cf}{f}$ xi

इन सूत्रों को काम में लेते समय यह ध्यान रखें कि आपको (cf) कॉलम में आवृतियों का संचय पहले दिये गये सूत्र जिसका उपयोग कर हमने मध्यांक मूल्य ज्ञात किया, उसके विपरीत दिशा में करना होगा । इस सूत्र के उपयोग से भी मध्यांक मूल्य 12.3। ही आयेगा । अत: इसे आप स्वयं करके देखें

बहुलक (Mode)

बहुलक का अर्थ वितरण में ऐसे समंक से है जो कि सबसे अधिक बार घटित होता है । अधिकतम बार इसकी पुनारावृति होने के फलस्वरूप ही इसको वितरण का बहुलकता मूल्य (model value) कहा जाता है । बहुलक से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि किसी दिये गये वितरण में या तो एक भी बहुलक न हो या फिर उसमें एक अथवा एक से अधिक बहुलक हों । यदि किसी वितरण में किसी भी समंक पुनरावृति नहीं हुई है तो ऐसी स्थिति में वितरण में बहुलक नहीं होगा । किन्तु यदि किसी वितरण में किन्हीं दो समंको की पुनरावृति अधिकतम बराबर हुई है तो यह वितरण द्विबहुलक (Bimodal) कहलायेगा । दो से अधिक समंको के अधिकतम बराबर पुनरावृति होने की स्थिति में वितरण बहु-बहुलक (multi-model) कहलायेगा । किसी वितरण में एक से अधिक बहुलक क्यों होते हैं, इस सम्बन्ध में सिम्पसन तथा केपको ने चार प्रमुख कारण बतलाये है जो निम्न प्रकार है ।

(i) तथ्य विजातीय हैं अर्थात उनमें भिन्नता अधिक है ।

(ii) तथ्यों का समूहीकरण सही तरीके से नहीं किया गया है ।

(iii) ऐसा संयोगवश हुआ है, तथा

(iv) तथ्य यद्यपि सजातीय है, किन्तु स्वाभाविक रूप से द्विबहुलकी है ।

बहुलक का परिकलन (Calculation of mode)

वैयक्तिक तथा खण्डित श्रेणियों में बहुलक का परिकलन बहुत ही सरल है । केवल समंको को देखकर ही यह बताया जा सकता है कि दिये गये वितरण का बहुलक क्या है । वैयक्तिक श्रेणी में ऐसी संख्या जो सबसे अधिक बार आई है, वितरण का बहुलक है ।

उदाहरण

2, 4, 4, 5, 5, 5, 5, 7, 9, 10

उपरोक्त वितरण में 5 की संख्या ऐसी है जो सबसे अधिक चार बार आई है, अत: इस वितरण गा बहुलक 5 है ।

खण्डित श्रेणी के उदाहरण नीचे दिये आवृति वितरण में

	सजा की अवधि(वर्षो में) (X)	अपराधियों की संख्या (f)	
बहुलक	2	15	अधिकतम आवृत्ति
	4	10	
	6	12	
	8	7	
	10	6	

बहुलक ज्ञात करने के लिए हम आवृति (f) कॉलम में पहले अधिकतम आवृति का पता लगायेंगे, फिर यह देखेंगे कि इस अधिकतम आवृति से सम्बन्धित चर मूल्य (x) का मान क्या है । अधिकतम आवृति से सम्बन्धित चर मूल्य का मान ही विवरण का बहुलक होगा । अत: उपरोक्त वितरण का बहुलक जैसा कि दर्शाया गया है, 2 है।

खण्डित श्रेणी के द्विबहुलक या बहु-बहुलक वितरण की स्थिति में बहुलक ज्ञात करने के लिए हम इन तीन मापों में पाये जाने वाले गणितीय सम्बन्ध (बहुलक = 3 मध्यांक - 2 मध्यमान) द्वारा बहुलक ज्ञात करते है, किन्तु समाशास्त्रीय दृष्टिकोण से सामाजिक यर्थार्थता को बनाये रखने के लिए वितरण के स्वरूप के अनुसार दो या दो से अधिक रिपोर्ट किये जाते है।

अखण्डित श्रेणी (Continuous Series)

अखण्डित श्रेणी में बहुलक ज्ञात करने के लिए सामाजिक सांख्यिकी की पुस्तकों में जैसा कि जेक लेविन, नारमेन कर्टज तथा सुसान राइट इत्यादि लेखकों ने बतलाया है कि अधिकतम आवृति वाले वर्गान्तर का मध्य बिन्दु ही वितरण का बहुलक मूल्य होता है । किन्तु सांख्यिकीय रूप से बहुलक ज्ञात करने के लिए जिस सूत्र का उपयोग किया जाता है, वह निम्न प्रकार है-

$$Mo = LL + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} xi$$

जहां

Mo = बहुलक का संकेताक्षर

LL = अधिकतम आवृति वाले वर्गान्तर की निन्न सीमा

F_1 = उस वर्गान्तर की आवृति जिसमें बहुलक स्थित है (अधिकतम आवृति)

f_0 = अधिकतम आवृति वाले वर्गान्तर से पहले वाले वर्गान्तर की आवृति ।

f_2 = अधिकतम आवृति वाले वर्गान्तर के बाद वाले वर्गान्तर की

I = आवृति वर्गान्तर

यदि हम खण्डित श्रेणी के मध्यांक वाले उदाहरण (कारखाने में मजदूरों की संख्या तथा कारखानों की संख्या) को हल करें तो बहुलक का मान होगा ।

$$Mo = 9.5 + \frac{8-5}{2\times 8 - 5 - 4} \times 5$$

$$= 9.5 + \frac{3}{16-9} \times 5$$

$$= 9.5 + \frac{15}{7}$$

$$M_0 = 9.5 + 2.14 = 11.64$$

अत: दिये गये वितरण का बहुलक 1164 है ।

14.6 केन्द्रीय प्रवृति के माप के चयन के आधार (Bases of Selecting Measures of Cetral Tendency)

किसी सामाजिक अनुसंधान से सम्बन्धित तथ्यों के संक्षिप्तीकरण तथा तथ्य विवेचन के लिये केन्द्रीत प्रवृति के किस माप का उपयोग किया जाए, एक जटिल प्रश्न है । वास्तव में केन्द्रीय प्रवृति के माप-मध्यमान मध्यांक तथा बहुलक का उपयोग अनुसंधानकर्ता की इच्छा या सुविधा पर आधारित नहीं होता है बल्कि इन मापों की विशेषताओं तथा कमियों को ध्यान में रखते हुए, किन्हीं निश्चित आधारों पर निर्णय लेना होता है । इससे पूर्व कि हम इन आधारों को जाने, सारांश में मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलक की तुलनात्मक विशेषताओं का जो सारिणिक रूप में माइकल मेलेक ने जो उल्लेख किया है, उनको जान लेना आवश्यक है । मेलेक द्वारा की गई सारिणी निम्न प्रकार है ।

मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलक की विशेषताओं का सारांश

	बहुलक	मध्यांक	मध्यमान
प्रमुख अव्धनात्मक विशेषता	वितरण मे अधिकतम आवृति वाला मूल्य	वितरण मे मध्य स्थान	वितरण मे प्रत्येक संमक का प्रतिनिधित्व करना है।

वितरण मे संख्या	एक या अधिक	एक और केवल एक ही	एक और केवल एक ही
क्या अंकगणितीय रूप से कार्य साध्य है ?	नहीं	नहीं	हाँ
मापन के किस स्तर पर उपयोग किया जा सकता है ?	नामात्मक,क्रमात्मक, अंतरलात्मक या अनुपतात्मक	क्रमात्मक,अंतरलात्मक या अनुपतात्मक	केवल अंतरलात्मक तथा अनुपतात्मक मे

केन्द्रीय प्रवृति के माप सम्बन्धी निर्णय से सम्बन्धित जेनी लुटज ने तीन प्रमुख आधारों का उल्लेख किया है । ये तीन आधार क्रमश: मापन का स्तर(Level of measurement) वितरण की बनावट (shape of distribution) तथा अनुसंधान उद्देश्य (research objectives) हैं-

मापन स्तर - मापन किन्हीं पूर्व निर्धारित नियमों के अनुसार किसी चर (variable) के मापन के अध्ययन के आधार पर इकाईयों को (units)संख्याएँ प्रदान करने की प्रक्रिया है । मापन के चार स्तर- नामात्मक (nominal), क्रमात्मक (ordinal), अन्तरात्मात्मक (interval) तथा अनुपातात्मक (ratio) होते है । किसी भी चर को उसकी प्रकृति के आधार पर किसी एक और एक ही स्तर पर मापा जा सकता है । नामात्मक मापन का जहाँ निम्नतम स्तर होता है वहीं अनुपातात्मक मापन का सबसे उच्चतम स्तर कहलाता है । नामात्मक मापन स्तर पर इकाईयों को केवल संवर्गो में बाँटा जा सकता है अपितु इन संवर्गो को श्रेणीकृत कर एक क्रम में भी रखा जाता है । दोनों ही मापन स्तरों की समान विशेषता गुणात्मक (शब्दात्मक) संवर्गो का होना है । लिंग. जाति और धर्म इत्यादि जहाँ नामात्मक चर के उदाहरण हैं वहाँ सामाजिक वर्ग (उच्च वर्ग, मध्य वर्ग, निम्न वर्ग), शैक्षणिक स्तर (उच्च माधयमिक स्नातक, स्नातकोत्तर) तथा सामाजिक एकीकरण का स्तर (उच्च तथा निम्न) इत्यादि क्रमात्मक चर के उदाहरण हैं । अन्तरात्मक तथा अनुपातात्मकचरो की विशेषता शब्दाततमक सवर्ग न होकर संख्यात्मक वर्गो का होना हे ।इन चरों की प्रकृतिवश मापन से हमे जो तथ्य प्राप्त होते हैं वे गुणात्मक न होकर संख्यात्मक होते है । उदाहरण के लिए व्यक्तिए का कद, वजन, मासिक आय इत्यादि ऐसे उदाहरण है जिनके आधार पर न केवल । आया के । विभिन्न वर्गो में विभक्त कर उन्हें एक क्रम में रखा जा सकता है । बल्कि उनमें मापी जाने वाली तिशेषता के आधार पर मात्रात्मक (magnitudinal) अन्तर भी बतलाया जा सकता है तथा शून्य (zero) की प्रकृति के आधार पर अनुपातात्मक तुलनायें भी की जा सकती हैं ।

वितरण की बनावट - बनावट के आधार पर वितरणों को मोटे रूप से दो भागों में बाँटा जा सकता है- समिमित वितरण (Symmetrical distribution) तथा असममित या विषम (Asymmetrical or skewed distribution) वितरण । सममित तथा विषम वितरणों की बनावट के कुछ उदाहरण निम्न प्रकार है-

अनेक विशेषताओं के आधार पर सममित्त तथा वितयम वितरणों की तलना की जा सकती हैं । किन्तु अन्तरता का एक प्रमुख आधार केन्द्रीय प्रवृति के मापों की स्थिति (location) है जो कि उपयोग में लिये जाने वाले माप के निर्णय में सहायक होती है । सममित्त वितरण में जहाँ मध्यमान, मध्यांक का मध्यांक तथा बहुलक का मान समान होता है, वहीं धनात्मक रूप से विषम वितरण में मध्यान का मध्यांक से और मध्यांक का बहुलक से मान अधिक होता है । किन्तु ऋणात्मक रूप से विषम वितरण में मध्यमान का मध्यांक से, तथा मध्यांक का बहुलक से मान कम होता है ।

मापन स्तर तथा वितरण की बनावट को ध्यान में रखते हुए केन्द्रीय प्रवृति के माप जिस माप को काम में लिया जा सकता है उसे निम्न प्रकार दर्शाया जा सकता है-

मापन स्तर	केंद्रीय प्रवृति का माप
नामात्मक	बहुलक
(संवर्गतमक)	
क्रमात्मक	मध्यांक
अन्तरालात्मक	सममित तथ्य : मध्यमान
	विषम तथ्य : मध्यांक
अनुपातात्मक	सममित तथ्य : मध्यमान
	विषय तथ्य : मध्यांक

यद्यपि अधिकांशतः अनुसंधानकर्ता उपरोक्त दो आधारों पर निर्णय ले सकता है, लेकिन कभी-कभी अध्ययन उद्देश्य भी उसके निर्णय को प्रभावित कर सकते हैं । किसी भी अनुसंधान का उद्देश्य वर्णनात्मक, तुलनात्मक तथा आनुमानिक या निष्कर्षात्मक हो सकता है । वर्णनात्मक उद्देश्य में जहाँ अनुसंधानकर्ता मापन स्तर तथा वितरण की बनावट को ध्यान में रखकर निर्णय लेता है, वहीं आनुमानित या निष्कर्षात्मक उद्देश्य हेतु वह केवल मध्यमान का ही उपयोग कर सकता है । इसका कारण यह है कि मध्यमान ही केन्द्रीय प्रवृति का ऐसा माप है जिसका उपयोग निष्कर्षात्मक या आगमनात्मक सांख्यिकी में होता है ।

तुलनात्मक अध्ययनों में अनुसंधानकर्ता को निर्णय सम्बन्धी कठिनाई का सामना करना पड़ता है क्योंकि केन्द्रीय प्रवृति के समान मापों में ही तुलना की जा सकती है न कि मध्यमान की मध्यांक से या फिर मध्यांक की बहुलक है । इसका कारण इन तीन मापों की पारिभाषिक अन्तरता है । जहाँ मध्यमान अंकगणितीय, मध्ययांक विभाजक मूल्य है, वहाँ तथा बहुलक अधिकतम आवृति वाला मान है ।

14.7 सारांश (Summary)

इस पाठ में हमने देखा कि सामाजिक अनुसंधान में सांरिग्कीय मापों का उपयोग मुख्य रूप से तथ्यों के संक्षिप्तीकरण, चरों के मध्य सहसम्बन्ध जानने तथा निदर्शन के अध्ययन के आधार पर प्राचलों का आकलन करने तथा सामान्य निष्कर्ष निकालने हेतु किया जाता है । केन्द्रीय प्रवृति का अर्थ वितरण में उस मूल्य से होता है जो समंको के वितरण के मध्य में

स्थित होता है तथा जो वितरण का प्रतिनिधि मूल्य है । केन्द्रीय प्रवृति के तीन प्रमुख माप- मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलक है । मध्यमान वितरण का अंकगणितीय मूल्य मध्यांक, मध्यांक वितरण का स्थान (वितरण के मध्य में) सम्बन्धी मूल्य तथा बहुलक सर्वाधिक आवृति वाला मूल्य है । केन्द्रीय प्रवृति के तीनों ही मापों का परिकलन वैयक्तिक, खण्डित तथ अखण्डित श्रेणियों में किया जा सकता है । किसी दी गयी सामाजिक अनुसंधान परिस्थिति में हम केन्द्रीय प्रवृति के कौनसे माप का उपयोग करेंगे, यह निर्णय तीन आधारो- मापन का स्त, वितरण की बनावट तथा अनुसंधान के उद्देश्यों पर संयुक्त रूप से आश्रित होता है ।

14.8 परिकलन सूत्र सारिणी (Table of Calculation Formula)

केन्द्रीय प्रवृति की माप	समंक श्रेणी वैयक्तिक	 खण्डित	 अखण्डित
मध्यमान (x)	$\frac{\{x\}}{N}$	$\frac{\{fx\}}{N}$	$\frac{\{fx_m\}}{N}$
मध्यांक(Mdn)	$\frac{N+1}{2}$स्थान	$\frac{N+1}{2}$स्थान	$LL+\frac{N/2-cf}{f}xi$
बहुलक (Mo)	अधिकतम आवृति वाला चर मूल्य	अधिकतम आवृति से सम्बन्धित चर मूल्य (x) का मान	$LL+\frac{f_1-f_2}{2f_1-f_0-f_2}xi$

14.9 शब्दावली (Glossary)

केन्द्रीय प्रवृति किसी समंक वितरण का औसत या प्रतिनिधि मूल्य, ऐसा मूल्य जो वितरण के मध्य में स्थित होता है ।

मध्यमान केन्द्रीय प्रवृति का एक माप, समंक वितरण में समंकों के योग को, समंक की संख्या से भाग देकर प्राप्त किया गया मूल्य ।

मध्यांक केन्द्रीय प्रवृति का एक माप जो दिये गये समंक वितरण को दो बराबर भागों में विभक्त करता है, वितरण का मध्यवर्ती मूल्य ।

बहुलक समंक वितरण में सर्वाधिक आवृतिवाला मूल्य ।

मापन अध्ययन इकाईयों की मापी जाने वाली विशेषताओं को संख्याएँ प्रदान की प्रक्रिया ।

नामात्मक स्तर अध्ययन इकाईयों के संवर्गो में विभक्त और नामित करने की प्रक्रिया ।

क्रमात्मक स्तर किसी गुण के अंशों की मौजूदगी के आधार पर इकाईयों को संवर्गो में विभक्त कर संवर्गो को श्रेणी के अनुसार क्रम में रखने की प्रक्रिया ।

अन्तरालात्मक स्तर अध्ययन इकाईयों को मापन इकाई के आधार पर संख्याएँ प्रदान करना ताकि उनमें मात्रात्मक अन्तर भी जाना जा सकें ।

14.10 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

1. केन्द्रीय प्रवृति क्या है?
2. सामाजिक अनुसंधान में केन्द्रीय प्रवृति के मापों के उपयोग सम्बन्धी निर्णय के आधारों का वर्णन किजिये ।
3. निम्नलिखित चरों का मापन स्तर क्या है?

   (i) लिंग (ii) राजनैतिक दल की सदस्यता

   (iii) जाति (iv) घर का टेलीफोन नम्बर

   (v) सामाजिक वर्ग (vi) धार्मिकता स्तर

   (vii) आयु (viii) आय

   (ix) नामांकन संख्या (x) परिवार के सदस्यों की संख्या
4. निम्नलिखित सांख्यिकी मूल्यों के आधार पर वितरण की बनावट प्रकार को बतलाईये ।

   (अ) मध्यान = 46, मध्यांक = 52, बहुलक = 58

   (ब) मध्यमान = 56, मध्यांक = 52, बहुलक = 46

   (स) मध्यमान = 52, मध्यांक = 52, बहुलक = 52

   (द) मध्मान = 52, मध्यांक = 52, बहुलक = 20, बहुलक = 84
5. मआन, मध्यांक तथा बहुलक परिकलित कीजिये ।

वर्गान्तर	आवृति
12 - 14	5
9 - 11	8
6 - 8	12
3 - 5	36
0 - 2	19

14.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Refernce Books)

1. आहूजा राम (2004), सामाजिक अनुसंधान, जयपुर रावत पब्लिकेशन्स ।
2. लोइथर हरमन एण्ड डोनाल्ड मेक्टाविश (1974), डिसक्रिपटिव स्टेटिसटिक्स फॉर सोशियालॉजिस्ट : एन इन्ट्रोड्क्शन बॉस्टन, ऐलिन एण्ड बेकन पब्लिकेशन ।
3. लेविन जेक (1983), एलीमेन्ट्री स्टेटिसटिक्स इन साशियल रिसर्च, न्यूयार्क, हार्पर एण्ड रॉ पब्लिशर्स ।
4. मेलेक माइकल (1977), इसेनशल स्टेटिसटिक्स फॉर सोशियल रिसर्च, फिलडेलफिया जे. बी. लेपिनकाट कम्पनी ।
5. सेन्डर्स डोनाल्ड (1995), स्टेटिसटिक्स अ फर्स्ट कोर्स, न्यूयार्क मेकग्राहिल पब्लिकेशन ।

इकाई- 15

माध्य विचलन - मानक विचलन

इकाई की संरचना

15.0 उद्देश्य
15.1 प्रस्तावना
15.2 माध्य विचलन की परिभाषा व अर्थ
15.3 माध्य विचलन इगत करने की प्रक्रिया
15.4 माध्य विचलन के गुण
15.5 माध्य विचलन के दोष
15.6 मानक विचलन
15.7 मानक विलचन की गणना
15.8 सामूहिक मानक-विचलन
15.9 मानक विचलन के बीजगणितीय गुण
15.10 मानक विचलन के गुण-दोष
15.11 सारांश
15.12 शब्दावली
15.13 अभ्यास प्रश्न
15.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

15.0 उद्देश्य

संमक श्रेणी की सभी विशेषताओ को केन्द्रीय प्रवृति के माप द्वारा स्पष्ट नहीं किया जा सकता ।उसके लिए अपकिरण की माप का अध्ययन भी आवश्यक हेता है । यदि अपकिरण के अध्ययन के बिना निष्कर्ष निकाले गये तो वही दशा होगी कि ' 'लेखा ज्यों का त्यों, कुनबा डूबा क्यों? "एक व्यक्ति ने नदी पार करते समय पानी की गहराई के औसत की तुलना अपने परिवार की औसत ऊँचाई से कर ली, परन्तु उसने यह ध्यान नहीं किया कि नदी का पानी किसी स्थान पर उसके परिवार के सदस्यों की ऊँचाई से अधिक गहरा है । अत: यह स्पष्ट है कि समंक श्रेणी के बारे में यथेष्ट ज्ञान प्राप्त करने के लिए, न केवल । उसका माध्य जानना आवश्यक है बल्कि विभिन्न व्यक्तिगत मूल्यों का उस माध्य से औसत अन्तर और श्रेणी की सरचना तथा स्वरूप आदि के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करना भी परमावश्यक है ।

15.1 प्रस्तावना

माध्य विचलन व मानक विचलन अपकिरण ज्ञान करने की दो प्रमुख गणितीय रीतियाँ है । अपकिरण ज्ञात करने का मुख्य उद्देश्य विचरण या विखराब का अध्ययन करना है, आय व

धन की असमानताओं की माप, उद्योगों के औसत लाभ, औसत उत्पादन एवं औसत लागत में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन, एकाधिकार एवं आर्थिक सत्ता के केन्द्रीयकरण का माप, अपकिरण की विभिन्न रीतियों द्वारा ही किया जाता है ।

15.2 माध्य विचलन की परिभाषा व अर्थ

माध्य विचलन श्रेणी के सभी पदों के निरपेक्ष विचलनों का माध्य है । इसमें पदमाला के सभी पदों को ध्यान में रखा जाता है । किसी भी माह-, जैसे - समान्तर माध्य, बहुलक या मध्यका से पदामाला के प्रत्येक पद का निरपेक्ष विचलन निकालकर (चिहों की उपेक्षा करके या सबको धन मानकर) उसका समान्तर माध्य निकालते हैं यही माध्य विचलन होता है । यह (एक ऐसा मूल्य है जो किसी श्रेणी के माध्य से विभिन्न मूल्यों के औसत विचलन को प्रकट करता है । माध्य विचलन की गणना में सभी विचलनों को धनात्मक माना जाता है या बीज गणितीय चिह्न धन (+) और ऋण (-) को छोड़ दिया जाता है । माध्य विचलन जितना ही अधिक होता है, उस पदमाला में अपकिरण या फैलाव उतना ही अधिक होता है । माध्य विचलन को प्रथम निरपेक्ष आघूर्ण (First Absolute Moment) भी कहते है । माध्य विचलन समान्तर माध्य, बहुलक या मध्यका पर आधरित हो सकता है।

15.3 माध्य विचलन ज्ञात करने की प्रक्रिया

(i) **मध्य का चुनाव** सर्वप्रथम यह निश्चित करना पड़ता है कि समान्तर माध्य, बहुलक या मध्यका में से किसी माध्य से माध्य-विचलन निकालना है । यह निश्चित करते समय मध्यका को ही प्रधानता दी जानी चाहिए क्यों कि वह स्थिर व प्रतिनिधि होती है तथा इससे प्राप्त विचलनो की जोड़ सबसे कम होती है । समान्तर माध्य से भी विचलन लिया जा सकता है परन्तु बहुलक का प्रयोग यथासाध्य नहीं करना चाहिए क्योंकि वह बहुत अनिश्चित होता है । यदि प्रश्न में स्पष्ट रूप से यह न दिया गया हो कि किस माध्य रवे माध्य-विचलन निकालना है, तो मध्यका का ही प्रयोग किया जाना चाहिए ।

(ii) **विचलन निकालना :** निश्चितकिये हुए माध्य से प्रत्येक मूल्य का विचलन निकाल लेते है ।

(iii) **विचलनों का योग.** सभी विचलनों को जोड़ लेते है । ऐसा करते समय सभी विचलनों को धनात्मक मान लेते है । ऋणात्मक विचलनों को भी धनात्मक ही मानते है । ऐसे विचलनों को प्रकट करने के लिए तं में दोनों तरफ सीधी खड़ी रेखाएँ बना दी जाती है । ।d । का अर्थ होता है कि विचलन निकालते समय ऋण और धन का ध्यान नहीं रखा गया है । चिह्नों का ध्यान न रखने का प्रमुख कारण है कि समान्तर माध्य से लिये गये विचलनों का योग शून्य होता है और मध्यका से विचलन लेते समय भी योग लगभग शून्य हो जाता

(iv) **विचलनों का माध्य :** इस योग में पदों की संख्या का भाग दे देते है । इस प्रकार प्राप्त फल माध्य-विचलन होता है ।

खण्डित एवं सतत श्रेणियों में विचलनों को पहले आवृत्तियों से गुणा किया जता है और तब गुणनफलों का योग ज्ञात किया जाता है ।

माध्य विचलन का सूत्र निम्नांकित है :

M.D or $\partial = \frac{\sum|d|}{N}$

यहाँ ∂ माध्य विचलन को डेल्टा से व्यक्त किया जाता है ।

|d| = ऋणात्मक चिह्नों को छोड़कर मध्यका, माध्य, बहुलक से विचलन को व्यक्त करता है ।

N = कुल संख्या को व्यक्त करता है ।

विभिन्न श्रेणियों में माध्य विचलन के सूत्र निम्न है ।

	व्यक्तिगत श्रेणी	खण्डित सत्त श्रेणी
माध्य से माध्य-विचलन $(\partial\overline{x}) =$ (Mean Deviation from mean)	$\frac{\sum\|d\overline{x}}{N}$	$\frac{\sum f\|d\overline{x}\|}{N}$
माध्य से माध्य-विचलन (∂M)= Mean Deviation from mean)	$\frac{\sum\|DM\|}{N}$	$\frac{\sum F\|DM\|}{N}$
माध्य से माध्य-विचलन (∂z) = Mean Deviation from mean)	$\frac{\sum\|dz\|}{N}$	$\frac{\sum f\|dz\|}{N}$

माध्य विचलन गुणांक (Coefficient of Mean deviation) : माध्यम विचलन निरपेक्ष माप होता है । इसे तुलनीय बनाने के लिए इसका सापेक्ष माप अर्थात् माध्य विचलन गुणांक ज्ञात करते है । इसे ज्ञात करने के लिए माध्य से भाग दिया जाता है जिसकी सहायता से माध्य-विचलन निकाला गया है । सूचनानुसार -

माध्य से माध्य - विचलन गुणांक = $\frac{\partial\overline{x}}{X}$

मध्यका से माध्य - विलचन गुणांक = $\frac{\partial M}{M}$

बहुलक से माध्य - विचलन गुणांक = $\frac{\partial z}{z}$

माध्य विचलन ब उसके गुणांक की गणना - माध्य विचलन व उसके गुणांक की गणना विभिन्न श्रेणियों में निम्न प्रकार की जाती है ।

व्यक्तिगत श्रेणी :

प्रत्येक रीति (direct method) -

(i) उस माध्य को निकालते है जिससे माध्य-विचलन निकालना है ।

(ii) संबंधित माध्य से बीज गणितीय चिन्हों की उपेक्षा करते हुए पद मूल्यों का विचलन (|d|) ज्ञात किया जाता है।

(iii) प्राप्त विचलन का योग $\sum$|d| ज्ञात किया जाता है ।

(iv) प्राप्त विचलन के योग में पद संख्या का भाग करके माध्य - विचलन ज्ञात किया जाता है।

(v) माध्य विचलन से सम्बन्धित माध्य का भाग करके माध्य विचलन गुणांक ज्ञात किया जाता है ।

उदाहरण - (1) निम्नलिखित आँकडे किसी कक्षा के 9 छात्रों का भार प्रदर्शित करते है । मध्यका तथा माध्यसे माध्य-विचलन एवं उनके गुणांक ज्ञात कीजिए :

क्रम सं.	1	2	3	4	5	6	7	8	9
भार (किग्रा. में)	40	42	45	47	50	51	54	55	57

हल -

माध्य-विचलन की गणना

क्रम संख्या	भार (X) (किंग्रा. मे)	मध्यका से विचलन M - 50, |dM| = |X - M|	माध्य से विचलन $(d\bar{x}) = \|x-\bar{x}\|$
1	40	10	9
2	42	8	7
3	45	5	4
4	47	3	2
5	50	0	1
6	51	1	2
7	54	4	5
8	55	5	6
9	57	7	8
N = 9	$\sum X = 441$	$\sum \|dm\| = 43$	$\sum \|d\bar{x}\| = 44$

मध्यका (M)= SIZE OF $\left(\frac{N+1}{2}\right)^{th}$ ITEM

= SIZE OF $\left(\frac{9+1}{2}\right)^{th}$ ITEM

M = SIZE OF 5^{th} item

$\partial M = \frac{\sum |dM|}{N} = \frac{43}{9} = 4.78$ क्रिग्रा.

माध्यका से माध्य विचलन गुणाक = $\frac{\partial M}{M}$

$= \frac{4.78}{50}$

= .0956

सामन्तर मध्य $(\bar{x})$ = $\frac{\sum x}{N} = \frac{441}{9}$

$\bar{x}$ = 49 क्रिगा.

$\overline{\partial x} = \frac{\sum |\overline{dx}|}{N} = \frac{44}{9} = 4.89$ किग्रा.

माध्य से माध्य विचलन गुणाक

$= \frac{\overline{\partial x}}{\bar{x}}$

$= \frac{4.89}{49}$

$= .0997$

लघुरीति (Short cut Method) - व्यक्तिगत श्रेणी में लघुरीति द्वारा माध्य विचलन ज्ञात करने की प्रक्रिया निम्नांकित है -

(अ) मध्यका से माध्य विचलन ज्ञात करने की प्रक्रिया -

(i) पदों को आरोही क्रम में अनुविन्यस्त करके मध्यका मूल्य की गणना की जाती है ।

(ii) मध्यका मूल्य से अधिक या बाद वाले मूल्यों का योग ($\sum$ MA) तथा मध्यका मूल्य से कम या पहले के मूल्यों का योग ($\sum$ MB) ज्ञात कर लिया जाता है ।

(iii) इन दोनों योगों के अन्तर में संख्या का भाग देते है । भजनफल माध्य विचलन होता है ।

$$\partial M = \frac{\sum MA - \sum MB}{N}$$

इसके लिए निम्न सूत्र का प्रयोग होता है :

सूत्र में $\partial M =$ मध्यका से माध्य - विचलन

$\sum MA =$ मध्यका से अधिक मूल्यों का योग

$\sum MB =$ मध्यका से कम मूल्यों का योग

(ब) अंकगणितीय माध्य से माध्य-विचलन ज्ञात करने की प्रक्रिया

(i) सर्वप्रथम दिए हुए मूल्यों का माध्य ($\bar{x}$) ज्ञात कर लिया जाता है ।

(ii) समान्तर माध्य से अधिक तथा कम आकार के मूल्यों का योग क्रमशः $\sum MA$ तथा $\sum MB$ ज्ञात कर लिया जाता है ।

(iii) समान्तर माध्य से अधिक मूल्यों की संख्या (NA) तथा उससे कम मूल्यों की संख्या (NB) अलग-अलग ज्ञात कर लेते है ।

निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है -

$$\overline{\partial x} = \frac{\sum MA - \sum MB - (NA - NB)\bar{x}}{N}$$

यहाँ NA = माध्य मूल्यस से अधिक आकार की संख्याएँ तथा,

NB = माध्य मूल्य से कम आकार की संख्याएँ ।

अन्य संकेताक्षरों का अर्थ वही है जो पहले वाले सूत्र में था ।

उदाहरण (2) - उपरोक्त उदाहरण - 1 को लघुरीति द्वारा हल कीजिए ।

व्यक्तिगत श्रेणी : लघु रीति द्वारा माध्य विचलन की गणना

क्रम सं.	भार (क्रिगा. मे)	मध्यका (M) के लिए	माध्य ($\bar{x}$) के लिए

1 2 3 4 5 6 7 8 9	40 42 45 47 50 51 54 55 57	$\sum MA = 51+54+55+57 = 21$ $\sum MB = 40+42+45+47 = 17$	$\sum MA = 50+51+54+57 = 267$ $\sum MB = 40+42+45+47 = 174$ NA = 5 NB = 4

N = 9 M = 50 $\bar{x} = 49$

मध्यका (M) से माध्य - विचलन

$$\bar{\partial}M = \frac{\sum MA - \sum MB}{N}$$

$$= \frac{217-174}{9} = \frac{43}{9} = 4.78$$

व्यक्तिगत श्रेणी में प्रत्यक्ष रीति द्वारा माध्य विचलन निकालना अधिक सरल व सुविधाजनक है

समान्तर मध्य ($\bar{x}$)से मध्य-विचलन

$$\bar{\partial}\bar{x} = \frac{\sum MA - \sum MB - (NA - NB)}{N}$$

$$= \frac{217-174-(5-4)49}{9}$$

$$= \frac{267-174-49}{9}$$

$$= \frac{267-223}{9}$$

$$= \frac{44}{9} = 4.89$$

उदाहरण (3) - 9 छात्रों के प्राप्तांक नीचे दिये गये है । इन से (i) माध्य से, (ii) बहुलक से, तथा (iiii) मध्यका के सापेक्ष माध्य विचलन की गणना कीजिए तथा दिखाइए कि इसका मान मध्यका से न्यूनतम है । प्राप्तांक (25 में से) : 7,4 ,10, 9., 15,12, 7.9, 7, 1=

$$\frac{7+4+10+9+15+12+7+9+7}{9}$$

हल - समान्तर माध्य ($\bar{x}$)

$$\bar{x} = \frac{80}{9} = 8.9 \text{ अंक}$$

मध्यका (X) के लिए (मूल्यों को आरोही क्रम में रखने पर)

क्रम सं. :	1	2	3	4	5	6	7	8	9
मूल्य :	4	7	7	7	9	9	10	12	1

मध्यका (M) = size of $\left(\frac{N+1}{2}\right)^{th}$ item = $\left(\frac{9+1}{2}\right)^{th}$ item

= 5^{th} item = 9

बहुलक (z) - बहुलक वह मूल्य होगा जो अधिक बार आया हो ।

z = 7

Calculation of Mean Deviation

अंक	माध्य से विचलन $\lvert d\bar{x} \rvert\ \bar{x}=8.9$	मध्यका से विचलन $\lvert dM \rvert\ M=9$	बहुलक से विचलन $\lvert dz \rvert\ z=9$
4	4.9	5	3
7	1.9	2	0
7	1.9	2	0
7	1.9	2	0
9	.1	0	2
9	.1	0	2
10	1.1	1	3
12	3.1	3	5
15	6.1	7	8
	$\sum\lvert d\bar{x} \rvert = 21.1$	$\sum\lvert dM \rvert = 21$	$\sum\lvert dz \rvert = 23$

माध्य से माध्य - विचलन $\left(\partial\bar{x}\right)$ = $\frac{\sum\lvert d\bar{x}}{N} = \frac{21.1}{9} = 2.34$ अंक

माध्यका से माध्य- विचलन $\left(\partial M\right) = \frac{\sum\lvert dM \rvert}{N} = \frac{21}{9} = 2.33$ अंक

बहुलक से माध्य विचलन $\left(\partial z\right) = \frac{\sum\lvert dz \rvert}{N} = \frac{23}{9} = 2.56$ अंक

उपरोक्त प्रश्न से यह स्पष्ट है कि मध्यका से निकाला गया माध्य विचलन सबसे कम है ।

<u>खण्डित श्रेणी (discrete series) मे माध्य विचलन और उसके गुणाक का संगठन</u>

प्रत्यक्ष रीति (Direct Method)

गणना विधि -

(i) जिस माध्य से माध्य विचलन निकालना होता है, उस माध्य को निकालते है ।

(ii) निकाले गये माध्यों का विलचन ।d। निकालते है ।

(iii) प्राप्त विचलन को सम्बन्धित आवृत्ति से गुणा करके उसका योग $\left(\sum f\lvert d \rvert\right)$ कर लिया जाता है ।

(iv) गुणनफलों के योग $\left(\sum f|d|\right)$ में पदों की संख्या (N) का भाग देने पर माध्य-विचलन प्राप्त होता है ।

सूत्रानुसार $\partial M = \frac{\sum f|dM|}{N}, \partial\overline{x} = \frac{\sum f|d\overline{x}|}{N}, \partial z = \frac{\sum f|dz|}{N}$

(v) माध्य विचलन में उस माध्य का भाग देने पर, जिससे यह विचलन ज्ञात किये गये हैं, उसका गुणांक प्राप्त होता है ।

उदाहरण : निम्नलिखित श्रेणी से माध्य, मध्यका तथा बहुलक से माध्य-विचलन तथा उनके गुणांक ज्ञात कीजिए माध्य विचलन तथा उनके गुणांक ज्ञात कीजिए :

आकार :	4	6	8	10	12	14	16
आवृत्ति :	2	1	3	6	4	3	1

हल : पहले माध्य, मध्यका तथा समान्तर माध्य का निर्धारण किया जाएगा ।

आकार (x)	आवृति (f)	संचयी आवृति (c.f)	Fx
4	2	2	8
6	1	3	6
8	3	6	24
10	6	12	60
12	4	16	48
14	3	19	42
16	1	20	16
	N = 20		$\sum$ fx = 204

माध्य $(\overline{x}) = \frac{\sum fx}{N} = \frac{204}{20} = 10.2$

$\boxed{\overline{x} = 10.2}$

मध्यका $(M) = size of \left(\frac{N+1}{2}\right)^{th} item$

$= size of \left(\frac{20+1}{2}\right)^{th} item$

= size of 10.5^{th} item

$\boxed{M = 10}$

बहुलक वह मूल्य है जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक हो । यहाँ निरीक्षण विधि द्वारा देखेने पर पता चलता है कि बहुलक 10 है । चूँकि मध्यका भी 10 है अत: बहुलक से माध्य विचलन, मध्यका से माध्य विचलन के बराबर होगा ।

माध्य विचलन का परिकलन

आकार	आवृति (f)	माध्य ($\overline{x} = 10.2$) से	मध्यका (M=10) से

(x)		विचलन $|d\bar{x}|$	कुल विचलन = f$|d\bar{x}|$	विचलन $|d\bar{x}|$	कुल विचलन =f|dM|
4	2	6.2	12.4	6	12
6	1	4.2	4.2	4	4
8	3	2.2	6.6	2	6
10	6	0.2	1.2	0	0
12	4	1.8	7.2	2	8
14	3	3.8	11.4	4	12
16	1	5.8	5.8	6	6
	N = 20		$\sum f\,|d\bar{x}| = 48.8$		$\sum f\,|dM| = 48$

$$\overline{\partial x} = 8\frac{\sum f\,|d\bar{x}|}{N} = \frac{48.8}{20} = 2.44$$

गुणाक Cofficient of $\overline{\partial x} = \frac{\overline{\partial x}}{x}$

$$= \frac{2.44}{10.2}$$

$$¡ = 0.2392$$

$$\partial M = 8\frac{\sum f\,|dM|}{N} = \frac{48}{20} = 2.4$$

गुणाक Cofficient of $\partial M = \frac{\partial M}{M}$

$$= \frac{2.4}{10}$$

$$= 0.24$$

सतत श्रेणी में माध्य-विचलन और उसके गुणांक की गणना (continous series)

प्रत्यक्ष रीति (direct method) - सतत् श्रेणी में प्रत्यक्ष रीति द्वारा माध्य-विचलन ज्ञात करने के लिए पहले वर्गान्तरों में मध्य बिन्दु ज्ञात कर लिए जाते है, शेष गणना प्रक्रिया खण्डित श्रेणी के समान ही होती है -

उदाहरण : कॉलिज छात्रों प्राप्त अंकों के माध्य से तथा मध्यका से माध्य-विचलन तथा उसके गुणांक ज्ञात कीजिए :

प्राप्तांक :	140-150	150-160	160-170	170-180	180-190	190-200
आवृत्ति.	4	6	10	18	9	3

हल मध्य ($\bar{x}$) से मध्य विचलन तथा उसके गुणांक की गणना

प्राप्तांक	मध्य - मूल्य (x)	आवृति (f)	कल्पित मध्य (A)= 165	कुल विचलन f|dx|	मध्य ($\bar{x}$) से	f$|d\bar{x}|$
			विचलन |dx| = x - A		विचलन $|d\bar{x}|$	कुल विचलन

140 – 150 150 – 160 160 – 170 170 – 180 180 – 190 190 – 200	145 155 165 175 185 195	4 6 10 18 9 3	–20 –10 0 10 20 30	–80 –60 0 180 180 90	26.2 16.2 6.2 3.8 13.8 23.8	104.8 97.2 62.0 68.4 124.2 71.4
		N = 50		$\sum f\|dx\|=310$		$\sum f\|d\bar{x}\|=528$

$$\bar{x} = A + \frac{\sum f|dx|}{N} \qquad \sigma \quad \overline{\partial x} = \frac{\sum f|dx|}{N} = \frac{586}{50} = 10.56$$

$$= 165 + \frac{310}{50}$$

गुणांक

$$= 171.2 \qquad coefficient\ of\ \frac{\overline{\partial x}}{x} = \frac{10.56}{171.2} = 0.6$$

मध्यका (M) से माध्य- विचलन तथा उसके गुणांक की गणना

प्राप्तांक	मध्य - मूल्य (x)	आवृत्ति (f)	संचयी आवृत्ति (cf)	मध्यका (M = 172.8) से विचलन|dM|= x - M	कुल विचलन f |dM|
140 – 150 150 – 160 160 – 170 170 – 180 180 – 190 190 – 200	145 155 165 175 185 195	4 6 10 18 9 3	4 10 20 38 47 50	27.8 17.8 7.8 2.2 12.2 22.2	111.2 106.8 78.0 39.6 109.8 66.6
		N = 50			$\sum f\|dM\|=512$

मध्य का =

$$sizeof\left(\frac{N}{2}\right)^{th} item$$

$$= sizeof\left(\frac{50}{2}\right)^{th} item$$

$$= sizeof\ 25^{th} item$$

मध्य का से माध्य विचल

$$\partial M = \frac{\sum f|dM|}{N}$$

अंक

$$= \partial M = \frac{512}{50} = 10.24$$

मध्यका से माध्य विचलन गुणांक

मध्यका वर्ग = 170-180

सूत्र का प्रयोग करने पर :

$$M = L_1 + \frac{i}{f}(\frac{N}{2} - c)$$

$$= 170 + \frac{10}{18}(25 - 20)$$

$$= 170 + \frac{10}{18} \times 5$$

$$= 170 + \frac{50}{18} = 170 + 2.8$$

$$= 172.8$$

$$= \frac{\partial M}{M}$$

$$= \frac{10.24}{172.8}$$

$$= .059$$

लघु रीति द्वारा माध्य विचलन की गणना (खण्डित तथा सतत श्रेणी) -

गणना विधि :

(i) वह माध्य (समान्तर माध्य, मध्यका या बहुलक) निकालते है जिससे माध्य विचलन निकालना होता है ।

(ii) मूल्य और सम्बन्धित आवृत्ति का गुणा करते है ।

(iii) अपेक्षित माध्य से अधिक मूल्यों तथा उनकी आवृत्तियों के गुणनफलों का योग ज्ञात करते है ।

(iv) अपेक्षित माध्य से कम मूल्यों तथा उनकी आवृत्तियों के गुणनफलों का योग ज्ञात करते है।

(v) यदि कोई मूल्य माध्य मूल्य के बिलकुल बराबर है तो उससे सम्बन्धित मूल्य व आवृत्ति के गुणनफल (Mf) को छोड़ दिया जाता है ।

(vi) माध्य मूल्य से अधिक व कम मूल्यों की आवृत्तियों के योग निकाल लेते है ।

सूत्रानुसार - मध्यका से माध्य-विचलन $\partial M = \frac{\sum MfA - \sum MfB - (\sum fA - \sum fB)M}{N}$

समान्तर माध्य से माध्य-विचलन $\partial M = \frac{\sum MfA - \sum MfB - (\sum fA - \sum fB)\bar{x}}{N}$

बहुलक से माध्य विचलन $\partial M = \frac{\sum MfA - \sum MfB - (\sum fA - \sum fB)z}{N}$

यहाँ $\sum MfA$ =सम्बन्धित माध्य से अधिक मूल्यों का उनकी आवृत्तियों से गुणा करके प्राप्त गुणनफलों का योग ।

$\sum MfA$ = सम्बन्धित माध्य से कम मूल्यों का उनकी आवृत्तियों से गुणा करके प्राप्त गुणनफलों का योग ।

$\sum fA$ = सम्बन्धित माध्य से अधिक मूल्यों की आवृत्तियों का योग ।

$\sum fB$ = सम्बन्धित माध्य से कम मूल्यों की आवृत्तियों का योग ।

उदाहरण : उपरोक्त उदाहरण के आँकड़ो से लघुरीति द्वारा माध्य विचलन ज्ञात कीजिए ।

हल : लघुरीति द्वारा माध्य विचलन की गणना

अंक	माध्य बिन्दु (M)	आवृति (f)	गुणन Mf	$\bar{x} = 171.2$ से	M = 172.8 से
140 – 150	145	4	580	$\sum MfB = 3160$	$\sum MfB = 3160$
150 – 160	155	6	930		
160 – 170	165	10	1650	$\sum fB = 20$	$\sum fB = 20$
170 – 180	175	18	3150	$\sum fA = 30$	$\sum fA = 30$
180 – 190	185	9	1665		
190 – 200	195	3	585	$\sum MfA = 5400$	$\sum MfA = 5400$

मध्य ($\bar{x}$) से माध्य विचलन

$$\partial\bar{x} = \frac{\sum MfA - \sum MfB - (\sum fA - \sum fB)\bar{x}}{N}$$

$$= \frac{5400 - 3160 - (30 - 20)171.2}{50}$$

$$= \frac{2240 - 1712}{50} = \frac{528}{50}$$

$\partial\bar{x} = 10.56$ अंक

मध्य (M) से मध्य-विचलन

$$\partial\bar{x} = \frac{\sum MfA - \sum MfB - (\sum fA - \sum fB)M}{N}$$

$$= \frac{5400 - 3160 - (30 - 20)172.8}{50}$$

$$= \frac{2240 - 1728}{50} = \frac{512}{50}$$

$\partial M = 10.24$ अंक

15.4 माध्य-विचलन के गुण

माध्य विचलन के निम्न गुण है

(i) समस्त मूल्यों पर आधारित - यह विचलन पदमाला के सभी मूल्यों पर आधारित होता है । इसलिए यह पदमाला की आकृति पर पर्याप्त प्रकाश डालता है ।

(ii) अति-सीमान्त पदों का कम प्रभाव - इस विचलन पर सीमान्त (etreme) पदों का कम प्रभाव पड़ता है ।

(iii) गणना सरल - प्रमाप विचलन की तुलना में इसकी गणना की क्रिया सरल होती है ।

(iv) सभी मूल्यों की सापेक्ष महत्ता - यह विचलन सभी मूल्यों को उनकी सापेक्ष महत्ता प्रदान करता है ।

15.5 माध्य विचलन के दोष

माध्य-विचलन के निम्न प्रमुख दोष है :

(i) बीजगणितीय चिह्नों का परित्याग - माध्य-विचलन का सबसे बड़ा दोष यह है कि विचलन निकालते समय बीजगणितीय चिहों + व - को छोड़ दिया जाता है । गणित की दृष्टि से यह अशुद्ध है ।

(ii) अनिश्चित एवं अतुलीय - माध्य-विचलन एक अनिश्चित माप है क्योंकि यह समान्तर माध्य, मध्यका व बहुलक में से किसी भी माध्य से ज्ञात किया जा सकता है । बहुलक से निकाला गया माध्य-विचलन सदा असन्तोषजनक होती है । यदि विभिन्न समक मालाओं के माध्य विचलन अलग-अलग माध्यों से निकाले जाएँ तो वे तुलना-योग्य नहीं होते ।

उपयोग : छोटे न्यादर्शो के लिए माध्य-विचलन बहुत ही उपयुक्त है । अपकिरण के इस माप का प्रयोग आर्थिक, व्यवसायिक एवं सामाजिक सांख्यिकीय विश्लेषणों से बहुत ही किया जाता है । अमरीका का आर्थिक अनुसन्धान का राष्ट्रीय भरों व्यापार चक्रों की समय विचलनता ज्ञात करने के लिए इसी माध्य विचलन का प्रयोग करता है ।

15.6 मानक - विचलन (Standarad Deviation)

मानक-विचलन एक आदर्श व वैज्ञानिक अपकिरण माप है जिसका सांख्यिकी में सर्वाधिक प्रयोग किया जाता। दो प्रमुख विशेषताएँ है - एक तो मूल्य के विचलन सदैव समान्तर माध्य से लिये जाते है । दूसरे, बीगणिताय । चिन्हो को छोड़ा नही जाता बल्कि प्राप्त विचलनों के वर्ग कर लिए जाते है जिससे ऋणात्मक विचलनों के वर्ग भी स्वयं धनात्मक हो जाते है । अन्त में विचलन-वर्गो का माध्य निकालकर उसका वर्गमूल ज्ञात कर लिया जाता है । यही मानक-विचलन कहलाता है । इस प्रकार, यह माप माध्य-विचलन के दोषों से सर्वथा मुक्त है ।

किसी श्रेणी के समान्तर माध्य से निकाले गये उसके पद-मूल्यों के विचलनों के वर्गो के माध्य का वर्गमूल उस श्रेणी का मानक-विलचन होता है । माध्य से विचलनों के वर्गो का समान्तर माध्य द्वितीय अपकिरण छात अथवा प्रसरण कहलाता है । मानक-विचलन इसी मूल्य का वर्गमूल है । मानक-विचलन के विचार का प्रतिपादन कार्ल पियर्सन ने सन् 1893 में किया था । मानक-विचलन को व्यक्त करने के लिए ग्रीक-वर्णमाला के अक्षर 'σ' सिग्मा (sigma) का प्रयोग किया जाता है ।

मानक-विचलन गुणांक - दो श्रेणियों के बिखराब या अपकिरण की तुलना करने के लिए मानक विचलन गुणाँक की गणना की जाती है । मानक विचलन में अंकगणितीय माध्य का भाग करने से मानक विचलन गुणाँक प्राप्त होता है ।

सूत्रानुसार -

मानक विचलन गुणाँक = $\frac{\sigma}{x}$

15.7 मानक-विचलन की गणना

व्यक्तिगत श्रेणी में मानक विचलन की गणना की दो रीतियाँ है :

(1) प्रत्यक्ष रीति (direct method) - यदि समंक माला का समान्तर माध्य पूर्णाक में आता है तो इस रीति से प्रमाप विचलन निकालना सरल होता है ।

गाना-विधि (प्रक्रिया) -

(i) समंकमाला के मूल्यों का समान्तर माध्य ($\bar{x}$) निकाल लेते है ।

(ii) प्राप्त माध्य से समंकमाला के विभिन्न मूल्यों का विचलन (dx = x - $\bar{x}$) निकालते है।

(iii) इन विचलनों का वर्ग निकालकर उनका योग $\sum d^2x$ कर लेते है ।

(iv) विचलनों के वर्गो के योग में पदों की संख्या का ($\frac{\sum d^2x}{N}$) कर देते है ।

(v) प्राप्त भजनफल का वर्गमूल निकाल लेते है । यही मानक विचलन होता है ।

सूत्रानुसार -

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N}}$$

जहाँ

$\sigma =$ मानक विचलन

$d^2x =$ समान्तर माध्य से ज्ञात किये गये विचलनों का वर्ग

N = कुल पद संख्या

उदाहरण : एक फर्म के 10 कर्मचारियों की आय के निम्न आँकड़े से मानक-विचलन की गणना कीजिए: 100,120,140,120,160,170,180,140,200,150

हल : व्यक्ति श्रेणी. प्रत्यक्ष रीति द्वारा प्रमाप विचलन की गणना

आय (क.) x	dx=x-$\bar{x}$	dx^2
100	-50	2500
120	-30	900
140	-10	100
120	-30	900
180	-30	900
170	-20	400
180	-30	900
140	-10	100
200	50	2500
150	0	0
$\sum x$=9200		$\sum d^2x$ =9200

$$\bar{x} = \frac{\sum x}{N} = \frac{1500}{10} = 150$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N}} = \sqrt{\frac{9200}{10}}$$

प्रमाप विचलन

$$\sigma = \sqrt{920} = 30.33$$

लघु रीति (shortcut method) : प्राय: ऐसा होता है कि समान्तर माध्य पूर्णाक में नहीं आता । ऐसी दशा में विचलन भी पूर्णाक नहीं होंगे । फिर, उनका वर्ग लेना कठिन कार्य है। इस असुविधा से बचने के लिए लघुरीति से मानक-विचलन निकाला जाता है ।

प्रक्रिया :

(i) दिए गए मूल्यों में से एक उचित मूल्य को कल्पित माध्य मानकर उससे विचलन (dx = x A) ज्ञात किये जाते है ।

(ii) निम्न सूत्रों में से किसी एक के प्रयोग द्वारा मानक-विचलन की गणना की जाती है ।

प्रथम सूत्र: $$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N} - \left(\frac{\sum dx}{N}\right)^2}$$

द्वितीय सूत्र: $$\sigma = \sqrt{\frac{\sum dx^2 - N(\overline{X} - A)^2}{N}}$$

तृतीय सूत्र: $$\sigma = \sqrt{\frac{\sum dx^2 - N(\overline{X} - A)^2}{N}}$$

चुतर्थ सूत्र : $$\sigma = \frac{1}{N}\sqrt{N\sum dx^2 - (\sum dx)^2}$$

उपरोक्त सूत्रों में से किसी भी सूत्र का प्रयोग किया जाए, परिणाम समान ही प्राप्त होंगे किन्तु सामान्यतया प्रथम सूत्र का प्रयोग अधिक किया जाता है ।

उदाहरण : किसी कॉलेज के एमए. के छात्रों द्वारा सांख्यिकी में अग्रलिखित अंक (100 में से) प्राप्त किये ।लघुरीति तथा प्रत्यक्ष रीति द्वारा मानक विचलन ज्ञात कीजिए :

क्रम स :	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
अंक :	5	10	20	25	40	42	45	48	70	80

हल : मानक-विचलन की गणना

क्रम संख्या	अंक (x)	कल्पित मध्य मे विचलन (dx) A = 40	विचलनों का वर्ग dx^2	वास्तविक मध्य से विचलन (dx) X = 38.5	विचलनों का वर्ग (dx^2)	
1	5	−35	1225	−33.5	1122.25	$\overline{x} = \frac{\sum x}{N}$
2	10	−30	900	−28.5	812.25	$= \frac{385}{10}$
3	20	−20	400	18.5	342.25	$= 38.5$ अंक
4	25	−15	225	−13.5	182.25	
5	40	0	0	+1.5	2.25	
6	42	+2	4	+3.5	12.25	
7	45	+5	25	+6.5	42.25	
8	48	+8	64	+9.5	90.25	
9	70	+30	900	+31.5	992.25	
10	80	+40	1600	+41.5	1722.25	
N= 10	$\sum x = 385$	$\sum dx = 15$	$\sum dx^2 = 5343$		$\sum dx^2 = 5320.50$	

प्रत्येक रीति के मानव - विचलन

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N}} = \sqrt{\frac{5320.50}{10}}$$

लघु रीति से मानक विचलन

प्रथम सूत्र के अनुसार

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N} - \left(\frac{\sum dx}{N}\right)^2}$$

$$= \sqrt{\frac{5343}{10} - \left(\frac{-15}{10}\right)^2}$$

$$= \sqrt{534.3 - (-15)^2}$$

$$= \sqrt{534.3 - 2.25}$$

σ = 532.05=23.06 अंक

द्विवितीय सूत्र के अनुसार

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N} - (\overline{X} - A)^2}$$

$$= \sqrt{\frac{5343}{10} - (38.5 - 40)^2}$$

$$= \sqrt{534.3 - (-15)^2}$$

$\sigma = \sqrt{532.05}$ =23.06 अंक

तृतीय सूत्र के अनुसार

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x \; - N(\overline{X} - A)^2}{N}}$$

$$= \sqrt{\frac{5343 - 10(38.5 - 40)^2}{10}}$$

$$= \sqrt{\frac{5343 - 10(-1.5)^2}{10}}$$

$$= \sqrt{\frac{5343 - 22.5}{10}}$$

$$= \sqrt{\frac{5320.5}{10}}$$

$$= \sqrt{532.05}$$

$\sigma = 23.06$ अंक

चतुर्थ सूत्र के अनुसार.',

$$\sigma = \frac{1}{N}\sqrt{N\sum d^2x - (\sum dx)^2}$$

$$= \frac{1}{10}\sqrt{10 \times 5343 - (-15)^2}$$

$$= \frac{1}{10}\sqrt{53430 - 225}$$

$$= \frac{1}{10}\sqrt{53205}$$

$$= \frac{1}{10} \times 230.6$$

$\sigma = 23.06$ अंक

खण्डित श्रेणी'

प्रत्यक्ष रीति (direct method) - खण्डित श्रेणी में प्रत्यक्ष रीति से मानक विचलन ज्ञात करने की प्रक्रिया निम्नानुसार है -

(i) श्रेणी का अंकगणितीय माध्य ($\bar{x}$) ज्ञात किया जाता है ।

(ii) अंकगणितीय माध्य से सभी मूल्यों का विचलन (dx = x - $\bar{x}$) ज्ञात किये जाते है।

(iii) प्राप्त विचलनों के वर्ग करके (dx^2) उनको तत्सम्बन्धी आवृत्तियों से गुणा करके (fdx^2) ज्ञात कर लिया जाता है.

(iv) fdx^2 योग करके $\sum fdx^2$ ज्ञात किया जाता है ।

(v) निम्न सूत्र के प्रयोग द्वारा मानक विचलन ज्ञात किया जाता है -

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fdx^2}{N}} \quad \text{या} \quad \sigma = \sqrt{\frac{\sum f(x-\bar{x})}{N}}$$

उदाहरण : निम्न समंकों से मानक - विचलन की गणना कीजिए -

आकार :	6	7	8	9	10	11	12
आवृत्ति :	3	6	9	13	8	5	4

हल : खण्डित श्रेणी प्रत्यक्ष रीति द्वारा मानक विचलन की गणना

आकार (x)	आवृति (f)	Fx	$dx(x-\bar{y})$	d^2x	fd^2x
6	3	18	–3	9	27
7	6	42	–2	4	24
8	9	72	–1	1	9
9	13	117	0	0	0
10	8	80	1	1	8
11	5	55	2	4	20
12	4	48	3	9	36
		N = 48			$\sum fd^2x = 124$

$$\bar{x} = \frac{\sum fx}{N} = \frac{432}{48} = 9$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}} = \sqrt{\frac{124}{48}} = \sqrt{2.583} = 1.607$$

लघु रीति (short cut method) - अंकगणितीय के दशमलव अंश में होने पर गणना क्रिया की जटिलता को कम करने के लिए लघु रीति का प्रयोग किया जाना चाहिए । लघु रीति द्वारा मानक विचलन ज्ञात करने की प्रक्रिया निम्न प्रकार है -

(i) सर्वप्रथम किसी एक पद मूल्य के (सामान्यतया श्रेणी के मध्य में स्थिति मूल्य को) कल्पित माध्य (A) मान लिया जाता है ।

(ii) कल्पित माध्य से विचलन (dx = X - A) ज्ञात किये जाते है ।

(iii) प्राप्त विचलन को सम्बन्धित आवृत्तियों से गुणा करके (fdx) ज्ञात कर लिया जाता है।

(iv) fdx को dx से गुणा करके fd^2x प्राप्त हो जाता है ।

(v) निम्न सूत्रों में से किसी एक के प्रयोग द्वारा मानक विचलन ज्ञात किया जाता है -

प्रथम सूत्र: $\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N} - \left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2}$ तृतीय सूत्र: $\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x \ - N(\overline{X} - A)^2}{N}}$

द्वितीय सूत्र: $\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N} - N(\overline{X} - A)^2}$

चुतर्थ सूत्र : $\sigma = \frac{1}{N}\sqrt{N\sum fdx^2 - (\sum fdx)^2}$

सामान्यतया श्रेणी में लघु रीति के प्रयोग के समय प्रथम सूत्र का अधिक प्रयोग किया जाता है।

उदाहरण : उपरोक्त उदाहरण को लघु रीति द्वारा हल कीजिए -

हल : खण्डित श्रेणी : लघु रीति द्वारा मानक विचलन की गणना

आकार (x)	**आवृत्ति (f)**	**A = 9** **dx = x - A**	**Fdx**	fd^2x
6	3	–3	–9	27
7	6	–2	–12	24
8	9	–1	–9	9
9	13	0	0	0
10	8	1	8	8
11	5	2	10	20
12	4	3	12	36
	N = 48		$\sum fdx = 0$	$\sum fd^2x = 124$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N} - \left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2}$$

$$= \sqrt{\frac{124}{48} - \left(\frac{0}{48}\right)^2}$$

$$= \sqrt{2.583} = 1.607$$

सतत श्रेणी (CONTINOUS SERIES) : सतत श्रेणी में मानक विचलन निकालने की रीति ठीक वही है जो खण्डित श्रेणी में है । केवल पहले सतत श्रेणी को उसके वर्गो के मध्य बिन्दुओं को निकालकर खण्डित में परिवर्तित कर लेते है । इसका सूत्र नही है जो खण्डित श्रेणी का है । इसके अन्तर्गत मानक-विचलन निम्नलिखित विधियों से ज्ञात किया जा सकता है.

(i) प्रत्यक्ष विधि (direct method)

(ii) लघु रीति (short cut method)

(iii) पद विचलन रीति (step deviation method)

(iv) योग या आकलन रीति (summation method)

(i) प्रत्यक्ष रीति द्वारा मानक विचलन निकालना

उदाहरण : निम्न आँकड़ो से मानक विचलन तथा इसका गुणाक ज्ञात कीजिए.

आयु (वर्षो मे)	**व्यक्तियों की संख्या**
0-10	15
10-20	15
20-30	23
30-40	22
40-50	25
50-60	10
60-7	05
70-80	10

हल : सतत श्रेणी. प्रत्यक्ष रीति द्वारा मानक विचलन की गणना

आयु (वर्षो मे)	मध्य बिन्दु (x)	आवृति f	fx	विचलन dx = x - $\bar{x}$	d^2x	fd^2x
0 – 10	5	15	75	–30.26	909.6256	13644.3840
10 – 20	15	15	228	–20.16	406.4256	6096.3840
20 – 30	25	23	575	–10.16	103.2256	2374.1888
30 – 40	35	22	770	–.16	.0256	.5632
40 – 50	45	25	1125	9.84	96.8256	2420.6400
50 – 60	55	10	550	19.84	393.6256	3936.2560
60 – 70	65	5	325	29.84	890.4256	4452.1280
70 – 80	75	10	750	39.84	1587.2256	15872.2560
		N = 125	$\sum fx = 4395$			$\sum fd^2x = 48796.8000$

माध्य : $\bar{x} = \frac{\sum fx}{N} = \frac{4395}{125} = 35.16$ वर्ष

मानक विचलन : $\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}} = = \sqrt{\frac{48796.8}{125}} = \sqrt{390.37} = 19.76$ वर्ष

मानक विचलन गुणांक = $\frac{\sigma}{\bar{x}} = \frac{19.76}{35.15} = .56$

(i) लघु रीति - सतत श्रेणी में मध्य बिन्दुओं में से किसी एक मूल्य को कल्पित माध्य मानकर लघु रीति द्वारा मानक विचलन ज्ञात किया जाता है । मानक विचलन ज्ञात करने की प्रक्रिया एवं सूत्र वही है जो खण्डित श्रेणी में प्रयुक्त किये गए है ।

उदाहरण : प्रत्यक्ष लघु रीति के प्रयोग द्वारा नीचे दिये गये समंकों से मानक विचलन की गणना कीजिए:

मानक विचलन की गणना कीजिए

आयु (वर्षो में)	10-20	20-30	30-40	40-50	50-60	60-70	70-80
आवृत्ति	2	4	4	8	6	3	2

हल : प्रत्यक्ष रीति द्वारा मानक विचलन की गणना

आयु	**X M.Y**	**f**	**विचलन** $dx = x - \bar{x}$	d^2x	$f\ d^2x$	**fx**
10 – 20	15	2	–30	900	1800	30
20 – 30	25	4	–20	400	1600	100
30 – 40	35	4	–10	100	400	140
40 – 50	45	8	0	0	0	360
50 – 60	55	6	10	100	600	330
60 – 70	65	3	20	400	1200	195
70 – 80	75	2	30	900	1800	150
		N = 29			$fd^2x = 7400$	$\sum fx = 1305$

$$\bar{x} = \frac{\sum fx}{N} = \frac{1305}{29} = 4.5$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}} = \sqrt{\frac{7400}{29}} = \sqrt{255.17} = 15.97$$

लघु रीति द्वारा मानक विचलन की गणना

आयु	X M.Y	F	A = 35 dx = x - A	fdx	f d^2x
10 – 20	15	2	–20	–40	800
20 – 30	25	4	–10	–40	400
30 – 40	35	4	0	0	0
40 – 50	45	8	10	80	800
50 – 60	55	6	20	120	2400
60 – 70	65	3	30	90	2700
70 – 80	75	2	40	80	3200

		N = 29		$\sum fdx = 290$	$\sum fd^2x = 10300$

मानक विचलन (σ) = $\sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N} - \left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2}$ = $\sqrt{\frac{10300}{29} - \left(\frac{290}{29}\right)^2}$

= $\sqrt{355.17 - 100}$ = $\sqrt{255.17} = 15.97$

पद-विचलन रीति (STEP DEVIATION METHOD) - जब श्रेणी का वर्ण विस्तार समान हो, ऐसे. समय गणन-क्रिया को सरल बनाने के लिए पद विचलन रीति का प्रयोग किया जाता है । इस रीति में कल्पित माध्य द्वारा प्राप्त विचलन में समापवर्तक (COMMON FACTOR) का भाग कर दिया जाता है, शेष क्रिया लघु रीति के समान ही रहती है । इस नीति के प्रयोग के समय मानक विचलन के सूत्र में थोड़ा संशोधन करना होता है । सूत्र में वर्गमूल से प्राप्त को वर्ग-विस्तार (i) से गुणा कर दिया जाता है ।

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N} - \left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2} \times i$$

उदाहरण : निम्न आवृत्ति बंटन से माध्य और मानक विचलन पद-विचलन रीति द्वारा ज्ञात कीजिए-

वर्गान्तर:	1 -5	6- 10	11-15	16-20	21 -25	26-30	31 -35
आवृत्ति :	5	7	18	25	20	4	1

हल: : पद विचलन रीति द्वारा माध्य व मानक विचलन की गणना

वर्गान्तर	मध्य मूल्य x	f	A = 18 d'x = $\frac{x-A}{i}$	fd'x	fd'x^2
$0.55-5.5$	3	5	–3	–15	45
$5.5-10.5$	9	6	–2	–14	2.8
$10.5-15.5$	13	18	–1	–18	18
$15.5-20.5$	18	25	0	0	0
$20.5-25.5$	23	20	1	20	20
$25.5-30.5$	28	4	2	8	16
$30.5-35.5$	33	1	3	3	9
	I = 5	N = 80		$\sum fd'x = -16$	$\sum fd^2x = 136$

मध्य $(\bar{x})$ = $= A + \frac{\sum fd'x}{N} \times i$ $= 18 + \frac{-16}{80} \times 5$ $= 18 - 1$ $\bar{x} = 17$	$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd'x}{N} - \left(\sqrt{\frac{\sum fd'x}{N}}\right)^2} \times i$ $= \sqrt{\frac{136}{80} - \left(\frac{-16}{80}\right)^2} \times 5$ $= \sqrt{1.70 - .04} \times 5$ $= \sqrt{1.66} \times 5$ $= 1.288 \times 5 = 6.44$

उहदारण : निम्नलिखित समंको से मानक विचलन और उसका गुणांक ज्ञात कीजिए

तापमान (^{0}C में)	दिनों की संख्या
10	$-40 to -30$
28	$-30 to -20$
30	$-20 to -10$
42	$-10 to 0$
65	$0 to 10$
180	$10 to 20$
10	$20 to 30$

हल : मानक विचलन एवं उसके गुणांक का परिकलन

तापमान (^{0}C)	मध्य बिन्दु (x)	दिनो की संख्या (f)	A - 5 dx = x - A	I = 10 $d'x =$	fd'x	fd'x^2
$-40 to -30$	-35	10	-40	-4	-40	160
$-30 to -20$	-25	28	-30	-3	-24	252
$-20 to -10$	-15	30	-20	-2	-60	120
$-10 to 0$	-5	42	-10	-1	-42	42
$0 to 10$	+5	65	0	0	0	0
$10 to 20$	+15	180	10	1	180	180
$20 to 30$	+25	10	20	2	20	40
		N = 365			$\sum fd'x = -26$	$\sum fd'x^2 = 794$

माध्य $(\bar{x})$ =

$$= A + \frac{\sum fd'x}{N} \times i$$

$$= 5 + \frac{-26}{365} \times 10 = 4.2877$$

मानक विचलन

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd'x}{N} - \left(\sqrt{\frac{\sum fd'x}{N}}\right)^2} \times i$$

$$= \sqrt{\frac{794}{365} - \left(\sqrt{\frac{-26}{365}}\right)^2} \times 10$$

$$= \sqrt{2.1753 - .0051} \times 10$$

$$= \sqrt{2.1702} \times 10 = 10 \times 1.4732$$

$$= 14.732$$

मानक विचलन गुणांक = $\frac{\sigma}{\bar{x}} = \frac{14.732}{4.2877} = 3.4359$

(iv) योग आकलन रीति द्वारा मानक विचलन : यदि वर्गो का विस्तार समान है तो मानक विचलन की गणना योग रीति से भी हो सकती है जिसकी क्रिया निम्न प्रकार है :

(i) प्रथम संचयी आवृत्तियों के योग में कुल आवृत्तियों के योग का भाग देकर F_1 ज्ञात किया जाता है अर्थात

$$F_1 = \frac{\sum cf_1}{\sum f}$$

(ii) संचयी आवृत्तियों की भी संचयी आवृत्ति के योग में कुल आवृत्तियों के योग का भाग देकर 5, ज्ञात किया जाता है यथा

$$F_2 = \frac{\sum cf_2}{\sum f}$$

(iii) मानक विचलन के निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$\sigma = i \times \sqrt{2F^2 - F_1 - F_2}$$

उदाहरण : निम्न आँकड़ों में योग रीति के द्वारा मानक विचलन ज्ञात कीजिए :

अंक :	0-10	10-20	20-30	30-40	40-50	50-60	60-70	70-80
आवृति :	15	15	23	22	25	10	5	10

हल :

अंक	आवृति	cf_1	cf_2

0 – 10 10 – 20 20 – 30 30 – 40 40 – 50 50 – 60 60 – 70 70 – 80	15 15 23 22 25 10 5 10	15 30 53 75 100 110 115 125	15 45 98 173 273 383 498 623
	$\sum f = 125$	$\sum cf_1 = 623$	$\sum cf_2 = 218$

$$F_1 = \frac{\sum cf_1}{\sum f} = \frac{623}{125} = 4.984$$

$$\sigma = i \times \sqrt{2F \quad - F_1 - F_2{}^2}$$

$$= 10 \times \sqrt{2 \times 16.864 - 4.984 -}(4.984)^2$$

$$= 10 \times \sqrt{33.728 - 4.984 - 24.840}$$

$$= 10 \times \sqrt{33.728 - 4.984 - 24.840}$$

$$= 10 \times \sqrt{33.728 - 24.824}$$

$$== 10 \times \sqrt{3.904} = 10 \times 1.976 = 19.76$$

15.8 सामूहिक मानक - विचलन

(combined standard deviation)

जिस प्रकार माध्यों के आधार समूहिक मध्य निकाला जाता है उसी प्रकार विभिन्न मानक विचलनों के आधार पर पूरे वितरण का सग्रिहक मानक विचलन निकाला जा सकता है ।

प्रक्रिया - (1) पहले सामूहिक माध्य निकाला जाता है

$$\overline{x_{1.2.3}} = \frac{N_1\overline{x_1} + N_2\overline{x_2} + N_3\overline{x_3}}{N_1 + N_2 + N_3}$$

(ii) प्रत्येक सछू के माध्य में से साग्रहइक माध्य घटाकर

(D_1, D_2, D_3 आदि) निकाल लिये जाते है ।

$D_1 = \overline{x_1} - \overline{x}$, $D_2 = \overline{x_2} - \overline{x}$, $D_3 = \overline{x_3} - \overline{x}$

निम्न सूत्र का प्रयोग कर सामूहिक मानक विचलन ज्ञात करते है -

$$\sigma = \sqrt{\frac{N1(\sigma_1^{\,2} + D_1^{\,2}) + N2(\sigma_2^{\,2} + D_2^{\,2}) + N3(\sigma_3^{\,2} + D_3^{\,2})}{N_1 + N_2 + N_3}}$$

जहां

N_1, N_2, N_3 --------- = अलग-अलग समूहों में पदों की संख्या दर्शाती है ।

$\sigma_1, \sigma_2, \sigma_3$ --------- = प्रत्येक समूह का मानक विचलन दर्शाती है ।

D_1, D_2, D_3----------- = प्रत्येक समूह के माध्य से सामूहिक माध्य का अन्तर दर्शाती है ।

इस सूत्र की सहायता से सामूहिक मानक विचलन तथा अन्य समूहों के मानक विचलन ज्ञात होने पर शेष एक समूह का मानक विचलन ज्ञात किया जा सकता है ।

उदाहरण : एक आवृत्ति बंटन की तीन संभाग है जिनकी कुल 15 और मानक विचलन 3,4 तथा 5 है, माध्य 25,10 बंटन का माध्य तथा मानक विचलन ज्ञात कीजिए

हल :

सामूहिक माध्य

$$\overline{x} = \frac{N_1\overline{x_1} + N_2\overline{x_2} + N_3\overline{x_3}}{N_1 + N_2 + N_3}$$

$$= \frac{(200 \times 25) + (250 \times 10) + (300 \times 15)}{250 + 250 + 300}$$

$$== \frac{5000 + 2500 + 4500}{750} = \frac{12000}{750} = 16$$

$$\boxed{\overline{x} = 16}$$

अन्तर

$$D_1 = \overline{x_1} - \overline{x} = 25 - 16 = 9$$

$$D_2 = \overline{x_2} - \overline{x} = 10 - 16 = -6$$

$$D_3 = \overline{x_3} - \overline{x} = 15 - 16 = -1$$

iii) सामूहिक मानक विचलन

$$\sigma = \sqrt{\frac{N1(\sigma_1^2 + D_1^2) + N2(\sigma_2^2 + D_2^2) + N3(\sigma_3^2 + D_3^2)}{N_1 + N_2 + N_3}}$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{N1(\sigma_1^2 + D_1^2) + N2(\sigma_2^2 + D_2^2) + N3(\sigma_3^2 + D_3^2)}{N_1 + N_2 + N_3}}$$

$$= \sqrt{\frac{200(9+81) + 250(16+36) + 300(25+1)}{200+250+300}}$$

$$= \sqrt{\frac{18000 + 13000 + 7800}{750}}$$

$$= \sqrt{\frac{38800}{750}} = \sqrt{51.73} = 7.2$$

15.9 मानक विचलन के बीजगणितीय गुण

मानक विचलन मे निम्न प्रमुख बीजगणितीय गुण पाये जाते है -

(i) सामूहिक मानक विचलन - विभिन्न उपवर्गो के मानक विचलन के आधार पर सामूहिक मानक विचलन किया जा सकता है ।

(ii) क्रमानुसार प्राकृतिक अंको का मानक विचलन - निम्न सूत्र द्वारा ज्ञात किया जा सकता है -

$$\sigma = \sqrt{\frac{1}{12}(N^2 - 1)}$$

(iii) समान्तर माध्य से विचलन के लिए जाने के कारण मानक विचलन वर्गो का जोड़ न्यूनतम होता है ।

$$\sum d2=\sum\left(x-\bar{x}\right)^2 = \text{न्यूनतम}$$

(iv) मानक विचलन पर गणितीय क्रियाओं का प्रभाव - किसी समंक श्रेणी के प्रत्येक पद मूल्य में एक स्थिरांक (constent) जोड़े, घटाने, गुणा करने या भाग करने का उस श्रेणी के माध्य और मानक विचलन पर निम्न प्रभाव पड़ता है-

(क) स्थिरांक जोड़ने पर - श्रेणी के प्रत्येक मूल्य में एक अचर मूल्य (a) जोडने पर समान्तर माध्य अचर मूल्य के बराबर बढ़ जाता है ($\bar{x}+a$) परन्तु मानक विचलन (σ) पूर्ववत् रहता है ।

(ख) स्थिरांक घटाने पर - श्रेणी के प्रत्येक मूल्य में एक अचर मूल्य (a) घटाने पर समान्तर माध्य अचर मूल्य के बराबर घट जाता है ($\bar{x}-a$) परन्तु मानक विचलन (σ) पूर्ववत् रहता है ।

(ग) स्थिरांक से गुणा करने पर - प्रत्येक मूल्य में एक अचर मूल्य (a) की गुणा की जाए तो उस श्रेणी के समान्तर माध्य और विचलन निकालने पर इन दोनों मापों मे भी उस अचरांक का भाग हो जाता है -

($\bar{x}\div a$ तथा $\sigma\div a$)

15.10 मानक विचलन के गुण-दोष (Merits and Demerits of standard deviation)

गुण - मानक विचलन के निम्न गुण है :

(i) उच्चतर गणितीय अध्ययन में प्रयोग - मानक विचलन में विचलन समान्तर माध्य से निकाले जाते है जो एक आदर्श माध्य है । अत: उच्चतर गणितीय रीतियों में इसका काफी प्रयोग होता है ।

(ii) समस्त मूल्यों पर आधारित - यह माप पदमाला के सभी मूल्यों पर आधारित होता है। इसलिए पूर्णतया शुद्ध होता है ।

(iii) आकस्मिक परिवर्तनों का कम प्रभाव - अन्य विचलनों की अपेक्षा मानक विचलन पर आकस्मिक परिवर्तनों का बहुत कम प्रभाव पड़ता है ।

(iv) स्पष्ट व निश्चित माप - मानक विचलन अपकिरण का एक स्पष्ट एवं निश्चित माप है जो प्रत्येक स्थिति में ज्ञात किया जा सकता है ।

(v) निर्वचन की सुविधा - यह आवृत्ति - बंटन व माला की आकृति को समझाने में बहुत सहायक होता है । मानक विचलन विभिन्न समूहों के विचरण की तुलना करने में, दैव न्यादर्शो के विभिन्न मापों की अर्थपूर्णता का परीक्षण करने में और श्रेणी के मूल्य वितरण की सीमाएँ निर्धारित करने में अत्यन्त उपयोग है ।

दोष - मानक विचलन के निम्न दोष है -

(i) गणनक्रिया कठिन - इसकी गणन क्रिया कठिन होने के कारण सर्वलाधारण के लिए असुविधाजनक है ।

(ii) समझना कठिन - गठन-क्रिया कठिन होने के कारण इसे जनसामान्य के द्वारा समझना भी कठिन है ।

(iii) अति सीमात पदों को अधिक महत्व - यह माध्य की सहायता से निकाला जाता है, इसलिए यह चरम पदों को अधिक महत्व देता है ।

इन दोषों के कारण अर्थशास्त्र व व्यापार - वाणिज्य के क्षेत्र में इस माप का अधिक प्रयोग नहीं किया जाता किन्तु फिर भी केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों मे समान्तर माध्य सन्तोषजनक माध्य होता है, उसी प्रकार अपकिरण के मापों में मानक विचलन आदर्श माना जाता है ।

15.11 साराश

इस इकाई के अध्ययन के दौरान आपने यह समझा की मध्य विचलन तथा मानक विचलन अपकिरण ज्ञात करने की दो प्रमुख गणितीय विधियां है । अपकिरण ज्ञात करना इसलिए आवश्यक है ताकि आर्थिक प्रक्रियाओं तथा कारकों को सुस्पष्ट माप हे सके । इस क्रम में आपने माध्य विचलन व मानक विचलन अभिज्ञात करने के विभिन्न प्रासंगिक चरणों व उनसे उपलब्ध समाधान प्राप्त करने की प्रचलित विधियों से भी यथेष्ट परिचय प्राप्त किया । आपने उक्त विचलनों के गुण व दोष का भी संधान किया ।

15.12 शब्दावली

(i) अपकिरण	-	dispersion
(ii) मानक विचलन	-	standard deviation
(iii) माध्य विचलन	-	mean deviation
(iv) समान्तर माध्य	-	arithmetic mean
(v) बहुलक	-	mode
(vi) मध्यका	-	median
(vii) समहित मानक विचलन	-	combined standard deviation
(viii) पद विचलन रीति	-	step deviation deviation
(ix) आकलन रीति	-	summarization method
(x) प्राकृतिक अंक	-	natural numbers

5.13 अभ्यास प्रश्न

1. मानक विचलन के गणितीय लक्षणो की व्याख्या कीजिए । मध्य विचलन की तुलना मे मानक विचलन का प्रयोग अधिक क्यों किया जाता है?
2. माध्य विचलन को परिभाषित कीजिए । वह किस प्रकार मानक विचलन से भिन्न होता है?
3. अपकिरण को समझाइए । अपकिरण को मापने की दो विधियो मानक विचलन तथा माध्य विचलन के बारे में सविस्तार बताइये ।
4. निम्न समंको से मध्यका एवं बहुलक से माध्य विचलन व गुणांक ज्ञात कीजिए -

आयु (वर्षो में)	6	7	8	9	10	11	12
आवृत्ति	3	8	9	13	8	5	4

5. निम्न आंकड़ो से माध्य विचलन तथा उसके गुणांक (माध्य से) की गणना कीजिए -

मजदूरी (रू. में)	10-20	20-30	30-40	40-50	50-60	60-70	70-80	80-90
व्यक्तियो की संख्या	8	10	15	25	20	18	9	5

6. निम्न समंकों से मानक विचलन और उसका गुणांक निकालिए -

15 18 13 20 17 10 16 19 22 20

निम्न आँकड़ो से मध्यक तथा मानक विचलन ज्ञात कीजिए -

मूल्य	60	61	62	63	64	65
आवृत्ति	5	15	18	8	6	8

7. निम्न आंकड़ो से समान्तर माध्य और मानक विचलन निकालिए -

आयु	10-20	20-30	30-40	40-50	30-60	60-70	70-80
आवृत्ति	2	4	4	8	6	3	2

8. निम्न सारणी से माध्य विचलन एवं मानक विचलन ज्ञात कीजिये -

प्राप्तांक.	0-10	10-20	20-30	30-40	40-50
संख्या :	3	6	9	7	5

15.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

- कैरलिंगर एफ. एन. फाऊडेशन ऑफ बिहेवियरल रिसर्च, राईनहार्ट एण्ड विंस्टन, न्यू यार्क ।
- गुडे एण्ड हीट : मैथड्स इन सोशियल रिसर्च, मैंकग्रौ हिल बुक कं., आईएनसी, टोक्यो ।
- एकॉक, आर. एल : दी डिजाईन ऑफ सोश्यिल रिसर्च, यूनिर्वसिटी ऑफ शिकागो प्रेस, यूएसए. ।
- यंग, पी.वी. : साइंटिफिक सोशियल सर्वेज एण्ड रिसर्च, प्रिन्टाईज हॉल ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली ।

इकाई- 16

सह-सम्बन्ध : श्रेणी सह-सम्बन्ध

इकाई की संरचना

16.0 उद्देश्य
16.1 सह-सम्बन्ध की परिभाषा व अर्थ
16.2 सह-सम्बन्ध के xकार
16.3 सह-सम्बन्ध का परिमाण
16.4 लघुरीति द्वारा सह-सम्बन्ध गुणांक का परिकलन - प्रत्यक्ष रीति से
16.5 शब्दावली
16.6 अभ्यास प्रश्न
16.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

16.0 उद्देश्य

दो समंक समूहों में पाए जाने वाले सम्बन्ध की जानकारी के लिए सह सम्बन्ध के सिद्धान्त का अध्ययन किया जाता है । कई समंक समूह इसप्रकारसे परस्पर सम्बन्धित होते है कि एक में होने वाले परिवर्तन के परिणामस्वरूप दूसरे में भी परिवर्त्तन हो जाते है, जैसे पूर्ति में वृद्धि से कीमतों में कमी, माँग में वृद्धि से वस्तु की कीमत में वृद्धि मुद्रा की मात्रा में वृद्धि से सामान्य कीमत स्तर में वृद्धि आदि । इसी प्रकार अन्य कई तथ्य परस्पर सम्बन्धित होते है जैसे पति एवं पत्नियों की आयु, पिता-पुत्र की लम्बाई, xकाश के साथ तापमान में वृद्धि आदि । यह ज्ञात किया जाता है कि विभिन्न तथ्य परस्पर किस प्रकार से धन या ऋणात्मक एवं किस मात्रा में पूर्ण, उच्च, मध्यम या निम्न से सम्बन्धित है ।

16.1 परिभाषा और महत्व

सांख्यिकी में सहसम्बन्ध का सिद्धान्त बहुत महत्वपूर्ण है । इसके मूल-तत्वों का प्रतिपादन सर्वxथम फ्रांस के खगोलशास्त्री ब्रावे ने किया था, परन्तु इसे विकसित करने व आधुनिक रूप देने का श्रेय प्रसिद्ध प्राणीशास्त्री फ्रांसिस गाल्टन तथा कार्ल पियर्सन को प्राप्त है । इन्होंने प्राणीशास्त्र तथा जनन-विद्या के क्षेत्र में सह सम्बन्ध के सिद्धान्त के आधार पर अनेकानेक समस्याओं का वैज्ञानिक विश्लेषण किया है ।

परिभाषा :

(i) क्राकस्टन एवं काउडेन ने दो चरों के मध्य पाए जाने वाले सम्बन्ध की माप के रूप में सह सम्बन्ध को इस प्रकार परिभाषित किया है कि - "जब सम्बन्ध परिमाणात्मक xकृति का होता है, तो उसे खोजने एवं मापने तथा सूक्ष्म सूत्र के रूप में व्यक्त करने की उचित सांख्यिकीय युक्ति को सहसम्बन्ध कहते है । "

(ii) प्रो. किंग ने सहसम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "दो श्रेणियों अथवा समूहों के बीच कार्य-कारण सम्बन्ध को ही सह-सम्बन्ध कहते है । '

(iii) कौनर के अनुसार, "जब दो या अधिक राशियाँ सहानुभूति में परिवर्तित होती है जिससे एक में होने वाले परिवर्तनों के फलस्वरूप दूसरी राशि में भी परिवर्तन होने की xवृत्ति पाई जाती है, तो वे राशियाँ सह संबन्धित कहलाती है । "

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि दो परस्पर सम्बन्धित समंक श्रेणियों में एक ही दिशा या विपरीत दिशा में होने वाले परिवर्तन की xवृत्ति को ही सांख्यिकी में सह सम्बन्ध कहा जाता है । सह सम्बन्ध के गहन अध्यन हेतु निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है ।

(i) **प्रत्यक्ष सम्बन्ध -** दोनों समंकमालाऐं में प्रत्यक्ष कार्य-कारण सम्बन्ध हो सकता है । कुछ घटनाएँ ऐसी होती है कि वे किसी के कारणवश होती है । उदाहरण के लिए, मूल्य और माँग में प्राय: ऋणात्मक, सम्बन्ध होता है । इसका तात्पर्य यह है कि मूल्य में परिवर्तन के कारण ही माँग में परिवर्तन होते है ।

(ii) **सह सम्बन्ध का अन्य कोई समापवर्त्तक कारण** - यह भी सम्भव हो सकता है कि दोनों श्रेणियों में प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होकर किसी अन्य समापवर्त्तक कारण के परिणामस्वरूप ऐसा हो सकता है । उदाहरण के लिए, मोटरकार एवं टेलीफोन दोनों में धनात्मक सह-सम्बन्ध होने का यह आशय कदापि नहीं कि प्रत्येक मोटरकार वाला अनिवार्य रूप से टेलीफोन भी रखता है । वास्तव में आय तीसरा ऐसा कारण है जो दोनों को प्रभावित करता है । अर्थात, अधिक आय वाले ही सामान्यत: कार एवं टेलीफोन रखते है ।

(iii) **परस्पर प्रतिक्रिया -** यह सर्वदा आवश्यक नहीं है कि एक श्रेणी ही दूसरी को प्रभावित करें, यह सम्भव हो सकता है कि दोनों समंकमालाऐं आपस में एक-दूसरे से प्रभावित हों । ऐसी स्थिति में यह ज्ञात करना कठिन हो जाता है कि कौन सी कारण है और कौन-सी परिणाम । वास्तव में दोनों ही कारण हो सकती है और दोनों ही परिणाम । उदाहरण के लिए, आय और शिक्षा पर व्यय के मध्य इस प्रकार का सम्बन्ध होता है । आय बढ़ने पर शिक्षा पर व्यय बढ़ता है और शिक्षा बढने पर आय बढ़ती है । अत: ये दोनों अन्योन्याश्रित है ।

(iv) **निरर्थक सम्बन्ध -** कभी-कभी समग्र की दो समंकमालाऐं संबंधित नहीं होती परन्तु दैवयोग के कारण उनके निदर्शनों में सहसम्बन्ध पाया जाता है तो इस प्रकार का सम्बन्ध निरर्थक होगा । उदाहरण के लिए, सैलानियों की संख्या में वृद्धि और अधिक चीनी उत्पादन में धनात्मक सम्बन्ध है, तो सम्बन्ध सार्थक नहीं कहलायेगा वरन् यह बेकार होगा ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सह सम्बन्ध की विद्यमानता का पता बड़े गहन विश्लेषण से ही लगाया जा सकता है । इस प्रकार व्यवहारिक जीवन में प्रत्येक क्षेत्र में दो या दो से अधिक सम्बन्धित घटनाओं के पारस्परिक सम्बन्ध का विवेचन करने में यह सिद्धान्त बहुत उपयोगी सिद्ध होता है ।

16.2 सह सम्बन्ध के प्रकार

सह संबंध को दिशा , अनुपात एवम चार मूल्यो की संख्या के आधार पर निम्न भागो मे विभाजित कर सकते है ----

1. **दिशा के आधार पर**

(i) **धनात्मक सह सम्बन्ध (positive correlation) -** जब दो चरों में एक ही दिशा में परिवर्त्तन होता है अर्थात् एक में वृद्धि (या कमी) होने से दूसरे चर मूल्यों में भी वृद्धि (या कमी) होती है तो ऐसा सह सम्बन्ध धनात्मक कहलाता है । जैसे मुद्रा की मात्रा में वृद्धि से मूल्य स्तर में वृद्धि, वस्तु की माँग में कमी से उसके मूल्य में कमी आदि धनात्मक सह सम्बन्ध के उदाहरण हैं ।

(ii) **ऋणात्मक सह सम्बन्ध (negative relation) -** जब दो चर मूल्यों में परिवर्तन की दिशा अलग-अलग हो, जैसे पहले में वृद्धि x दूसरे में कमी या पहले में कमी पर दूसरे में वृद्धि हो तो इसे ऋणात्मक सह सम्बन्ध कहा जाता है । उत्पादन में वृद्धि पर कीमतों में कमी तथा वस्तु के मूल्य में कमी पर माँग में वृद्धि आदि ऋणात्मक सह सम्बन्ध के उदाहरण है ।

2. अनुपात के आधार पर

(i) **रेखीय सह सम्बन्ध (linear correlation) -** यदि दो चरों में परिवर्त्तन का अनुपात स्थायी रूप से समान होता है अर्थात् जब दो चरों में विचरण का अनुपात सदैव एक सा हो तो इस प्रकार के सह-सम्बन्ध को रेखीय कहते है । इसे यदि बिन्दु-रेखीय-पत्र पर अंकित किया जाए तो एक सीधी रेखा बनेगी । इस प्रकार का सहसम्बन्ध भौतिक तथा गणितीय रेखा बनेगी । इस प्रकार का सह सम्बन्ध भौतिक तथा गणितीय विज्ञानों में पाया जाता है। उदाहरणस्वरूप, यदि किसी कारखाने में मजदूरों की संख्या का दूगना कर देने पर उत्पादन भी दूगना हो जाए तो इसे रेखीय सह सम्बन्ध कहेंगे ।

(ii) **वक्र रेखीय सह-सम्बन्ध (curve-linear correlation) -** यदि दो चर मूल्यों के परिवर्तन का अनुपात अस्थिर या परिवर्तनशील होता है तो उनका सह सम्बन्ध वक्र रेखीय होता है । इसे यदि बिन्दुरेखीय-पत्र प्रदर्शित किया जाए तो एक वक्र रेखा बनेगी । जैसे, विज्ञापन-व्यय और बिक्री में सामान्यत: वक्र-रेखीय सह सम्बन्ध होगा, क्योंकि बहुत कम संभावना है कि दोनों के परिवर्तन के अनुपात में स्थायित्त्व होगा ।

3. चर-मूल्यों की संख्या के आधार पर

(i) **सरल-सहसम्बन्ध (simple correlation) -** जब दो चर मूल्यों के मध्य सह सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है तो इसे सरल सह सम्बन्ध कहा जाता है । इसमें एक स्वतन्त्र एवं दूसरा आश्रित चर मूल्य होता है ।

(ii) **बहुगणी सह सम्बन्ध (multiple correlation) -** जब दो या दो से अधिक स्वतन्त्र चर-मूल्य होते है और आश्रित चर-मूल्य केवल एक होता है । इन सभी स्वतन्त्र चर मूल्यों का आश्रित चर मूल्यों पर सम्मलित प्रभाव पड़ता है तो इसे बहुगणी सह सम्बन्ध कहा जाता है।

(iii) **आशिक सह सम्बन्ध (partial correlation) -** आशिक सह सम्बन्ध तब होता है जब दो से अधिक चर मूल्यों का अध्ययन तो किया जाता है परन्तु अन्य चर मूल्यों के प्रभाव को स्थिर रखकर केवल दो चर मूल्यों में सह सम्बन्ध निकाला जाता है ।

उदाहरणर्थ, यदि वर्षा और खाद दोनों के गेहूँ की उपज पर सामूहिक प्रभाव का गणितीय अध्ययन किया जाए तो वह बहु गुणी सह सम्बन्ध कहलायेगा । इसे विपरीत, यदि एक स्थिर वर्ष की मात्रा में खाद की मात्रा व गेहूँ आशिक सह सम्बन्ध कहलायेगा । यहाँ केवल सरल सह सम्बन्ध का ही अध्ययन करेंगें ।

16.3 सह सम्बन्ध का परिमाण

सहसम्बन्ध गुणांक द्वारा सह-सम्बन्ध का अंकीय परिणाम ज्ञात किया जाता है । इसी आधार पर धनात्मक और ऋणात्मक सह सम्बन्ध के निम्नलिखित परिमाण हो सकते है :

(1) **पूर्ण सह सम्बन्ध (perfect correlation) -** जब दो समंकालाओं में परिवर्तन एक ही दिशा में और समान अनुपात में हो तो उनमें पूर्ण धनात्मक सह सम्बन्ध कहलायेगा । पूर्ण धनात्मक सह सम्बन्ध गुणांक - 1 के रूप में xकट किया जाता है । इसके विपरीत जब दो समंकमालाओ में परिवर्तन का अनुपात तो समान हो परतु विपरीत दिशा में हो तो वहाँ पूर्ण ऋणात्मक सह सम्बन्ध होता है । ऐसी स्थिति में सह सम्बन्ध गुणांक - 1 होता है ।

(2) **सह सम्बध की अनुपस्थिति (absence of correlation) -** जब दो समकमालाओं के परिवर्तन के मध्य किसी प्रकार की आश्रितता नहीं पायी जाती अर्थात् एक श्रेणी के परिवर्तन का प्रभाव दूसरी श्रेणी पर बिल्कुल नहीं पड़ता तो वहाँ सह सम्बन्ध की अनुपस्थिति होती है। यहाँ सह सम्बन्ध गुणांक की मात्रा शून्य (0) होती है ।

(3) **सह सम्बन्ध का सीमित परिमाण (limited degree of correlation) -** जब दो समंकमालाओं में न तो सह सम्बन्ध का अभाव होता है और न उनमें पूर्ण सह सम्बन्ध ही होता है अर्थात् दोनों के मध्य की स्थिति होती है तब वहाँ सीमित मात्रा का सहसम्बन्ध इसी प्रकार का सम्बन्ध पाया जाता है ।

सीमित सहसम्बन्ध भी निम्न तीन प्रकार में होता है ।

(i) **उच्च स्तर का सह-सम्बन्ध (high degreeof correlation)** - जब श्रेणियों में सह सम्बन्ध पूर्ण न हो परन्तु फिर भी अधिक मात्रा में हो तो वहाँ उच्च तर का सह-सम्बन्ध होता है । सह सम्बन्ध गुणांक .75 और 1 के मध्य पाया जाता है । सह सम्बन्ध गुणांक का चिह्न न (-) होने पर उच्च स्तर का धनात्मक सह सम्बन्ध तथा ऋण (-) होने पर उच्च स्तर का ऋणात्मक सह सम्बन्ध कहलाता है ।

(ii) **मध्य-स्तर का सह-सम्बन्ध (moderate degree of correlation) -** जब सह सम्बन्ध गुणांक .75 और 25 के मध्य आता है तो उसे मध्यय स्तर का सह सम्बन्ध कहते है । यह धनात्मक हो सकता है या ऋणात्मक ।

(iii) **निम्न-स्तर का सह सम्बन्ध (low degree of correlation) -** जब दो समंकमालाओं में सह सम्बन्ध होता है परन्तु बहु त ही कम मात्रा में तो वहाँ निम्न स्तर का सह सम्बन्ध

होता है । सह सम्बन्ध गुणांक 0 से 0.25 के मध्य होता है । यह धनात्मक हो सकता है या ऋणात्मक ।

सह सम्बन्ध-परिमाण के निर्वचन की तालिका

परिभाषा	धनात्मक (संबंध गुणांक सह)	श्रणात्मक (सह संबंध गुणांक)
अनुपस्थिति	0	0
पूर्ण	1+	1-
उच्च	75.+और 1+के बीच	75.-और 1-के बीच
मध्यय	25.+और 75.+के बीच	25.-और 75.-के बीच
निम्न	25.+ और 0के बीच	25.- और 0के बीच

सह सम्बन्ध ज्ञात करने की रीतियाँ (method of determining correlation) - सह सम्बन्ध को निम्न रीतियों से ज्ञात किया जा सकता है -

(1) बिन्दु रेखीय रीतियाँ (graphic method)

(i) विक्षेप चित्र या बिन्दु चित्र

(ii) सह सम्बन्ध रेखाचित्र

(2) गणितीय रीतियाँ (mathematical methods)

(i) कार्ल पियर्सन का सह सम्बन्ध गुणांक

(ii) स्पियरमैन की श्रेणी अन्तर रीति

(iii) संगामी विचलन रीति

(iv) अन्य रीतियाँ

(i) **विक्षेप चित्र (scatter Diagram) -** दो समंकमालाओं में परस्पर सह सम्बन्ध की दिशा और मात्रा का अनुमान विक्षेप चित्र बनाकर किया जा सकता है परन्तु सह सम्बन्ध का अंकात्मक माप प्राप्त नहीं किया जा सकता है ।

बनाने की विधि - दो श्रेणियों में से स्वतन्त्र श्रेणी के विभिन्न मूल्यों को भुजाक्ष पर लेते है तथा सह-सम्बन्धित दूसरी श्रेणी के मूल्यों को कोटि अक्ष पर अंकित करते है । दोनों के लिए अलग-अलग या समान जैसा उचित हो माप ले लेते है । इस प्रकार जितने युग्म-पद होते है उतने ही बिन्दु-रेख पत्र पर प्राकित हो जाते है । इस प्रकार एक ऐसा चित्र बनेगा जिसमें बिन्दुओ का एक समूह दिखाई पड़ेगा । ये बिन्दु कई रूपों में बिखरे होते है । उन विभिन्न रूपों के आधार पर ही सह सम्बन्ध की दिशा व मात्रा का अनुमान लगाया जाता है ।

विक्षेप चित्रों के अध्ययन करने की रीतियाँ -

(i) यदि बिन्दु एक निश्चित दिशा में जाने वाली धारा के समान है तो यह निश्चित है कि दोनों श्रेणियों में सह सबन्ध है, जैसा चित्र (2) व (2) में दर्शाया है ।

(ii) बिन्दुओं की यह धारा यदि बाई ओर निचले कोने से दाहिनी ओर के ऊपर वाले कोने की ओर जाती है तो सह सम्बन्ध धनात्मक है (जैसे चित्र (1) में] ।

(iii) बिन्दुओं की यह धारा यदि बाई ओर ऊपर वाले कोने से दाहिनी और के निचले वाले कोने की ओर जाती है तो सह सम्बन्ध ऋणात्मक है [चित्र (2) में [।

(iv) यदि बिन्दुओं की कोई निश्चित दिशा न हो और वे यों ही बिखरे हों तो सह सम्बन्ध का अभाव होगा [चित्र (3) में] ।

(v) यदि बाई ओर के निचले कोने से दाई ओर के ऊपर वाले कोने तक सभी बिन्दु एक सीधी रेखा के रूप में आ जायें तो पूर्ण धनात्मक सह सम्बन्ध होता है [चित्र (4) में] ।

(vi) यदि बायीं ओर के ऊपर वाले कोने से दायीं ओर के नीचे वाले कोने तक सभी बिन्दु एक सरल रेखा के रूप में आ जायें तो पूर्ण ऋणात्मक सह सम्बन्ध होता है [चित्र (5) में] ।

(vii) बिन्दुओं का अंकित करने के उपरान्त उनके बीच से होकर सर्वोत्तम उपयुक्तता की रेखा खींची जा सकती है । विक्षेप चित्र के बिन्दु इस रेखा के जितने निकट होंगे, सहसम्बन्ध गुणांक उतना ही अधिक होगा ।

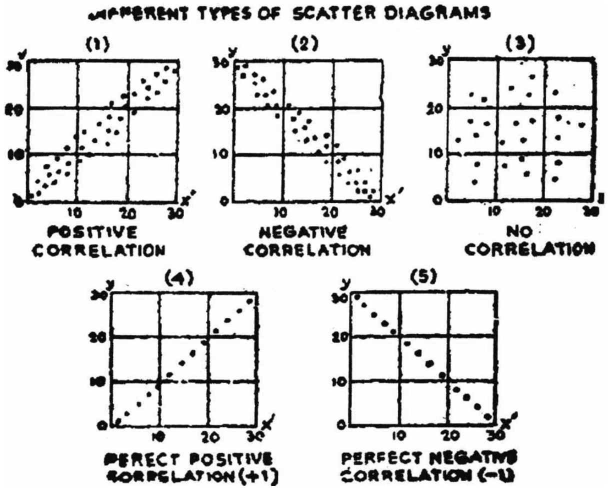

बिन्दुरेखीय रीति: बिन्दुरेखीय रीति द्वारा भी सह सम्बन्ध का अनुमान (correlation graph) लगाया जा सकता है । इस रीति के अनुसार समय, स्थान, क्रम संख्या आदि को भुजाक्ष पर तथा दोनों सम्बन्ध समंकमालाओं को कोटि अक्ष पर अंकित करके दो वक्र बना लिये जाते है । यदि दोनों श्रेणियों के मूल्यों में काफी समानता है और वे एक ही इकाई में व्यक्त है तो बायीं ओर वाले कोटि-अक्ष पर ही मापदण्ड. लिया जायेगा । परन्तु इकाइयों में भिन्नता होने पर दोनों चर-मूल्यों के लिए दोनों ओर के कोटि अक्ष का प्रयोग करना पडेगा । इस प्रकार का रेखाचित्र सह सम्बन्ध बिन्दुरेख कहलाता है ।

सह सम्बन्ध बिन्दुरेखा से सम्बद्ध मालाओं के पारस्परिक अन्तर्सम्बन्ध की दिशा व मात्रा का अनुमान लगाया जा सकता है । यदि दोनों समंकमालाओं के बिन्दुरेखा साथ-साथ बढ़ते और घटते है तो उनमें धनात्मक सह सम्बन्ध पाया जाता है । इसके विपरीत दोनों श्रेणियों के बिन्दुरेख विपरीत दिशाओं में उतार-चढ़ाव प्रदर्शित करते है तो उनमें ऋणात्मक सह सम्बन्ध होता है । यदि दोनों श्रेणियों के परिवर्त्तनों में उसी दिशा में या विपरीत दिशा में परिवर्त्तन होने के कोई xवृत्ति दिखाई नहीं देती तो समझना चाहिये कि दोनों में कोई सह सम्बन्ध नहीं है ।

उदाहरण 1 निम्न ऑकड़ो से बिन्दुरेखा द्वारा पता लगाइए कि किसी फैक्ट्री के श्रमिकों की आय व व्यय में सह सम्बन्ध है

वर्ष	1969	1970	1971	1972	1973	1974	1975	1976
औसत आय (रू. में)	210	215	218	222	230	236	245	255
औसत व्यय (रू. में)	205	206	212	218	225	230	237	250

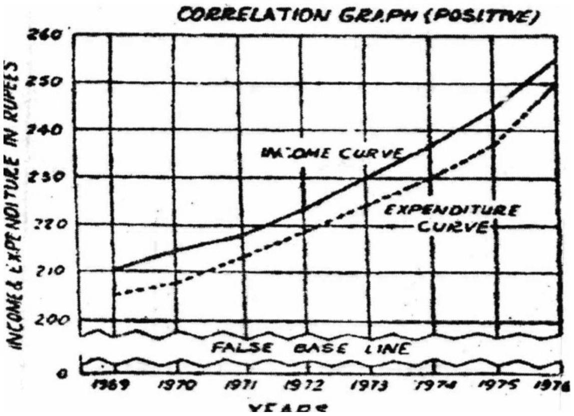

चित्र (1) में आय व व्यय वक्र दोनों एक ही दिशा में उच्चवन दर्शातें है । दोनों में धनात्मक सह सम्बन्ध है ।

उदाहरण (2) निम्न सारणी किसी वस्तु की पूर्ति में परिवर्तन होने पर उसके मूल्य में परिवर्तन को प्रदर्शित करती है । बिन्दुरेखा रीति द्वारा सह सम्बन्ध का पता लगाइए ।

वर्ष	1969	1970	1971	1972	1973	1974	1975	1976
पूर्ति (रू. में)	50	55	62	70	75	78	80	82
मूल्य (रू. में)	40	38	35	30	27	22	20	16

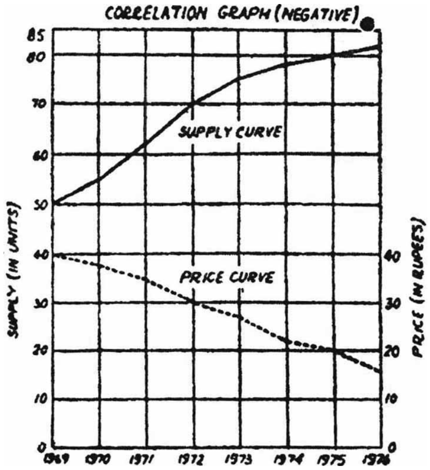

उपरोक्त चित्र में पूर्ति व मूल्य के वक्र विपरीत दिशा में जाते है । अत: पूर्ति एवं मूल्य में ऋणात्मक सह सम्बध है ।

कार्ल पियर्सन का सह सम्बन्ध गुणांक (Karl Peason's Coefficient of correlation) यह सह सम्बन्ध ज्ञात करने की सर्वश्रेष्ठ गणितीय रीति है । इससे केवल सह सम्बन्ध की दिशा व मात्रा का अनुमान ही नहीं होता बल्कि उसका अंकात्मक माप भी प्राप्त होता है । यह समान्तर माध्य व प्रमाप विचलन पर आधारित है इसलिए गणितीय दृष्टि से पूर्ण शुद्ध होती है । इंस रीति का प्रतिपादन कार्ल पियर्सन ने प्राणिशास्त्र की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए 1890 में किया था ।

मुख्य लक्षण :कार्ल पियर्सन के सह सम्बन्ध गुणांक के मुख्य लक्षण निम्न है.

(i) दिशा का ज्ञान - गुणांक में धन (+) का चिह धनात्मक सह सम्बन्ध तथा ऋण (-) का चिह्न ऋणात्मक सह सम्बन्ध को व्यक्त करता है ।

(ii) सीमाओं व मात्रा का ज्ञान -+ 1 और - 1 के बीच सह सम्बन्ध गुणांक सदैव रहता है । +1 पूर्ण धनात्मक सहसम्बन्ध और - 1 पूर्ण ऋणात्मक सह सम्बन्ध xकट करता है । सह सम्बन्ध गुणांक शून्य हो सम्बन्ध का अभाव पाया जाता है ।

(iii) सह विचरण का अच्छा माप - यह गुणांक श्रेणी के सभी पदों पर आधारित है और सभी को महत्व प्रदान करता है । सह सम्बन्ध की मात्रा, दोनों श्रेणियों के समान्तर माध्यों से लिये गये विचलनों के गुणनफलों के योग में पदों की संख्या से भाग देकर, ज्ञात की जाती है । सूत्रानुसार $-CO-\text{var}\,iance(x,y)=\dfrac{\sum dxdy}{N}$ सह सम्बन्ध गुणांक वास्तव में सह विचरण के माप को ही गुणांक है ।

(iv) कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं बताता - यह गुणांक का सह सम्बन्ध बताता है परन्तु यह नहीं बताता कि श्रेणियों के बीच कार्यकारण सम्बन्ध है या नहीं ।

(v) परिणाम के निर्वचन की आवश्यकता - इसके परिणाम यदि यो ही लिख दिये जाएँ तो सामान्यजन को समझने में कठिनाई होगी । अत: उन्हें सरल शब्दों में xकट करने की आवश्यकता पड़ती है ।

कार्ल पियर्सन के सम्बंध गुणांक का परिकलन - दोनों श्रेणियों के सह विचरण की माप को श्रेणियों के प्रमाप विचलनों के गुणनफल से भाग देने पर प्राप्त भागफल की कार्ल-पियर्सन का सह सम्बन्ध गुणांक कहा जाता है । इसे, r द्वारा प्रदर्शित किया जाता है -

$$r=\frac{con(x,y)}{\sigma x\sigma y}=\frac{\sum(x-\bar{x})(y-\bar{y})}{N\sigma x\sigma y}=\frac{\sum dxdy}{N\sigma x\sigma y}$$

$$\Theta\,\text{cov}(x,y)=\frac{\sum dxdyN}{N}$$

$$\boxed{r=\frac{\sum dxdy}{N\sigma x\sigma y}}$$ यह कार्ल-पियर्सन के सह सम्बन्ध गुणांक का मूल सूत्र है ।

यहाँ देश $dx=x-\bar{x}$ x श्रेणी के समान्तर माध्य से निकाले गये विचलन

$dy=y-\bar{y}$ y श्रेणी के समान्तर माध्य से निकाले गये विचलन

व्यक्तिगत श्रेणियो में प्रत्यक्ष रीति (direct method of individual series) -

परिक्रिया -

दोनों श्रेणियों (x तथा y) का समान्तर माध्य निकाला जाता है ।

(ii) समान्तर माध्यों से दोनों तत्सम्बन्धी श्रेणियों के पदों का अलग-अलग विचलन निकाल लेते है । पहले श्रेणी के विचलन को समान्यत: dx और दूसरी श्रेणी के विचलन को dy कहते है ।

iii) दोनों श्रेणियों के पदों के आमने-सामने के विलचन को गुणा (dx × dy) करके उन सबका योग

($\sum dxdy$) प्राप्त कर लेते है ।

(iv) दोनों श्रेणियों का अलग-अलग प्रमाप विचलन (σxऔर σy) निकाल लेते है ।

(v) अब दोनों श्रेणियों के विचलनों के गुणनफलों के योग ($\sum dxdy$) में पदों की संख्या तथा पहली श्रेणी के प्रमाप विचलन के गुणनफल (Nσxσy) का भाग देते है । प्राप्त भजनफल सह सम्बन्ध गुणांक होता है ।

$r = \frac{\sum dxdy}{N\sigma x\sigma y}, \sum dxdy$ यहाँ= सह सम्बन्ध गुणांक

= x और y श्रेणी के विचलनों के गुणनफलों का योग मे

N = पदों की संख्या

σx = x-श्रेणी का प्रमाप विचलन

σy = y-श्रेणी का प्रमाप विचलन

सरल प्रत्यक्ष रीति - यदि कार्ल-पियर्सन के मूल सूत्र में - σx तथा σy के स्थान पर उनके मूल सूत्र रखकर इस कार्य को और सरल बनाया जा सकता है । सूत्रानुसार -

$$r = \frac{\frac{\sum dxdy}{N}}{\frac{\sqrt{\sum d^2x}}{\sqrt{N}} \times \frac{\sqrt{\sum d^2y}}{\sqrt{N}}} = \frac{\sum dxdy}{\sqrt{\sum d^2x \times \sum d^2y}}$$

उदाहरण : x तथा y श्रेणी में सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात कीजिए

x श्रेणी	17	18	19	19	20	20	21	21	22	23
y श्रेणी	12	16	14	11	15	19	22	16	15	20

हल कार्य-पियर्सन सह सम्बन्ध गुणांक की गणना

X श्रेणी			**Y श्रेणी**			
आकार x	**विलचन** $\bar{x} = 20$ $dx = x - \bar{x}$	**विचलन वर्ग** d^2x	**आकार y**	**विलचन** $\bar{y} = 16$ $dy = y - \bar{y}$	**विचलन वर्ग d^2y**	**dxdy**

17	-3	9	12	-4	16	12
18	-2	4	16	0	0	0
19	-1	1	14	-2	4	4
19	-1	1	11	-5	25	5
20	0	0	15	-1	1	0
20	0	0	19	+3	9	0
21	+1	1	22	+6	36	6
21	+1	1	16	0	0	0
22	+2	4	15	-1	1	2-
23	+3	9	20	+4	16	12
$\sum x=2$	$\sum dx=0$	$\sum d^2x=30$	$\sum y=160$	$\sum dy=0$	$\sum d^2y$	$\sum dxdy=$

X- श्रेणी y - श्रेणी

मध्य - $\bar{x}=\frac{\sum x}{N}=\frac{200}{10}=20$ $\qquad$ $\bar{y}=\frac{\sum y}{N}=\frac{160}{10}=16$

प्रमाण विचलन $\sigma x=\sqrt{\frac{\sum d^2x}{N}}=\sqrt{\frac{30}{10}}=1.73$ $\qquad$ $\sigma y=\sqrt{\frac{\sum d^2y}{N}}=\sqrt{\frac{108}{10}}=3.28$

सह संबंध गुणांक $r=\frac{\sum dxdy}{N\sigma x\sigma y}=\frac{35}{10\times1.73\times3.28}=\frac{35}{56.744}+.6168$

$\boxed{r=+.6168}$ x तथा y श्रेणी मे धनात्मक संबंध दर्शाता है ।

वैकल्पिक रीति (सह संबंध गुणांक)

सरल प्रत्यक्ष रीति

$$r=\frac{\sum dxdy}{\sqrt{\sum d^2x\times\sum d^2y}}$$

$$=\frac{35}{\sqrt{30\times108}}$$

$$=\frac{35}{\sqrt{3240}}=\frac{35}{56.92}$$

$$\boxed{r=+.6148}$$

16.4 लघु रीति द्वारा सह सम्बन्ध गुणांक का परिकलन

प्रत्यक्ष रीति मे सह संबंध गुणांक ज्ञात करते समय वास्तविक अंकगणितीय माध्य से विचलन ज्ञात किए जाते है किन्तु जब अंक गणितीय माध्य दशमलव में हो तो ऐसे समय

प्रत्यक्ष रीति के प्रयोग से गठन क्रियाएँ बहुत जटिल हो जाती है, अत: लघु रीति के प्रयोग द्वारा सह सम्बन्ध गुणांक की गणना की जाती है । लघु रीति में समक श्रेणी के विचलन कल्पित माध्य से ज्ञात किए जाते है ।

परिक्रिया.

(i) सर्वप्रथम दोनों श्रेणियों में से एक-एक उपयुक्त मूल्य को कल्पित माध्य मानकर उससे विचलन ज्ञात किए जाते है - (dx = (x-Ax) , dy = (y-Ay)

(ii) प्राप्त विचलनों का योग क्रमश: $\sum dx$ एवं $\sum dy$ ज्ञात कर लिया जाता है ।

(iii) कल्पित माध्यों से ज्ञात विचलनों का वर्ग करके 082 एवं ता, तथा इनका योग करके $\sum d^2x$ एवं $\sum d^2y$ ज्ञात कर लिए जाते है ।

(iv) कल्पित माध्यों से ज्ञात विचलनों को आपस में गुणा करके (dxdy), इनके गुणनफल का योग $\sum dxdy$ ज्ञात किया जाता है ।

(v) निम्न सूत्र के प्रयोग के समय समंक श्रेणियों के अंक गणितीय माध्य $(\overline{x,y})$ तथा प्रमाप विचलन $(\sigma x,\sigma y)$ भी ज्ञात कर लिए जाते है ।

(vi) निम्न सूत्रों के प्रयोग द्वारा सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात किया जाता है-

प्रथम सूत्र :

$$r = \frac{\sum dxdy - N(\bar{x} - Ax)(\bar{y}Ay)}{N\sigma x\sigma y}$$

इस सूत्र द्वारा सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने में दोनों श्रेणियों के अंक गणितीय माध्य एवं प्रमाण विचलन भी ज्ञात करने होते है, अत: निम्न सरल रूपों का प्रयोग अधिक उपयुक्त माना जाता है ।

द्वितीय सूत्र :

$$r = \frac{\sum dxdy - N(\frac{\sum dx}{N})(\frac{\sum dy}{N})}{N\sqrt{[\frac{\sum dx^2}{N} - \left(\frac{\sum dx}{N}\right)^2] \times \left[\frac{\sum dy^2}{N} - \left(\frac{\sum dy}{N}\right)^2\right]}}$$

तृतीय सूत्र :

$$r = \frac{\sum dxdy - \frac{\sum dx \sum dy}{N}}{N\sqrt{\sum dx^2 - \left(\frac{\sum dx}{N}\right)^2}\sqrt{\sum dy^2 - \left(\frac{\sum dy}{N}\right)^2}}$$

चतुर्थ सूत्र :

$$r = \frac{N\sum dxdy - (\sum dx \sum dy)}{\sqrt{N\sum d^2x - \left(\sum dx\right)^2}\sqrt{N\sum d^2y - \left(\sum dy\right)^2}}$$

व्यवहार में चतुर्थ सूत्र का प्रयोग अधिक किया जाता है ।

यहाँ

$\sum dxdy$ = कल्पित माध्यों से प्राप्त विचलनों के गुणनफल का योग

$\sum d^2x$ = x श्रेणी के विचलनों के वर्ग का योग

$\sum d^2y$ = y श्रेणी के विचलनों के वर्ग का योग

$\sum dx$ = x श्रेणी के विचलनों का योग

$\sum dy =$ y श्रेणी क विचलनों का योग

उदाहरण : निम्न सारणी 12 स्थानों पर जाड़े में बोये जाने वाले गेहूँ के लिए x (भूमि का तापक्रम) तथा y (उगने में लगा समय दिनों में) के मूल्यों को प्रदर्शित करती है ।

X: 57 42 40 38 42 45 42 44 40 46 44 43

Y : 10 26 30 41 29 27 27 19 18 19 31 29

भूमि के तापक्रम व उगने के अन्तराल में सह सम्बन्ध गुणांक का परिकलन कीजिए ।

X श्रेणी			**Y श्रेणी**			**विचलनों का गुणन dxdy**
तापक्रम x	**विलचन** $A\bar{x} = 44$ $dx = x - Ax$	**विचलन वर्ग** d^2x	**आकर y**	**विचलन** $A\bar{y} = 26$ $dy = y - Ay$	**विचलन वर्ग** d^2y	
57	+13	169	10	-16	256	-208
42	-2	4	26	0	0	0
40	-4	16	30	+4	16	-16
38	-6	36	41	+15	225	-90
42	-2	4	29	+3	9	-4
45	-1	1	27	+1	1	+1
42	-2	4	27	+1	1	-2
44	0	0	19	-7	49	0
46	-4	16	18	-8	64	+32
44	+2	4	19	-7	49	-14
43	0	0	31	+3	9	-3
	-1	1	29	+3	9	-3
$\sum x = 523$	$\sum dx = -5$	$\sum d^2x = 255$	$\sum y = 306$	$\sum dy = -6$	$\sum d^2y = 207$	$\sum dxdy = -306$

प्रथम सूत्र के अनुसार

X श्रेणी	**y श्रेणी**

$$\bar{x} = \frac{\sum x}{N} = \frac{523}{12} = 43.58$$

$$\sigma x = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N} - \left(\frac{\sum dx}{N}\right)^2}$$

$$= \sqrt{\frac{255}{12} - \left(\frac{-5}{12}\right)^2}$$

$$= \sqrt{21.25 - (-.417)^2}$$

$$= \sqrt{21.25 - 0.17}$$

$$= \sqrt{21.08} = 4.59$$

$$\bar{y} = \frac{\sum y}{N} = \frac{306}{12} = 25.5$$

$$\sigma x = \sqrt{\frac{\sum d^2y}{N} - \left(\frac{\sum dy}{N}\right)^2}$$

$$= \sqrt{\frac{704}{12} - \left(\frac{-6}{12}\right)^2}$$

$$= \sqrt{\frac{704}{12} - (-.5)^2}$$

$$= \sqrt{58.67 - .25}$$

$$= \sqrt{58.42} = 7.64$$

$$r = \frac{\sum dxdy - N\left(\bar{Y} - Ax\right)\left(\bar{Y} - Ax\right)}{N\sigma x\sigma y}$$

$$= \frac{-306 - 12(43.58 - 44)(25.5 - 26)}{12 \times 4.59 \times 7.64}$$

$$= \frac{-306 - 12(-.42)(-.5)}{12 \times 4.59 \times 7.64}$$

$$= \frac{-306 - 2.52}{420.81} = \frac{-308.52}{420.81} - 0.71$$

x तथा y, ऋणात्मक उच्च श्रेणी का सह सम्बन्ध दर्शाता है ।

द्वितीय सूत्र के अनुसार :

$$r = \frac{\sum dxdy - N\left(\frac{\sum dx}{N}\right)\left(\frac{\sum dy}{N}\right)}{N\sqrt{\frac{\sum dx^2}{N} - \left(\frac{\sum dx}{N}\right)^2} \times \sqrt{\frac{\sum dy^2}{N} - \left(\frac{\sum dy}{N}\right)^2}}$$

$$= \frac{-306 - 12\left(\frac{-5}{12}\right)\left(\frac{-6}{12}\right)}{12\sqrt{\frac{255}{12} - \left(\frac{-5}{12}\right)^2}\sqrt{\frac{704}{12} - \left(\frac{-6}{12}\right)^2}}$$

$$= \frac{-306 - 12(-.417 - (-.5))}{12\sqrt{21.25 - (-.417)^2}\sqrt{58.67 - (-5)^2}}$$

$$= \frac{-306 - 2.52}{12\sqrt{21.25 - .17}\sqrt{58.67 - .25}} = \frac{-306 - 2.52}{12 \times 4.59 \times 7.64}$$

$$= \frac{-308.5}{420.81} = -.71$$

तृतीय सूत्र के अनुसार.

$$r=\frac{\sum dxdy-\left(\frac{\sum dx\times\sum dx}{N}\right)}{\sqrt{\left[\sum dx^2-\frac{\left(\sum dx\right)^2}{N}\right]}\sqrt{\left[\sum dy^2-\frac{\left(\sum dy\right)^2}{N}\right]}}$$

$$=\frac{-305-\left(\frac{-5\times 6}{12}\right)}{\sqrt{\left[255-\frac{(-5)^2}{12}\right]}\sqrt{\left[704-\frac{(-6)^2}{12}\right]}}$$

$$=\frac{-306-\frac{30}{12}}{\sqrt{(255-2.1)(704-3)}}$$

$$=\frac{-308.52}{\sqrt{252.9\times 701}}=\frac{-308.52}{420.81}=-.733$$

चतुर्थ सूत्र के अनुसार

$$r==\frac{N\sum dxdy-\sum dx\times\sum dy}{\sqrt{N\sum d^2x-\left(\sum dx\right)^2}\sqrt{N\sum d^2y-\left(\sum dy\right)^2}}$$

$$=\frac{12\times -306-(-5)\times(-3)}{\sqrt{12\times 255-(-5)^2}\sqrt{12\times 704-(-6)^2}}$$

$$=\frac{-3672-30}{\sqrt{3060-25}\sqrt{8448-36}}=\frac{-3702}{\sqrt{3035\times 8412}}$$

$$r=\frac{-3702}{5061.8}=-.7313$$

उदाहरण: निम्न सारणी कुल जनसंख्या तथा पूर्ण और अश्वों का बंटन प्रदर्शित करती है। ज्ञात कीजिए की आयु तथा अन्धेपन में सह सम्बन्ध है या नहीं ।

आयु	**व्यक्तियों की संख्या (हजार मे)**	**अन्धे व्यक्तियों की संख्या**
0-10	100	55
10-20	60	40
20-30	40	40
30-40	36	40

40-50	24	36
50-60	11	22
60-70	6	18
70-80	3	15

हल : आयु वर्ग के मध्य बिन्दुओं को x - श्रेणी और अंधे व्यक्तियों की प्रतिशत संख्या (अंधापन) को y श्रेणी
मानकर दोनों श्रेणियों में सह सम्बन्ध गुणांक निकाला जाएगा । अंधे व्यक्तियों की प्रतिशत संख्या निम्न प्रकार ज्ञात की जायेगी ।

व्यक्तियों की संख्या(हजार मे)	100	60	40	36	24	11	6	3
अंधे व्यक्ति की संख्या	55	40	40	40	36	22	18	15
संख्या अंधे व्यक्तियों का %	$\frac{55}{100}\times100$	$\frac{40}{60}\times 100$	$\frac{40}{40}\times 100$	$\frac{40}{36}\times100$	$\frac{36}{24}\times 100$	$\frac{22}{11}\times100$	$\frac{18}{6}\times100$	$\frac{15}{3}\times100$
Y श्रेणी हजार मे	55	67	100	111	150	200	300	500

आयु	मध्य बिन्दु x	विचलन Ax45 = dx=x-Ax	dx^2	अंधापन (Y)	Ay150 = dy = y-Ay	dy^2	Dxdy
0–10	5	–40	1600	55	–95	9025	3800
10–20	15	–30	900	67	–83	6889	2490
20–30	24	–20	400	100	–50	2500	1000
30–40	35	–10	100	111	–49	1521	390
40–50	45	0	0	150	0	0	0
50–60	55	+10	100	200	50	2500	500
60–70	65	+20	400	300	150	22500	3000
70–80	75	+36	900	500	350	112500	10500
N=8		$\sum dx = 40$	$\sum dx^2 = 4400$		$\sum dy = 283$	$\sum dy^2 = 167435$	$\sum dxdy = 21680$

$$r = \frac{N\sum dxdy - \sum dx - \sum dy}{\sqrt{N\sum d^2x - (\sum dx)^2}\sqrt{N\sum d^2y - (\sum dy)^2}}$$

$$= \frac{8 \times 21680 - (-40)(283)}{\sqrt{8 \times 44000 - (-40)^2}\sqrt{8 \times 167435 - (283)^2}}$$

$$= \frac{173440 + 11320}{\sqrt{35200 - 1600}\sqrt{1339480 - 80089}}$$

$$= \frac{184760}{\sqrt{33600}\sqrt{1259391}}$$

$$= \frac{184760}{183.30 \times 1122.22} = \frac{184760}{205702.92} = +.89$$

उदाहरण. निम्न आंकड़ों से x व y के बीच सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात कीजिए :

	x श्रेणी	y श्रेणी
पदों की संख्या	15	15
समान्तर माध्य	25	18
माध्य से विचलन का योग	126	138

x तथा y श्रेणी के समान्तर माध्यों से लिए गये विचलनों का गुणनफल 122 के बराबर है ।

हल. $= \sum dx^2 = 136 \sum dy^2 = 138 \sum dxdy = 122$

$$r = \frac{\sum dxdy}{\sqrt{\sum dx^2 \times \sum dy^2}} = \frac{122}{\sqrt{135 \times 138}} = \frac{122}{\sqrt{18768}}$$

$$r = \frac{122}{136.99} = +.8905$$

कार्य पियर्सन के सह सम्बन्ध गुणांक की मान्यताएँ - कार्य पियर्सन का सह सम्बन्ध गुणांक तीन मान्यताओं पर आधारित है -

(i) संबंधित समक श्रेणियाँ कई कारणों से प्रभावित होती है अत' उनमें सामान्यतया (normality) आ जाती है ।

(ii) समंक मालाओं को प्रभावित करने वाले स्वतन्त्र कारणों में कारण परिणाम का संबंध होता है ।

(iii) सह सम्बन्धित समंकमालाओ में रेखीय सम्बन्ध की परिकल्पना की जाती है ।

संभाव्य विभ्रय (probable error) - सह सम्बन्ध गुणाक की महत्ता (significance) की जाँच के लिए संभाव्य विम्रय की गणना की जाती है । सम्भाव्य विम्रय वह माप है जिसके आधार पर उन सीमाओं को ज्ञात किया जा सकता है जिनमें समग्र में से दैव-निदर्शन द्वारा चुने गए न्यादर्शो के सह सम्बन्ध गुणांक के पाए जाने की सम्भावना होती है । इस विभ्रय को यदि सह सम्बन्ध गुणांक में जोड़ दिया जाए और घटा दिया जाए तो मूल्य प्राप्त होंगे इसके बीच उस समंक श्रेणियों के सह सम्बन्ध पाये जाने की 5% 0 संभावना होती है जो समुचित दैव-निदर्शन प्रणाली से चुनी गयी हों ।

सूत्रानुसार -

$$P.E. = .6745 \times \frac{1-r^2}{\sqrt{N}}$$

जहाँ . P.E= सम्भाव्य विम्रय (probable error)

r= सह सम्बन्ध गुणांक

N = पदों की संख्या

संभाव्य विम्रय के कार्य : संभाव्य विम्रय के निम्न कार्य है -

(i) सीमा निर्धारण - यह विम्रय सह सम्बन्ध गुणांक की उच्च व निम्न सीमाओं को निर्धारित करता है । यह सीमाएँ r -+ P.E. द्वारा निर्धारित होती है ।

(ii) सह सम्बन्ध गुणांक का निर्वचन - सम्भाव्य विभ्रय के आधार पर सह सम्बन्ध गुणांक का निर्वचन निम्नप्रकारकरते है ।

(a) यदि सह सम्बन्ध गुणांक सम्भाव्य विसय से कम है (r < P.E) तो यह निश्चित है कि उन दोनों श्रेणियों में सह सम्बन्ध की उपस्थिति का कोई प्रमाण नही है ।

(b) (b) जब सह सम्बन्ध गुणांक अपने सम्भाव्य तिम्रय के छः गुने से अधिक है (r > P.E) तो सह सम्बन्ध अर्थपूर्ण माना जाएगा । सह सम्बन्ध गुणांक संभाव्य विम्रय के 6 गुने से जितना अधिक होगा, सह सम्बन्ध उतना ही अधिक महत्वपूर्ण होगा ।

(c) यदि सह सम्बन्ध गुणांक 0.3 से कम है और उसका सम्भावय विभ्रय अपेक्षाकृत कम है तो सह सम्बन्ध की मात्रा नगण्य होगी ।

(d) यदि सह सम्बन्ध गुणांक 0.5 से अधिक है और उसका सम्भाव्य विभ्रय बहुत कम है तो सह सम्बन्ध का अस्तित्व लगभग निश्चित है ।

उदाहरण : यदि r0. = 8 तथा N = 16 हो तो सह सम्बन्ध गुणांक की सीमाएँ ज्ञात कीजिए तथा इसकी सार्थकता का परीक्षण भी कीजिए ।

हल : r = 0.8 = N16 =

$$P.E. = .6745 \times \frac{1-r^2}{\sqrt{N}} = 6745 \times \frac{1-8^2}{\sqrt{16}}$$

$$= 6745 \times \frac{1-64}{4}$$

$$= 6745 \times .09 = .061$$

सह सम्बन्ध सीमाएँ $r \pm P.E$ = .8. +.061= .801 उच्च सीमा

8 - .061 = .739 निम्न सीमा

$$\frac{r}{P.E} = \frac{.8}{.061} = 13.1147$$

अत r, P.E के 13 गुना से अधिक हे, व अर्थपूर्ण सह सम्बन्ध है ।

प्रमाप विभ्रम (standard error,) - आधुनिक सांख्यिकी में संभाव्य विभ्रय के स्थान पर प्रमाप विभ्रय का प्रयोग श्रेयस्कर समझा जाता है । प्रमाप विम्रयं, संभाव्य विम्रय का लगभग 3 / 2 होता है ।

सूत्रानुसार S. E of $r\frac{1-r^2}{\sqrt{N}}$

प्रतिदर्श के सह सम्बन्ध गुणांक की प्रमाप-विभय की सहायता से पूरे समग्र के r की सीमाएँ निम्न सूत्रानुसार निर्धारित होती है -

सीमाएँ $r \pm 3$ S.E of r

स्पियरमैन की श्रेणी या कोटि अन्तर विधि.

(Spear main‘ rank difference method)

चार्ल्स एडवर्ड स्पियरमैन नामक एक ब्रिटिश मनोवैज्ञानिक ने 1904 में व्यक्तिगत समंकमालाओं में सह सम्बन्ध ज्ञात करने की एक सरल रीति का प्रतिपादन किया । इस रीति को स्पियरमैन की श्रेणी या कोटि अन्तर या क्रमान्तर रीति कहते है । यहाँ सह सम्बन्ध गुणांक निकालते हैं । समय श्रेणियों का मूल्य ज्ञात होना आवश्यक नहीं, केवल मूल्य के अनुसार पदों का क्रम (rank) जान लेने से ही काम चल जाता है । सबसे बड़े मूल्य को पहला क्रम, उससे छोटे को दूसरा, उससे छोटे को तीसरा और इसी प्रकार क्रम दे देते है ।

यह रीति ऐसी परिस्थितियों के लिए उपयुक्त है जहाँ तथ्यों का प्रत्यक्ष संख्यात्मक माप सम्भद न हो तथा उन्हें केवल एक निश्चित कोटि-क्रम के अनुसार रखा जा सके, जैसे बुद्धिमता, सुन्दरता, स्वास्थय आदि गुणात्मक तथ्यों को प्रत्यक्ष रूप में अंकों में नहीं नापा जा सकता ।

कोटी या श्रेणी अंतर सह संबंध गुणांक की गणना - स्पेयरमैन के श्रेणी अन्तर सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने की परिक्रिया निम्न प्रकार है -

(i) सर्वप्रथम x एवं y श्रेणी के चर मूल्यों का उनके आकार के आधार पर क्रम निश्चित कर उन्हें कोटि क्रम जेसे-1, 2, 3, 4--- आदि दे दिये जाते है ।

(ii) x श्रेणी के कोटि-क्रमों में से y श्रेणी के तत्सम्बन्धी कोटि-क्रमों को घटाकर कोटि अन्तर (rank differences - D) ज्ञात किया जाता है, कोटि अन्तर का योग $\sum D$ हमेशा शून्य होता है ।

(iii) कोटि अन्तर (D) का वर्ग कर उसका योग $\sum D^2$, ज्ञात कर लिया जाता है ।

(iv) निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है -

$$P = 1 - \frac{6\sum D^2}{N(N^2 - 1)}$$

जहाँ P= ग्रीक वर्णमाला के अक्ष से (r^b0) का प्रयोग श्रेणी अन्तर सह सम्बन्ध गुणांक के लिए किया जाता है ।

$\sum D^2$ = क्रमान्तरों के वर्गो का योग

N = पद युग्मों की संख्या

कार्ल पियर्सन सह सम्बन्ध गुणांक की तरह कोटि-अन्तर सह सम्बन्ध गुणांक की अधिकतम सीमा भी 1 होती

उदाहरण : कोटि-अन्तर की विधि द्वारा x तथा? श्रेणी के बीच सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात कीजिए :

X:	20	22	24	25	30	32	28	21	26	35
Y	16	15	20	21	19	18	22	24	23	25

हल: स्पियरमैन श्रेणी अन्तर रीति द्वारा सह सम्बन्ध गुणांक की गणना

X श्रेणी	**Rank (x)**	**Y श्रेणी**	**Rank (y)**	**कोटी अंतर D =rank X - rank y**	**वर्ग D^2**
20	10	16	9	+1	1
22	8	15	10	–2	4
24	7	20	6	+1	1
25	6	21	5	+1	1
30	3	19	7	–4	16
32	2	18	8	–6	36
28	4	22	4	0	0
21	9	24	2	+7	49
26	5	23	3	+2	4
35	1	25	1	0	0

			N10 =	$\sum D = 0$	$\sum D^2 = 112$

सह संबंध गुणांक

$$\rho = 1 - \frac{6\sum D^2}{N(N^2-1)} = 1 - \frac{6 \times 112}{10(10^2-1)}$$

$$= 1 - \frac{672}{10(100-1)} = 1 - \frac{672}{10 \times 99}$$

$$= 1 - \frac{672}{990} = \frac{318}{990} = +.32$$

निम्न श्रेणी का धनात्मक सह सम्बन्ध दर्शाता है ।

समान पद मूल्य होने पर - कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि दो या अधिक पद मूल्य समान हों तो इनको कम प्रदान करने की दो विधियाँ अपनायी जाती है

(i) कोष्ठ क्रम रीति (Bracket rank method) - समान पद मूल्यों को समान क्रम दिया जाता है परन्तु उनके बाद वाले पद को वहा क्रम दिया जायेगा जो कि पदों के समान न रहने पर दिया जाता है ।

जैसै -	मूल्य	60	40	30	30	20	10
	कोटि क्रम		1	2	3.5	3.5	6

(ii) मध्य क्रम रीति (average rank method) - इसे सामान्यतया व्यवहार में प्रयोग किया जाता हैं इसमें समस्त समान पदों को उनके क्रम के औसत के अनुसार कोटि - क्रम प्रदान किया जाता है, जैसे तीसरे एवं चौथे क्रम पर दो पदों का आकार समान है तो इन्हें 4+3 = 2 / 35 कोटि क्रम प्रदान किया जाएगा ।

जैसे -	मूल्य	60	40	30	30	25
	कोटि क्रम.	1	2	3.5	3.5	6

समान क्रम के लिए सूत्र मे संसोधन - किसी श्रेणी मे यदि एक से अधिक पदों का मूल्य समान होता है तो सूत्र में निम्नप्रकारसंशोधन किया जाता है -

$$\rho = 1 - \frac{6\left[\sum D^2 + \frac{1}{12}\left(m^3 - 3\right) + ...\right]}{N(N^2-1)}$$

पदमाला के जितने पदों की पुनरावृत्ति होगी, उतनी ही बार $6\sum D^2$ मे $\frac{1}{12}\left(m^3 - m\right)$ को जोड़ेंगे । यहाँ m उस पद की आवर्ती है जो एक से अधिक बार आया है ।

उदाहरण : निम्न समंकों से क्रमान्तर गुणांक ज्ञात कीजिए :

y श्रेणी : 48 33 40 9 16 16 65 24 16 57

x श्रेणी :13 13 13 24 6 15 4 20 9 6 19

क्रमान्तर सह सम्बन्ध गुणांक की गणना

X श्रेणी	Rank (x)	Y श्रेणी	Rank (y)	कोटी अंतर D =rank X - rank y	वर्ग D^2
48	3	13	5.5	–2.5	6.25
33	5	13	5.5	–5	0.25
40	4	24	1	+3	9
9	10	6	8.5	+1.5	2.25
16	8	15	4	+4	16
16	8	4	10	–2	4
65	1	20	2	–1	1
24	6	9	7	–1	1
16	8	6	8.5	–5	0.25
57	2	19	3	–1	1
N=10					$\sum D^2 = 41$

उक्त प्रश्न में एक से अधिक पदों के समान क्रम में. अत: संशोधित सूत्र द्वारा क्रमान्तर सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात किया जायेगा -

$$P = 1 - \frac{6\left[\sum D^2 + \frac{1}{12}\left(m^3 - 3\right) + ...\right]}{N(N^2 - 1)}$$

$$= 1 - \frac{6\left[41 + \frac{1}{12}\left(3^3 - 3\right) + \left(2^3 - 2\right) + \frac{1}{12}\left(2^3 - 2\right)..........\right]}{10(10^2 - 1)}$$

$$= 1 - \frac{6\left[41 + 2 + 0.5 + 0.5\right]}{990}$$

$$= 1 - \frac{6\left[44\right]}{990}$$

$$= 1 - \frac{264}{990}$$

$$= \boxed{P = .73}$$

<u>**सिपयरमैन की श्रेणी रीति किन विशेषताएँ -**</u> सह सम्बन्ध गुणांक निकालने की श्रेणी अन्तर रीति की निम्न विशेषताएँ है -

(i) सरल - यह रीति गणना और समझने की दृष्टि से कार्ल पियर्सन की रीति से बहुत सरल है ।

(ii) केवल क्रम-मान पर्याप्त - यदि पदों के वास्तविक मान न ज्ञात हों पर उनका क्रम पता हो तो सह सम्बन्ध गुणांक निकाला जा सकता है ।

(iii) अनियमित सामग्री के होने पर उपयुक्त - यह रीति वही के लिए उपयुक्त है जहाँ सामग्री अनियमित हो ।

(iv) व्यक्तिगत अध्ययन में उपयुक्त - यह वहाँ के लिए भी उपयुक्त है जहाँ व्यक्तिगत अध्ययनों से सह सम्बन्ध ज्ञात करना है । इनमें पद मूल्यों के निरपेक्ष मान का उतना महत्व नहीं जितना उनके सापेक्ष या तुलनात्मक मानों का है ।

(v) (v) संख्याएँ बहुत अधिक नहीं - यह रीति वहाँ सरलतापूर्वक अपनायी जा सकती है जहाँ पदों की अधिक से अधिक संख्या 25 या 30 हो । पदों की संख्या बहुत अधिक होने पर इसका प्रयोग कठिन हो जाता है ।

16.5 शब्दावली

(i) विक्षेप चित्र - (scatter diagram)

(ii) सह सम्बन्ध रेखाचित्र - correlation graph

(iii) संभाव्य विभ्रम - probable error

(iv) रेखीय और वक्ररेखीय सह सम्बन्ध - linear and curvilinear correlation

(v) कोटिक्रम सह सम्बन्ध - rank correlation

(vi) साधारण, आशिक व बहुमुखी सह सम्बन्ध - simple , partial and multiple correlation

(vii) सहविचरण - covariance

(viii) कारण और प्रभाव सम्बन्ध - causes and effect relationship

(ix) सह सम्बन्ध गुणांक - coefficient of correlation

(x) धनात्मक व ऋणात्मक सह सम्बन्ध - positive and negative correlation

(xi) निर्वचन - significant

(xii) निरर्थक सह सम्बन्ध - nonsense correlation

(xiii) प्रत्यक्ष सम्बन्ध - direct relationship

(xiv) परस्पर प्रतिक्रिया - mutual relationship

16.6 अभ्यास प्रश्न

(1) सह सम्बन्ध का क्या अर्थ है? धनात्मक व ऋणात्मक सह सम्बन्ध में' अन्तर स्पष्ट कीजिए । केवल विक्षेप चित्रों की सहायता से आशिक, ऋणात्मक व पूर्ण धनात्मक सह सम्बन्ध प्रदर्शित कीजिए ।

(2) सह सम्बन्ध का अर्थ व महत्व बताइए । क्या यह सदैव कारण और प्रभाव के सम्बन्ध को दर्शाता है? इसके निर्वचन में हमें कौन सी सावधानियाँ बरतनी चाहिए?

(3) सह सम्बन्ध ज्ञात करने की विभिन्न विधियाँ कौन सी है?

(4) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए :

(i) रेखीय और वक्र रेखीय सह सम्बन्ध

(ii) कोटि या श्रेणी क्रम रीति

(iii) विक्षेप चित्र

(iv) साधारण व बहुमुखी सह सम्बन्ध

(v) संभाव्य विभ्रय

(5) पाँच वस्तुओं की लम्बाई तथा भार निम्न प्रकार है, इनमें सह सम्बन्ध ज्ञात कीजिए

लम्बाई (ईंच) 3 4 6 7 10

भार (किग्रा.). 9 11 14 15 16

(उत्तर - r = +.94)

(6) 10 छात्रों के गणित तथा सांख्यिकी में प्राप्त अंक निम्न है । सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात कीजिए

गणित	40	65	60	25	85	35	45	70	80	55
सांख्यिकी	30	85	65	35	90	35	55	75	75	45

(उत्तर r = 90. +)

(7) निम्न समंकों से पिता और पुत्र की ऊँचाई के बीच सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात कीजिए :

पिता की ऊँचाई : 63 63 67 64 68 62 70 66 68 67 69 71

(इंच में)

पुत्र की ऊँचाई : 68 66 68 65 69 66 68 65 71 67 68 70

(ईंच में)

(8) निम्न आकड़ों से क्रमान्तर सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात कीजिए :

x श्रेणी :	48	33	40	9	16	16	65	24	16	57
y श्रेणी :	13	13	24	6	15	4	20	9	6	19

(उत्तर -P = +.73)

इकाई- 17

अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि

इकाई की संरचना

17.1 प्रस्तावना

17.2 अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि की परिभाषा

17.3 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताएँ

17.4 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की इकाइयाँ

17.5 अन्तवस्तु विश्लेषण की श्रेणियाँ

17.6 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के तथ्यों के स्त्रोत

17.7 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के चरण

17.8 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकार

17.9 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उदाहरण

17.10 अन्तर्वस्तु विश्लेषण का महत्व

17.11 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की सीमाएँ

17.12 अभ्यास प्रश्न

17.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

17.1 प्रस्तावना

यह सर्व विदित है कि भौतिक घटनाओं की तुलना में सामाजिक घटनाएँ अधिक जटिल, परिवर्तनशील, अमूर्त तथा गुणात्मक होती हैं । इसी कारण से सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए किसी निष्कर्ष पर आना या सिद्धान्त प्रतिपादित करना कठिन होता है । अन्तर्वस्तु विश्लेषण एक प्रविधि के रूप में इस बाधा को दूर कर गुणात्मक तथ्यों का परिमाणात्मक एवं वस्तुनिष्ठ वर्णन संभव बनाती है ।

अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि का प्रयोग सर्वप्रथम मेलकाम विली ने 1928 व वुडलेण्ड ने व 930 में समाचार पत्रों की भाषा के विश्लेषण के अपने अध्ययन में किया था । प्रारंभिक दौर में इस प्रविधि का उपयोग सामाजिक वैज्ञानिकों के अपितु समाचार पत्रों के कार्यकर्ताओं के द्वारा, घरेलू मामलों, राजनीति, श्रम, अपराध, विवाह-विच्छेद आदि विषयों से सम्बन्धित जो खबरें समाचार पत्रों में छपती थी, उनके विश्लेषण के लिए किया जता था । उनका अनुकरण करते हुए कुछ साहित्यकारों ने साहित्यिक विषयों के अध्ययन में इस शैली का प्रयोग किया । धीरे-धीरे राजनीतिशास्त्र व जनमत अध्ययनों में भी इस प्रविधि का प्रयोग होने लगा । हैराल्ड लासवैल ने प्रचार व जनमत से सम्बन्धित अपने अध्ययनों में अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि को और भी विकसित करने का प्रयास किया । द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् इस प्रविधि को शोधकर्त्ता कम प्रयोग में लाने लगे थे । अब फिर से इसका प्रयोग बढ़ रहा है एवं संगीत,

शिक्षा, साहित्य, रेडियो कार्यक्रम, समाचार पत्र आदि के अन्तर्वस्तुओं के अध्ययन में यह प्रविधि लोकप्रिय होती जा रही है ।

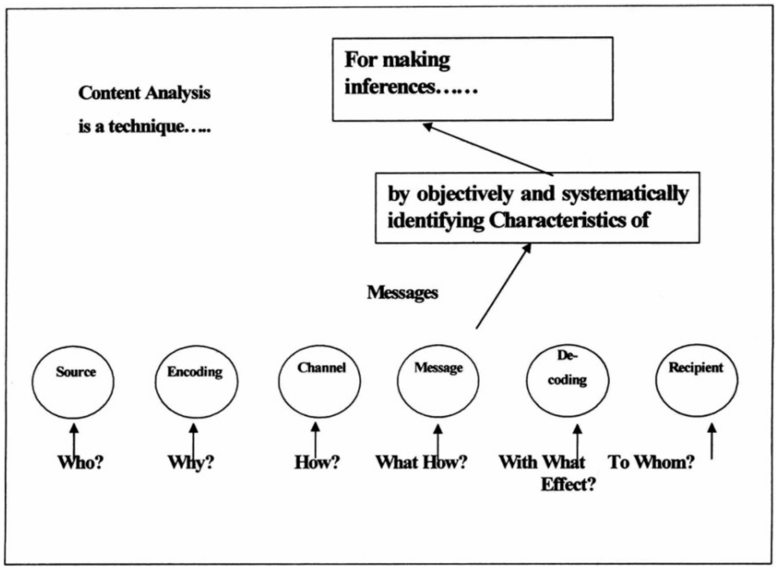

उपर्युक्त चित्र शोध के उद्देश्य से अन्तर्वस्तु के विश्लेषण की प्रक्रिया को समझाने का प्रयास करता है । संप्रेषण की प्रक्रिया प्रेषक व सूचना प्राप्तकर्ता के बीच में होती है । अन्तर्वस्तु विश्लेषण संप्रेषण के प्रगट अन्तर्वस्तु का वस्तुनिष्ठ, क्रमबद्ध तथा परिमाणात्मक वर्णन के लिए अपनाई जाने वाली प्रविधि है । निम्नांकित सारणी के उदाहरण से हम इस प्रक्रिया को बेहतर समझ सकते है ।

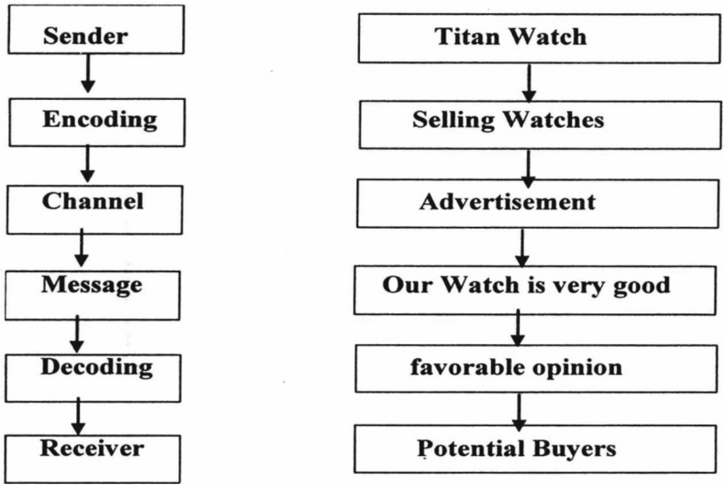

इस उदाहरण में टाटा कम्पनी का उद्देश्य अपनी टाईटन घडियों को बेचना है जिसके लिए वे विज्ञानों का उपयोग करते है । ये विज्ञापन टाइटन घड़ी की वांछनीय छवि प्रस्तुत करते हैं ताकि भावी उपभोक्ता आकृष्ट हो सके । उपभोक्ता के बाजार व्यवहार का अध्ययन करने वाले शोधकर्ता को उत्पादों को बेचने के लिए काम में लिये गये विज्ञापनों का भी विश्लेषण करना होगा ।

17.2 परिभाषा

अन्तर्वस्तु विश्लेषण एक ऐसी प्रविधि है जो कि दस्तावेज, किताबें, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं एवं लिखित सामग्री के अन्य प्रकार की अन्तर्वस्तु का गुणात्मक एवं / अथवा परिमाणात्मक विश्लेषण करती है । बेरेल्सन (1952 482) के अनुसार, "अन्तर्वस्तु विश्लेषण संप्रेषण की अभिव्यक्त सामग्री के वस्तुनिष्ठ, व्यवस्थित तथा परिमाणात्मक वर्णन के लिए अपनाई जाने वाली एक शोध प्रविधि हैं । " यहां 'सम्प्रेषण का अर्थ उपलब्ध लिखित सामग्री या मीडिया से है व "अभिव्यक्त " शब्द का अर्थ है जो बाहर से प्रस्तुत किया जाता है । इस प्रकार इसमें निहित अर्थ शामिल नहीं है ।

ऐकहार्ट और एरमन के अनुसार गुणात्मक तकनीक के रूप में अन्तर्वस्तु विश्लेषण अधिक आत्मपरक सूचना की ओर निर्देशित करती है जैसे रूझान, प्रेरणा, मूल्य जबकि गुणात्मक विधि तब प्रयोग की जाती है जब कि समय की बारम्बारता या घटना की अवधि का निर्धारण करना हो ।

पी.वी. यंग (1960) के शब्दों में, "अन्तर्वस्तु विश्लेषण साक्षात्कारों, प्रश्नावलियों, अनुसूचियों तथा अन्य लिखित या मौखिक भाषागत अभिव्यक्तियों (linguistic expression) द्वारा प्राप्त शोध तथ्यों के अन्तर्वस्तु का ऋमबद्ध, वस्तुनिष्ठ तथा परिमाणात्मक वर्णन के लिए अपनाई जाने वाली एक शोध प्रविधि है । "

लिण्डजे गार्डनर (1975) के अनुसार "अन्तर्वस्तु विश्लेषण सम्प्रेषण की विशिष्ट विशेषताओं को वस्तुपरकता से पहचानने और व्यवस्थित ढंग से अनुमान लगाने की तकनीक है । " स्टार प्लस पर प्रसारित होने वाले एकता कपूर के धारावाहिक जैसे 'क्योंकि सास भी कभी बहू थी, " कहानी घर-घर की' आदि का अन्तर्वस्तु विश्लेषण भी किया जा सकता है । शोधकर्ता रील की दुनिया में महिलाओं का चित्रण व असली दुनिया की महिलाओं का उस चित्रण की प्रतिक्रिया का अध्ययन कर सकते हैं । क्या महिलाओं को अभिनीत भूमिका व अपनी भूमिका में साम्यता नजर आती है । क्या यह चित्रण उन्हें नये व्यवहार प्रतिमान अपनाने के लिए प्रेरित करता है? दर्शक निरन्तर बदलती कहानी के सम्बन्ध में क्या प्रतिक्रिया करते हैं? इन सब प्रश्नों के जवाब अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रविधि द्वारा प्राप्त किये जा सकते हैं ।

17.3 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताएँ

1. इस तकनीक का सम्बन्ध लिखित अथवा मौखिक सम्प्रेषण अथवा भाषागत अभिव्यक्तियों द्वारा प्राप्त तथ्यों की अन्तर्वस्तु से होता है ।
2. **प्रगट अन्तर्वस्तु का अध्ययन**: अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के रूप में सिर्फ प्रगट अन्तर्वस्तु का ही अध्ययन करती है । अप्रगट अन्तर्वस्तु को इसमें शामिल नहीं किया जाता है । इसलिए अध्ययन करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक हो जाता हैं कि सम्प्रेषण में प्रखर रूप से उपस्थित सामग्री पर ही जोर दिया जाए ।
3. **वस्तुनिष्ठ एवं व्यवस्थित अध्ययन**: इस प्रविधि का उद्देश्य अन्तर्वस्तु का वस्तुनिष्ठ तथा क्रमबद्ध वर्णन प्रस्तुत करना होता है । वस्तुनिष्ठता का तात्पर्य निर्मित नियमों के आधार

पर विश्लेषण करना जिससे दो या अधिक शोधकर्ता समान दस्तावेजों से समान निष्कर्ष निकाल सकें।

4. **द्वैतीयक तथ्यों के विश्लेषण की प्रविधि** : अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि द्वारा श्रेत्रीय रिपोर्ट, समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं में छपने वाले लेख, पत्र, डायरी जैसी द्वैतीयक सामग्री का अध्ययन किया जाता है । इस प्रविधि द्वारा द्वैतीयक स्त्रोतों द्वारा प्राप्त सामग्री की अन्तर्वस्तु का संकेतक (कोडिंग), सारणीयन एवं विश्लेषण किया जाता है । उदाहरण के तौर पर हम छात्रों के क्षेत्रीय अध्ययन के प्रतिवेदनों का विश्लेषण यह देखने के लिए कर सकते है कि क्या कुछ विशिष्ट छात्रों कों सामाजिक कार्य में अन्य की अपेक्षा अधिक ज्ञान है?
5. **तथ्यों का परिमाणन :** परिमाणन से तात्पर्य है कि अध्ययनरत सामग्री के सभी गुणों को गिना जाना चाहिए । शोधकर्ता किसी भी सामग्री का अध्ययन करते समय अपने आप को सिर्फ गिनती तक सीमित कर लेता है । अध्ययन करते वक्त विभिन्न समाचार पत्रों, पत्रिकाओं एवं सम्प्रेषण के अन्य तरीकों में अन्तर्वस्तु की आवृतियों की गिनती करना व उनकी विश्वसनीयता की तुलना करना आवश्यक है । कप्लन एण्ड गोल्डसन जैसे "मात्रात्मक" शब्द को "संख्यात्मक" के समान मानते हैं अर्थात सामग्री को सूक्ष्म संख्यात्मक अर्थो में वर्गीकृत करना । इसका अर्थ हुआ कि निष्कर्ष संख्यात्मक शब्दों में निकाले जाने चाहिए जैसे जानकारी '60 प्रतिशत लोग या 100 में से 60 लोगों की यह राय थी' के रूप में बताई जानी चाहिए न कि इस प्रकार के कथन से कि 'आधे से अधिक लोगों की यह राय थी ।
6. **संप्रेषण के अध्ययन के लिए उपयुक्त :** अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि संप्रेषण के अध्ययन के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है । यह संप्रेषण शोध के मूल प्रश्न- ' 'कौन किसको, क्या, क्यों, कैसे व किस प्रभाव से कहता है ' का जवाब देता है ।
7. **.वैकल्पिक प्रविधि प्रयोग में आने की स्थिति में प्रयुक्त** : अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि का प्रयोग तब किया जाता हैं जब अन्य प्रविधियों जैसे प्रश्नावली आदि द्वारा तथ्य संकलन संभव नहीं है । अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविघि का प्रयोग उन स्थितियों में किया जा सकता है जब उत्तरदाता से सम्पर्क साधना कठिन हो या वे सहयोग नहीं देना चाहते हों, त्वरित निष्कर्ष निकालने की आवश्यकता या श्रेत्रीय अध्ययन के लिए संसाधनों की कमी हो ।
8. **तथ्यों में कटौती.** अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि का उपयोग बडी मात्रा के तथ्यों को न्यून स्तर पर प्रदर्शित करने के लिए किया जाता है । तथ्यों में कटौती अर्थपूर्ण निष्कर्ष निकालने में सहायक होती है ।

17.4 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की इकाइयाँ

अन्तर्वस्तु विश्लेषण का सबसे महत्वपूर्ण अंश है शोध तथ्यों के अन्तर्वस्तु की इकाइयों का चुनाव । विश्लेषण की इकाई क्या होनी चाहिए? क्या विश्लेषण की इकाई शब्द, वाक्य, अनुच्छेद, अध्याय या सम्पूर्ण पुस्तक हो? विश्लेषण की कुछ इकाईयाँ निम्नांकित हैं

1. **शब्द.** अध्ययन किये जाने वाले भाषण, लेख, सम्पादकीय या अन्य लिखित अथवा मौखिक सामग्री में कुछ विशेष शब्दों या प्रमुख प्रतीकों (key symbols) की आवृत्ति कितनी बार हुई है के आधार पर महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं । लैसवेल ने "वर्ल्ड अटेंशन सर्दे" में स्वतंत्रता, स्वाधीनता, संवैधानिक सरकार, फासिज्म राष्ट्रीय समाजवाद आदि शब्दों को अन्तर्वस्तु विश्लेषण के लिये चुना था । फिर उन्होंने फ्रांस में प्रचार हेतु दिये चुनाव भाषणों का इन शब्दों के आधार पर विश्लेषण किया । समाचार पत्रों में कितना व कौन सा विषय कम या ज्यादा पढ़ा जा रहा है इस सम्बन्ध में समाज वैज्ञानिक शब्दों को ही इकाई मानकर अध्ययन करते हैं ।
2. **वाक्य व अनुच्छेद :** अन्तर्वस्तु विश्लेषण में वाक्य या अनुच्छेद को भी अध्ययन की इकाई के रूप में चुना जा सकता है । वाक्य या अनुच्छेद शब्दों का ही एक समूह होता है जो कि एक निश्चित विचार प्रतिमान को प्रस्तुत करता है ।

3. **पात्र :** कहानियों, नाटक, उपन्यास, सिनेमा, टेलीविजन के फीचर आदि में पात्रों को अन्तर्वस्तु विश्लेषण की इकाइयाँ माना जा सकता है । साहित्यकार पात्रों को अध्ययन वस्तु की इकाई मानकर कई शोध करते है ।
4. **मद :** अन्तर्वस्तु विश्लेषण के लिए चुनी जानी वाली इकाइयों में 'मद' काफी लोकप्रिय है । यह मद एक पुस्तक, एक पत्रिका, एक लेख, एक कहानी या उपन्यास, एक भाषण, एक रेडिया प्रोग्राम, एक सम्पादकीय, समाचार का एक मद, प्रचार में व्यवहार किये जाने वाली एक बात या मद इत्यादि हो सकता है ।
5. **स्थान व समय का माप.** समाचार पत्र व पत्रिकाओं में विभिन्न विषयों के लिये कितना स्थान (कॉलम इंच) निर्धारित किया जाता है; रेडियो प्रोग्राम के लिए अलग-अलग कितना समय निर्धारित है, इनके माप को अन्तर्वस्तु विश्लेषण की इकाई माना जा सकता है । टेलीविजन के क्षेत्र में निजी पार्टियो, रेडियों पर एफएम चैनलों के पदापर्ण के पश्चात मनोरजन ने सामाजिक संदेशों को लोकप्रियता में पीछे छोड दिया है । इन साधनों पर प्राइम समय में सामाजिक सरोकारों के बजाय मनोरंजन के कार्यक्रम दिखाये जाते है ।

17.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की श्रेणियाँ

केवल इकाइयों के चुन लेने मात्र से ही अनत्र्वस्तु विश्लेषण के लिए आवश्यक तथ्य प्राप्त नहीं होते , जब तब इन इकाइयों को कुछ निश्चित श्रेणियों में विभाजित न कर लिया जाए । इस प्रकार के वर्गीकरण के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं ।

1. **विषय वस्तु** सारतत्व एवं उसके स्वरूप में अन्तर के आधार पर वर्गीकरण ।
2. **स्तर भेद** नैतिक व अनैतिक, बलशाली व दुर्बल, समाज के अनुकूल या समाज विरोधी ।
3. **मूल्य भेद** धन सम्बन्धी मूल्य, प्रेम सम्बन्धी मूल्य, जीवन सम्बन्धी मूल्य या यौन सम्बन्धी मूल्य आदि ।
4. **व्यक्तित्व भेद** अहम वादी व परार्थवादी व्यक्तित्व, अन्तर्मुखी व बहिर्मुखी व्यक्तित्व आदि ।

5. **सामग्री का स्त्रोत** साहित्यकारों की रचना, राजनैतिक दलों के चुनावी घोषणा पत्र, भाषण इत्यादि ।
6. **पात्र** एक ऐसा व्यक्ति है जो किन्हीं क्रियाओं को करने का प्रतिनिधित्व करता है जैसे मुख्य पात्र व सहायक पात्र, नायक व खलनायक, नायिका व सहनायिका आदि ।
7. **कथनों के भेद** प्रत्यक्ष कथन व अप्रत्यक्ष कथन, सकारात्मक कथन व नकारात्मक कथन, तथ्य कथन व अभिज्ञान कथन ।
8. **विपरीत श्रेणियाँ.** सुखवाद व दुःखवाद, लौकिक व परलौकिक सकरात्मक व नकरात्मक, आध्यात्मवादी व भौतिकवादी संस्कृति ।
9. **वर्ग भेद** किन वर्गों की ओर संप्रेषण उन्मुख है. श्रमिक, छात्र, प्रशासक, राजनैतिक दल, पूंजीपति आदि
10. **कहानियों का वर्गीकरण :** प्रेम कहानी, शिकार कहानी, सत्य कथा, यात्रा कहानी, लोक कथा, हास्य कथा आदि ।

17.6 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के लिए आधार सामग्री के स्त्रोत

अन्तर्वस्तु विश्लेषण अधिकतर लिखित सामग्री से किया जाता है अत: आधार सामग्री संग्रह के पाँच प्रमुख स्त्रोत कहे जाते है ।

1. **मुद्रित सामग्री जैसे समाचार पत्र :** समाचार पत्र लिखित शब्दों के विस्तृत रूप से प्राप्त स्त्रोत होते हैं । वे न केवल राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय, राज्य स्तर की या स्थानीय घटनाएँ छापत हैं बल्कि सामाजिक राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मामलों में भी रूचि लेते हैं । ये बुद्धिजीवियों, विशेषज्ञों एवं जनसाधारण की राय प्रस्तुत करते हैं । इस प्रकार समाचार पत्र जानकारियों का भण्डार प्रदान करते हैं ।
2. **पुस्तकें व पत्रिकाएँ** पुस्तकालय में उपलब्ध पुस्तकों, पत्रिकाओं व अभिलेखों के विभिन्न संग्रह किसी भी साधारण से जटिल या पुराने से वर्तमान के किसी भी मामले के परीक्षण में उपयोग किये जा सकते हैं ।
3. **दस्तावेज.** पाण्डुलिपियाँ, यात्रा व त्त, केस फाइल्स, पत्र, डायरियाँ, आत्मकथा एवं अन्य दस्तावेज सामाजिक जीवन के पक्षों के बारे में जानकारी देते हैं । किसी विशेष समय की सामाजिक स्थितियों पर आकर्षक विचार प्रदर्शित करते हैं । फा हयान (चीनी यात्री) के यात्रा संस्मरणों का अन्तर्वस्तु विश्लेषण कर हम गुप्त वंश के समय की समाजिक जीवन का चित्रण कर सकते हैं ।
4. **फिल्म की गई सामग्री.** फिल्मों की विषयवस्तु के विश्लेषण के द्वारा विश्लेषण किये गये विषयों, समस्याओं एवं विश्वासों को ढूँढा जा सकता है । उदाहरणार्थ यौन, हिंसा, महिला अधिकार, भ्रष्टाचार, महिला सशक्तिकरण, वैवाहिक सम्बन्धों में दरार कुछ ऐसे विषय है जो कि सिनेमा में दर्शाएँ जाते हैं । टेलीविजन के विभिन्न चैनलों जैसे दूरदर्शन, स्टार न्यूज, बी.बी.सी, सीएनएन, जी न्यूज, आज तक, एन. डी.टी.वी द्वारा प्रसारित खबरों का अन्तर्वस्तु विश्लेषण कर चैनल पूर्वाग्राहों का तुलनात्मक अध्ययन संभव हो सकता हैं ।

5. **अभिलेख** अभिलेख कार्यालयों, संग्रहालयों, पुस्तकालयों, सूचना केन्द्रों से प्राप्त किये जा सकते हैं । संसद अपनी कार्यवाही व सभी भाषणों की रिकार्डिग की व्यवस्था करती है । इन रिकार्डिग के अध्ययन से हमें संसद की कार्यप्रणाली के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है । कभी कुछ अभिलेख विषय वस्तु विश्लेषण हेतु आसानी से प्राप्त नहीं होते हैं जैसे अन्तर्कार्यालीन स्म ति पत्र (मेमो), बैंक रिकार्ड, अपराधियों के वित्तीय मामलें आदि जिससे अन्तर्वस्तु विश्लेषण में बाधा उत्पन्न हो सकती है ।

17.7 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के चरण

अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण मे प्रमुख चरण निम्नवत् हैं ।

1. **विषय से सम्बन्धित तथ्यों का चुनाव** अन्तर्वस्तु विश्लेषण की सर्वप्रथम आवश्यकता, अध्ययन विषय से सम्बन्धित जिन तथ्यों के अन्तर्वस्तु का हमें विश्लेषण करना है, उन तथ्यों की होती है । चुने गये कथन उस उद्देश्य से मेल खाने चाहिए जिसकें लिए अन्तर्वस्तु विश्लेषण किया जाने वाला है । उदाहरणार्थ यदि महिलाओं की प्रस्थिति या बुर्जुग व्यक्तियों की स्थिति का अध्ययन करना है तो सम्बन्धित तथ्यों का संकलन होना चाहिए ।
2. **निर्दशन.** यदि अध्ययन किये जाने वाले तथ्यों की संख्या अधिक है तो निर्दशन प्रविधि द्वारा प्रतिनिधित्वपूर्ण इकाईयों का चुनाव किया जा सकता है । ये इकाईयाँ शब्द, वाक्य, प्रसंग, पात्र, स्थान व समय का माप कुछ भी हो सकती है । मसलन टेलीविजन पर प्रसारित धारावाहिकों का चुनाव करने के बाद सिर्फ महिला पात्रों, उसमें भी सिर्फ नायिका या खलनायिका के पात्र को अध्ययन की इकाई माना जा सकता है ।
3. **श्रेणियों का निर्धारण :** अन्तर्वस्तु विश्लेषण में सामान्य भाषा को भी श्रेणियों की भाषा में परिवर्तित किया जाता है । श्रेणियाँ विश्लेषण की परिभाषित चर होती है । श्रेणियों के निर्धारण के बाद सांख्यिकीय मापों द्वारा उनके आपसी सम्बन्ध व विस्तार की मात्रा का पता लगाया जाता है ।
4. **श्रेणियों का परीक्षण :** अन्तर्वस्तु विश्लेषण पूर्णतया वस्तुनिष्ठ हो इसके लिए आवश्यक है कि हम इस बात का परीक्षण कर लें कि जिन श्रेणियों का निर्धारण हमने किया है वे वैज्ञानिक संदर्भ में विश्वसनीय एवं सार्थक हैं भी या नहीं । श्रेणियाँ प्राकल्पना निर्माण के समय इस तरह से बनाई जानी चाहिए कि उनका सक्रियात्मकीरण (operationalization) किया जा सकें ।
5. **अध्ययन की रूपरेखा तैयार करना :** उपरोक्त सभी चीजें निश्चित होने के बाद अध्ययन की एक रूपरेखा तैयार की जाती है जिससे यह निश्चित हो सके कि किन विषयों पर ध्यान केन्द्रित करना है । इससे अध्ययन कार्य का फैलाव इधर उधर नहीं होगा ।
6. **संकेतन. (coding)** का अर्थ श्रेणियों को प्रतीक चिन्ह, अंक या अक्षर प्रदान करना है । इससे तथ्य सम्पादन एव सम्प्रेषण सरल जाता । संकेतन दोनों मानवीय एवम कम्प्युटर द्वारा किए जा सकते है । कोड डिजाइन का पूर्व परीक्षण किया जाना चाहिये ।
7. **विश्लेषणात्मक व्याख्या :** अन्तर्वस्तु की इकाईयों का उचित व परिमाणात्मक माप कर लेने के पश्चात उनकी विश्लेषणात्मक व्याख्या करनी चाहिए । परिमाणात्मक माप कर लेने से

तथ्यों का उचित वर्गीकरण व सारणीयन संभव होता है । तथ्यों के बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों का काई स्कैयर, साहचर्य गुणांक, फैक्टर विश्लेषण (factor analysis) जैसे साख्यिकीय मापों के द्वारा परीक्षण किया जा सकता है ।

8. **प्रतिवेदन लेखन :** अन्तर्वस्तु की विश्लेषणात्मक व्याख्या कर लेने के बाद सम्पूर्ण अध्ययन के सम्बन्ध में एक क्रमबद्ध प्रतिवेदन तैयार किया जाता है ताकि विश्लेषणों एवं निष्कर्ष को वैज्ञानिक विवरण व व्याख्या, सारणी, ग्राफ, चित्र आदि के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकें ।

17.8 अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के प्रकार

सणडर्स एंड पिनेह (1983:190-197) ने पाँच प्रकार के अन्तर्वस्तु विश्लेषण बताए है - (1) शब्द गणना विश्लेषण, (2) अवधारणात्मक विश्लेषण, (3) शब्दार्थ (semantic) विश्लेषण, (4) मूल्यांकनात्मक अभिकथन विश्लेषण, (5) संदर्भात्मक विश्लेषण ।

1. **शब्द गणना विश्लेषण (word counting analysis) :** इसमें विभिन्न मूल लेखों में से कुछ प्रमुख शब्दों के प्रयोग की गणना होती है । उदाहरणार्थ, अभिजात समाचार पत्रों के एक प्रतिदर्श में भारत, अमेरिका, इंग्लैण्ड, कनाडा और फ्रान्स-पाँच देशों में लोकतन्त्रीकरण की दशा को नापने में लोकतन्त्र और सर्वाधिकारवाद (Totallitarianism) शब्दों को गिना जा सकता है । इसका उद्देश्य यह पता लगाना हो सकता है कि अभिजात समाचार पत्रों द्वारा दर्शाए गए राष्ट्रों के बीच कोई अधिक अन्तर तो नही है ।
2. **अवधारणात्मक विश्लेषण (Concept Analysis) :** यह अवधारणात्मक शब्दों के समूह में एकत्रित किये शब्दो का विश्लेषण होता है जो अनुसंधान प्राक्कल्पना में चरों को बनाते हैं । उदाहरण के लिए, विचलन (Deviance) के विचार से जुड़े अवधारणात्मक समूह, अपराध, रूग्णता, भ्रष्टाचार, मारपीट, बाल अपराध, यौन उत्पीडन, गबन आदि सभी शब्द 'विचलन' से जोड़े जा सकते हैं । अवधारणात्मक विश्लेषण का प्रयोग करते हुए एक अनुसंधानकर्ता एक क्षेत्र को दूसरे क्षेत्र के साथ जोड़ने के प्रयास में लगे अखबारों के लेखों के विश्लेषण के द्वारा समाज के विभिन्न क्षेत्रों में सार्वजनिक संस्थाओं के बीच सम्बन्ध खोजना चाहता है ।
3. **शब्दार्थ विश्लेषण (Semantic) :** इसमें अनुसंधानकर्ता न केवल प्रयुक्ता शब्दों के प्रकार में रूचि रखेगा बल्कि उनकी वजन की गहनता को नापने में भी, जैसे कमजोर और शक्तिशाली शब्दों का प्रयोग, सकारात्मक और नकारात्मक शब्द आदि । सकारात्मक और शक्तिशाली शब्दों के लिए (+) अंको का प्रयोग होगा और नकारात्मक व कमजोर शब्दों के लिए (-) अंकों का प्रयोग होगा । उदाहरणार्थ, प्रेम (+2), नापसन्दगी (-1) आदि । इन सकारात्मक व नकारात्मक व अंको को गिनकर विषय-वस्तु विश्लेषण के द्वारा समुदाय की भावनाओं का आकलन किया जा सकता है ।
4. **मूल्यांकनात्मक अभिकथन विश्लेषण :** मान ले अखबारों के लेखों का अन्तर्वस्तु विश्लेषण द्वारा श्रम आन्दोलन के दौरान श्रमिकों और उद्यमियों के बीच सम्बन्धों का विश्लेषण किया

जाना है । शब्दों के प्रयोग के द्वारा एक ने दूसरे से कैसा व्यवहार किया, इसका पता लगाकर उन दशाओं को ठीक-ठीक बताना सम्भव हो जाता है जिनके कारण हड़ताल हुई ।

5. **सन्दर्भगत विश्लेषण :** यह ज्ञात शब्दों व अवधारणाओं के विश्लेषण के आधार पर भविष्य के मौखिक व्यवहार का पूर्वानुमान करने में प्रयोग होता है, जैसे, लड़ाकू गोलाबारी, बमबारी, विस्फोट आदि शब्दों के प्रयोग से ज्ञात मौखिक व्यवहार के लिए पैमाने स्थापित किए जा सकते हैं । सरान्तकौस (1998 :283) ने पाँच प्रकार के विषय-वस्तु विश्लेषण बताए हैं-

   (i) **वर्णनात्मक विश्लेषण -** यहाँ विश्लेषण का अर्थ है अनुसंधान प्रश्न के कुछ कारकों की बारम्बरता को गिनना और अन्य कारकों से उसकी तुलना करना ।

   (ii) **संवर्गीय विश्लेषण-** जहाँ विश्लेषण में सामान्य, क्रमानुसार व अन्तराल आधार सामग्री का निर्माण करके निश्चित वर्गो के माध्यम से दस्तावेजों का अध्ययन करना शामिल है जिनको बाद में सांख्यिकी के रूप में तैयार किया जाता है ।

   (iii) **गहनता विश्लेषण-** जिसे सैद्वान्तिक कसौटी पर आधारित बहु-चरणीय पैमाने के द्वारा तैयार किया जता है ।

   (iv) **आकस्मिकता विश्लेषण -** यह मूल रूप से शब्दार्थ विश्लेषण होता है जो कि आमतौर पर लेखक के व्यक्तित्व के विषय में मूल पाठ के अनुमान निकालने के लिए प्रयोग किया जाता हैं

   (v) **संदर्भात्मक विश्लेषण -** इस में अवधारणाओं के साथ-साथ आने के क्रम का परीक्षण भी होता है । व्यवस्थित रूप से आने को आकस्मिक नहीं माना जाता बल्कि यह लेखक के विचार प्रारूप को दर्शाता है ।

17.9 अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के कुछ उदाहरण

नोयल जिस्ट (1953) में भारतीय समाचार पत्रों में छपे विवाह विज्ञापनों का अन्तर्वस्तु विश्लेषणात्मक व्याख्या कर भारत में होने वाले सामाजिक आर्थिक परिवर्तनो को समझने का प्रयास किया । लैसवेल ने संप्रेषण भेजने वालों के अभिप्राय के बारें में अर्न्तवस्तु विश्लेषण कर अभिप्रायों का सामान्यीकरण किया । बी.बीसी., लंदन द्वारा प्रसारित कार्यक्रमों के अध्ययन द्वारा बीबीसी. की निहित प्रचार तकनीक एवं ब्रिटिश अभिजात्य वर्ग की इच्छा का अध्ययन करना संभव है । टेलीविजन पर दिखाये जाने वाले विज्ञापनों का अर्न्तवस्तु विश्लेषण कर विज्ञापन निर्माताओं के मस्तिष्क में भावी उपभोक्ताओं की विज्ञापित वस्तु की छवि का अध्ययन कर सकते है । मेकलीलैड (1961) ने प्रक्षेपी प्रविधियों द्वारा (tat) भिन्न जनसंख्याओं में उनकी निपुणता (achievemnt) की आवश्यकता का अध्ययन किया । उत्तरदाताओं के कथनों के आधार पर उनकी निपुणता (nAch) के स्कोर की गणना की गई ।

सीमा परवेज (1986) ने 36 सैकेण्डरी विद्‌यालयों में पाठ्य पुस्तकों (20 अग्रेंजी व 16 उर्दू में कथा साहित्य का मैकलीलैण्ड श्रेणियों के संदर्भ में अन्तर्वस्तु विश्लेषण किया । उसने पाया कि उर्दू पाठ्यपुस्तकों में संबद्धता (Affiliation)ए के बाद शक्ति (Power) की अवधारणा का प्रभुत्व था जबकि अंग्रेजी पाठ्यपुस्तकों में शक्ति के बाद सम्बद्धता की अवधारणा का प्रभुत्व पाया गया ।

नाकामूरा (1968) ने अपने अध्ययन में पाया कि यूरोप की तुलना मे भारत में अमूर्त संइग़ का प्रयोग अधिक पाया जाता है । यह सार्वभौमिकता पर बल देता है ।

17.10 अन्तर्वस्तु विश्लेषण का महत्व

सामाजिक अनुसंधान व शोध के क्षेत्र में अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि का अपना अनूठा महत्व है। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के महत्व निम्नांकित है :-

1. गुणात्मक विषयों का परिमाणात्मक अध्ययन करना इस प्रविधि की सहायता से संभव होता है। चुनावी भाषण, सम्पादकीय, कहानियां, किताबें आदि सभी गुणात्मक विषय है पर अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि इन गुणात्मक विषयों की प्रकृति व विशेषताओं की परिमाणात्मक व्याख्या सारणी, ग्राफ आदि के माध्यम से प्रस्तुत करता है ।
2. यह विधि पूर्णरूपेण बिना दखलअंदाजी करने वाली प्रविधि है अर्थात अध्ययन के विषय पर इसका प्रभाव नहीं पडता । यह विश्लेषण उत्तरों में पूर्वाग्रह के स्त्रोत को कम करता है जो कि अनुसंधान के लिये खतरनाक होता है ।
3. संचार के विभिन्न साधनों की प्रकृति को स्पष्ट करने में अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि अपना महत्वपूर्ण योगदान देती है । इस प्रविधि के उपयोग से हम न केवल विभिन्न संचार के साधनो की प्रकृति को समझ पाते है अपितु हमें सामाजिक जीवन पर पडने वाले इन साधनो के प्रभाव की प्रकृति व सीमा के सम्बन्ध में भी वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त होता है ।
4. संचार के अन्तर्राष्ट्रीय आधारो की तुलनात्मक अध्ययन भी इस पद्धति की सहायता से संभव होती है । प्रत्येक देश के संचार साधनों की अन्तर्वस्तु एक समान नही होती उनका विस्तार अन्तर्राष्ट्रीय हो सकता है । इस कारण उनका प्रभाव भी देश की सीमा पार कर जाता है ।
5. यह प्रविधि जनमत के अध्ययन के लिये भी बहुत उपयोगी है । समाचार पत्रों का अन्तर्वस्तु विश्लेषण करके कई शोधकर्ता जनमत का रूख का पता लगाने में सफल हुए है ।
6. व्यक्तित्व के अध्ययन में भी यह प्रविधि सहायक सिद्ध हुई है । एक व्यक्ति विशेष के द्वारा दिये गये भाषण अथवा उसके द्वारा लिखी गई किताब, लेख आदि का अन्तर्वस्तु विश्लेषण करने पर व्यक्ति के व्यक्तित्व के अन्तर्निहित विचार, आदर्श, मूल्य, मनोवेग, उद्वेग, स्थायी भाव आदि स्पष्ट हो जाते है । गांधीजी की रचनाओं के अध्ययन से उनके व्यक्तित्व के गुण जैसे सच्चाई, कठिन परिश्रम, अनुशासन आदि परिलक्षित होते है । इन्ही विलक्षणताओं के आधार पर व्यक्तित्वों का श्रेणी विभाजन संभव होता है ।
7. समूह या समुदाय के मनोवैज्ञानिक झुकाव का अध्ययन भी इस प्रविाधि के द्वारा संभव होता है । समाचार पत्र व पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख, कहानी, रेडियो प्रोग्राम, विज्ञापन आदि विषयों के अन्तर्वस्तु विश्लेषण करने पर एक समूह का मनोवैज्ञानिक झुकाव का स्वत: ही पता चल जाता है । इससे प्रशासकों, समाज सुधारकों, योजना निर्माताओं तथा देश के नेताओं को मदद मिलती है ।
8. अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि पारदर्शी शोध विधि है । इस विधि में संकेतन व निदर्शन प्रणाली इस प्रकार संयोजित की जा सकती है कि अध्ययन का दुबारा अध्ययन संभव हो ।

इसी पारदर्शिता के कारण अन्तर्वस्तु विश्लेषण को विश्लेषण की वस्तुनिष्ठ प्रविधि कहा जाता है ।

9. अन्तर्वस्तु विश्लेषण उन सामाजिक समूहो के बारें में भी सूचना एकत्रित कर सकता है जिन तक पहुंच संभव नहीं है । उदाहरण के तौर पर बडे उद्योगपति, फिल्मस्टार, नेता जैसे अभिजात्य वर्ग के बारे में जानकारी 'हु ज हू (who’s who), पत्रिकाएँ, रिपोर्ट, टेलीविजन कार्यक्रम के अन्तर्वस्तु विश्लेषण के द्वारा सम्भव होती है ।
10. अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि लचीली पद्धति है इसका प्रयोग कई असंरचित सूचनाओं के लिये भी किया जा सकता है ।

17.11 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की सीमाएँ

उपरोक्त महत्व होते हुए भी अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि की अपनी कुछ सीमाएँ है जो इसके प्रभावशाली उपयोग को सीमित करती है :

1. अध्ययन विषय स्वंय गुणात्मक होने के कारण इसमें परिमाणात्मक परिणामों को निकालना स्वंय में एक समस्या बन जाती हैं ।
2. अध्ययन विषयों की प्रकृति गुणात्मक होने के कारण इनसे सम्बन्धित तथ्यों की विश्वसनीयता की जाँच बहुत काठिन होती है । इसकी विश्वसनीयता दस्तावेजो की विश्वसनीयता पर टिकी होती है । शोधकर्ता को दस्तावेजो का अन्तर्वस्तु विश्लेषण करते वक्त तीन बातों का ख्याल रखना चाहिये । ये तीन बातें हैं तथ्यों की प्रमाणिकता, विश्वसनीयता एवं प्रतिनिधत्वपूर्णता ।
3. चूँकि अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि नियोजित विधि है इसमें क्षेत्र अनुसंधान के नियोजनहीनता के गुण एवं निरन्तरता नही पाये जाते ।
4. यदि अनुसंधानकर्ता को कुछ आवश्यक दस्तावेज उपलब्ध न हो तो यह निष्कर्षो को प्रभावित कर सकता है ।
5. यह प्रविधि क्षेत्रीय अनुसंधान में प्रयुक्त नहीं की जा सकती ।
6. यह संकेतन पूर्वाग्रहों से प्रभावित हो सकती है । संकेतक सामग्री को संकेत देने के लिए सामान्य संस्कृति के दैनिक ज्ञान का प्रयोग करते है । ऐसी संकेतन नियम पुस्तिका, जो कि संकेतक की व्याख्या से प्रभावित न हो, का निर्माण बहुत मुश्किल है ।
7. अन्तर्वस्तु विश्लेषण पर सैद्धान्तिक (atheoretical) होने का आरोप भी लगता है । इस प्रविधि द्वारा मापन पर अत्यधिक महत्व देने के कारण कभी कभी सैद्धान्तिक रूप से महत्वपूर्ण सामग्री की उपेक्षा हो जाती है ।

17.12 अभ्यास प्रश्न एवं उत्तर

1. अन्तर्वस्तु विश्लेषण को परिभाषित कीजिए एवं इसकी अध्ययन की इकाइयों को बताइये?
2. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की सामग्री के स्त्रोत क्या हैं?
3. अन्तर्वस्तु विश्लेषण क्या है? अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के चरण की चर्चा कीजिए?

4. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए इस प्रविधि का शोध में महत्व पर एक लेख लिखे ।

अभ्यास प्रश्न के उत्तर

बोध प्रश्न 1 - सामग्री 1 .2 एवं 1.4 में वर्णित

बोध प्रश्न 2 - सामग्री 1.6 में वर्णित

बोध प्रश्न 3 - सामग्री 1.1, 1.2 एवं 1.7 में वर्णित

बोध प्रश्न 4 - सामग्री 1.3 एवं 1.10 में वर्णित

17.13 सन्दर्भ सूची

- Ahuja ram ,2001 research , methods ,jaipur rawat publications
- Gardener ,L and E lliot "A" 1975, the handbook of social phychology vol 2, new delhi Amerind publishing co.
- Gist Noel ,1953, Mate selection and mass communication in india , public opinion quarterly Vol.XVII
- Holsti Bereleson B ,1952, content analysis in communication research Illinois, free press
- Lasswell H.D,Lerenr D & I,de sola pool1952, the comparative study of symbols ,Stanford Stanford university paris
- Mc Clleland ,DC,a 1961, the Achieving society, Princeton ,van nostrand
- Nakamura ,1968 ways of thinking of eastern people ,Ed by PP Weiner , Hawaii ,east west press
- P V Young ,1960 scientific social survey and research , New York, prentice hall
- Sanders and pinhey ,1983 the conduct of social research, new York Rinehart and Winston
- Sarantkos,S ,1988 social research London ,Macmillian press
- Seema pervez ,1986 pakistan journal of phychological research vol. I NO 1-2 Summer

इकाई-18

विक्षेपण के माप

(Measures of dispersion)

इकाई की संरचना

18.1 उद्देश्य

18.2 प्रस्तावना

18.3 विक्षेपण का अर्थ एवं परिभाषा

18.4 विक्षेपण के आदर्श माप की विशेषताएँ

18.5 गुणात्मक आवृत्ति वितरणों के लिये विक्षेण माप

- गुणात्मक विचनशलीता का सूचकांक

18.6 परिमाणात्मक आवृत्ति वितरणों के लिये विक्षेपण मापें

- विस्तार
- चतुर्थक विचलन
- मध्यमान विचलन
- प्रसरण तथा प्रमाप विचलन

18.7 प्रमाप विचलन की व्याख्या

18.8 प्रमाप विचलन के उपयोग

- सापेक्षिम विचलनशीलता माप
- विक्षेपण मापों में सम्बन्ध

18.9 विक्षेपण माप के चयन के आधार

18.10 सारांश

18.11 सूत्र सारिणी

18.12 शब्दावली

18.13 अभ्यास प्रश्न

18.14 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

18.1 उद्देश्य

इस अध्याय को पढ्ने के उपरान्त आपको आना चाहिये :

- विक्षेपण की परिभाषा देना ।
- गुणात्मक तथा परिमाणात्मक आवृत्ति वितरणों से सम्बन्धित विक्षेपण के मापों के नाम ।
- विभिन्न समंक श्रेणियों में विक्षेपण माप सम्बन्धी मूल्यों का परिकलन ।

- विक्षेपण माप सम्बन्धी मूल्यों के आधार पर केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों की उपयुक्तता का निर्णय करना । किसी दी गयी अनुसन्धान की परिस्थिति में विक्षेपण के माप का निर्धारण कर पाना ।

18.2 प्रस्तावना

विक्षेपण, केन्द्रीय प्रवृत्ति की तरह एक वर्णनात्मक सांख्यिकीय माप है । कोई भी अनुसन्धानकर्ता केवल केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों के आधार पर समंक वितरणों का पर्याप्त विवेचन नहीं दे सकता । सिम्पसन तथा केपका के विचार में केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप शायद ही किसी समंक समूह का प्रतिनिधित्व कर पायेगा जब तक कि हमें यह ज्ञात न हो कि समंकों का बिखराव उस प्रतिनिधि मूल्य से कैसा है । यह जानने के लिये कि केन्द्रीय प्रवृत्ति का मूल्य कितना प्रतिनिधिपूर्ण है, वितरण का आगे और विवेचन आवश्यक है ।

नेसवेंगर ने भी इसी प्रकार विचार प्रकट करते हुए कहा है कि कोई दो समंक वितरण समिमित्त हो सकते है । इनके मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलक समान हो सकते है । किन्तु इन समानताओं के बावजूद भी केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप से उनकी विचलनशीलता में अधिकाधिक अन्तर देखने को मिल सकता है । इस बिन्दु को समझाने के लिये माइकल मेलेक ने पाँच समंक वितरणों का उदाहरण दिया है, जिनमें मध्यमान तथा मध्यांक के मूल्य समान है किन्तु विक्षेपण की अन्तरता है । यह पाँच वितरण निम्न प्रकार है

(अ) : 93,93,93, 93, 93

(ब) : 92,93,93,93,94

(स) : 91, 92, 93,94, 95

(द) : 89, 91, 93,95,97

(इ) : 72,83, 93,103, 113

मेलेक के अनुसार यह देखते हुए कि सभी समंक वितरणों में माध्य मूल्य समान है, कोई भी यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि सभी वितरण यदि बिल्कुल एक जैसे नहीं तो समान तो हैं ही । किन्तु वास्तव में वितरण समान नहीं है । समूह अ में सभी समंक एक जैसे है । औसत पूर्ण रूप से वितरण का प्रतिनिधि मूल्य है । केन्द्रीय मूल्य से विचनलशीलता बिल्कुल नहीं है । वितरण 'ब' और 'स' में समंकों में कुल विचलनशीलता है, किन्तु मध्यमान तथा मध्यांक के मूल्य अब भी प्रतिनिमूल्य है । किन्तु वितरण 'द' और विशेष रूप से 'इ समंकों की पारस्परिक अन्तरता तथा मध्यमान से दूरी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है ।

वास्तव में ये उदाहरण ऐसे हे, जहाँ अनुसन्धानकर्ता को केन्द्रीय प्रवृति के मूल्यों की उपयुक्तता के बारे में चिंतन करना होता है तथा विक्षेपण की अवधारणा को समझने की आवश्यकता का आभास होता है ।

18.3 विक्षेपण का अर्थ एवं परिभाषा

विक्षेपण की अवधारणा को अनेक अन्य संबंधों से भी जाना जाता है । विचलनशीलता विजातीयता तथा फैलाव या बिखराव के माप इत्यादि ऐसे शब्द है, जिनका उपयोग कभी-कभी

पर्यायवाची के रूप में किया जाता है । विक्षेपण के मापों के परिकलन का आधार केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप होने के फलस्वरूप इसे द्वितीय स्तर के माप भी कहा जाता है । वाटसन तथा मेकत ने विक्षेपण की परिभाषा करते हुए लिखा है कि किसी समकमाला के समंकों में अन्तर ही विक्षेपण है । किन्तु सिम्पसन तथा केपका के अनुसार किसी समंक श्रेणी में औसत मूल्य से समंकों के बिखराव (अन्तर) के माप को विक्षेपण कहा जाता है । यदि समंकों का बिखराव अधिक है तो औसत अपने आप में समंकमाला का एक कमजोर प्रतिनिधि होता है और यदि बिखराब का विस्तार कम है तो औसत वितरण का एक शक्तिपूर्ण प्रतिनिधि मूल्य कहलाता है।

किसी दिये गये वितरण में, विक्षेपण से सम्बन्धित तीन प्रकार की स्थितियों की सम्भावना रहती है । ये तीन स्थितियाँ निम्न प्रकार है

- **विक्षेपण का बिल्कुल न होना -** यह ऐसी स्थिति है जिसमें दिये गये चर के संवर्गो में से किसी एक संवर्ग में सभी आवृत्तियाँ (N) केन्द्रित होती है और अन्य संवर्गो में आवृत्तियाँ शून्य होती है ।
- **विक्षेपण का कम या ज्यादा अंशों में पाया जाना -** यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें N चर के विभिन्न संवर्गो में असमान रूप से वितरित होता है ।
- **अधिकतम विक्षेपण का पाया जाना -** एक ऐसी स्थिति जिसमें N सभी संवर्गो में समान रूप से वितरित होता है ।

हम एक उदाहरण के माध्यम से यही देखेंगे कि इन तीन स्थितियों में किसी वितरण का स्वरूप कैसा दिखाई देता है । मान लीजिये कि एमए. पूर्वाद्ध की कक्षा में 100 विद्यार्थी है। इन विद्यार्थियों से तीन विभिन्न अवसरों पर यह कहा जाता है कि वे लिखित में यह बतलाये कि वार्षिक परीक्षा में उनका ऐच्छिक विषय क्या होगा? उनके द्वारा प्राप्त उत्तरों की विचलनशीलता सारणी रूप से निम्न प्रकार देखने को मिली

विक्षेपण नही (NO VARIATION)

N100 =

ऐच्छिक प्रश्न पत्र	ग्रामीण समाजशास्त्र	नगरीय समाजशास्त्र	सामाजिक मानवशास्त्र	सामाजिक मनोविज्ञान
विध्यार्तियों की संख्या	100	0	0	0

कुछ विक्षेपण (SOME VARIATION)

N100 =

ऐच्छिक प्रश्न पत्र	ग्रामीण समाजशास्त्र	नगरीय समाजशास्त्र	सामाजिक मानवशास्त्र	सामाजिक मनोविज्ञान
विध्यार्तियों की संख्या	50	20	15	15

अधिकतम विक्षेपण (MAXIMUM VARIATION)

N100 =

ऐच्छिक प्रश्न पत्र	ग्रामीण समाजशास्त्र	नगरीय समाजशास्त्र	सामाजिक मानवशास्त्र	सामाजिक मनोविज्ञान
विध्यार्तियों की संख्या	25	25	25	25

उपरोक्त दिये गये वितरणों को ध्यान से देखें कि किस प्रकार आवृत्तियों के वितरण की अन्तरता विक्षेपण के विभिन्न स्थितियों का प्रतिनिधित्व करती है । यहाँ यह याद रखना आवश्यक है कि किसी वितरण में अधिकतम विक्षेपण तभी पाया जाता है जबकि सभी संवर्गो में आवृत्तियों की संख्या बराबर-बराबर होती है ।

18.4 विक्षेपण आदर्श माप की विशेषतायें

विक्षेपण के एक अच्छे माप की विशेषतायें निम्न प्रकार है :

- माप की परिभाषा लचीली न हो ।
- माप वितरण के सभी समंकों पर आधारित हो ।
- माप चरम मूल्यो से प्रभावित न होता हो ।
- माप वितरण के औसत विचलन को बतलाता हो ।
- जैसे - जैसे वितरण के समंकों में अन्तरता बढ़ती हो, वैसे-वैसे माप के विचलनशीलता की मात्रा में भी वृद्धि होती हो ।
- बीजगणितीय रूप से माप का उपयोग किया जा सकता हो ।

18.5 विक्षेपण के माप : गुणात्मक वितरण

विक्षेपण के मापों को मोटे रूप से दो भागों में बाँटा जा सकता है । प्रथम, वे माप जिनका उपयोग गुणात्मक आवृत्ति वितरणों के संक्षिप्तीकरण तथा विवेचन के लिये किया जाता है । द्वितीय, ऐसे माप जिनका उपयोग परिमाणात्मक आवृत्ति वितरणों के वर्णन के लिये जाता है । विचलन अनुपात (Variation ratio), विविधता सूचकांक (index of Diversity) तथा गुणात्मक विचलन सूचकांक (index of qualitative variation), गुणात्मक विचलनशीलता के माप है । किन्तु इनमें गुणात्मक विचलन सूचकांक ऐसा माप है जिसका उपयोग सामाजिक अनुसन्धान में अधिक रूप से होता है ।

गुणात्मक विचलन सूचकांक (index of qualitative variation)

कर्ट्ज के अनुसार गुणात्मक विचलन ऐसा माप है जो कि नामात्मक चर वितरण में अवलोकित (observed) विचलनशीलता की तुलना, वितरण में सम्भावित सर्वाधिक विचलनशीलता से करता है । अवलोकित विचलनशीलता का आधार दिये गये वितरण में इकाइयों की अन्तरता है जबकि प्रत्याशित विचलनशीलता ऐसी चरम विचलनशीलता है जो कि सैद्धांतिक रूप से सम्भव है । इस प्रकार गुणात्मक विचलन सूचकांक दिये गये वितरण में अवलोकित तथा प्रत्याशित विचलन का अनुपात है । इसका सूत्र निम्न प्रकार है.

$$IQV=\frac{\text{अवलोकित विचलन}}{\text{प्रत्यशित अधिकतम विचलन}}$$

अवलोकित विचलन वितरण के विभिन्न संवर्गो के युग्मों के गुणनफल का योग होता है जबकि अधिकतम प्रत्याशित विचलन विभिन्न संवर्गो में समान रूप से विभक्त N (वितरण में समंकों की गणना) की आवृत्तियों के युग्मों के गुणनफल का योग है ।

हम यहाँ कर्ट्ज द्वारा दिये गये एक उदाहरण को लेते है जिसमें उसने दो सेमीनारों में पंजीकृत व्यक्तियों को उनके विशेष विषय के आधार पर वर्गीकृत किन्तु है और बतलाया है कि IQV का परिकलन किस प्रकार किया जाता है ।

अवलोकित विचलन वितरण के विभिन्न संवर्गो की आवृत्तियों के युग्मों के गुणनफल का योग होता है जबकि अधिकतम प्रत्याशित विचलन विभिन्न संवर्गो में समान रूप से विभकत N (वितरण में समंकों की गणना) की आवृत्तियों के युग्मों के गुणनफल का योग है ।

हम यहाँ कर्ट्ज द्वारा दिये गये एक उदाहरण को लेते है जिसमें उसने दो सेमीनारों में पंजीकृत व्यक्तियों को उनके विशेष विषय के आधार पर वर्गीकृत किया है और बतलाया है कि IQV का परिकलन किस प्रकार किया जाता है ।

विशेष समय	सेमीनार 1	सेमीनार 2
सामाजिक कार्य	2	8
समाजशास्त्र	17	6
मनोविज्ञान	1	9
मानवशास्त्र	0	5
	N = 20	N = 28

हल : (Solution)

सेमीनार 1

$$QV = \left[\left(2\times 7\right)+(2\times 0)\right]+\left[(17\times 1)+(17+0)\right]+(1\times 0)$$

$$= 34+2+0+17+0+0=53$$

$$EV = \left[\left(5\times 5\right)+(5\times 5)\right]+\left[(5\times 5)+(5+5)\right]+(5\times 5)$$

$$= 25+25+25+25+25+25=150$$

$$IQV = \frac{53}{150} = 0.353$$

इसी प्रकार सेमीनार 2 के लिये IQV का परिकलन को जिसका उत्तर 0.983 है ।

गुणात्मक विचलन सूचकांक के दो मूल्यों की तुलना यह इंगित करती है कि दो सेमीनार के सहभागियों के वितरणता में काफी अन्तरता है । सेमीनार 1 के समूह में, सेमीनार 2 के समूह की तुलना में विचलनशीलता कम है । इसका तात्पर्य यह हे कि सेमीनार 1 के सदस्यों में समानता अधिक है, अर्थात् अधिकाधिक सदस्य किसी एक विशेष विषय से जुडे है । सेमीनार दो के समूह में हमें ऐसा देखने को नहीं मिलता क्योंकि वह अत्यधिक रूप से विजातीय है जैसा कि IQV का मूल्य दर्शाता है ।

यहाँ यह ध्यान रखें कि IQV का मूल्य सदैव 0 से 1 के अन्तर्गत होता है । शून्य का अर्थ होता है किवचलनशीलता नहीं है जबकि 1 सर्वाधिक विचलनशीलता को बतलाता है ।

IQV माप यद्यपि उपयोगी है किन्तु कभी-कभी इसको काम में लेने पर परिकलन में कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है । विशेष रूप से उस समय जबकि वितरण में समंकों की

संख्या विषय हो तथा संवर्गो (Categories) की संख्या सम । ऐसी स्थिति में N को समान रूप से संवर्गो में विभक्त करने पर संवर्ग आवृर्त्ति दशमलव संख्याएं होगी, और परिकलन प्रक्रिया में त्रुटि करने की संभावना बनी रहेगी । ऐसे अवसरों पर हम 'विक्षेपण सूचकांक' (Index of dispersion) के सूत्र को कम में ले सकते हैं जो निम्न प्रकार है

$$D = \frac{K(N2-\sum f^2)}{N^2(K-1)}$$

जहाँ

D = विक्षेपण सूचकांक

N= वितरण में समंकों की संख्या

K = वितरण में संवर्गो की संख्या

F= संवर्ग आवृति

आप चाहे IQV का उपयोग करें या D सूत्र का दोनों में परिकलन मूल्य अर्थात् उत्तर समान होगा । कर्ट्ज द्वारा दिये गये उदाहरण के लिये D सांख्यिकी का परिकलन करके देखें कि समान उत्तर मिलता है या नहीं ।

18.8 परिमाणात्मक वितरण (Quantitative Distributions)

परिमाणात्मक वितरणों में विचलनशीलता ज्ञात करने के लिये जिन विक्षेपण मापों का उपयोग किया जाता है वे क्रमश: विस्तार (Range), अन्तर-चतुर्थक विस्तार (inter Qualitive range), मध्यमान-विचलन (Mean Deviation), प्रसरण (variance), प्रमाप विचलन (Standard deviation) तथा विचरण गुणांक (Coefficient of variation) है । विस्तार तथा अन्तर-चतुर्थक विस्तार जहँ बिन्दु मध्य (between points) माप है । वहाँ मध्यमान विचलन, प्रसरण तथा प्रमाप विचलन बिन्दु सम्बन्धी (around points) माप है । बिन्दु मध्य माप हमें माप द्वारा परिभाषित दो छोर मूल्यों के मध्य अन्तर को बतलाते है । किन्तु बिन्दु-सम्बन्धी माप हमें वितरण के समंकों तथा मध्यमान के बीच अन्तर बतलाते है । सापेक्षित माप, निरपेक्ष (absolute) माप (जो कि वितरण में विचलनशीलता को मापी गयी इकाई में बतलाते है जैसे व्यक्तियों का कद सेन्टीमीटर में) के विपरीत दो या दो से अधिक वितरणों के मध्य तुलना में सहायता करते हैं चाहे वितरण के समंकों की माप इकाइयाँ अलग-अलग क्यों न हों । वास्तव में ये माप निरपेक्ष मूल्यों की तुलना करते हैं और माप के इकाइयों की ओर ध्यान नहीं देते है ।

विस्तार (Range)

विस्तार अवधारांतमक रूपसे तथा परिकलन की दृष्टि स एक सरल माप है। यह परिभासिक रूप से दिए गये वितरण के उच्चतम मूल्य तथा निम्नतम मूल्य में अन्तर को दर्शाता है । उदाहरण के लिये यदि किसी वैयक्तिक श्रेणी के सशंक 2, 12, 28, 45, 52. 80, 100 हैं तो इस वितरण का विस्तार है ।

R= 100 - 2 = 98

विस्तार सामाजिक अनुसन्धान में कोई उपयोगी माप नहीं है । इसका कारण यह है कि विस्तार वितरण के केवल दो मूल्यों पर आधारित है । और फिर इनमें से यदि कोई एक मूल्य बदल जाये तो विस्तार का मूल्य भी परिवर्तित हो जात है । जेक लेविन के अनुसार ऐसा माप जिसका मूल्य उत्तरदाता के समंक से अगर इतना प्रभावित हो जाता है तो वह विचलनशीलता की सही मात्रा को नहीं बतला सकता । ऐसे माप को प्रारिम्भिक या काम चलाऊ माप माना जा सकता है । नॉरमेन कर्ट्ज के अनुसार विस्तार वास्तव में निदर्शन आकार या वितरण में समंकों की संख्या का परिणाम है । अनेक घटनाओं के अध्ययन के सम्बन्ध में ऐसा होताहै कि हम जितनी अधिक इकाइयों का अवलोकन करते है, चरम मूल्यों के प्राप्त होने की संभावना उतनी ही अधिक बढ़ जाती है । अत: आकार में बड़े निदर्शनों का विस्तार मूल्य छोटे निदर्शनों की तुलना में प्राय: अधिक होता है ।

चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation)

चतुर्थक विचलन एक ऐसा माप है जो की चरम मूल्यो तथा निदर्शन के आधार का विचलनशिलटा पर पड़ने वाले प्रभाव को नियन्त्रित कर देता है । यद्यपि, यह माप भी विस्तार की तरह दो मूल्यों के मध्य अन्तर को बतलाता है किन्तु ये दो मूल्य चरम मूल्य नहीं होते है । चतुर्थक विचलन, अन्तर चतुर्थक विस्तार पर आधारित होता है । इसमें प्रथम चतुर्थक (Q_1) और तृतीय चतुर्थक ($Q_{2)}$ का मूल्य ज्ञात कर उनके अन्तर को ज्ञात किया जाता है ।

प्रथम चतुर्थक वितरण का वह बिन्दु है जो कि वितरण के निचले 25% मूल्यों को वितरण से अलग करता है जबकि तृतीय चतुर्थक वह बिन्दु है जो वितरण के ऊपर वाले 2 50' मूल्यों को पृथक करता है । इन तथा ऊपर वाले 25 प्रतिशत मूल्यों को चतुर्थक विचलन के परिकलन में सम्मिलित नहीं किया जाता है । चतुर्थक विचलन ज्ञात करने का सूत्र है -

$$QD = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$$

जहाँ

QD =चतुर्थक विचलन

Q_3 = तृतीय चतुर्थक मूल्य

Q_1 = प्रथम चतुर्थक मूल्य

प्रथम तथा तृतीय चतुर्थक मूल्यों को ज्ञात करने के सूत्र निम्न प्रकार है

$$Q_1 = \frac{(N+1)}{4}$$ वों स्थान

$$Q_3 = \frac{3(M+1)}{4}$$ वों स्थान

अब हम यहां सेन्ड्स की पुस्तक से एक उदाहरण लेते हैं और देखते है कि चतुर्थक विचलन का वैयक्तिक श्रेणी में परिकलन कैसे किया जाता है ।

18, 19, 19, 19, 19, 19,20, 20, 45, 45, 46, 47,48, 50

$$Q_3 = \frac{3(N+1)}{4} = \frac{3(14+1)}{4} = \frac{45}{4} = 11.25$$ वॉ स्थान

Q_1= वितरण में तीसरा मूल्य 0:.75 (चौथा मूल्य- तीसरा मूल्य)

= 19 : 0.75(19- 19)= 19 = 0 + 19

$$Q_1 = \frac{(N+1)}{4} = \frac{(14+1)}{4} = \frac{15}{4} = 3.75$$ वां स्थान '

Q_1= वितरण में 11 वों मूल्य + 0.25(12 वों - 11 वों मूल्य)

= 46 + 0.25 (47-46) =' 46.25 -

$$QD = \frac{46.25 - 19}{2} = 13.62$$

खण्डित श्रेणी (Discrete series)

खण्डित श्रेणी मे चतुर्थक विचलन परिकलित करने के लिए हम वैयक्तिक श्रेणी के सूत्र का ही उपयोग करते है । आवृति वितरण में Q1 और Q3 के स्थान का पता लगाने के लिये हम पहले संचयी आवृत्ति का कॉलम बनाते है जैसाकि हमने मध्यांक (MEDIAN) परिकलित करने के लिये किया था । याद रखें कि मध्यांक वितरण का द्वितीय चतुर्थक (Q2) होता है । Q1 और अ Q2 के स्थान का संचयी आवृत्ति कॉलम में पता लगाने के बाद उस स्थान से सम्बन्धित X के मूल्यों का उपयोग चतुर्थक विचलन के परिकलन में किया जाता है । इसका एक उदाहरण नीचे दिया जा रहा है ।

	परिवार में बच्चों की संख्या (X)	परिवकार की संख्या (f)	संचयीआवृत्ति (cf)	
	3	1	1	
	4	2	3	
Q_1 मूल्य	5	3	6	Q_1 स्थान
	6	4	10	
Q_3 मूल्य	7	5	15	Q_3 स्थान

$$Q_1 = \frac{(N+1)}{4} = \frac{(15+1)}{4} = \frac{16}{4} = 4$$ स्थान

$$Q_3 = \frac{3(N+1)}{4} = \frac{3(15+1)}{4} = \frac{48}{4} = 12$$ स्थान

$$QD = \frac{Q_3 - Q_1}{2} = \frac{7-5}{2} = \frac{2}{2} = 1$$

अखण्डित श्रेणी (Continous series)

अखंडित श्रेणीQ_1 और Q_3 के मूल्यो को ज्ञात करने के लिय हम अखण्डित श्रेणी म्मे मध्यंक ज्ञात करने वाले सूत्र को काम में लेते है । उस सूत्र में हमें केवल एक परिवर्तन करना होता है । Q_1 ज्ञात करने के लिये N/2 के स्थान N4/ ज्ञात करते हैं और Q_3 ज्ञात करने के लिये3 N/4 को काम में लेते है । उसके पश्चात् मध्यांक ज्ञात करने की प्रक्रिया की तरह सूत्र में मूल्यों को रखकर Q_1 और Q_3 के मूल्यों का परिकलन कर, चतुर्थक विचलन के सूत्र में इन मूल्यों को रखकर चतुर्थक विचलन का मूल्य निकाल लिया जाता है ।

उदाहरण

(X)	(X)	cf	
$5-9$	$5-9$	5	Q_1 स्थान
$10-14$	$10-14$	13	
$15-19$	$15-19$	17	Q_3 स्थान
$20-24$	$20-24$	19	

Q_1 का स्थान जानने के लिये हम हैं को 4 से विभाजित करते है । ऐसा करने पर प्राप्त मूल्य है.

-$\frac{N}{4}=\frac{19}{4}=4.75$ वों स्थान, Q_1 मूल्य 5-9 वर्गान्तर में स्थित है ।

Q_3 का स्थान जानने के लिये हम 3N को 4 से विभाजित करते है । प्राप्त मूल्य है.

$\frac{3N}{4}=\frac{3\times19}{4}=14.25$ वों स्थान, Q_3 मूल्य 15-19 वर्गान्तर में है ।

Q_1 और Q_3 मूल्यों के परिकलन के सूत्र है

$$Q_1 = LL + \frac{N/4 - cf}{f} \times i$$

$$= 4-5+\frac{4.75-0}{5}\times 5 = 4.5+\frac{23.75}{5} = 4.5+4.75 = 9.25$$

$$Q_3 = LL + \frac{3N/4 - cf}{f} \times i$$

$$= 14.5+\frac{14.5-13}{4}\times 5 = 14.5+1.56 = 16.06$$

$$QD = \frac{Q_3 - Q_1}{2} = \frac{16.06-9.25}{2} = \frac{6.81}{2}\times 3.41$$

अतः चतुर्थक विचलन यद्यपि विस्तार की कमियों को दूर करता हे, किन्तु इसकी अपनी सीमाओं के कारण इसका भी उपयोग सामाजिक अनुसन्धान में कम ही होता है । इस माप की सबसे प्रमुख कमी है कि यह वितरण के सभी मूल्यों पर आधारित नहीं है । केपका और सिम्पसन ने तो यहाँ तक कहा कि चतुर्थक विचलन विक्षेपण का माप ही नहीं है क्योंकि

यह औसत से समंकों के विचलन को नहीं बतलाता है । और इसमें बढ़कर जो कमी है वह यह है कि इसका स्वयं का परिकलन किसी औसत के प्रकार के परिकलन पर आधारित नहीं है ।

मध्यमान विचलन (MeanDeviation)

मध्यमन विचलन विक्षेपण का एस माप है जो की वितरा के सभी मूल्यो पर आधारित हिता है } मध्यमान का परिकलन जैसा कि आप पहले पढ़ चुके हैं समंकों के योग में समंकों की संख्या का भाग देकर किया जाता है । परिकलन की इस प्रक्रिया को यदि आगे बढ़ाते हुए हम वितरण के प्रत्येक समंक का मध्यमान से विचलन ज्ञात करें और इन विचलनों के धनात्मक और ऋणात्मक चिन्हों को छोड़कर निरपेक्ष (absolute) मूल्यों का योग कर उसमें समंकों की संख्या भाग दें, तो जो औसत मूल्य प्राप्त होगा, वह मध्यमान विचलन कहलायेगा ।

एक प्रश्न जो यहाँ आपके समक्ष पैदा हो सकता है, वह यह है कि हमने विचलन मूल्यों के धनात्मक या ऋणात्मक चिन्हों को क्यों छोड़ा? इसका मूल कारण मध्यमान की वह गणितीय है जिसके अनुसार मध्यमान से लिये गये विचलनों का योग सदैव शून्य होता है । अत: यदि विचलनों का योग शून्य है तो फिर ऐसी स्थिति में मध्यमान विचलन भी सदैव शून्य ही होगा । मध्यमान विचलन का संकेतास्थर MD होता है । वैयक्तिक श्रेणी में इसका सूत्र होता है:

$$MD = \frac{\sum|x|}{N}$$

जहाँ

MD = मध्यमान विचलन

$\sum|x|$ = विचलनों के निरपेक्ष मूल्यों का याग (धनात्मक या ऋणात्मक चिन्हों की ओर ध्यान न देकर)

N = समंकों की संख्या

उदाहरण : (जेके लेविन की पुस्तक से)

मान लीजिये कि वैयक्तिक श्रेणी के समंक 9, 8, 6, 4, 2, 1 है ।

प्रथम चरण मध्यमान ज्ञात कीजिये ।

X
9
8
6
4
2
1
$\sum X = 30$

$$\overline{X} = \frac{\sum X}{N}$$

$$= \frac{30}{6}$$

$$= 5$$

$$\bar{x} = 5$$

द्वितीय चरण. मध्यमान से विचलन ज्ञात करें ।

X	$X = (x - \bar{x})$
9	+4
6	+3
4	+1
2	−1
1	−3
	−4
	$\sum \lvert x \rvert = 16$

तृतीय चरण मध्यमान विचलन निकालने के लिये $\sum \lvert x \rvert$ मूल्य को N से विभाजित करें ।

$$MD = \frac{\sum \lvert x \rvert}{N} = \frac{16}{6}$$

$$MD = 2.67$$

मध्यमान विचलन का मूल्य यह इंगित करता है कि वितरण के प्रतयेक समंक का मध्यमान से विचलन 2.67 इकाई है ।

खण्डित तथा अखण्डित श्रेणी में मध्यमान विचलन का परिकलन

$$MD = \frac{\sum f \lvert x \rvert}{N}$$

यदि हम नीचे दिये गये खण्डित श्रेणी के लिये मध्यमान विचलन का परिकलन करें तो इसकी प्रक्रिया निम्न प्रकार होगी

अवकाश दिन X	मजदूरो की संख्या f	fx	|x|	f|x|
5	3	15	−9	−27
10	2	20	−4	−8
15	1	15	+1	+1
20	2	40	+6	+12
25	2	50	+11	+22
	N=10	$\sum fx = 140$		$\sum f \lvert x \rvert = 70$

$$\bar{x} = \frac{\sum fx}{N} = \frac{140}{10} = 14$$

$$MD = \frac{\sum f \lvert x \rvert}{N}$$

$$MD = \frac{70}{10} = 7$$

प्रथम चरण : मध्यमान ज्ञात करें ।

दूसरा चरण : मध्यमान से विचलन ज्ञात करें ।

तीसरा चरण : विचलनों को सम्बन्धित आवृत्तियों से गुणा कर कॉलम का योग करें।

चौथा चरण : सूत्र में मूल्यों को रख सांख्यिकीय मूल्य परिकलित करें ।

अखण्डित श्रेणी के लिये भी यही प्रक्रिया अपनाते हुए मध्यमान विचलन की गणना की जाती है। किन्तु इसमें सबसे पहले वितरण में दिये गये वर्गान्तरों के मध्य बिन्दु ज्ञात करने होते है । इन मध्य बिन्दुओं 8 मूल्यों का कॉलम मानते हुए उपरोक्त चरण योजना के अनुसार वितरण का मध्यमान विचलन ज्ञात कर लिया जाता है । नीचे दिये गये वितरण का मध्यमान विचलन ज्ञात करें जिसका उत्तर 3.28 है । (जेक लेविन की पुस्तक से)

वर्गान्तार X	आवृत्ति f
17-19	1
14-16	2
11-13	3
8-10	5
5-7	4
2-4	2
1	N = 17

प्रसरण तथा प्रमाप विचलन (THE variance and standard Deviation)

प्रसरण एक ऐसा माप है जो मध्यमान से लिये गये विचलनों का वर्ग (square) कर, मध्यमान विचलन की गणितीय चिन्हों को काम में न लेने की कमी को दूर कर देता है । विचलन मूल्यों को वर्ग करने से न केवल सभी संख्याएँ धनात्मक हो जाती है अपितु विचलनों का योग शून्य हो जाने की समस्या भी दूर हो जाती है । इसके अतिरिक्त प्रसरण का बीजगणितीय रूप से उपयोग भी सम्भव हो जाता है ।

यद्‌यपि इन गुणों के कारण मध्यमान विचलन की तुलना में प्रसरण विक्षेपण का अधिक विशुद्ध माप कहलाता' है । किन्तु हमें यहाँ यह ध्यान रखना चाहिये कि मापित मूल्यों का वर्ग कर हमने मूल्यों के परिमाण को बढ़ा दिया है, इसलिये परिकलित प्रसरण मूल्य की सही सांख्यिकीय व्याख्या कर पाना कठिन है ।

प्रसरण पारिभाषिक रूप से मध्यमान से लिये गये विचलनों के वर्गो का औसत है । पारिभाषिक सूत्रानुसार इसे निम्न प्रकार लिखा जाता है

$$\sqrt{s^2} \quad S^2 = \frac{\sum x^2}{N}$$

जहाँ

S^2 = प्रसारण

$\sum x^2$ = मध्य मान से लिये गये विचलनों के वर्गो का योग

N = वितरण में समंकों की संख्या

प्रमाप विचलन प्रसरण का वर्गमूल है या दूसरे शब्दों में यह मध्यमान से लिये गये विचलनों के वर्गो के मध्यमान का वर्गमूल है । पारिभाषित रूप से इसका सूत्र निम्न प्रकार है.

$$S = \sqrt{\frac{\sum x^2}{N}}$$

जहाँ

S = प्रमाप विचलन

$\sum x^2$ = मध्यमान से लिये गये विचलनों के वर्गो का योग

N = समंकों की संख्या

प्रमाप विचलन विक्षेपण का सबसे अधिक विश्वसनीय तथा उपयोगी माप माना जाता है। यह माप प्रसरण का वर्गमूल ज्ञात कर न केवल मापित मूल्यों के बढ़ाये गये परिमाण को मूलभूत रूप में ले आता है, इसकी कुछ अन्य उपयोगिताओं के कारण इसका उपयोग निष्कर्षात्मक सांख्यिकी (Inferential stastics) में भी किया जाता है ।

प्रसरण तथा प्रमाप विचलन का परिकलन पारिभाषिक सूत्र के आधार पर न करके संगणन सूत्र (computational formula) के आधार पर भी किया जा सकता है । इस सूत्र के उपयोग में हमें मध्यमान से विचलन ज्ञात करने की आवश्यकता नहीं होती है । विचलन ज्ञात करने से न केवल परिकलन प्रक्रिया में एक चरण बढ़ जाता है अपितु विचलन दशमलव संख्या में होने के कारण गणितीय अभिकलन कठिन भी हो जाता है और त्रुटियाँ करने की संभावना बढ़ जाती है । इसलिये यह सुझाव दिया जाता है कि जहाँ तक सम्भव हो प्रसरण तथा प्रमाप विचलन के परिकलन के लिये संगणन सूत्र का उपयोग करें जो निम्न प्रकार है.

वैयक्तिक श्रेणी मे :

$$S^2 = \frac{\sum x^2}{N} - (\bar{x})^2$$

$$s = \sqrt{\frac{\sum X^2}{N} - (\bar{x})^2} \; OR \sqrt{S^2}$$

खण्डित तथा अखण्डित श्रेणी में

$$S^2 = \frac{\sum fx^2}{N} - (\bar{x})^2$$

$$s = \sqrt{\frac{\sum fX^2}{N} - (\bar{x})^2} \; OR \sqrt{S^2}$$

अब हम यहाँ पर जेक लेविन की पुस्तक से लिये गये उदाहरणों को उद्धृत कर, इन मापों के परिकलन की प्रक्रिया को समझेंगे ।।

उदाहरण :

मान लीजिये कि दी गयी वैयक्तिक श्रेणी के समंक है -

9,6,6,4,2,1

संगणन सूत्र का उपयोग करते हुए प्रसरण और प्रमाप विचलन के परिकलन की प्रक्रिया निम्न प्रक्रिया होगी:

चरण 1 : प्रत्येक समंक का वर्ग करें और वर्ग किये गये मूल्यों के स्तम्भ का योग करें ।

X	X^2
9	81
8	64
6	36
4	16
2	4
1	1
$\sum X = 30$	$\sum X^2 = 202$
$N = 6$	

चरण 2 : मध्यमान ज्ञात करें और उसका वर्ग करें ।

$$x = \frac{\sum X}{N}$$

$$= \frac{30}{6} = 5$$

$$\bar{x} = 5$$

चरण 3: सूत्र में मूल्यों को रखें ।

प्रसरण (S^2)=

$$\frac{\sum X^2}{N} - (x)^2$$

$$= \frac{202}{6} - (5)^2$$

$$= 33.66 - 25 = 8.66$$

$$S = 8.66$$

प्रमाप विचलन (S) $= \sqrt{8.66}$

खण्डित श्रेणी में प्रसरण और प्रमाप विचलन ज्ञात करने की प्रक्रिया निम्न प्रकार होगी :

X	F
7	1
6	2
5	3
4	5
3	2
2	2
1	1
	$N = 16$

चरण 1 : प्रत्येक समंक (X) को उसकी आवृत्ति से गुणा कर FX ज्ञात करें ।

X	**F**	**FX**	**FX^2**
7	1	7	49
6	2	12	72
5	3	15	75
4	5	20	80
3	2	6	18
2	2	4	8
1	1	1	1
		$\sum fX = 65$	$\sum fX2 = 303$

चरण 2 : माध्यम कॉलम के प्रत्येक मूल्य को सम्बन्धित X मूल्य से गुणा कर FX^2 ज्ञात करें (ऊपर दिये गये उदाहरण में देखे) ।

चरण 3: मध्यमान ज्ञात करें और उसका वर्ग करें ।

$$\bar{x} = \frac{\sum fX}{N}$$

$$= \frac{65}{16} = 4.06$$

$$(\overline{x})^2 = (4.06)^2 = 16.48$$

चरण' 4 : सूत्र में मूल्यों को रखें ।

प्रसरण (s^2) -

$$= \frac{\sum fX^2}{N} - (\overline{x})^2$$

$$= \frac{303}{16} - 16.48$$

$$= 18.94 - 16.48 = 2.46$$

$$s^2 = 2.46$$

प्रमाप विचलन (s) =

$$= \sqrt{s^2} = \sqrt{2.46}$$

$$s = 1.57$$

अखण्डित श्रेणी में प्रसरण तथा प्रमाप विचलन की परिकलन करने के लिये हम दिये वर्गान्तरों के मध्य बिन्दु (Mid-point) को X मूल्य मानकर उपरोक्त प्रक्रियानुसार ही मूल्यों का परिकलन करते है । नीचे दिये गये आवृत्ति वितरण के लिये प्रसरण तथा प्रमाप विचलन के मूल्यों को परिकलित करें जिनके उत्तर क्रमश: 16.87 तथा 4.11 है ।

अवकाश दिन (X)	कामगारों की संख्या (f)
17-19	1
14-16	2
11-13	3
8-10	5
5-7	4
2-4	2

18.7 प्रमाप विचलन की व्याख्या (Interpreting standard deviation)

प्रमाप विचलन के परिकलित मूल्य की व्याख्या कैसे की जाए इसे समझना आवश्यक है। जेक लेविन ने इसे समझाने के लिय एक उदाहरण दिया है । उसके अनुसार जब हमें किसी कमरें में रखी गयी मेज की दीवार से दूरी ज्ञात करनी होती तो हम मापन की इकाई गज या फुट का उपयोग करते है और कहते है कि मेज दीवार से 5 फुट की दूरी पर रखी है । इसी प्रकार समानान्तर रूप से यह कैसे निर्धारित किया जाए कि वितरण का कोई समंक मध्यमान से कितनी दूरी पर स्थित है? क्या हमारे पास गज या फुट की तरह कोई मापन इकाई है जो अर्थपूर्ण अन्तर को बतला सके? जेक लेविन कहते हैं कि हम यह काम प्रसामान्य वितरण (Normal distribution) को काम में लेते हु ए करते है जो कि मध्यमान तथा प्रमाप विचलन से (जैसा कि नीचे प्रसामान्य वक्र में दर्शाया गया है) परिभाषित होता हैं

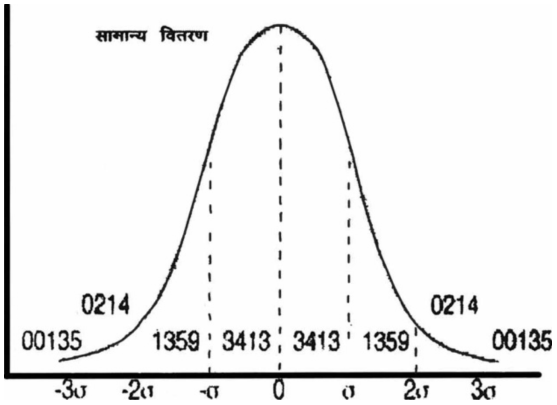

यह जानने के लिये कि कोई समंक प्रसामान्य वक्र पर मध्यमान से कितने प्रमाप विचलन की दूरी पर स्थित है, वितरण समंक को Z समंक (जिसे विचलन समंक में वितरण के प्रमाप विचलन में भाग देकर प्राप्त किया जाता है) में परिवर्तित कर, उसके स्थान को जान लेते है । इतना ही नहीं इससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि मध्यमान तथा दिये गये प्रमाप विचलन की दूरी के अन्तर्गत वितरण के कितने प्रतिशत समंक आ जाते है । प्रसामान्य वितरण के आनुभाविक नियमानुसार समंकों की यह प्रतिशतता निम्न प्रकार है.

- लगभग 68% समंक मध्यमान से ISD दूरी के अन्तर्गत आ जाते है ($\bar{x} \pm ISD$) ।
- लगभग 98% समंक मध्यमान से 2SD दूरी के अन्तर्गत आ जाते है ($\bar{x} \pm 2SD$) ।
- सभी समंक आवश्यक रूप से मध्यमान से 3SD दूरी के अन्तर्गत आ जाते है ($\bar{x} \pm 3SD$) ।

किन्तु रूसी गणितीज्ञ चेबेशेव का नियम जो कि किसी भी प्रकार की बनावट वाले वितरण पर लागू किया जा सकता है, उसके अनुसार

- यह सम्भव है कि मध्यमान से ISD की के अन्तर्गत कुछ ही अन्तर्गत कुछ ही समंक आ पायें ($\bar{x} \pm 1SD$) ।
- वितरण के समंकों में से कम से कम 3/4 भाग समंक मध्यमान से 2SD दूरी के अन्तर्गत आ जायेंगे ($\bar{x} \pm 2SD$)
- वितरण के सभी समंकों में से कम से कम -89 / भाग समंक मध्यमान से 3SD दूरी के अन्तर्गत आ जायेंगे ($\bar{x} \pm 3SD$) ।

18.8 प्रमाप विचलन के उपयोग (Uses of standard deviation)

सम्पसन तथा केफ्का ने प्रमाप विचलन के तीन प्रमुख उपयोगों का उल्लेख किया है । जो की निम्न प्रकार है :

(1) इसका उपयोग दो या अधिक वितरणों में समरूपता या विचलनशीलता के विस्तार को जानने के लिये किया जाता है । किन्तु वैध तुलनाएँ तभी सम्भव है जब वितरणों के मध्यमान समान हो तथा मापन इकाई भी समान हो ।

(2) यह वितरण की किसी इकाई का स्थान निर्धारण में भी सहयोग करती है । उदाहरण के लिये एक विद्‌यार्थी सामाजिक अनुसन्धान पद्धतियों के पेपर में उच्च अंक प्राप्त करता है, तो

हम उस समय तक यह नहीं कह सकते है कि विद्‌यार्थी कितना अच्छा है जब तक कि हमें यह पता न चल जाये कि वह 'प्रसामान्य वितरण' पर मध्यमान से कितने सिग्मा दूरी पर ऊमर या नीचे की ओर है । यह जानने के लिए Z समंक तथा प्रसामान्य वितरण का ज्ञान होना आवश्यक है जो कि आपने अभी तक नहीं पढ़ा है । सार्थकता परीक्षण (Test of significance) के पाठ को समझने के लिये प्रसामान्य वितरण को समझने की आवश्यकता होगी क्योंकि आपको कई वर्ग का पाठ आगे चलकर पढ़ना है ।

(3) प्रमाप विचलन यह निर्धारित करने में भी सहायक है कि किसी वितरण का मध्यमान मूल्य उस वितरण के केन्द्रीय प्रवृत्ति का सही रूपसे प्रतिनिधित्व करता है या नहीं । यदि कोई अनुसन्धानकर्ता दो वितरणों की तुलना करता है जिनके कि मध्यमान समान है, तो ऐसी स्थिति में जिस वितरण का प्रमाप मूल्य कम है, उस वितरण में मध्यमान मूल्य अधिक प्रतिनिधिपूर्ण माना जायेगा अपेक्षाकृत उस वितरण के जिसका प्रमाप विचलन मूल्य अधिक है ।

सापेक्षित बिचलनशीलता माप

सिम्पसन और केपका के अनुसार सापेक्षित विचलनशीलता (relative variation) के तीन माप हैं । वह माप जिसका सर्वाधिक रूप से उपयोग होता है, 'विचरण गुणांक' (Coefficient ऑफ variation) कहलाता है जो कि प्रमाप विचलन तथा मध्यमान के बची आनुपातिक सम्बन्ध को दर्शाता है । विचरण गुणांक का उपयोग दो वितरणों के मध्य विचलनशीलता सजातीयता, स्थिरता, एकरूपता तथा संगतता इत्यादि की तुलना के लिये किया जाता है । इस माप का प्रतिपादन कार्ल पियरसन ने किया था, जिसका सूत्र निम्न प्रकार है
जहां

CV= वितरण गुणांक

=वितरण का प्रमाप विचलन

=वितरण का मध्यमान

विचरण गुणांक उपरोक्त सूत्र के आधार पर एक दशमलव संख्या में आता है और कई बार यह समंक इतना छोटा होता है कि इसकी सही व्याख्या करने में कठिनाई आती है । इसलिये ऐसी स्थिति में असुविधा से बचने के लिये इस सूत्र से प्राप्त मूल्य को 100 से गुणा कर अनुपात की जगह प्रतिशत में भी अभिव्यक्त किया जाता है ।

सापेक्षित विचलनशीलता का दूसरा माप 'औसत विचलन गुणांक) Coefficient of average deviation) है जिसका संकेताक्षर CV_{AD} है । यह माप मध्यमान विचलन तथा मध्यमान के बीच आनुपातिक सम्बन्ध को दर्शाता है । इसका सूत्र निम्नलिखित है.

सापेक्षिम विचलनशीलता के तीसरे माप को चतुर्थक विचलन गुणांक (Coefficient of quartile deviation) के नाम से जाना जाता है । यह माप चतुर्थक अन्तर तथा चतुर्थक योग के बीच आनुपातिक सम्बन्ध को बतलाता है । इसका सूत्र निम्न प्रकार है

$$CV_{AD} = \frac{MD}{\bar{x}}$$

याद रखें कि इनमें से प्रत्येक गुणांक को जैसी आवश्यकता हो अनुपात या प्रतिशत में अभिव्यक्ति किया जा सकता है । यहाँ यह भी ध्यान रखें कि समान मापों में ही तुलना की जा सकती है । विचरण गुणांक की तुलना विचरण गुणांक से ही की जा सकती है न कि औसत विचलन गुणांक या चतुर्थक विचलन गुणांक से ।

$$CV_Q = \frac{Q_3 - Q_1}{Q_3 + Q_1}$$

उदाहरण :

मान लीजिये नीचे दिये आवृत्ति वितरण में दो समुदायों के परिवार के आकार से सम्बन्धित विचारों की तुलना में हमें यह देखना है कि किस समुदाय में वैचारिक भिन्नता अधिक है तो हमें इसके लिये CV ज्ञात करने की आवश्यकता होगी, जिसकी प्रक्रिया निम्न प्रकार है

परिवार का आकार (X)	समुदाय 1 (f)	समुदाय 2 (f)
2 – 4	5	1
4 – 6	4	3
6 – 8	3	5
8 – 10	2	4
10 – 12	1	2

चरण : 1 मध्य बिन्दुओं को काम में लेते हुए समुदाय 1 और समुदाय 2 के लिये $\bar{x}$ ज्ञात करें।

चरण 2 : दोनों समुदाय के प्रमाप विचलन ज्ञात करें ।

चरण 3 : विचरण गुणांक के सूत्र में समुदाय 1 के मूल्यों को रखकर CV ज्ञात करें ।

चरण 4: दोनों CV मूलें की तुलना करें ।

जिस समुदाय का CV मूल्य जितना अधिक होगा, उस समुदाय में विचलनशीलता उतनी ही अधिक होगी । विचरण गुणांक की तरह ही विचलन गुणांक या चतुर्थक विचलन गुणांक के आधार पर तुलना भी की जा सकती है, किन्तु तुलना के लिये विचरण ताक को सर्वाधिक उपयुक्त सापेक्षित माना जाता है ।

विक्षेपण मापों में सम्बन्ध

विक्षेपण के विभिन्न मापों - विस्तार, चतुर्थक विचलन, मध्यमान विचलन तथा प्रमाप विचलन के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध पाया जाता है । एक सममित वितरण में यह सम्बन्ध निम्न प्रकार होता है -

प्रमाप विचलन = $\frac{1}{6}$ विस्तार

मध्यमान विचलन= $\frac{4}{5}$प्रमाप विचलन

चतुर्थक विचलन =$\frac{2}{3}$प्रमाप विचलन

चतुर्थक विचलन $=\frac{5}{6}$ मध्यमान विचलन

इन सम्बन्धों की प्रकार्यात्मकता यह है कि यदि वितरण का कोई एक विक्षेपण मूल्य ज्ञात हो तो अन्य विक्षेपण मापो का परिकलन किया जा सकता है या परिकलित मूल्य के सही या गलत होने की जाँच की जा सकती है । उदाहरण के लिये यदि दिये गये वितरण का विस्तार (RANGE) 180 है तो उपरोक्त सम्बन्धानुसार वितरण के अन्य मूल्य निम्न प्रकार होंगे

प्रमाप विचलन $= \frac{1}{6} \times 180 = 30$

मध्यमान विचलन $= \frac{4}{5} \times 30 = 24$

चतुर्थक विचलन $= \frac{2}{3} \times 30 = 20$

चतुर्थक विचलन $= \frac{2}{3} \times 30 = 20$

18.9 विक्षेपण माप के चयन के आधार

विक्षेपण के माप का चयन कैसे जाये - यह एक जटिल प्रश्न । केंद्रीय प्रवृति के पाठ मे हमने देखा कि वर्णनात्मक सांख्यिकी में किसी भी माप के चयन के प्रमुख तीन आधार-मापन का स्तर, वितरण की बनावट तथा अध्ययन उद्देश्य होते है । इन तीन आधारों को काम में लेते हुए नाममिआस तथा गुरेरों ने एक अनुक्रम चार्ट (flow chart) प्रस्तुत किया है, जिसे किसी भी अनुसन्धान में विक्षेपण के माप का निर्धारण करने हेतु आधार के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है । यह चार्ट निम्न प्रकार है :

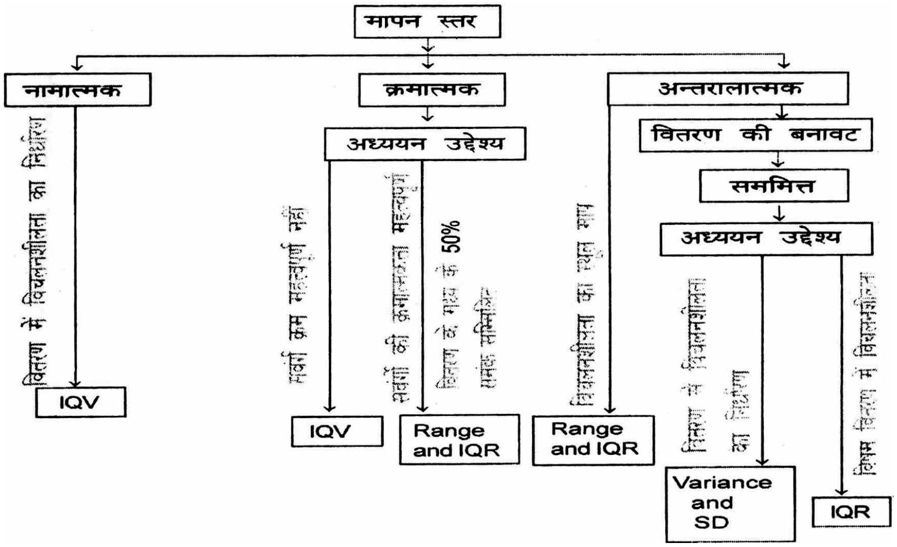

इस चार्ट की उपयोगिता को यद्यपि नकारा नही जा सकता किन्तु इसकी एक प्रमुख कमी यह है कि इसमें काम में लिये जाने वाले सम्बन्धित केंद्रीय प्रवृति के माप को नहीं बताया गया है । किसी भी वितरण के उपयुक्त विवेचन के लिये यह आवश्यक है कि उसका विवेचन

दोनों केन्द्रीय प्रवृति तथा विक्षेपण मापों की सम्बन्धता के आधार पर किया जाये । मापों के चयन के आधारों को दृष्टिगत रखते हुए आपकी समझ, सुविधा तथा उपयोग के लिये नीचे एक सारिणी दी जा रही है जो निम्न प्रकार है

चयन के आधार मापन का स्तर नामात्मक क्रमात्मक अंतरालात्मक	केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप बहुलक(Mo) मध्यांक (Mdn) मध्यमान $(\bar{x})$	विक्षेपण का माप गुणात्मक विचलन शीलता सूचकांक (IQV) चतुर्थक विचलन(QD) प्रमाप विचयन(SD)
वितरण की बनावट सममित्त विषम	मध्यमान $(\bar{x})$ मध्यांक (Mdn)	प्रमाप विचयन(SD) चतुर्थक विचलन(QD)
अध्ययन उद्देश्य विवेचन तुलना आनुमानिक निष्कर्ष	मापन स्तर तथा वितरण बनावट पर आधारित निर्णय समान माप मध्यमान $(\bar{x})$	मापन स्तर तथा वितरण बनावट पर आधारित निर्णय समान सापेक्षिक माप प्रमाप विचयन(SD)

याद रहे कि इस सारिण का उपयोग यद्यपि वितरणों के विवेचन तथा तुलना करने के लिये कर सकते है, किन्तु विवेचनात्मक सांख्यिकी के मापों को सही रूप से तभी सम्भव है जबकि हमने प्रसामाय वक्र (normal curve) को समझ लिया हो ।

18.10 सारांश

इस अध्ययन में विक्षेपण के मापों का विवेचन किया गया है । विक्षेपण एक वर्णनात्मक सांख्यिकी माप है जो कि वितरण के संकटों का केन्द्रीय प्रवृति के माप से बिखराब को बतलाता है । गुणात्मक आवृति वितरणों में विक्षेपण के विवेचन के लिये गुणात्मक विचलनशीलता सूचकांक माप का उपयोग किया जाता है जबकि परिमाणात्मक आवृति वितरणों के संक्षिप्तीकरण के लिये विस्तार, चतुर्थक विचलन तथा प्रमाप विचलन मापों को काम में लिया जात है । विभिन्न वितरणों में तुलना सापेक्षिक माप-विचरण गुणांक के आधार पर की जाती है।

विक्षेपण के माप का चयन तीन बिन्दुओं - मापन का स्तर, वितरण की बनावट तथा अनुसन्धान के उद्देश्य के आधार पर किया जाता है । गुणात्मक विचलनशीलता सूचकांक का उपयोग नामात्मक वितरणों के लिये, चतुर्थक विचलन का क्रमात्मक वितरणों के लिये तथा प्रमाप विचलन का अन्तरालात्मक वितरणों के विवेचन के लिये किया जाता है । सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि विक्षेपण के किसी माप का चयन केन्द्रीय प्रवृति के माप से सम्बन्धता के आधार पर किया जाना चाहिये । ये दोनों माप संयुक्त रूप से ही किसी समंक वितरण के सही और पर्याप्त विवेचन को सम्भव बनाते है ।

18.11 सूत्र सारिणी

सूत्र सारिणी

(TABLE OF FORMULAS)

विक्षेपण माप	समंक श्रेणी		
	वैयक्तिक	खण्डित	अखण्डित
विक्षेपके सूचकांक(D)		$D=\frac{K(N^2-\sum f^2)}{N^2(K-1)}$	
विस्तार (R)	HV - LV	HV - LV	HV - LV
चतुर्थक विचलन (QD)	$\frac{Q_3-Q_1}{2}$	$\frac{Q_3-Q_1}{2}$	$\frac{Q_3-Q_1}{2}$
मध्यमान विचलन (MD)	$\frac{\sum \lvert x \rvert}{N}$	$\frac{\sum f \lvert x \rvert}{N}$	$\frac{\sum f \lvert x \rvert}{N}$
प्रसरण (S^2)	$\frac{\sum x^2}{N}$ OR $\frac{\sum x^2}{N}-(\bar{x})^2$	$\frac{\sum fx^2}{N}$ OR $\frac{\sum fx^2}{N}-(\bar{x})^2$	$\frac{\sum fx^2}{N}$ OR $\frac{\sum fx^2}{N}-(\bar{x})^2$
प्रमाप विचलन (s)	$\sqrt{s^2}$ OR $\sqrt{\frac{\sum x^2}{N}-(\bar{x})^2}$	$\sqrt{s^2}$ Or $\sqrt{\frac{\sum fx^2}{N}-(\bar{x})^2}$	$\sqrt{s^2}$ Or $\sqrt{\frac{\sum fx^2}{N}-(\bar{x})^2}$

18.12 शब्दावली

- **निरपेक्ष मूल्य** : किसी संख्या का उसके धनात्मक या ऋणात्मक चिन्ह के बिना मान ।
- **विक्षेपण :** केन्द्रीय प्रवृति के माप से समंकों का विस्तार ।
- **गुणात्मक विचलनशीलता सूचकांक :** नामात्मक या क्रमात्मक चर के संवर्गो में अवलोकित तथा सम्भावित अधिकतम विचनलशीलता का अनुपात ।
- **अस्तर चुर्थक विस्तार :** विक्षेपण का एक माप जो प्रथम चुर्थतक तथा तृतीय चतुर्थक मूल्यों में अन्तर को बतलाता है ।
- **मध्यमन विचलन :** मध्यमान से लिये गये निरपेक्ष विचलनों का औसत ।
- **चतुर्थक विचलन :** विक्षेपण का एक माप जो अन्तर चुतर्थक मूल्य का आधा होता है ।

- **विस्तार**: वितरण के अधिकतम तथा निम्नतम मूल्य में अन्तर ।
- **प्रमाप विचलन**: प्रसरण का वर्गमूल ।

18.13 अभ्यास प्रश्न

1. विक्षेपण परिभाषा दीजिए । अंतरलात्मक वितरण के विवेचन के लिए सर्वाधिक उपयुक्त विक्षेपण माप का सविस्तार वर्णन कीजिये ।
2. किसी दी गयी अनुसन्धान स्थिति में आप विक्षेपण के माप का चयन कैसे करेंगे? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिये ।
3. निम्न समंकों के लिये चतुर्थक विचलन ज्ञात कीजिये ।
   391,384,591,407,672,522,777,733,1400,2488

(उत्तर IQV = 267.12)

4. निम्न वितरण के लिये गुणात्मक विचलनशीलता सूचकांक का वर्णन कीजिये ।

जाति संवर्ग	शोध छात्रों की संख्या
सामान्य	8
ओ.बी.सी.	4
एस.सी.	2
एस.टी.	2

(उत्तर: IQV = 0.875)

5. तीन कक्षाओं के विद्यार्थियों ने अनुसन्धान पद्धतियों की परीक्षा दी और उनके सांख्यिकीय मूल्य निम्न प्रकार रहे

कक्षा-अ	कक्षा-ब	कक्षा-स
x=72	x = 74	x = 70
s = 2.1	s = 5.6	s = 4.0

किस कक्षा के परीक्षाफल में विचलनशीलता सबसे अधिक है? किस कक्षा में विचलनशीलता कम है?

सुझाव: CV परिकलित कर तुलना करें।
उत्तर :कक्षा-ब में सबसे अधिक तथा
कक्षा-अ: में सबसे कम विचलनशीलता

18.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

- आहूजा राम (2004), सामाजिक अनुसंधान, जयपुर रावत पब्लिकेशन्स
- ऐलिसन के., आर. रनयॉन तथा ए. हेबर (1990) फन्डामेन्टल्स ऑफ सोश्यिल स्टेटिस्टिक्स, न्यूयार्क : मेक्ग्रा-हिल्स पब्लिशिंग कम्पनी ।
- कर्ट्ज नॉरमेन (1985) इन्ट्रोडक्शन टू सोश्चिल स्टेटिस्टिक्स, लन्दन : मेक्या-हिल्स बुक कम्पनी।

- लोइथर हरमन एण्ड डोनाल्ड मेक्टाविश (1974), डिसक्रिपटिव स्टेटिस्टिक्स फॉर सोशियोलॉजिस्ट : एन इन्ट्रोडक्शन, बॉस्टन. ऐलिन एण्ड बेकन पब्लिकेशन ।
- लेविन जेक' (1983), एलीमेत्री स्टेटिस्टिक्स इन सोश्यिल रिसर्च, न्यूयार्क: हार्पर एण्ड रॉ पब्लिशर्स ।
- मेलेक माइकल (1977), इसेनशल स्टेटिस्टिक्स फॉर सोशियल रिसर्च, फिलडेलफिया: जेबीलेपिकाट कम्पनी ।
- नाचमिआस सी. एफ. एण्ड अन्ना लिऑन-गुरेरो (2002) सोश्चिल स्टेटिस्टिक्स फॉर डाइवर्स सोसायटी, लन्दन: पाइन फॉर्ज प्रेस ।
- सेस्टर्स डोनाल्ड (1995), स्टेटस्टिक्स: अ फर्स्ट कोर्स, न्यूयार्क: मेकग्रहिल पब्लिकेशन ।
- शुल्क, एम.सी.एण्ड एस. एस. गुलशन (1978) स्टेटिस्टिक्स: थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस, नई दिल्ली: एस. चाँद एण्ड कम्पनी लिमिटेड ।

ISBN : 13/978-81-8496-356-4